चन्द्रापीडकथा

(पूर्वार्द्ध भाग)

महाकवि बाणभट्ट : जीवनवृत्त एवं कर्तृत्व

संस्कृत गद्यसाहित्य के स्वर्णयुग के तीन (3) उल्लेखनीय कवियों में आचार्य दण्डी, सुबन्धु एवं बाणभट्ट हैं। इनमें बाणभट्ट संस्कृत साहित्य के प्रतिष्ठित गद्यकार एवं कवि हैं। संस्कृत साहित्य के कवियों की प्रवृत्ति के विपरीत बाणभट्ट ने स्वयं अपने विषय में 'हर्षचरित' के आरम्भिक उच्छ्वासों में तथा 'कादम्बरी' के मङ्गलपद्यों में विस्तार से लिखा है। इसके आधार पर बाणभट्ट के पूर्वज कान्यकुब्ज प्रदेश में शोण नदी के तट पर प्रीतिकूट नगर में निवास करते थे। बाणभट्ट के प्रथम उल्लिखित पूर्वज वत्स थे, जो अक्षमाला के पुत्र तथा सरस्वती और दधीचि के पुत्र सारस्वत के चचेरे भाई थे। बाण का वंश प्राचीन समय से धर्म व विद्या के लिए प्रसिद्ध था। इनके एक पूर्वज का नाम कुबेर था। बाण के पिता का नाम चित्रभानु तथा माता का नाम राजदेवी था। बाल्यकाल में ही इनकी माता का निधन हो गया तथा चौदह वर्ष की किशोरावस्था में ही पिता का भी स्वर्गवास हो गया। अपार पैतृक सम्पत्ति प्राप्त होने से बाण स्वच्छन्द हो गये, और मित्रों के साथ देशाटन पर निकल गये। भ्रमण के दौरान वे राजदरबारों तथा गुरुकुलों में भी गये। विद्वानों के मध्य रहते हुए उनकी प्रकृति बदल गयी और परिपक्व बुद्धि, उदात्त विचार, सांसारिक अनुभवों के साथ घर लौटे। बाणभट्ट के गुरु का नाम भर्वु, भत्सु अथवा भर्त्सु प्राप्त होता है। वे शिव के उपासक थे। सम्राट हर्ष ने उन्हें **'वश्यवाणीकविचक्रवर्ती'** की उपाधि से विभूषित किया है।

स्थितिकाल – बाण थानेश्वर और कन्नौज के राजा हर्ष के समकालिक व सभाकवि थे। उपलब्ध साक्ष्यों के आधार पर हर्ष का राज्याभिषेक 606 ई. व मृत्यु 648 ई. में हुई। साथ ही ह्वेनसांग के संस्मरणों के आधार पर भी बाण का समय सातवीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध सिद्ध होता है।

रचनाएँ – मुख्य रूप से बाणभट्ट की 2 रचनाएँ हैं–

1. हर्षचरित
2. कादम्बरी।

इनके नाम से 3 अन्य ग्रन्थ भी माने जाते हैं –

1. चण्डीशतक
2. मुकुटताडितक
3. पार्वती परिणय

1. हर्षचरित – यह आठ उच्छ्वासों में लिखी हुई आख्यायिका है। प्रथम ढाई उच्छ्वासों में बाण की आत्मकथा एवं शेष में महाराज प्रभाकरवर्धन से लेकर चिता में जलने को उद्यत राज्यश्री को हर्ष द्वारा बचाने तक का वर्णन है।

2. कादम्बरी – यह सम्पूर्ण संस्कृतगद्य-साहित्य की सर्वोत्कृष्ट रचना है। इसमें एक काल्पनिक कथा वर्णित है। इसके दो भाग हैं– पूर्वभाग तथा उत्तरभाग। पूर्वभाग को बाणभट्ट की तथा उत्तरभाग को उनके पुत्र भूषणभट्ट (पुलिनभट्ट) की रचना मानी जाती है। भाव-भाषा-शैली-अलङ्कार आदि सभी दृष्टियों से कादम्बरी एक उत्कृष्ट रचना है, तभी तो इसके लिए कहा जाता है कि कादम्बरी के रसज्ञों को भोजन भी अच्छा नहीं लगता–

''कादम्बरी रसज्ञानामाहारोऽपि न रोचते।'' इससे अतिरिक्त अन्य उक्ति भी प्रचलित है–

कादम्बरी रसभरेण समस्त एव मत्तो न किञ्चिदपि चेतयते जनोऽयम्।

3. पार्वतीपरिणय – यह पाँच अङ्कों में निबद्ध एक नाटक है, जिसमें भगवान् शिव व पार्वती का विवाह वर्णित है।

4. चण्डीशतक – नाम से ही स्पष्ट है कि इसमें 100 पद्यों में भगवती चण्डिका की स्तुति की गयी है। यह स्रग्धरा छन्द में निबद्ध स्तोत्रकाव्य है।

5. मुकुटताडितक – यह भी एक नाटक है, किन्तु अप्राप्य है।

बाणभट्ट की गद्यशैली

बाण संस्कृत-गद्य-काल के मूर्धाभिषिक्त सम्राट हैं। बाण ने गद्य में पद्यों से अधिक चमत्कार प्रदर्शन किया है। बाण ने भाव और भाषा का अनुपम समन्वय किया है, अतः उनकी रीति 'पाञ्चाली' है। पाञ्चाली रीति की विशेषता है कि उसमें शब्द और अर्थ का समन्वय और सन्तुलन होता है– **'शब्दार्थयोः समो गुम्फः पाञ्चाली रीतिरिष्यते'**।

भाव और भाषा – बाण ने भाव और भाषा का इतना सुन्दर समन्वय प्रस्तुत किया है कि शृङ्गार के वर्णनों में कोमल-कान्त पदावली है, करुण रस के वर्णन में सरल सुबोध पदावली और विन्ध्याटवी-वर्णन, शबर-सैन्य-वर्णन आदि में ओज गुण का परिधान नित-नूतन-परिधाना नायिका के वेशभूषा का सौन्दर्य प्रस्तुत करता है। शबर सेनापति के वर्णन में भाषा का प्रवाह दर्शनीय है–

'प्रथमे वयसि वर्तमानम् आजानुलम्बेन भुजयुगलेन उपशोभितम्, अनेकवर्णैः श्वभिः अनुगम्यमानम्, मातङ्गकनामानं शबरसेनापतिमपश्यम्'।

महाश्वेता द्वारा चन्द्रापीड के स्वागत के समय भाषा का सौन्दर्य द्रष्टव्य है–**''स्वागतम् अतिथये। कथम् इमां भूमिम् अनुप्राप्तो महाभागः? उत्थाय आगम्यताम्। अनुभूयताम् अतिथिसत्कार'' इति।**

रस परिपाक – बाण शृङ्गार रस के कवि हैं। शृङ्गार के दोनों पक्षों संयोग व वियोग के वर्णन में कवि को अपूर्व सफलता मिली है। महाश्वेता और कादम्बरी के हृदय में अपने प्रेमी पुण्डरीक और चन्द्रापीड को देखकर प्रेम के अंकुरित होने, विकसित होने, पल्लवित और पुष्पित होने का मनोवैज्ञानिक चित्रण महाकवि बाण करते हैं। बाण जिस रस का जहाँ प्रयोग करते हैं, वहाँ उसका मार्मिक वर्णन करके उसका पूर्ण रसास्वादन कराते हैं।

चरित्र-चित्रण – चन्द्रापीडकथा के पात्र समाज के विभिन्न वर्गों के प्रतिनिधि हैं। इसमें राजा, ऋषि, सेवक, प्रेमी, प्रेमिकाएँ सभी हैं। इतना ही नहीं, दिव्य लोक के पात्र भी इसमें अपना योगदान देते हैं। अप्सराओं का कुल, गन्धर्व, किन्नर इत्यादि का वर्णन स्थान-स्थान पर प्राप्त होता है।

चन्द्रमा ही चन्द्रापीड होते हैं, रोहिणी पत्रलेखा और लक्ष्मी चाण्डालकन्या होती है। चन्द्रापीड और वैशम्पायन उदात्त गुणों से युक्त होते हुए भी प्रेम-भावना से आप्लावित हैं। कादम्बरी और महाश्वेता सौन्दर्य की मूर्ति, आकर्षण की निधि और गुणों की आकर हैं। केयूरक, मदलेखा, तरलिका, पत्रलेखा इत्यादि सेवक वर्ग का जीवन्त चित्रण किया है।

प्रेम और सौन्दर्य का निरूपण – बाण मर्यादित प्रेम के समर्थक हैं। वासनाजन्य प्रेम स्थायी और सफल नहीं होता। उदात्त प्रेम की परिणति स्थायी प्रणय एवं परिणय में होती है। कादम्बरी और महाश्वेता घोर तपस्या के बाद अपने प्रियतमों को प्राप्त करती हैं और सुखमय विवाहित-जीवन व्यतीत करती हैं।

प्रकृति चित्रण – बाण ने जितनी सुन्दरता, सहृदयता और सूक्ष्मदृष्टि से बाह्य प्रकृति का वर्णन किया है, उतनी ही गहराई से अन्तःप्रकृति और मनोभावों का विश्लेषण भी किया है। प्रत्येक वर्णन इतने व्यापक और सटीक होते हैं कि पाठक को यह अनुभव होता है कि उन परिस्थितियों में भी वह ऐसा ही सोचता या करता है। प्रातःवर्णन, सन्ध्यावर्णन, शूद्रकवर्णन, शुकवर्णन, चाण्डालकन्या-वर्णन, विन्ध्याटवी-वर्णन, शबरसैन्यवर्णन, जाबाल्याश्रमवर्णन, जाबालिवर्णन, उज्जयिनी-वर्णन, इन्द्रायुधवर्णन, अच्छोदसरोवर-वर्णन, महाश्वेता-वर्णन, कादम्बरीवर्णन आदि में बाण ने वर्णन मात्र ही नहीं किया है, अपितु प्रत्येक वस्तु का सजीव चित्र उपस्थित कर दिया है। चन्द्रापीड को देखकर कादम्बरी के हार्दिक भावों का वर्णन, पुण्डरीक की मृत्यु पर महाश्वेता और कपिंजल के विलाप का वर्णन बाण की हार्दिक संवेदना और सहृदयता का परिचायक है।

वस्तुतः बाण के वर्णनों में भाव और भाषा का सामंजस्य, भावानुकूल भाषा का प्रयोग, अलंकारों का सुसंयत प्रयोग, भाषा में आरोह और अवरोह तथा लम्बी समासयुक्त पदावली के पश्चात् लघु-पदावली के गुण विशेषरूप से प्राप्त होते हैं। प्रत्येक वर्णन में पहले विषय का साङ्गोपाङ्ग वर्णन मिलता है, लम्बे-लम्बे समस्त पद मिलते हैं, तत्पश्चात् श्लेषमूलक उपमाएँ और उत्प्रेक्षाएँ तदनन्तर विरोधाभास या परिसंख्या से समाप्ति। बाणभट्ट ने अपने ग्रन्थ में लगभग समस्त विषयों का समावेशन किया है। कोई विषय ऐसा नहीं है, जिसका प्रयोग इन्होंने नहीं किया हो, अतः **'बाणोच्छिष्टं जगत् सर्वम्'** यह उक्ति बाण के लिए समीचीन है।

चन्द्रापीडकथा : कथासार

प्राचीन काल में शूद्रक नाम के एक राजा हुए। उनकी राजधानी विदिशा थी। एक बार प्रातःकाल ही राजा के दरबार में एक चाण्डालकन्या पिंजड़े में शुक को लेकर उपस्थित हुई। शुक ने मनुष्य की वाणी में अपना नाम 'वैशम्पायन' बताते हुए आर्या छन्द में निबद्ध पद्य द्वारा राजा का अभिवादन किया। आश्चर्यचकित राजा को अपना वृत्तान्त बताते हुए शुक ने कथा प्रारम्भ की–

भारतवर्ष के मध्यभाग में विन्ध्याटवी नामक महावन है, जहाँ से कुछ दूर स्थित पम्पा नामक सरोवर के पश्चिम दिशा में विशाल शाल्मली (सेमल) वृक्ष है, जिस पर देश-विदेश से आए अनेक पक्षियों के घोंसलें हैं। उसी वृक्ष पर अपने जीवन की सान्ध्य बेला में जीते हुए शुक-दम्पति की मैं एकमात्र सन्तान था। मेरी माता तो मुझे जन्म देते समय ही स्वर्गवासी हो गयी और वृद्ध पिता ने मेरा पालन-पोषण किया। किन्तु दुर्भाग्य से शिकार के लिए आये भीलों की सेना में से एक वृद्ध भील द्वारा मेरे पिता को घोंसले से खींच कर निकाला गया और जमीन पर पटक दिया गया। पिता की गोदी में छिपा मैं भी भूमि पर आ गिरा और दैवयोग से पत्तों के ढेर पर गिरने से मेरे अंग नहीं टूटे। भील के चले जाने पर वहाँ से एक मुनि कुमार, जिनका नाम हारीत था, स्नान के लिए गुजरे। उनकी नजर मुझ पर पड़ी उन्होंने जल पिला कर मेरी प्राणरक्षा की और मुझे लेकर अपने पिता जाबालि के आश्रम पहुँचे। जाबालि मुनि ने मुझे देखकर 'यह अपने ही किये हुए पापों का दण्ड भोग रहा हैं'– ऐसा कहा। उत्पन्न हुए कौतुहल वाले अपने शिष्यों को तब उन्होंने यह कथा सुनायी–

उज्जयिनी में राजा तारापीड और उनके मंत्री शुकनास थे, दोनों परममित्र थे और दैवयोग से दोनों के कोई सन्तान नहीं थी। सन्तान हेतु व्रत इत्यादि करने पर राजा तारापीड की पत्नी विलासवती को चन्द्रापीड नामक पुत्र हुआ और उसी समय शुकनास की पत्नी मनोरमा को भी वैशम्पायन नामक पुत्र हुआ। चन्द्रापीड और वैशम्पायन दोनों अभिन्न मित्र थे और साथ-साथ उनका लालन–पालन व शिक्षा-दीक्षा हुई। युवावस्था में प्रवेश करने पर दिग्विजय हेतु युवराज चन्द्रापीड मित्र वैशम्पायन के साथ निकला। दिग्विजय के प्रसंग में चन्द्रापीड उत्तर में सुवर्णपुर पहुँचा। वहाँ विश्राम के लिए सेना ने पड़ाव डाला। एक दिन मनोरञ्जन हेतु इन्द्रायुध पर सवार होकर शिकार के लिए निकला और एक किन्नर युगल का पीछा करते मार्ग भटक कर अच्छोद सरोवर पर पहुँचा, जहाँ उसकी मुलाकात गन्धर्वराजपुत्री महाश्वेता से हुई। महाश्वेता ने चन्द्रापीड को अपनी कथा सुनाई—गन्धर्वराज हंस और गौरी की पुत्री मैं महाश्वेता हूँ। एक बार देव दर्शन को माता के साथ आयी हुई मेरी भेंट श्वेतकेतु के पुत्र मुनिकुमार पुण्डरीक से हुई जो अपने मित्र कपिञ्जल के साथ वहाँ से गुजर रहे थे। वे मेरी ओर आसक्त हो गये और उनके प्राण संकट में पड़ गये। मेरे विरह में उन्होंने प्राण त्याग दिये। तब अपराधभाव से भरी मैं उनके साथ सती होने को तैयार हुई तभी आकाशवाणी हुई कि तुम यहीं रहकर प्रतीक्षा करो तुम्हारा तुम्हारे प्रिय से मिलन होगा और उसी के साथ एक दिव्य पुरुष पुण्डरीक की देह को लेकर आकाश में उड़ गया। कपिञ्जल भी उनके पीछे-पीछे चला गया। तब से मैं उनके लौटने की आशा में यहाँ तप करती हुई जीवन व्यतीत कर रही हूँ। मेरे प्रेम में मेरी सखी कादम्बरी भी आजीवन अविवाहित रहने का संकल्प ले बैठी है। आप कृपया उसे समझाइए। यह कहकर चन्द्रापीड को लेकर कादम्बरी के पास हेमकूट पर्वत पर स्थित प्रासाद में गयी। वहाँ कादम्बरी और चन्द्रापीड परस्पर आकर्षित हो गये। चन्द्रापीड अपनी सेविका पत्रलेखा को कादम्बरी के पास छोड़कर अपनी सेना के पास लौट आया और सेना को वैशम्पायन के साथ बाद में आने को कहकर पिता की आज्ञा पर उज्जयिनी लौट आया। कुछ

दिनों बाद सेना उज्जयिनी आयी किन्तु वैशम्पायन नहीं लौटा और सैनिकों ने बताया कि प्रयाण के पूर्व अच्छोद सरोवर में स्नान के लिए जाने पर वहाँ से लौटने को तैयार नहीं हुए। आश्चर्यचकित चन्द्रापीड अच्छोद सरोवर पहुँचा। वैशम्पायन की खोज में महाश्वेता के आश्रम गया, जहाँ महाश्वेता ने उसे बताया कि एक ब्राह्मणयुवक जो उसके साथ दुर्व्यवहार कर रहा था उसे शाप देकर शुक योनि में भेज दिया। बाद में मुझे ज्ञात हुआ कि वह आपका मित्र है, यह सुनकर चन्द्रापीड ने अपने प्राण त्याग दिये। पत्रलेखा द्वारा कादम्बरी को चन्द्रापीड के आने का समाचार मिला तो वह महाश्वेता से मिलने के बहाने अच्छोदसरोवर पर आयी। वहाँ चन्द्रापीड की दशा देखकर उसके साथ सती होने को तत्पर हुई किन्तु तभी आकाशवाणी हुई की तुम दोनों का तुम्हारे प्रेमियों से मिलन होगा, तब तक चन्द्रापीड के शरीर की रक्षा करना। इसी बीच पत्रलेखा अचानक इन्द्रायुध को लेकर अच्छोद सरोवर में कूद जाती है और कुछ देर बाद ही एक जटाधारी युवक जल से निकलता हैं जिसे देखकर महाश्वेता उससे पूछती है– मुनि कपिञ्जल आप कहाँ चले गये थे ? आपके मित्र कहाँ हैं ? कपिञ्जल ने बताया कि पुण्डरीक के शरीर को ले जाने वाले पुरुष का मैंने पीछा किया, वह चन्द्रलोक में गया और उन्होंने अपना परिचय चन्द्रमा के रूप में दिया। पुण्डरीक के शरीर को वहाँ सुरक्षित रखते हुए मुझे बताया कि मैनें और पुण्डरीक ने एक-दूसरे को शाप दिया है फलस्वरूप दोनों को मृत्युलोक में दो बार जन्म लेकर प्रेमिका के वियोग का दुःख भोगना होगा। तुम महर्षि श्वेतकेतु के पास जाकर उपाय पूछना। वहाँ से मैं शीघ्रता में निकला और आकाशमार्ग में एक देवता से टकरा गया जिसने मुझे घोड़ा हो जाने का शाप दिया; और बाद में शाप मुक्ति का उपाय यह बताया कि तुम जिसकी सवारी में रहोगे उसकी मृत्यु के बाद स्नान कर पूर्वरूप में आ जाओगे। उसी ने मुझे बताया कि चन्द्रमा तारापीड के घर चन्द्रापीड नाम से पुत्र रूप में जन्म लेंगे उनके मंत्री शुकनास का पुत्र तुम्हारा मित्र वैशम्पायन नाम से होगा। उसी चन्द्रापीड की तुम सवारी बनोगे। वहाँ से श्वेतकेतु के पास गया उन्होंने दिव्य दृष्टि से देखकर बताया कि तुम्हारा मित्र शुकरूप में जाबालि के आश्रम में है, उससे कहना मेरा अनुष्ठान समाप्त होने तक वहीं रहे। उनका सन्देश मैंने वैशम्पायन को दिया और वहाँ से चल दिया। वैशम्पायन जाबालि के मुख से कथा सुनकर सोकर जागे के समान महाश्वेता की याद में पुनः अच्छोद सरोवर के लिए उड़ा किन्तु बीच में ही चाण्डालकन्या द्वारा पकड़ लिया गया तब वह शुक बोला आपके समान मुझे भी यह जानने की इच्छा है कि ये कौन हैं और इन्होंने मुझे क्यों पकड़ा है ?

इस पर चाण्डालकन्या अपना परिचय देती है, और शूद्रक को रोहिणीपति, कादम्बरीप्रिय चन्द्रापीड कहकर सम्बोधित करती है, और बताती है कि मैं इस शुक की माता हूँ। पिता की आज्ञा न मानने से ये और निम्न योनि में न चला जाये अतः उन्होंने मुझे इसे पकड़ने को कहा। सबकी दृष्टि से बचने के लिए मैंने चाण्डालकन्या का रूप बनाया। अब इस शरीर का त्याग कर तुम दोनों का अपनी प्रेमिकाओं से मिलन होगा। यह कहकर वह चली गयी। इधर कादम्बरी ने प्रेम से चन्द्रापीड के शरीर

को गले लगाया और अचानक वह जीवित हो उठा उसी समय आकाशमार्ग से कपिञ्जल के साथ पुण्डरीक भी आ पहुँचा। दोनों प्रेमी युगलों का मिलन हुआ दोनों के माता-पिता की उपस्थिति में विवाह-समारोह हुआ और उनके दिन प्रसन्नतापूर्वक व्यतीत होने लगे।

पात्रों का चरित्र चित्रण

1. शूद्रक

परिचय – राजा शूद्रक के नाम और गुणों के उल्लेख से चन्द्रापीड कथा का आरम्भ होता है। वे प्रथम जन्म में चन्द्रमा, द्वितीय जन्म में राजा चन्द्रापीड तथा तृतीय जन्म में राजा शूद्रक के रूप में उत्पन्न हुए थे। शास्त्रीय भाषा में उन्हें धीरोदात्त प्रकृति का नायक कहा जा सकता है। धीरोदात्त नायक अपनी प्रशंसा न करने वाला, क्षमाशील, अतिगम्भीर, महाबली, स्थिर–प्रकृति, निरहंकारी, कठोर संकल्प वाला होता है।

सुदर्शन व्यक्तित्व एवं तेजस्वी – राजा शूद्रक सुदर्शन, बलिष्ठ शरीर एवं भव्य व्यक्तित्व के स्वामी थे। इन्द्र के समान तेजस्वी, विष्णु के समान एकच्छत्र शासक, शंकर के समान जितेन्द्रिय तथा ब्रह्मा के समान सर्वोपरि हैं। समस्त धन–वैभव का उत्पत्तिश्रोत होकर भी वे धर्माचरण में संलग्न रहते हैं।

समुद्रपर्यन्त पृथिवी के पति राजा शूद्रक के अग्नि सदृश प्रताप और सूर्य सदृश तेज के सम्मुख सभी राजगण नतमस्तक थे, उनके शौर्य और साहस को वैशम्पायन शुक के द्वारा इस आर्या में भलीभाँति गाया गया था–

स्तनयुगमश्रुस्नातं समीपतरवर्ति हृदयशोकाग्नेः।
चरति विमुक्ताहारं व्रतमिव भवतो रिपुस्त्रीणाम्।।

कलाप्रेमी – राजा शूद्रक सभी श्रेष्ठ वस्तुओं के गुणग्राही व एकमात्र आश्रय थे। चाण्डालकन्या ने सम्पूर्ण पृथिवी पर रत्नस्वरूप, मानव सदृश स्पष्ट वाणी और ज्ञान से सम्पन्न शुक उपहार में दे कर रत्ना पारखी राजा का सम्मान बढ़ाया।

विनम्र स्वभाव – सर्वगुणसम्पन्न होते हुए भी राजा गर्व से रहित एवं जिज्ञासा से युक्त थे। वैशम्पायन शुक की स्पष्ट मधुर मानव वाणी में किये गये आर्या पाठ के प्रति सम्पूर्ण सभा भवन में निस्संकोच प्रकट की गयी जिज्ञास शूद्रक की विनम्रता को प्रकट करती है।

2. चाण्डालकन्या

परिचय – चाण्डालकन्या महामुनि श्वेतकेतु की पत्नी एवं पुण्डरीक की माता है। अपने पुत्र के शापग्रस्त हो जाने पर उसकी रक्षा के लिए चाण्डाल–कुल में जन्म लेती है, जिससे लोगों के संपर्क से बची रहे। वैशम्पायन शुक के शापमुक्त होने पर वह पुनः अपने लोक को चली जाती है।

वात्सल्यमयी – चाण्डालकन्या का हृदय स्नेह तथा वात्सल्य से परिपूर्ण है। पिंजडे में बन्द तोते के रूप में भी पुत्र के लिए उसके हृदय में अगाध स्नेह तथा वात्सल्य है। वह अपने पुत्र की देख–रेख तथा रक्षा के लिए मृत्युलोक में निवास करना स्वीकार करती है और चाण्डाल कुल में जन्म लेकर अपने

आचरण को पवित्र रखती है। शुकरूप में स्थित पुत्र के शाप का अन्त समीप समझकर वह सम्पूर्ण वृत्तान्त राजा को सुनाती है।

चतुर – वह अत्यन्त चतुर है। शूद्रक के समक्ष पहले शुक को ले जाती है, जिससे शूद्रक के मन में चमत्कारी शुक के प्रति जिज्ञासा उत्पन्न हो, जिसके शमनार्थ शुक अपनी सम्पूर्ण कथा राजा को सुनाता है और अन्त में स्वयं अपनी भी जिज्ञासा चाण्डालकन्या के प्रति प्रकट करता है। इस प्रकार सही अवसर पर बुद्धिमत्ता पूर्ण वचन के द्वारा चाण्डालकन्या कथा के रहस्य को उद्‌घटित करती है, उसका सम्बोधन– भुवनभूषण, रोहिणीपते, कादम्बरीलोचनानन्दकरः इत्यादि उसकी व्यवहारकुशलता व बुद्धिमत्ता को प्रकट करता है।

कथा के प्रारम्भ से अन्त तक पाठक उसके रहस्यपूर्ण व्यक्तित्व से बँधे रहते हैं।

3. वैशम्पायन शुक

परिचय – यह तोता अपने पूर्व के दो जन्मों में क्रमशः श्वेतकेतु का पुत्र पुण्डरीक तथा शुकनास नामक मन्त्री का पुत्र वैशम्पायन था। चन्द्रमा के शाप के कारण यह मनुष्य लोक में शुकनास के यहाँ उत्पन्न हुआ। पूर्वजन्म के संस्कार के कारण इसका शास्त्रज्ञान तथा महाश्वेता के प्रति अनुराग आदि नष्ट नहीं हुए। इसकी चारित्रिक विशेषताएँ इस प्रकार हैं–

शास्त्रज्ञ तथा कलाओं में निपुण– पूर्वजन्म के संस्कार के कारण शुक सम्पूर्ण विद्याओं, कलाओं, शास्त्रों, पुराणों इतिहास तथा राजनीति का ज्ञानी था। उसका ज्ञान 'शूद्रक' के लिए आशीर्वाद रूप में कहें निम्न आर्या में स्पष्ट हो जाता है–

स्तनयुगमश्रुस्नातं समीपतरवर्ति हृदयशोकाग्नेः।
चरति विमुक्ताहारं व्रतमिव भवतो रिपुस्त्रीणाम्।।

मनुष्य की वाणी में बोलने वाला– इसकी वाणी मनुष्य के समान स्पष्ट थी। स्वयं राजा शूद्रक उसकी इस चमत्कारयुक्त वाणी से प्रभावित होकर उसके बारे में जानने की इच्छा से भर उठा।

महाश्वेता का प्रेमी– पूर्वजन्म के संस्कार के कारण इसे महाश्वेता से अतिप्रेम था। अतः जैसे ही इसके पंखों में उड़ने की शक्ति आयी, वह महाश्वेता से मिलने के लिए उड़ चला।

मन्दभाग्यशाली– यह दुर्भाग्यशाली भी था। जन्म लेते ही इसकी माता स्वर्ग चली गयी और बचपन के आरम्भ में ही इसके पिता को वृद्ध भील ने मार डाला।

पूर्वजन्म का ज्ञाता– इसे अपने पहले के दो जन्मों का पूर्ण ज्ञान था। इसी ज्ञान के आधार पर वह राजा शूद्रक को कहानी सुनाता है। संक्षेप में इसके सम्पूर्ण गुण चाण्डालकन्या द्वारा शूद्रक के समक्ष निम्नलिखित कथन से स्पष्ट है–

'देव! विदितसकलशास्त्रार्थः राजनीतिप्रयोगकुशलः, पुराणेतिहासकथालापनिपुणः सकल–भूतलरत्नभूतोऽयं वैशम्पायनो नाम शुकः।

इसी ज्ञान के आधार पर वह राजा शूद्रक से स्वयं सम्मान प्राप्त करता है, और राजा उसके चरित्र से प्रभावित होकर जिज्ञासावश अपने विषय में समस्त जानकारी देने का निवेदन करता है।

4. महाश्वेता

परिचय– महाश्वेता परम रूपवती, बुद्धिमती, गौरवर्णा, तर्कशीला, सरल स्वभावा, अतिथिप्रिय, व्यवहार कुशला, उदारहृदया और गन्धर्वराज हंस की प्राणप्रिय पुत्री है। उसकी माता गौरी चन्द्रमा के वंश में उत्पन्न अप्सराओं के कुल में पैदा हुई थी। महाश्वेता की चरित्रगत प्रधान विशेषताएँ निम्नवत् हैं–

परमरूपवती– महाश्वेता कादम्बरी कथा की नायिका, कादम्बरी की अभिन्नहृदया सखी है। वह परम रूपवती है। इसकी सुन्दरता को देखकर मुनिकुमार पुण्डरीक भी इसके प्रति आकर्षित हो जाता है।

दृढ़प्रतिज्ञ– महाश्वेता दृढ़प्रतिज्ञ नारी है। वह पुण्डरीक को प्राप्त करने की दृढ़प्रतिज्ञा करती है और अन्त में उसे प्राप्त भी कर लेती है।

पुण्डरीक के प्रति अनुरक्त– महाश्वेता पुण्डरीक को देखते ही उसके प्रति अनुरक्त हो जाती है। वह पुण्डरीक को पाने के लिए पिता के वैभवपूर्ण राज्य को त्यागकर निर्जन वन में कठोर तपस्या में रत हो जाती है। पुण्डरीक के लिए वह कोई भी कष्ट सहने, कुछ भी करने को उद्यत रहती है।

पतिव्रता नारी– महाश्वेता एक आदर्श भारतीय नारी के सद्गुणों का प्रतिनिधित्व करती है। वह पतिपरायण है। जन्मान्तर में भी पुण्डरीक के समागम की आशा में वह प्राण धारण किये रहती है।

सरल हृदय– वह सरल स्वभाव की निश्छल एवं सद्गुणी रमणी है। उसके चरित्र में आद्यन्त हमें कपटता एवं अशिष्टता लेश मात्र भी नहीं मिलती। अपने जन्म की आद्यन्त कथा बिना छिपाये ही वह चन्द्रापीड से कह देती है।

व्यवहारकुशल– व्यवहार कुशलता भी महाश्वेता के चरित्र की प्रधान विशेषता है। अपने सान्निध्य में आने वाले प्रत्येक व्यक्ति से वह बड़ी ही कुशलतापूर्वक व्यवहार करती है।

तपस्विनी– अपनी अष्टादशवर्षीयावस्था में ही उसने सकल राज्य-सुख का परित्याग करके तपस्वी जीवन स्वीकार कर लिया और पाशुपत व्रत तथा अन्यान्य अनुष्ठानों को करती हुई एकान्त वन में तब तक अपना कठोर जीवन बिताती है, जब तक कि उसके शाप का अन्त नहीं हो जाता है।

उपसंहार– जहाँ तक महाश्वेता के चरित्र का प्रश्न है, उसमें सरलता, निष्कपटता, उदारता, प्रेम, दया, एवं सहानुभूति जैसे उदात्त मानवीय गुणों के साथ ही हमें भारतीय नारी का उच्च आदर्श भी देखने को मिलता है।

5. पुण्डरीक

चन्द्रापीडकथा का एक प्रमुख पात्र पुण्डरीक है। वह महर्षि श्वेतकेतु एवं लक्ष्मी का मानस पुत्र है। उसके चरित्र में निम्न प्रमुख विषेषताएँ हैं–

सुन्दर एंव चंचल– महामुनि श्वेतकेतु से आकृष्ट लक्ष्मी के मानसपुत्र होने से पुण्डरीक अन्यन्त सुन्दर है क्योंकि तीनों लोकों में श्वेतकेतु सर्वाधिक सुन्दर हैं। लक्ष्मी पुत्र होने से उसमें नैसर्गिक चंचलता

भी है। तभी तो महाश्वेता के आकृष्ट होते ही वह अपनी मानसिक दुर्बलता के कारण उस पर आसक्त हो जाता है।

कुशल प्रेमी– महाश्वेता के पुष्पमंजरी विषयक कौतूहल को देखकर वह उसके पास चला आता है और उस पुष्पमञ्जरी को अपने कानों से उतार कर उसके कानों में पहनाते समय अनजाने ही महाश्वेता के गालों के स्पर्श से उसकी अँगुलियाँ काँप जाती हैं तथा रुद्राक्षमाला उसके हाथ से गिर जाती है। मुनिपुत्र होने पर भी पुण्डरीक प्रणयव्यापार में प्रवीण है।

वाक्पटु– महाश्वेता के प्रेमपाश में आबद्ध हो जाने से कपिञ्जल उसकी भर्त्सना करता है, तो वह असत्य भी बोल जाता है और कहता है कि वह कामवशी नहीं है। बनावटी क्रोध से वह महाश्वेता को प्रेम फटकार भी सुनाता है, किन्तु अवसर मिलते ही वह तरलिका के पास पहुँच जाता है और महाश्वेता के बारे में सारी बातें पूछता है। वह प्रेमपत्र भी तरलिका के माध्यम से महाश्वेता के पास पहुँचा देता है।

पुण्डरीक की धार्मिकता, विद्वत्ता, तपस्विता एवं मित्रता आदि का मूल्यांकन कपिञ्जल के विलाप से किया जा सकता है– **'हा तपः ! निराश्रयमसि हा सत्य ! अनाथमसि। हा सरस्वति! विधवाऽसि। सखे प्रतिपालय माम्। अहमपि भवन्तम् अनुयास्यामि।'**

6. कपिञ्जल

कपिञ्जल कादम्बरीकथा के प्रमुख पात्रों में से एक है। यह एक तपस्वी कुमार है। महर्षि श्वेतकेतु एवं लक्ष्मीपुत्र पुण्डरीक का परममित्र है। यही कपिञ्जल जन्मान्तर में इन्द्रायुध अश्व के रूप में पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है। इसकी विद्वतापूर्ण चारित्रिक विशेषताएँ समस्त पाठकों को प्रभावित करती हैं। इसकी कुछ विशेषताएँ इस प्रकार हैं–

विद्वान्– कादम्बरी में प्रस्तुत उसके चरित्र से स्पष्ट होता है कि वह अत्यन्त विद्वान् है। उसे विविधशास्त्रों का, कर्तव्याकर्तव्य का सम्यक् ज्ञान है। पुण्डरीक के द्वारा महाश्वेता पर आसक्त होने पर उसके द्वारा प्रदत्त विविध उपदेशों से उसकी विद्वता स्पष्टरूपेण परिलक्षित होती है।

आदर्श मित्र– कपिञ्जल आदर्श मित्र की प्रतिमूर्ति है। वह मित्रता के सभी गुणों से परिपूर्ण है। एक सच्चा मित्र वही है, जो अपने मित्र को अकृत्य कर्मों से दूर करके, कृत्य कर्मों में नियुक्त करता है। जैसा कि मित्र का लक्षण भी दिया गया है–**"पापान्निवारयति योजयते हिताय...।।"** पुण्डरीक द्वारा महाश्वेता पर अनुरक्त होने पर कपिञ्जल उसे विविध प्रकार से समझाता है। उसे उलाहना भी देता है–**"सखे पुण्डरीक! नैतदनुरूपं भवतः। क्षुद्रजनक्षुण्ण एष मार्गः।"** अर्थात् "हे मित्र पुण्डरीक! यह आचरण आपके अनुरूप नहीं है। यह तो नीचों द्वारा अपनाया जाने वाला मार्ग है।" उसके समझााने के बाद भी महाश्वेता में अनुरक्तिवशात् पुण्डरीक के अस्वस्थ होने पर वह सर्वविध उसके प्राणों की रक्षा करने का प्रयत्न करता है और महाश्वेता के समक्ष इसी आशय को प्रकट भी करता है–**"सर्वथा रक्षणीयाः सुहृदसवः"**। पुण्डरीक की मृत्यु होने पर वह अत्यन्त करुण क्रन्दन करता है।

सदाचारी– कपिञ्जल एक तपस्वी है और उसे तपस्वियों के आचरण विधिवत् ज्ञात हैं, इसीलिए वह सदैव सदाचरण का पालन करता है। पुण्डरीक की आसक्ति के विषय में उसे समझाते हुए

कहता भी है कि हम जैसे साधु लोग धैर्यरूपी धनवाले होते हैं अर्थात् हमें अपने इन्द्रियों पर नियन्त्रण रखना चाहिए– **"धैर्यधना हि साधवः"।**

मानव मन का पारखी– कपिञ्जल मानव मन को परखने में पूर्णतया सक्षम है। वह पुण्डरीक एवं महाश्वेता के प्रथम मुलाकात में ही एक–दूसरे पर आसक्त होने के भाव को समझ जाता है, इसीलिए पुण्डरीक कोई अकृत्य न करे यह सोचकर उसे विविध प्रकार से समझाता है। और उसके बाद उसकी आसक्ति की तीव्रता देखकर यह भी समझ जाता है कि यदि पुण्डरीक का महाश्वेता के साथ समागम नहीं होगा तो अनिष्ट हो जायेगा, इसीलिए वह उसके लिए महाश्वेता के पास जाकर प्रणयनिवेदन करता है।

इस प्रकार हम कादम्बरी कथा के माध्यम से यह अवबोध करते हैं कि कपिञ्जल एक विद्वान् आदर्शमित्र, सदाचारी और मनोभावों को परखने वाला तपस्वी कुमार है।

7. चन्द्रापीड

परिचय– उज्जयिनी के राजा तारापीड की दीर्घ साधना से प्राप्त पुत्र चन्द्रापीड कथा का नायक है। शास्त्रीय भाषा में उसे धीरोदात्त प्रकृति का नायक कहा जा सकता है। चन्द्रापीड के तीन जन्मों के अवतरण में चन्द्रमा तथा राजा शूद्रक के जन्म में इसके चरित्र का वैसा प्रांजल तथा स्पष्ट विकास नहीं हुआ है जैसा चन्द्रापीड के रूप में। बाल्यावस्था के अनुशासन और गुरुकुल के संयमित वातावरण ने उसके जीवन को सुव्यवस्थित बनाया है। उसमें उन समग्र संस्कारों को भी समारोपित कर दिया है जो एक कुलीन, यशस्वी, श्रेष्ठ, सुयोग्य सम्राट के लिए अनिवार्य है।

विनयशील– विद्याध्ययन करके उज्जयिनी लौटने पर वह पिता के समक्ष बैठकर उनके चरणों में बैठता है। पिता का मान सम्मान उसके लिए सर्वोपरि है तथा आज्ञा अनुल्लंघनीय। महाश्वेता के आश्रम में वह तुरन्त लौट आने को पिता का संदेश पाता है और निःसंकोच आश्रम छोड़ देता है।

अद्वितीय पराक्रमी– चन्द्रापीड दिग्विजय के लिए निकलने पर केवल तीन वर्ष में धरा को अपने अधीन कर लेता है। व्यसनों में वह केवल मृगयाप्रेमी है। औदार्य, सहानुभूति एवं व्यवहारकुशलता उसके स्वाभाविक गुण हैं। पत्रलेखा को वह दासी नहीं अपितु सखी का पद प्रदान करता है। महाश्वेता उस पर अनायास भ्रातृप्रेम रखती है, और उससे अपना दुःख कहती है।

धैर्यशील– कादम्बरी के प्रति आकृष्ट होने पर भी विवेक को जागरूक रखता है और प्रणय निवेदन के पूर्व उसके भाव को जान लेना चाहता है।

संयमी– प्रेम में आकण्ठ निमग्न रहकर भी वह कर्तव्य से प्रमाद नहीं करता है और पुनर्मिलन के लिए अच्छोद सरोवर जाने से पूर्व गुरुजनों की अनुमति प्राप्त करता है।

परम मित्र– चन्द्रापीड वैशम्पायन के प्रति अनुपम स्नेह रखता है। मित्र का हित उसके लिए सर्वोपरि है। वैशम्पायन के अच्छोद सरोवर से वापस न लौटने पर अनेक शंकाओं से घिरा वह स्वयं अच्छोद

सरोवर तक आता है और महाश्वेता से मित्र के शापग्रस्त हो शुकयोनि को प्राप्त होने का दुःखद समाचार सुनते ही उसका हृदय विदीर्ण हो जाता है तथा मृत शरीर पृथिवी पर गिर पड़ता है।

चन्द्रापीड अपने उपर्युक्त सभी गुणों से कादम्बरी का प्रेमपात्र बनता है और कथान्त में नायिका से विवाह कर उदात्त नायक की गरिमा को सार्थक करता है।

8. वैशम्पायन

परिचय– वैशम्पायन महर्षि श्वेतकेतु के पुत्र पुण्डरीक का ही पुनर्जन्म है। बाणभट्ट ने वैशम्पायन को मन्त्रीपुत्र एवं शुक वैशम्पायन के रूप में चित्रित किया है। चन्द्रमा द्वारा शाप दिये जाने पर मृत्युलोक में पुण्डरीक ने राजा तारापीड के मन्त्री शुकनास के पुत्र वैशम्पायन के रूप में जन्म लिया। पूर्वजन्म के संस्कार के कारण महाश्वेता के प्रति उसका अनुराग कम नहीं हुआ, परिणामस्वरूप महाश्वेता द्वारा उसे शुक होने का शाप दिया गया। शुकरूप में भी उसे पूर्वजन्म के संस्कारवशात् शास्त्रों का ज्ञान है। इसके चरित्र की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं–

सच्चा मित्र– वैशम्पायन सच्चे मित्र के लक्षणों से युक्त है। वह जीवन–पर्यन्त चन्द्रापीड के साथ ही रहता है। चन्द्रापीड एवं वैशम्पायन की मित्रता की पराकाष्ठा इससे सूचित होती है कि वैशम्पायन के शुक बन जाने पर चन्द्रापीड भी प्राण त्याग देता है।

महाश्वेता का प्रेमी– पूर्वजन्म के संस्कारवशात् महाश्वेता से इसका प्रेम कम नहीं हुआ। अच्छोद सरोवर में स्नान के बाद महाश्वेता के प्रति उसका प्रेम जाग्रत हो जाता है। महाश्वेता से प्रणय–निवेदन करने के कारण उसे शापग्रस्त होना पड़ता है।

दुर्भाग्यशाली– महाश्वेता के द्वारा शप्त होकर वैशम्पायन का शुक योनि को प्राप्त होना इसके दुर्भाग्य को दर्शाता है।

संयम का अभाव– वैशम्पायन के चरित्र में संयम का अभाव है। पुण्डरीक के रूप में भी कामवेग को न सह सकने से मृत्यु को प्राप्त हुआ। वैशम्पायन के रूप में पुनर्जन्म प्राप्त होने पर महाश्वेता को देखते ही उसके मना करने पर भी प्रणयनिवेदन करता है, परिणामस्वरूप शुक–योनि को प्राप्त होता है।

इस प्रकार वैशम्पायन के चरित्र में पूर्वजन्म के स्वभाव की निरन्तरता को बनाये रखते हुए उसका चित्रण करने में बाण को पूर्ण सफलता मिली है।

9. कादम्बरी

परिचय– महाकवि बाण की सर्वश्रेष्ठ रचना कादम्बरी का नामकरण ग्रन्थ की नायिका के नाम पर ही किया गया है। कादम्बरी उसकी नायिका है, जो गन्धर्वाधिपति चित्ररथ की पुत्री है। अमृत से उत्पन्न होने वाले अप्सराओं के कुल में जन्मी मदिरा उसकी माता है। कादम्बरी अपने पिता एवं माँ की प्राणप्रिय पुत्री है। वह राजकीय वैभव में पली हुई, परम सुन्दरी, लज्जाशीला है। वह चन्द्रापीड की प्रेमिका एवं महाश्वेता की प्राणप्रिय सखी है। कादम्बरी के चरित्र की प्रधान विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

नायिका– कादम्बरी नायिका है। इसी के नाम पर बाण ने अपनी रचना का नामकरण भी ''कादम्बरी'' किया है। वह नायिका के सभी गुणों से पूर्ण है।

माता-पिता की प्रिय– कादम्बरी अपने माता-पिता की प्राणप्रिय पुत्री है। गन्धर्वराज चित्ररथ और महारानी मदिरा ऐसा कोई कार्य करना नहीं चाहती, जिससे उनकी पुत्री का हृदय दुःखी हो।

चन्द्रापीड की प्रेमिका– महाश्वेता द्वारा चन्द्रापीड का प्रथम परिचय पाते ही वह उस पर अनुरक्त हो जाती है।

आदर्श मित्र– महाश्वेता के प्रति कादम्बरी का मैत्रीभाव भी विशिष्ट स्थान रखता है। मित्र के सुख-दुःख में समभाव रखना मित्र का कर्त्तव्य है। कादम्बरी इसमें खरी उतरती है। वह महाश्वेता की अभिन्न हृदय बालमित्र है।

व्यवहार कुशल– कादम्बरी राजदुहिता है। राजप्रासाद के वातावरण और परिस्थितियों ने उसे व्यवहार कुशल बनाया है। महाश्वेता, चन्द्रापीड, पत्रलेखा, केयूरक एवं राजमहल के अन्यान्य परिजनों के साथ उसकी व्यवहारगत कुशलता स्पष्ट दीख पड़ती है।

पतिव्रता नारी– कादम्बरी में आदर्श भारतीय नारी का पातिव्रत्य सन्निविष्ट है। चन्द्रापीड को वह अपना प्राणप्रिय पति स्वीकार कर चुकी है। चन्द्रापीड के निष्प्राण शरीर की सुरक्षा करती हुई वह तब तक तपस्यालीन रहती है, जब तक कि चन्द्रापीड के शाप का अन्त नहीं हो जाता।

सौन्दर्यशालिनी– कादम्बरी परम रूपवती भी है। उसका जन्म अप्सराओं के कुल में हुआ है। कादम्बरी में उसके माता-पिता, दोनों के सौन्दर्य का सुन्दर मिश्रण है।

उपसंहार– इस प्रकार हम देखते हैं कि महाकवि बाण ने कादम्बरी को नायिका के रूप में चित्रित किया है और उसे नायिका के सभी गुणों से सुशोभित भी किया है। वह उच्चकुलोत्पन्ना, लज्जाशीला, व्यवहारकुशला, उदारहृदया, आदर्श सखी एवं सद्गुणकर्त्री भारतीय नारी के रूप में हमारे समक्ष उपस्थित होती है।

10. पत्रलेखा

कादम्बरीकथा में पत्रलेखा को चन्द्रापीड के ताम्बूलकरङ्कवाहिनी के रूप में प्रस्तुत किया गया है। यह राजा तारापीड द्वारा कुलूतदेश को जीतने के बाद कैदियों के साथ लायी गयी है। यह कुलूतराज की पुत्री है। अनाथ होने के कारण महारानी द्वारा पुत्री के रूप में इसका पालन–पोषण किया गया है और तत्पश्चात् इसे चन्द्रापीड की ताम्बूलकरङ्कवाहिनी के रूप में नियुक्त किया गया है। इसीलिए महारानी ने चन्द्रापीड को विशिष्ट सन्देश द्वारा इसके परिचय के साथ इसको विशिष्ट स्थान प्रदान करने को कहा।

रूपवती– पत्रलेखा अत्यन्त रूपवती एवं आकर्षक शरीर वाली है। उसको देखते ही कादम्बरी का चित्त उसके प्रति आकर्षित हो जाता है। वह उसका आलिङ्गन करती है और अपने हथेलियों से उसका बारम्बार स्पर्श करती है। कादम्बरी उसके सौन्दर्य को देखकर कहती भी है–**''अहो! मानुषीषु पक्षपातः प्रजापतेः।''** अर्थात् पत्रलेखा को विशेष सौन्दर्य प्रदान कर प्रजापति ब्रह्मा ने मनुष्य जाति की स्त्रियों के प्रति पक्षपात किया है।

योग्य परिचारिका– पत्रलेखा चन्द्रापीड की सुयोग्य परिचारिका परिलक्षित होती है। वह अपने कर्त्तव्य का पूर्णतया निर्वहन करती है। वह सदैव चन्द्रापीड की सेवा में समर्पित रहती है। वह चन्द्रापीड के साथ उज्जयिनी से सुवर्णपुर तक जाती है। उसकी सुयोग्यता के कारण ही चन्द्रापीड उसे कादम्बरी के पास छोड़कर वापस आ जाता है।

कर्त्तव्यपरायण– पत्रलेखा अपने कर्त्तव्य के प्रति सदैव सजग रहती है, चाहे वह उज्जयिनी के महल में हो, चाहे दिग्विजय यात्रा में अथवा चाहे सुवर्णपुर में हो। वह अपने कर्त्तव्यों से कभी भी पराङ्गमुख नहीं होती है। वह चन्द्रापीड की सेविका, सलाहकार एवं मित्र के रूप में अपने दायित्वों को निभाती है।

विश्वासपात्र– पत्रलेखा चन्द्रापीड के प्रति अत्यधिक विश्वसनीय है। वह चन्द्रापीड के मनोगतभावों को समझने में पूर्णतः समर्थ है, इसीलिए चन्द्रापीड उससे सभी बातों को स्पष्टतया कह भी देता है। चन्द्रापीड कादम्बरी के प्रति स्वयं के अनुराग को भी उससे बताता है। इसी तरह कादम्बरी भी चन्द्रापीड के प्रति अपने प्रेम के विषय में बताती है।

इस प्रकार कादम्बरी कथा में पत्रलेखा को एक आदर्श पात्र के रूप में प्रस्तुत किया गया है। वह रूपवती, योग्य परिचारिका, कर्त्तव्यपरायण एवं विश्वासपात्र भी है।

■

कादम्बरीसारभूता

चन्द्रापीडकथा

(पूर्वार्द्ध भाग)

1. आसीत् पुरा शूद्रको नाम राजा। तस्य विदिशाभिधाना राजधान्यासीत्। स तस्याम्, असकृदालोचितनीतिशास्त्रैः निर्मलमनोभिः अमात्यैः परिवृतः, समानवयोविद्यालङ्कारैः राजपुत्रैः सह रममाणः, प्रथमे वयसि वर्तमानोऽपि वनितासुखपराङ्मुखः सुखमतिचिरमुवास। एकदा तम्, आस्थानमण्डपगतं दक्षिणापथात् आगता काचित् चाण्डालकन्यका पञ्जरस्थं शुकम् आदाय, समुपसृत्य ''देव! विदितसकलशास्त्रार्थः, राजनीतिकुशलः, पुराणेतिहासकथासु निपुणः, सकलभूतलरत्नभूतः, वैशम्पायनो नाम शुकोऽयम् आत्मीयः क्रियताम्'' इत्युक्त्वा, पञ्जरं पुरो निधाय, अपससार। अपसृतायां तस्याम्, स विहङ्गराजः राजाभिमुखः भूत्वा, स्पष्टतरवर्णया गिरा कृतजयशब्दः राजानम् उद्दिश्य आर्याम् इमाम् पपाठ–

व्याकरणात्मक टिप्पणी – **परिवृतः** = परि + वृ + क्त। **विदिशाभिधाना** = विदिशा अभिधानं यस्याः सा (बहुव्रीहिः), **असकृदालोचितनीतिशास्त्रैः** = असकृत् आलोचितानि नीतिशास्त्राणि यैः तैः (बहुव्रीहिः)। **राजधान्यासीत्** = राजधानी + आसीत्। **आसीत्** = अस् + लङ् प्रथम पु0, एकवचन। **सुखमतिचिरमुवास**–सुखम् + अतिचिरम् + उवास। **रममाणः** = रम् + शानच् + प्रथमा एकवचन। **शुकोऽयम्**–शुकः + अयम्। **इत्युक्त्वा**–इति + उक्त्वा।

शब्दार्थः – विदिशाभिधाना = विदिशा नाम की। **असकृदालोचितम्** = बार-बार आलोचित (बार बार मीमांस किए गए)। **पुरा** = प्राचीन। **परिवृतः** = चारों तरफ से घिरे हुए। **समानवयः** = समान अवस्था वाले। **विद्यालङ्कारैः** = विद्या और अलंकारों से अलंकृत। **रममाणः** = आनन्द मनाता हुआ। **प्रथमे वयसि वर्तमानः** = युवावस्था में होते हुए। **वनिता** = स्त्री। **आस्थानमण्डपगतम्** = सभागार में। **दक्षिणापथात्** = दक्षिण दिशा से। **काचित्** = कोई। **पञ्जरस्थम्** = पिजड़े में स्थित। **समुपसृत्य** = पास आकर। **विदितसकलशास्त्रार्थः** = सभी (सम्पूर्ण) शास्त्रों को जानने वाला। **सकलभूतलरत्नभूतः** = सम्पूर्ण पृथ्वी का रत्न स्वरूप। **आत्मीयः क्रियताम्** = आप स्वीकार करें। **इत्युक्त्वा** = ऐसा कहकर। **पुरो निधाय** = सामने रख कर। **अपससार** = चली गयी या हट गयी। **अपसृतायां तस्याम्** = उसके चले जाने पर। **राजाभिमुखः भूत्वा** = राजा की ओर (अभिमुख) मुख करके। **स्पष्टतरवर्णया** = स्पष्ट वर्णोंवाली। **गिरा** = वाणी से। **कृतजयशब्दः** = जयशब्द का उच्चारण किया (राजा की जयकार किया)। **राजानम् उद्दिश्य** = राजा को लक्ष्य करके। **आर्याम् इमाम्** = इस आर्या छन्द को। **पपाठ** = पढ़ा।

अनुवाद – प्राचीन काल में प्रसिद्ध राजा शूद्रक थे। उनकी विदिशा नाम की राजधानी थी। वह उसमें (राजधानी में) नीतिशास्त्रों की बार-बार मीमांसा करने वाले, निर्मल मनोवृत्तियों वाले मंत्रियों से चारों तरफ से घिरे हुए, समान अवस्था, विद्या और आभूषणों से युक्त राजकुमारों के साथ आनन्द करते हुए युवावस्था में होते हुए भी स्त्री–सुख से पराङ्मुख (अनासक्त) चिरकाल तक सुखपूर्वक रहे। एक बार जब वे सभागार में बैठे हुए थे कि दक्षिणापथ से आई हुई कोई चाण्डालकन्या पिंजड़े में स्थित शुक को लेकर, पास जाकर बोली ''महाराज! यह शुक सम्पूर्ण शास्त्रों का जानकर, राजनीति में कुशल, पुराण और इतिहास में निपुण, सम्पूर्ण पृथ्वी का रत्न–स्वरूप प्रसिद्ध वैशम्पायन शुक है। इसे आप स्वीकार करें।'' इस प्रकार कहकर वह पिंजड़े को राजा के सामने रखकर हट गयी। उसके हट जाने के पश्चात् उस शुक ने राजा की ओर अभिमुख होकर स्पष्ट वाणी में (शब्दों में) 'जय' शब्द का उच्चारण किया और राजा को उद्देश्य करके यह आर्या छन्द पढ़ा–

प्रश्नाः

1. आसीत् पुरा को नाम राजा ?
2. कः प्रथमे वयसि वर्तमानोऽपि वनितासुखपराङ्मुखः ?
3. दक्षिणापथात् का आगता ?
4. शुकस्य नाम किम् ?
5. कः राजनीतिकुशलः अस्ति ?

6. विहङ्गराजः कम् उद्दिश्य आर्यां पपाठ ?
7. कः सकलभूतलरत्नभूतः अस्ति ?
8. कः विदितसकलशास्त्रार्थः अस्ति ?

2. ''स्तनयुगमश्रुस्नातं समीपतरवर्ति हृदयशोकाग्नेः।
चरति विमुक्ताहारं व्रतमिव भवतो रिपुस्त्रीणाम्।।''

अन्वय – भवतो रिपुस्त्रीणाम् स्तनयुगम् हृदयशोकाग्नेः समीपतरवर्ति अश्रुस्नातम् विमुक्ताहारम् व्रतमिव आचरति।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – स्तनयुगम् = स्तनयोः युगम् (षष्ठी तत्पुरुष)। **अश्रुस्नातम्** = अश्रुभिः स्नातम् (तृतीया तत्पुरुष)। **हृदयशोकाग्नेः** = हृदयस्य शोकः तस्याग्निः तस्य (तत्पुरुष)। **रिपुस्त्रीणाम्** = रिपूणाम् स्त्रियः तासाम् (षष्ठी तत्पुरुष)।

शब्दार्थः – भवतः = आपके। **रिपुस्त्रीणाम्** = शत्रुओं की स्त्रियों के। **स्तनयुगम्** = दोनों स्तन। **हृदयशोकाग्नेः** = हृदय की शोकरूपी अग्नि के। **समीपतरवर्ति** = समीप में स्थित। **अश्रुस्नातम्** = आँसुओं से स्नान किये हुए। **व्रतमिव** = व्रत के समान। **आचरति** = आचरण कर रहे हैं।

अनुवाद – आपके शत्रुओं की स्त्रियों के दोनों स्तन आँसुओं से स्नान किए हुए, हृदय के शोकरूपी अग्नि के अत्यन्त निकट स्थित होकर (वैधव्य के कारण) हार (व्रती पक्ष में आहार) का त्याग करके मानों व्रत का आचरण कर रहे हैं।

प्रश्नाः

1. ''चरति विमुक्ताहारं व्रतमिव भवतो रिपुस्त्रीणाम्'' रेखाङ्कित अंश का अनुवाद लिखिए।
2. आर्यां कः पपाठ ?

3. राजा तु तां श्रुत्वा सञ्जातविस्मयः तमेवमब्रवीत्। आवेदयतु भवानादितः प्रभृति कात्स्न्र्येन आत्मनो वृत्तम्। जन्म कस्मिन् देशे ? का माता ? कस्ते पिता ? कथं शास्त्राणां परिचयः ? कियद्वा वयः ? कथं पञ्जरबन्धः ? कथं चाण्डालहस्तगमनम् ? इह वा कथमागमनमिति।

एवं सबहुमानम् अवनिपतिना पृष्टः वैशम्पायनः मुहूर्तमिव ध्यात्वा सादरम् अब्रवीत्- देव! महतीयं कथा। यदि कौतुकम्, आकर्ण्यताम्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – श्रुत्वा–श्रु + क्त्वा प्रत्यय। **तमेवमब्रवीत्**–तम् + एवम् + अब्रवीत्। **कियद्वा**–कियद् + वा। **कथमागमनमिति**–कथम् + आगमनम् + इति। **सञ्जातविस्मयः**–सञ्जातः विस्मयः यस्य सः (बहुव्रीहि)। **अब्रवीत्**– ब्रू + लङ् + प्रथम पुरुष एकवचन। **कात्स्न्र्येन**–कृत्स्नस्य भावः कात्स्न्र्यम् तेन। कृत्स्न + ष्यञ् + तृतीया एकवचन।

शब्दार्थ – एवम् = इस प्रकार। **सबहुमानम्** = अत्यन्त आदर के साथ। **अवनिपतिना** = भूपति द्वारा। **पृष्टः** = पूछा गया। **ताम्** = उसे (आर्या को)। **श्रुत्वा** = सुनकर। **सञ्जातः** = उत्पन्न हुआ। **विस्मयः** = आश्चर्य। **तमेवम्** = इस प्रकार। **अब्रवीत्** = बोला। **भवानादितः** = आप प्रारम्भ से ही। **कात्स्न्येन** = विस्तार के साथ। **आवेदयतु** = बताइये। **आत्मनो वृत्तम्** = अपना जीवन चरित। **शास्त्राणाम्** = शास्त्रों का। **कियत्** = कितनी। **वयः** = आयु। **पञ्जरबन्धः** = पिंजड़े में बँधे। **कथम्** = कैसे। **आगमनम्** = आगमन हुआ। **मुहूर्तमिव** = क्षण भर के लिए। **कौतुकम्** = उत्सुकता।

अनुवाद – राजा ने उस तोते की वाणी सुनकर आश्चर्यचकित होकर उससे इस प्रकार कहा ''आप आरम्भ से ही विस्तार पूर्वक अपना आत्म चरित बताइये। जन्म किस देश में हुआ ? माता कौन है? तुम्हारे पिता कौन हैं? शास्त्रों का परिचय (ज्ञान) कैसे हुआ ? अथवा (तुम्हारी) आयु क्या है ? (तुम) पिजड़े में कैसे बँध गये ? चाण्डाल के हाथ में कैसे आये ? और यहाँ तुम्हारा कैसे आना हुआ। इस प्रकार ससम्मान राजा के पूछने पर थोड़ी देर सोचकर वैशम्पायन (तोते) ने आदर के साथ कहा–''हे! राजन् ! यह बहुत बड़ी कथा है। यदि आप इस कथा को सुनने को उत्सुक हैं तो सुनिए।''

प्रश्नाः

1. अस्य गद्यांशस्य प्रणेता कः ?
2. राजा सञ्जातविस्मयः कम् अब्रवीत् ?
3. ''कस्ते पिता ?'' इस वाक्य का अनुवाद कीजिए।
4. 'आत्मनः' पद में कौन-सी विभक्ति है ?
5. कः मुहूर्तमिव ध्यात्वा सादरम् अब्रवीत् ?
6. 'श्रुत्वा' का हिन्दी में अर्थ लिखिए ?

4. अस्ति मध्यदेशालंकारभूता मेखलेव भुवः विन्ध्याटवी नाम। तस्यां च दण्डकारण्यान्तःपाति, गोदावर्या सरिता परिगतम् आश्रमपदम् आसीत्। तस्य च नातिदूरे पम्पाभिधानस्य पद्मसरसः पश्चिमे तीरे महान् जीर्णः शाल्मलीवृक्षः। तत्र च शाखाग्रेषु कोटरोदरेषु विरचितकुलायानि नानादेशसमागतानि शुकशकुनिकुलानि प्रतिवसन्ति स्म। तत्रैकस्मिन् जीर्णकोटरे जायया सह निवसतः पश्चिमे वयसि वर्तमानस्य पितुः अहमेवैकः सूनुरभवम्। अतिप्रबलया ममैव जायमानस्य प्रसववेदनया जननी मे लोकान्तरमगमत्। तातस्तु मे सुतस्नेहात् अभिमतजायाविनाशशोकम् अन्तः निगृह्य, मत्संवर्धनपरः अभवत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – मध्यदेशालंकारभूता–मध्यदेशस्य अलङ्कारभूता (षष्ठी तत्पुरुष)। **मेखलेव**–मेखला + इव। **दण्डकारण्यान्तःपाति**–दण्डक + अरण्य + अन्तःपाति। **नातिदूरे**–न + अति + दूरे। **पम्पाभिधानस्य**– पम्पा इति अभिधानं यस्य तत् तस्य। **शाखाग्रेषु**–शाखा + अग्रेषु। **तत्रैकस्मिन्**–तत्र + एकस्मिन्। **अहमेवैकः**–अहम् + एव + एकः। **सुनूरभवम्**–सूनुः + अभवम्। **लोकान्तरमगमत्**–लोकान्तरम् + अगमत्।

शब्दार्थः – मध्यदेशालंकारभूता = मध्यदेश के अलंकार स्वरूप। **मेखलेव** = करधनी के समान। **भुवः** = धरती के। **तस्याम्** = उसमें। **अन्तःपाति** = बीच में। **सरिता** = नदी। **परिगतम्** = घिरा हुआ। **नातिदूरे** = अधिक दूर नहीं अर्थात् समीप में। **महान् जीर्णः** = बड़ा पुराना। **नानादेशसमागतानि** = अनेक देशों से आये हुए। **शाखाग्रेषु** = डालियों की चोटी पर। **कोटरोदरेषु** = खोखलों के भीतर। **कुलायानि** = घोंसले। **शुकशकुनिकुलानि** = तोते एवं पक्षियों का झुण्ड। **पश्चिमे वयसि वर्तमानः** = वृद्धावस्था में होते हुए। **सूनुः** = पुत्र। **लोकान्तरम्** = स्वर्ग लोक। **अभिमतजायाविनाशशोकम्** = प्रिय पत्नी की मृत्यु रूपी शोक या संताप। **निगृह्य** = दबाकर। **मत्संवर्धनपरः** = मेरे पालन पोषण में तल्लीन।

अनुवाद – मध्यदेश के अलंकार स्वरूप पृथ्वी की करधनी के समान विंध्याटवी नाम का जंगल है और उस विन्ध्याटवी में दण्डकारण्य के भीतर गोदावरी नदी के किनारे एक आश्रम था और उससे अधिक दूर नहीं अर्थात् समीप में ही पम्पा नाम का कमल से युक्त एक तालाब था जिसके पश्चिमी किनारे पर एक बहुत बड़ा प्राचीन सेमल का वृक्ष था। वहाँ डालियों की चोटी तथा प्राचीन कोटरों (खोखलों) में घोसले बनाकर विभिन्न देशों से आये हुए शुक और पक्षियों के झुण्ड रहते थे। वहीं एक पुराने कोटर में मेरे पिता अपनी भार्या के साथ रहते थे। उनकी वृद्धावस्था में मैं ही एकमात्र पुत्र पैदा हुआ। प्रसव की अत्यन्त वेदना के कारण मेरे जन्म लेते ही मेरी माता का स्वर्गवास हो गया। पुत्र–प्रेम के कारण मेरे पिता प्रिय पत्नी की मृत्यु की वेदना को हृदय के भीतर दबाकर मेरे पालन–पोषण में लग गये।

प्रश्नाः

1. भुवः मेखला इव का ?
2. जीर्णकोटरे जायया सह कः निवसति स्म ?
3. मध्यदेशालङ्कारभूता का ?
4. कया सरिता परिगतम् आश्रमपदम् आसीत् ?
5. शाल्मलीवृक्षः कुत्र आसीत् ?
6. प्रसववेदनया कस्य जननी लोकान्तरमगमत् ?

5. एकदा तु प्रभाते सहसैव तस्मिन् महावने मृगयाकोलाहलध्वनिरुदचलत्। आकर्ण्य च तमहं समीपवर्तिनः पितुः पक्षपुटान्तरमविशम्। अथ च शैशवात् किमिदम् इति सञ्जातकुतूहलः पितुरुत्संगात् ईषदिव निष्क्रम्य, कोटरस्थ एव शिरोधरां प्रसार्य तामेव दिशं चक्षुः प्राहिणवम्। तस्मात् वनान्तरात् अभिमुखम् आपतत् अतिभयजनकम् शबरसैन्यमद्राक्षम्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – सहसैव–सहसा + एव, **किमिदम्**–किम् + इदम्। **पितुरुत्संगात्**–पितुः + उत्संगात्। **ईषदिव**–ईषत् + इव। **शबरसैन्यमद्राक्षम्**–शबरसैन्यम् + अद्राक्षम्।

शब्दार्थः – **प्रभाते** = प्रातःकाल। **एकदा** = एक बार। **सहसैव** = एकाएक ही। **तस्मिन्** = उस। **महावने** = जंगल में। **मृगया** = शिकार। **कोलाहलध्वनिः** = शोर की आवाज। **उदचलत्** = उठी। **तम्** = उसको। **आकर्ण्य** = सुनकर। **समीपवर्तिनः** = पास में स्थित। **पितुः** = पिता के। **पक्षपुटान्तरम्** = पंख के भीतर। **अविशम्** = घुस गया। **अथ** = इसके पश्चात्। **शैशवात्** = शैशवावस्था के कारण। **सञ्जातकुतूहलः** = उत्पन्न हुई जिज्ञासा वाला। **किमिदम् इति** = यह क्या है ? (अर्थात् कैसी आवाज है)। **उत्संगात्** = गोद से। **ईषदिव निष्क्रम्य** = थोड़ा–सा निकलकर। **कोटरस्थ** = कोटर में ही स्थित। **शिरोधराम्** = शिर को। **प्रसार्य** = फैलाकर। **तामेव दिशं चक्षुः** = उसी दिशा में आँख को। **प्राहिणवम्** = प्रेरित किया। **वनान्तरात्** = वन के अन्दर से। **अभिमुखम्** = अपनी तरफ। **आपतत्** = आते हुए। **अतिभयजनकम्** = अत्यधिक भय उत्पन्न करने वाले। **शबरसैन्यम्** = भीलों की सेना को। **अद्राक्षम्** = देखा।

अनुवाद – एक बार प्रातःकाल अचानक ही उस जंगल में शिकार खेलने वालों की ध्वनि उठी। उसे सुनकर मैं समीप में स्थित पिता के पंखों के भीतर घुस गया। शैशवावस्था के कारण मुझमें यह जिज्ञासा उत्पन्न हुई कि यह क्या हो रहा है ? इसे देखने के लिए पिता के पंखों से थोड़ा निकलकर कोटर में ही स्थित अपनी गर्दन को फैलाकर उसी दिशा की ओर देखने लगा। उस जंगल से अपनी ओर आती हुई अत्यन्त भयभीत करने वाली भीलों की सेना को देखा।

प्रश्नाः

1. अस्य गद्यांशस्य लेखकः कः?
2. महावने कस्याः कोलाहलध्वनिरुदचलत् ?
3. कः पितुः पक्षपुटान्तरमविशम् ?
4. पितुरुत्संगात् ईषदिव निष्क्रम्य, कोटरस्थ एव शिरोधरां प्रसार्य कः चक्षुः प्राहिणवम् ?
5. कः अतिभयजनकं शबरसैन्यमद्राक्षम् ?
6. "शैशवात् किमिदम् इति सञ्जातकुतूहलः" रेखाङ्कित अंश का अनुवाद कीजिए।

6. मध्ये च तस्य, प्रथमे वयसि वर्तमानम् आजानुलम्बेन भुजयुगलेन उपशोभितम्, अनेकवर्णैः श्वभिः अनुगम्यमानम्, मातङ्गकनामानं शबरसेनापतिमपश्यम्। सोऽयम् अटवीभ्रमणसमुद्भवं श्रमम् अपनिनीषुः आगत्य तस्यैव शाल्मलीतरोः अधः छायायाम् उपाविशत्। अथ तस्मात् सरसः सलिलम् अत्यच्छम् कमलिनीपत्रपुटेन आदाय, आपीय, धौतपङ्का निर्मलाः मृणालिकाश्च अदशत्। अपगतश्रमश्चोत्थाय, सकलेन तेन शबरसैन्येन अनुगम्यमानः शनैः शनैः अभिमतं दिगन्तरम् अयासीत्। एकतमस्तु जरच्छबरः पिशितार्थी, तस्मिन्नेव तरुतले मुहूर्तमिव व्यलम्बत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – अनुगम्यमानम्–अनु + गम् + शानच् प्रत्यय। **सोऽयम्**–सः + अयम्। **आगत्य**–आ + गम् + ल्यप्। **अत्यच्छम्**–अति + अच्छम्। **जरच्छबरः**–जरत् + शबरः। **अटवीभ्रमणसमुद्भवम्**–अटव्यां भ्रमणं (सप्तमी तत्पुरुष) तस्मात् समुद्भवः, तम्।

शब्दार्थः – मध्ये तस्य = उसके बीच में। **प्रथमे वयसि वर्तमानम्** = युवावस्था में वर्तमान। **आजानुलम्बेन भुजयुगलेन** = घुटने तक लटकी हुई दोनों भुजाओं से। **उपशोभितम्** = सुशोभित। **अनेकवर्णैः** = अनके रंगों वाले। **श्वभिः अनुगम्यमानम्** = श्वान् अर्थात् कुत्तों से पीछा किये जाने वाला। **शबरसेनापतिम्** = भीलों के सेनापति को। **अपश्यम्** = देखा। **अटवी** = जंगल के। **श्रमम्** = थकान। **अपनिनीषु** = दूर करने की इच्छा से। **आगत्य** = आकर। **तस्यैव** = उसी। **शाल्मलीतरोः** = शाल्मली वृक्ष के। **अधः** = नीचे। **छायायाम्** = छाया में (छाँव में)। **उपाविशत्** = बैठा। **अत्यच्छम्** = अत्यन्त निर्मल। **कमलिनीपत्रपुटेन** = कमल के पत्ते के दोने से। **आदाय** = लेकर। **आपीय** = पीकर। **धौतपङ्का** = धुली हुई कीचड़वाली। **निर्मलाः** = स्वच्छ। **मृणालिकाश्च** = कमल के डंठल को। **अदशत्** = खाया। **अपगतश्रमश्चोत्थाय** = दूर हुई थकान वाले उठकर। **शनैः–शनैः** = धीरे–धीरे। **अभिमतम्** = अभीष्ट। **दिगन्तरम्** = दिशा की ओर। **अयासीत्** = चला गया। **एकतमस्तु** = उसमें से एक। **जरच्छबरः** = वृद्ध भील। **पिशितार्थी** = मांस का इच्छुक। **तस्मिन्नेव** = उसी। **तरुतले** = पेड़ के नीचे। **मुहूर्तमिव** = थोड़ी देर (कुछ क्षण के लिए)। **व्यलम्बत्** = रुक गया।

अनुवाद – उसके बीच में घुटनों तक लम्बी बाँहों वाले नौजवान सेनापति मातङ्गक को भी देखा, जिसके पीछे-पीछे कई रंग के कुत्ते चले आ रहे थे। वह जंगल में घूमने के कारण जो थकान हुई थी, उसे दूर करने की इच्छा से उसी सेमल के पेड़ की छाया के नीचे आकर बैठ गया। उसने उस तालाब से कमल के पत्तों के दोने में स्वच्छ पानी लाकर पिया और कीचड़ धोकर साफ की गयी कमल की डंठल को खाया। थकान दूर हो जाने पर धीरे-धीरे वह अपनी अभीष्ट दिशा की ओर चल दिया। समस्त सेना भी उसके पीछे-पीछे चल पड़ी। उसमें से एक, मांस की इच्छा रखने वाला वृद्ध भील उसी वृक्ष के नीचे थोड़ी देर तक ठहर गया।

प्रश्नाः

1. शबरसेनापतेः नाम किम् ?
2. कः निर्मलाः मृणालिकाः अदशत् ?
3. शबरसेनापतिः केन आदाय सलिलम् अपिबत्?
4. **"प्रथमे वयसि वर्तमानम् आजानुलम्बेन भुजयुगलेन उपशोभितम्"** रेखाङ्कित गद्यांश का अनुवाद कीजिए।
5. कः शाल्मलीतरोः अधः छायायाम् उपाविशत् ?
6. कः तरुतले मुहूर्तमिव व्यलम्बत् ?

7. अन्तरिते च शबरसेनापतौ स जीर्णशबरः पिबन्निव अस्माकम् आयूंषि तं वनस्पतिं सुचिरम् आमूलात् अपश्यत्। अथ तं पादपम् आरुह्य शाखान्तरेभ्यः कोटरेभ्यश्च शुकशावकान् गृहीत्वा अपगतासूंश्च कृत्वा क्षितौ अपातयत्। तातस्तु तं महान्तं प्राणहरम् उपप्लवम् आलोक्य, मरणभयात्, उद्भ्रान्ततारकां दृशम् इतस्ततो दिक्षु विक्षिपन् स्नेहपरवशः मद्रक्षणाकुलः पक्षसंपुटेन आच्छाद्य क्रोडविभागेन माम् अवष्टभ्य तस्थौ।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – पिबन्निव–पिबन् + इव। **आरुह्य**–आ + रुह् + ल्यप् प्रत्यय। **अपगतासूंश्च**–अपगताः असवः येभ्यः तान् इति (बहु0 समास)। **कृत्वा**–कृ + क्त्वा प्रत्यय। **मद्रक्षणाकुलः**–मम रक्षणाय व्याकुलः (चतुर्थी तत्पुरुष)।

शब्दार्थः – अन्तरिते = आँख से ओझल हो जाने पर। **पिबन्निव** = पीता हुआ–सा। **आयूंषि** = आयु को। **वनस्पतिम्** = पेड़ को। **आमूलात्** = नीचे से ऊपर तक। **आरुह्य** = चढ़कर। **शाखान्तरेभ्यः** = शाखाओं के बीच से। **कोटरेभ्यः** = कोटरों से। **शुकशावकान्** = तोतों के बच्चों को। **गृहीत्वा** = पकड़कर। **अपगतासून्** = प्राणहीन। **क्षितौ** = पृथ्वी पर। **अपातयत्** = गिरा दिया। **उपप्लवम्** = विपत्ति को। **आलोक्य** = देखकर। **उद्भ्रान्ततारकाम्** = चंचल पुतलियों वाली। **दृशम्** = आँखों को। **मद्रक्षणाकुलः** = मेरी रक्षा के लिए व्याकुल। **पक्षसंपुटेन** = दोनों पंखों से। **आच्छाद्य** = ढँक कर। **क्रोडविभागेन** = गोद से। **अवष्टभ्य** = चिपकाकर। **तस्थौ** = बैठ गये।

अनुवाद – उस शबर सेनापति के आँखों से ओझल हो जाने पर उस बूढ़े भील ने, मानों हम लोगों की आयु को पीता हुआ–सा, बड़ी देर तक उस पेड़ को नीचे से ऊपर तक देखा। फिर उस पेड़ पर चढ़कर डालियों और घोसलों से तोतों के बच्चों को पकड़ कर और मार-मारकर वह उन्हें पृथ्वी पर फेंकने लगा। मेरे पिता ने उस प्राणों को नष्ट कर देने वाली भयंकर विपत्ति को देखकर मृत्यु के भय से चंचल पुतलियों वाली आँखे इधर-उधर दौड़ायी और प्रेम के वशीभूत मेरी रक्षा के लिए व्याकुल होकर मुझे अपने पंखों के अंदर (भीतर) ढककर गोद से चिपका कर वह बैठ गये।

प्रश्नाः

1. अस्य गद्यांशस्य प्रणेता कः ?
2. कः वनस्पतिं सुचिरम् आमूलात् अपश्यत् ?
3. कः महान्तं प्राणहरम् उपप्लवम् आलोकयत् ?
4. कः शुकशावकान् गृहीत्वा अपगतासूंश्च कृत्वा क्षितौ अपातयत् ?
5. ''स्नेहपरवशः मद्रक्षणाकुलः पक्षसंपुटेन आच्छाद्य क्रोडविभागेन माम् अवष्टभ्य तस्थौ'' रेखाङ्कित अंश का हिन्दी अनुवाद कीजिए।

8. असावपि पापः क्रमेण शाखान्तरैः सञ्चरमाणः कोटरद्वारमागत्य, भुजङ्गभोगभीषणं वामबाहुं प्रसार्य, तातम् आकृष्य अपगतासुम् अकरोत्। मां तु स्वल्पत्वात् भयसम्पिण्डिताङ्गत्वात् सावशेषत्वात् आयुषः पक्षसम्पुटान्तरगतं नालक्षयत्। उपरतं च तातम् अवनितले शिथिल–शिरोधरम् अधोमुखम् अमुञ्चत्। अहमपि तच्चरणान्तराले निलीनः तेनैव सह अपतम्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – असावपि–असौ + अपि। **सञ्चरमाणः**–सम् + चर् + शानच् प्रत्यय। **कोटरद्वारमागत्य**–कोटरद्वारम् + आगत्य। **आकृष्य**–आ + कृष् + ल्यप् प्रत्यय। **भयसम्पिण्डिताङ्गत्वात्**– भयेन संपिण्डितानि अङ्गानि यस्य सः तस्य भावः तस्मात् (बहुव्रीहि)। **तच्चरणान्तराले**–तत् + चरण + अन्तराले।

शब्दार्थः – शाखान्तरैः = एक डाल से दूसरी डाल पर। **सञ्चरमाणः** = घूमता हुआ। **कोटरद्वारमागत्य** = घोंसले (कोटर) के द्वार पर आकर। **भुजंगभोगभीषणम्** = साँप के फन के समान भयंकर। **प्रसार्य** = फैलाकर। **आकृष्ट** = खींचकर। **अपगतासुम्** = प्राणरहित। **स्वल्पत्वात्** = अत्यधिक छोटा होने के कारण। **भयसम्पिण्डिताङ्गत्वात्** = भय से सिकुड़े हुए अंगों के कारण। **सावशेषत्वात्** = शेष होने के कारण। **नालक्षयत्** = नहीं देखा। **उपरतम्** = मृत्यु को प्राप्त हुए। **तातम्** = पिता को। **शिथिलशिरोधराम्** = लटकी हुई गर्दन वाले। **अधोमुखम्** = नीचे मुख किए हुए। **अमुञ्चत्** = गिरा दिया। **तच्चरणान्तराले** = उसके पैरों के बीच में। **निलीनः** = छिपा हुआ। **तेनैव सह** = उन्हीं के साथ। **अपतम्** = गिर पड़ा।

अनुवाद – वह पापी क्रमशः एक डाल से दूसरी डाल पर जाता हुआ कोटर के द्वार पर आ पहुँचा और साँप के फन के समान भयंकर अपनी बायीं भुजा को फैलाकर मेरे पिता को खींचकर मार डाला। अत्यधिक छोटा होने के कारण, भय से सिकुड़े अंगों के कारण तथा आयु शेष रहने के कारण पंखों के बीच में छिपे हुए मुझको उसने नहीं देखा। लटकी हुई गर्दन वाले, नीचे की तरफ मुख किए हुए, मृत्यु को प्राप्त हो चुके पिता को पृथ्वी पर फेंक दिया। मैं भी पिता के पैरों के बीच में छिपा हुआ उन्हीं के साथ नीचे गिर गया।

प्रश्नाः

1. अयं गद्यांशः कस्मात् पुस्तकात् उद्धृतः ?
2. कः भुजङ्गभोगभीषणं वामबाहुं प्रसार्य, तातम् आकृष्य अपगतासुम् अकरोत् ?
3. जीर्णशबरः कं पक्षसम्पुटान्तरगतं नालक्षयत् ?
4. "अहमपि तच्चरणान्तराले निलीनः तेनैव सह अपतम्" इस रेखाङ्कित अंश का हिन्दी अनुवाद कीजिए।

9. अवशिष्टपुण्यतया तु महतः शुष्कपत्रराशेः उपरि पतितम् आत्मानम् अपश्यम्। अङ्गानि तेन मे नाशीर्यन्त। यावदसौ तस्मात् तरुशिखरात् नावतरति तावत् अहं पितरम् उपरतम् उत्सृज्य, नातिदूरवर्तिनः तमालविटपिनः मूलदेशम् अविशम्। स तदानीम् अवतीर्य क्षितितलविप्रकीर्णान् संहृत्य तान् शुकशिशून् एकलतापाशसंयतान् आदाय, सेनापतिगतेनैव वर्त्मना तामेव दिशम् अगच्छत्। अतिदूरपातात् आयासितशरीरं मां बलवती पिपासा परवशम् अकरोत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – यावदसौ–यावत् + असौ। **उत्सृज्य**–उत् + सृज् + ल्यप्। **नावतरति**–न + अवतरति। **संहृत्य**–सम् + हृ + ल्यप्। **आदाय**–आ + दा + ल्यप्।

शब्दार्थः – शुष्कपत्रराशेः = सूखे पत्तों के ढेर पर। **अवशिष्टपुण्यतया** = पुण्य शेष रहने से। **आत्मानम्** = अपने को। **नाशीर्यन्त** = नहीं टूटे। **यावदसौ** = जब तक वह। **उत्सृज्य** = छोड़कर। **तमालविटपिनः** = तमाल वृक्ष के। **अविशम्** = प्रवेश कर लिया। **अवतीर्य** = उतरकर। **क्षितितलविप्रकीर्णान्** = जमीन पर फैले हुए। **संहृत्य** = बटोर करके। **शुकशिशून्** = शुकों के बच्चों को। **एकलतापाशसंयतान्** = एक लता के फंदे में बँधे हुए। **आदाय** = लेकर। **सेनापतिगतेनैव वर्त्मना** = सेनापति द्वारा गए मार्ग से ही। **तामेव** = उसी। **अगच्छत्** = चला गया। **अतिदूरपातात्** = अधिक दूर से गिरने के कारण। **पिपासा** = प्यास। **परवशम्** = विवश। **अकरोत्** = कर दिया। **आयासितशरीरम्** = थके हुए शरीर वाले को।

अनुवाद – कुछ पुण्य अवशिष्ट रहने के कारण मैंने अपने आपको एक सूखे पत्तों के ढेर पर गिरा हुआ देखा (पाया)। इसी कारण मेरे अङ्ग नहीं टूटे। जब तक वह पेड़ के शिखर से उतरता तब तक मैं मरे हुए पिता को छोड़कर समीप में ही स्थित तमाल वृक्ष की जड़ में घुस गया। इसके पश्चात् उसने वृक्ष से उतरकर पृथ्वी पर बिखरे हुए उन शुक–शावकों को इकट्ठा करके उन्हें एक लता में बाँध लिया और शबर सेनापति जिस मार्ग से गया था उसी मार्ग से वह भी उसी ओर चला गया। बहुत ऊँचाई से गिरने के कारण मेरा शरीर शिथिल हो गया और तीव्र पिपासा ने मुझे विवश कर दिया था।

प्रश्नाः

1. कस्य अङ्गानि नाशीर्यन्त ?
2. जीर्णशबरः कुत्र अगच्छत् ?
3. शुकः कुत्र पतितम् आत्मानम् अपश्यत् ?
4. कः उपरतम् पितरम् उत्सृज्य तमालविटपिनः मूलदेशम् अविशत् ?
5. कं बलवती पिपासा परवशम् अकरोत् ?
6. "मां बलवती पिपासा परवशम् अकरोत्" रेखाङ्कित अंश का हिन्दी अनुवाद कीजिए।

10. तस्मात् सरसः नातिदूरवर्तिनि तपोवने जाबालिः नाम महातपाः मुनिः प्रतिवसति स्म। तत्तनयश्च हारीतनामा तदेव कमलसरः सिस्नासुः उपागमत्। स मां तदवस्थम् आलोक्य, समुपजातदयः, समीपम् उपसृत्य, सरस्तीरम् आनीय, स्वयं माम् उत्तानितमुखम् अङ्गुल्या कतिचित् सलिलबिन्दून् आपाययत्। अम्भःक्षोदकृतसेकम् समुपजातनवीनप्राणम् माम् उपतटप्ररूढस्य नलिनीपलाशस्य जलशिशिरायां छायायां निधाय, समुचितम् अकरोत् स्नानविधिम्। अभिषेकावसाने च भगवते सवित्रे दत्त्वार्घ्यम्, उदतिष्ठत्। आगृहीतधौतधवलवल्कलश्च मां गृहीत्वा तपोवनाभिमुखम् अगच्छत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – नातिदूरवर्तिनि–न + अति + दूरवर्तिनि। **तत्तनयश्च**–तत् + तनयः + च। **तदेव**–तदा + एव। **आलोक्य**–आ + लोक् दर्शने + ल्यप्। **अभिषेकावसाने**–अभिषेक + अवसाने। **दत्त्वार्घ्यम्**–दत्वा + अर्घ्यम्। **तपोवनाभिमुखम्**–तपोवन + अभिमुखम्।

शब्दार्थः – **महातपाः** = बहुत बड़े तपस्वी। **तत्तनयः** = उनके पुत्र। **सिस्नासुः** = स्नान के इच्छुक। **उपागतम्** = आये। **तदवस्थम्** = ऐसी दशा को। **समुपजातदयः** = दया उत्पन्न हो जाने से। **उपसृत्य** = पास आकर। **आनीय** = लाकर। **उत्तानितमुखम्** = ऊपर मुँह किए हुए। **कतिचित्** = कुछ। **सलिलबिन्दून्** = जल की बूँदे। **अपाययत्** = पिलायी। **अम्भःक्षोदकृतसेकम्** = पानी की बूँदों से सींचे हुए। **समुपजातनवीनप्राणम्** = नवीन प्राण वाले। **उपतटप्ररूढस्य** = किनारे के समीप उगे हुए। **नलिनीपलाशस्य** = कमल के पत्ते की। **जलशिशिरायाम्** = जल से शीतल। **निधाय** = रखकर। **स्नानविधिम्** = स्नान की विधि। **अभिषेकावसाने** = स्नान के बाद। **सवित्रे** = सूर्य को। **दत्त्वार्घ्यम्** = अर्घ्य देकर। **उदतिष्ठत्** = उठे। **आगृहीतधौतधवलवल्कलश्च** = धुले हुए श्वेत वल्कल वस्त्र को पहने हुए। **तपोवनाभिमुखम्** = तपोवन की ओर। **अगच्छत्** = चल दिए।

अनुवाद – उस तालाब के समीप ही तपोवन में प्रसिद्ध जाबालि (नामक) महान् तपस्वी मुनि रहते थे। उनके पुत्र हारीत उस कमलों से युक्त तालाब में स्नान करने के लिए आये। मेरी ऐसी दशा को देखकर उन्हें दया आ गयी, समीप आकर मुझे उठा लिया तथा तालाब के किनारे लाकर, ऊपर मुख किए हुए मुझे अपनी अँगुली से जल की कुछ बूँदें पिलायीं। जल की बूँदों से सींचने के कारण मुझमें नवीन प्राण आ गये। उन्होंने मुझे तालाब के किनारे उगे हुए कमल के पत्ते की, जल से शीतल छाया में रखकर समुचित विधि से स्नान किया। स्नान करने के पश्चात् सूर्य को अर्घ्य देकर धुले हुए स्वच्छ वल्कल वस्त्र को पहनकर मुझे उठाकर तपोवन की ओर चल पड़े।

प्रश्नाः

1. कः कमलसरः सिस्नासुः उपागमत्।
2. तपोवने को नाम महातपाः मुनिः प्रतिवसति स्म ?
3. कः वैशम्पायनं सलिलबिन्दून् आपाययत् ?
4. हारीतः कस्य तनयः आसीत् ?
5. कः तपोवनाभिमुखम् अगच्छत् ?
6. हारीतः कं गृहीत्वा तपोवनाभिमुखम् अगच्छत् ?

11. अनतिदूरमिव गत्वा सदासन्निहितकुसुमफलैः काननैः उपगूढम्, वेदाध्ययन–मुखरवटुजनम्, उपचर्यमाणातिथिवर्गम् व्याख्यायमानयज्ञविद्यम्, आलोच्यमानधर्मशास्त्रम्, वाच्यमानविविधपुस्तकम्, विचार्यमाणसकलशास्त्रार्थम् आश्रमम् अपश्यम्। तस्य च एवंविधस्य मध्यभागे रक्ताशोकतरोः अधः छायायाम् उपविष्टम् समन्तात् महनीयैः महर्षिभिः परिवृतम् आयामिनीभिः जटाभिः उपशोभितम्, आनाभिलम्बिकूर्चकलापम्, भगवन्तं जाबालिम् अपश्यम्। हारीतस्तु मां तस्यामेव अशोकतरोः अधः छायायां स्थापयित्वा, पितुः पादौ उपगृह्य कृताभिवादनः, नातिसमीपवर्तिनि कुशासने समुपाविशत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – **सदासन्निहितकुसुमफलैः** = सदा सन्निहितानि कुसुमानि फलानि येषु तैः (बहुव्रीहि)। **वेदाध्ययनमुखरवटुजनम्** = वेदानाम् अध्ययने मुखराः वटुजनाः यस्मिन् यत्र तम्

(बहुव्रीहि)। **उपचर्यमाणातिथिवर्गम्** = उपचर्यमाणाः अतिथीनां वर्गाः यस्मिन् तम् (बहुव्रीहि)। **आनाभिलम्बिकूर्चकलापम्** = नाभिं यावत् आनाभि अवलम्बिनां कूर्चानां कलापः यस्य तम् (बहुव्रीहि)। **कृताभिवादनः** = कृतः + अभिवादनः येन सः। **नातिसमीपवर्तिनि** = न + अति + समीपवर्तिनि।

शब्दार्थः – गत्वा = जाकर। **अनतिदूरमिव** = थोड़ी दूर ही। **सदासन्निहितकुसुमफलैः** = सदा फूल और फल से युक्त। **काननैः** = जंगलों से। **उपगूढम्** = घिरे हुए। **वेदाध्ययनेन** = वेदाध्ययन से। **मुखर** = वाचाल। **वटुजनम्** = ब्रह्मचारियों वाले। **व्याख्यायमानयज्ञविद्यम्** = जहाँ यज्ञ विद्या का व्याख्यान हो रहा था। **उपचर्यमाणातिथिवर्गम्** = जहाँ अतिथियों का सत्कार हो रहा था। **आलोच्यमान–धर्मशास्त्रम्** = जहाँ धर्मशास्त्रों की चर्चा हो रही थी। **वाच्यमानविविधपुस्तकम्** = जहाँ अनेक प्रकार की पुस्तकों का अध्ययन हो रहा था। **अपश्यम्** = देखा। **मध्यभागे** = बीच में। **अधः** = नीचे। **उपविष्टम्** = बैठे हुए। **समन्तात्** = चारों ओर से। **महनीयैः** = पूज्य महर्षियों से। **परिवृतम्** = घिरे हुए। **आयामिनीभिः** = लम्बी। **आनाभिलम्बिकूर्चकलापम्** = नाभि तक लटकी हुई दाढ़ी वाले। **स्थापयित्वा** = रखकर। **पितुः पादौ** = पिता के चरणों को। **कृताभिवादनः** = प्रणाम करके। **समुपाविशत्** = बैठ गये।

अनुवाद – थोड़ी दूर ही जाकर मैंने उस आश्रम को देखा जो सदैव फूल एवं फल से युक्त जंगलों से घिरा हुआ था। जहाँ ब्रह्मचारी उच्च स्वरों से वेद पाठ कर रहे थे। जहाँ अतिथि सत्कार हो रहा था। जहाँ यज्ञ विद्या का व्याख्यान हो रहा था। जहाँ धर्मशास्त्रों की चर्चा हो रही थी। जहाँ अनेक प्रकार की पुस्तकों का अध्ययन हो रहा था और शास्त्र के अर्थों पर विचार हो रहा था। इस प्रकार के आश्रम के बीच में लाल अशोक वृक्ष के नीचे छाया में चारों ओर पूज्य महर्षियों से घिरे हुए, लम्बी जटाओं से सुशोभित और नाभि तक लटकी हुई दाढ़ी से युक्त भगवान् जाबालि को देखा। हारीत ने मुझे उसी अशोक की छाया में रखकर पिता के चरणों को छूकर प्रणाम किया और समीप ही के कुशासन पर बैठ गये।

प्रश्नाः

1. शुकः किम् अपश्यत् ?
2. आश्रमः कीदृशः आसीत् ?
3. कः कुशासने समुपाविशत् ?
4. कः आयामिनीभिः जटाभिः उपशोभितः ?
5. शुकः रक्ताशोकतरोः अधः छायायाम् उपविष्टम् कम् अपश्यत् ?
6. ''अनतिदूरमिव गत्वा सदासन्निहितकुसुमफलैः काननैः उपगूढम् आश्रमम् अपश्यत्'' रेखाङ्कित अंश का हिन्दी अनुवाद कीजिए।

12. आलोक्य तु माम् ते सर्वे एव मुनयः कुतोऽयम् आसादितः शुकशिशुः इति तम् आसीनम् अपृच्छन्। असौ तु तान् अब्रवीत्– ''अयं मया स्नातुम् इतो गतेन कमलिनीसरस्तीरे तरुनीडात् पतितः दूरनिपतनविह्वलतनुः आसादितः। तपस्विदुरारोहतया तस्य वनस्पतेः न शक्यते स्वनीडम् आरोपयितुम् इति जातदयेन आनीतः। अयम् इदानीम् अप्ररूढपक्षतिः, अक्षमोऽन्तरिक्षम् उत्पतितुम्। तत् अत्रैव कस्मिंश्चित् आश्रमतरुकोटरे मुनिकुमारकैः अस्माभिश्च

उपनीतेन नीवारकणनिकरेण फलरसेन च, संवर्ध्यमानः धारयतु जीवितम्। अनाथपरिपालनं हि धर्मः अस्मद्विधानाम्। उद्भिन्नपक्षतिस्तु गगनतलसञ्चरणसमर्थः यास्यति यत्रास्मै रोचिष्यते; इहैव वा उपजातपरिचयः स्थास्यति'' इति।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – कुतोऽयम् = कुतः + अयम्। **स्नातुम्** = स्ना + तुमुन्। **कमलिनीसरस्तीरे** = कमलिनीसरः तस्य तीरे (षष्ठी तत्पुरुषः)। **दूरनिपतनविह्वलतनुः** = दूरात् निपतनात् विह्वलं तनुः यस्य सः (बहुव्रीहिः)। **अत्रैव** = अत्र + एव। **असमद्विधानाम्** = अस्मद् + विधानाम्।

शब्दार्थः – आसादितः = प्राप्त किया गया। **तरुनीडात् (तरोः नीडात्)** = वृक्ष के घोंसले से। **दूरनिपतन** = दूर से गिरने के कारण। **विह्वलतनुः** = व्याकुल कायावाले। **तपस्विदुरारोहतया** = तपस्वियों के द्वारा चढ़ने योग्य न होने से। **आरोपयितुम्** = रखने के लिए। **जातदयेन** = दया आने के कारण। **आनीतः** = लाया। **अप्ररूढपक्षतिः** = पंख न निकले हुए। **अक्षमः** = असमर्थ। **अन्तरिक्षम्** = आकाश। **उत्पतितुम्** = उड़ने के लिए। **उपनीतेन** = लाये गये। **नीवारकणनिकरेण** = नीवार कण के दाने से। **संवर्ध्यमानः** = संवर्धित होते हुए। **अस्मद्विधानाम्** = हमारे जैसे लोगों का। **उद्भिन्नपक्षतिस्तु** = पंख निकलने पर। **गगनतलसंचरणसमर्थः** = आकाश में उड़ने योग्य। **यास्यति** = चला जायेगा। **अस्मै** = इसे। **रोचिष्यते** = अच्छा लगेगा। **इहैव** = यही। **उपजात** = उत्पन्न। **स्थास्यति** = रुक जायेगा।

अनुवाद – वहाँ मुझे बैठे देखकर सभी मुनि पूछने लगे कि इस शुक शावक को कहाँ पाया ? उन्होंने उनसे कहा-यहाँ से जब मैं स्नान करने के लिए गया था तो यह उस कमलों वाले तालाब के किनारे वृक्ष के खोखले से गिरा हुआ था। दूर से गिरने के कारण अत्यन्त विह्ल शरीर वाले, इसे मैंने पाया। मुनियों के लिये उस पेड़ पर चढ़ना दुष्कर था, इसलिए इसको इसके घोंसले में न रख सका और दया के वशीभूत हो इसे ले आया। पंख न निकलने के कारण यह इस समय उड़ने में असमर्थ है। इसीलिए यह यहीं आश्रम के किसी वृक्ष के कोटर में मुनि कुमारों तथा हम लोगों द्वारा लाए गये नीवार के दानों, फल के रसों से पोषित होकर जीवित रहे। हम जैसे लोगों का धर्म ही अनाथों का पालन करना है। जब इसे पंख निकल आयेंगे और आकाश में उड़ने योग्य हो जायेगा तो यह यहाँ से चला जायेगा या परिचित हो जाने के कारण यहीं रुक जायेगा।

प्रश्नाः

1. अस्य गद्यांशस्य प्रणेता कः ?
2. हारीतानुसारेण धर्मः कः ?
3. सर्वे मुनयः कम् अपृच्छन्-कुतोऽयम् आसादितः शुकशिशुः ?
4. कः दूरनिपतनविह्वलतनुः आसीत् ?
5. ''अनाथपरिपालनं हि धर्मः अस्मद्विधानाम्'' रेखांकित अंश का हिन्दी अनुवाद कीजिए।

13. इत्यस्मत्संबद्धम् आलापम् आकर्ण्य, भगवान् जाबालिः माम् अतिप्रशान्तया दृष्ट्या दृष्ट्वा, ''स्वस्यैवाविनयस्य फलम् अनेनानुभूयते'' इत्यवोचत्। श्रुत्वैतत् सर्वैव सा तापसपरिषत् तं भगवन्तम् एवम् उपनाथितवती– आवेदय भगवन्! कीदृशस्य अविनयस्य फलम् अनेन अनुभूयते ? कश्चायमासीत् जन्मान्तरे? विहगजातौ कथमस्य संभवः ? किमभिधानो वा अयम् ? अपनय नः कुतूहलम् इति। एवमुक्तस्तु सः महामुनिः अवादीत्– श्रूयतां यदि कुतूहलम्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – इत्यस्मत्संबद्धम्– इति + अस्मत् + संबद्धम्। **दृष्ट्वा–** दृश् + क्त्वा। **स्वस्यैवाविनयस्य**–स्वस्य + एव + अविनयस्य। **अनेनानुभूयते**–अनेन + अनुभूयते। **कश्चायमासीत्**–कः + च + अयम् + आसीत्। **एवमुक्तस्तु**–एवम् + उक्तः + तु।

शब्दार्थः – आलापम् = बातचीत। **आकर्ण्य** = सुनकर। **मत्संबद्धम्** = मुझसे सम्बन्धित। **अतिप्रशान्तया** = अत्यन्त शान्त। **स्वस्यैवाविनयस्य** = अपने ही पापों का। **अनेन** = इसके द्वारा। **अनुभूयते** = भोगा जा रहा है। **तापसपरिषत्** = तपस्वियों की मंडली। **उपनाथितवती** = प्रार्थना करने लगी। **आवेदय** = बताइए। **जन्मान्तरे** = पूर्व जन्म में। **कश्चायमासीत्** = यह कौन था ? **अभिधानम्** = नाम। **अपनय** = शान्त कीजिए। **नः** = हम लोगों का। **कुतूहलम्** = जिज्ञासा (उत्सुकता)। **अवादीत्** = बोले। **श्रूयताम्** = सुनिए। **यदि कुतूहलम्** = यदि उत्सुकता है तो।

अनुवाद – इस प्रकार मुझसे सम्बन्धित चर्चा सुनकर भगवान् जाबालि ने मुझे शान्त दृष्टि से देखकर कहा कि ''यह अपने ही पापों का फल भोग रहा है।'' यह सुनकर तपस्वियों की मंडली ने भगवान् जाबालि से इस प्रकार प्रार्थना की– भगवान् यह बताइए कि यह शुक किस प्रकार के पापों का फल भोग रहा है? यह पूर्वजन्म में कौन था ? पक्षी योनि में कैसे पैदा हुआ ? इसका नाम क्या है ? हम लोगों की जिज्ञासा का शान्त कीजिए। ऐसा कहने पर उस महामुनि ने कहा– यदि उत्सुकता है तो सुनिए।

प्रश्नाः

1. गद्यांशोऽयम् कस्मात् ग्रन्थात् उद्धृतोऽस्ति?
2. भगवान् जाबालिः किम् अवोचत् ?
3. तापसपरिषत् कम् उपनाथितवती ?
4. 'श्रूयतां यदि कुतूहलम्' इति कस्य उक्तिः ?
5. भगवान् जाबालिः माम् अतिप्रशान्तया दृष्ट्या दृष्ट्वा'' रेखांकित अंश का हिन्दी अनुवाद कीजिए?

14. अस्ति सकलभुवनललामभूता विजितामरलोकद्युतिः अवन्तिषु उज्जयिनी नाम नगरी। तस्यां च नलनहुषययातिप्रतिमः तारापीडो नाम राजा बभूव। तस्य च राज्ञः नीतिशास्त्रप्रयोगकुशलः महत्स्वपि कार्यसङ्कटेषु अविषण्णधीः अमात्यः ब्राह्मणः शुकनासो नाम आसीत्। स राजा बाल एव राजलक्ष्मीलीलोपधानेन बाहुना सप्तद्वीपवलयां वसुन्धरां विजित्य, तस्मिन् शुकनासे राज्यभारम् आरोप्य सुस्थिताः प्रजाः कृत्वा, सुखम् उवास। शुकनासोऽपि महान्तं तं राज्यभारम् अनायासेनैव प्रज्ञाबलेन बभार। एवं मन्त्रिनिवेशितराज्यभारः यौवनसुखम् अनुभवन् स राजा महान्तं कालम् अयापयत्। भूयसापि कालेन सुतमुखदर्शनसुखं न लेभे।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – सकलभुवनललामभूता–सकलाभुवनानां ललामभूता (षष्ठी तत्पुरुषः)। **विजितामरलोकद्युतिः**–विजिता अमरलोकद्युतिः यया सा (बहुव्रीहिः)। **नीतिशास्त्रप्रयोगकुशलः**– नीतेः शास्त्रं तस्य प्रयोगे कुशलः (तत्पुरुषः)। **महत्स्वपि**–महत् + सु + अपि। **अनायासेनैव**–अनायासेन + एव। **मन्त्रिनिवेशितराज्यभारः**– मन्त्रिणिनिवेशित राज्यस्य भारः येन सः (बहुव्रीहिः)।

शब्दार्थ – विजितामरलोकद्युतिः = देवलोक की कान्ति को जीत लेने वाली। **सकलभुवनललामभूता** = सम्पूर्ण विश्व में सबसे सुन्दर। **नलनहुषययातिप्रतिमः** = नल, नहुष और ययाति के समान। **कार्यसंकटेषु** = कार्य की कठिनाइयों में। **अविषण्णधीः** = तीव्र बुद्धि वाले। **राजलक्ष्मीलीलोपधानेन** = राजलक्ष्मी प्राप्त करने वाले। **सप्तद्वीपवलयाम्** = सात द्वीपों वाली। **वसुन्धराम्** = पृथ्वी को। **राज्यभारम्** = राज्य का बोझ। **आरोप्य** = देकर। **सुस्थिताः** = निश्चिन्त। **अयापयत्** = बिता दिया। **भूयसापि कालेन** = बहुत समय बीत जाने पर भी। **सुतमुखदर्शनसुखम्** = पुत्र-मुख देखने का सुख। **लेभे** = प्राप्त किया।

अनुवाद – विश्व में सबसे सुन्दर तथा देवलोक की शोभा को जीत लेने वाली अवन्ति में उज्जयिनी नाम की जो नगरी है उसमें नल, नहुष, और ययाति के समान तारापीड नाम के एक राजा हुए। उस राजा का शुकनास नाम का एक ब्राह्मण मंत्री था जिसकी बुद्धि बड़े-बड़े संकटरूपी कार्य में स्थिर रहती थी। उस राजा ने बचपन से ही राजलक्ष्मी के विलास के तकिए के समान अपनी बाहु से सातों द्वीपों वाली पृथ्वी को बचपन में ही जीत लिया और प्रजा को निश्चिन्त करके तथा राज्य का भार मंत्री के ऊपर डालकर सुखपूर्वक रहने लगे। शुकनास ने अपनी बुद्धि के बल से उस राज्य के भार को सरलता से धारण कर लिया। मंत्री के ऊपर राज्य रुपी भार को रखकर युवावस्था का आनन्द लेते हुए बहुत समय बिता दिया। लेकिन बहुत समय व्यतीत होने पर भी वह अपने पुत्र का मुख देखने का सुख न पा सका।

प्रश्नाः

1. तारापीडः कः आसीत् ?
2. तारापीडस्य अमात्यः कः आसीत् ?
3. नलनहुषययातिप्रतिमः को नाम राजा बभूव ?
4. कः भूयसापि कालेन सुतमुखदर्शनसुखं न लेभे ?
5. विजितामरलोकद्युतिः का नाम नगरी अस्ति ?
6. तारापीडः कस्मिन् राज्यभारम् आरोप्य सुखम् उवास ?

15. तस्य विलासवती नाम महिषी भगवन्तं महाकालम् अभ्यर्चितुं गता, तत्र महाभारते वाच्यमाने "अपुत्राणां न सन्ति लोकाः शुभाः" इति श्रुत्वा, नितरां परितप्यमाना, ततः प्रभृति, देवताराधनेषु ब्राह्मणपूजासु गुरुजनसपर्यासु च सुतराम् आदरवती बभूव। एवं गच्छति काले कदाचित् राजा चरमे यामिनीयामे स्वप्ने विलासवत्याः वदने सकलकलापरिपूर्णमण्डलं शशिनं

प्रविशन्तम् अद्राक्षीत्। प्रबुद्धश्चोत्थाय तस्मिन्नेव क्षणे समाहूय शुकनासाय तं स्वप्नम् अकथयत्। स च समुपजातहर्षः प्रत्युवाच, "देव! संपन्नाः सुचिरात् अस्माकं प्रजानां च मनोरथाः। कतिपयैरेवाहोभिः असंदेहम् अनुभवति स्वामी सुतमुखकमलावलोकनसुखम्। अद्य खलु मयापि स्वप्ने दिव्याकृतिना शान्तमूर्तिना द्विजेन केनचित् विकचं पुण्डरीकम् उत्सङ्गे देव्याः मनोरमायाः निहितं दृष्टम्। अवितथफलाश्च प्रायः निशावसानसमयदृष्टाः भवन्ति स्वप्नाः।" इति।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – श्रुत्वा–श्रु + क्त्वा। **देवताराधनेषु**–देवता + आराधनेषु। **गुरुजनसपर्यासु**–गुरुजनानां सपर्यासु। **प्रबुद्धश्चोत्थाय**–प्रबुद्धः + च + उत्थाय। **कतिपयैरेवाहोभिः**–कतिपयैः + एव + अहोभिः। **सुतमुखकमलावलोकनसुखम्**–सुतस्य मुखं तदेव कमलं तस्य अवलोकन–सुखम्। **प्रत्युवाच**–प्रति + उवाच।

शब्दार्थः – महाकालम् = शिव को। **महिषी** = प्रधान रानी या पटरानी। **अभ्यर्चितुम्** = पूजने के लिए। **वाच्यमाने** = पढ़े जाने पर। **अपुत्राणाम्** = पुत्रहीनों का। **परितप्यमाना** = दुःखी होती हुई। **देवताराधनेषु** = देवताओं की आराधना में। **गुरुजनसपर्यासु** = गुरुजन या बड़े लोगों के आदर सत्कार में। **आदरवती बभूव** = श्रद्धा वाली हो गयी। **चरमे** = अन्तिम। **यामिनीयामे** = रात के प्रहर में। **वदने** = मुख में। **सकलकलापरिपूर्णमंडलम्** = सम्पूर्ण कलाओं से परिपूर्ण। **शशिनम्** = चन्द्रमा को। **प्रविशन्तम्** = प्रवेश करते हुए। **अद्राक्षीत्** = देखा। **प्रबुद्धः** = जागकर। **उत्थाय** = उठकर। **समाहूय** = बुलाकर। **समुपजातहर्षः** = प्रसन्न होते हुए। **प्रत्युवाच** = उत्तर दिया। **सम्पन्नाः** = पूर्ण हुई। **कतिपयैरेवाहोभिः** = कुछ दिनों में। **असंदेहम्** = निश्चय ही। **सुतमुखकमलावलोकनसुखम्** = पुत्र के मुख कमल को देखने का सुख। **दिव्याकृतिना** = दिव्य आकृति वाले। **द्विजेन** = ब्राह्मण द्वारा। **विकचम्** = खिले हुए। **पुण्डरीकम्** = श्वेत कमल को। **उत्संगे** = गोद में। **निहितम्** = रखा हुआ। **अवितथफलाः** = सच्चे फल देने वाले। **निशावसानसमयदृष्टाः** = रात के अन्त में देखे गये।

अनुवाद – विलासवती नाम की उनकी पटरानी एक बार महाकाल की पूजा के लिए गयी। वहाँ उन्होंने महाभारत की कथा में सुना कि पुत्रहीनों के लिए लोक शुभ नहीं होते। अर्थात् पुत्ररहित मनुष्य को स्वर्गादि की प्राप्ति नहीं होती। अत्यधिक दुःखी होती हुई वह उसी समय से देवताओं की आराधना, ब्राह्मणों की पूजा और गुरुजनों के सत्कार में श्रद्धा रखने लगी। कुछ समय बीतने पर राजा ने रात्रि के अन्तिम प्रहर में स्वप्न देखा कि पूर्ण चन्द्रमा विलासवती के मुख में प्रवेश कर रहा है। जागकर और उठकर उसी समय शुकनास को बुलवाकर राजा ने स्वप्न को बताया। शुकनास ने प्रसन्न होकर कहा-राजन् बहुत दिनों के पश्चात् हम लोगों एवं प्रजा की अभिलाषा पूर्ण हुई। अतिशीघ्र निश्चय ही पुत्र के मुखदर्शन का सुख पायेंगे। आज मेरे द्वारा स्वप्न देखा गया, जिसमें एक दिव्य एवं शान्तमूर्ति वाले ब्राह्मण के द्वारा देवी मनोरमा की गोद में खिला हुआ श्वेत कमल रखा गया है। प्रायः रात के अन्तिम प्रहर में देखे गये स्वप्न अवश्य फल देने वाले होते हैं।

प्रश्नाः

1. विलासवती कुत्र गता ?
2. राजा स्वप्ने विलासवत्याः वदने किम् प्रविशन्तम् अद्राक्षीत् ?
3. का नाम महिषी भगवन्तं महाकालम् अभ्यर्चितुं गता ?
4. केन विकचं पुण्डरीकम् उत्सङ्गे देव्याः मनोरमायाः निहितं दृष्टम् ?
5. कीदृग्फलाः प्रायः निशावसानसमयदृष्टाः भवन्ति स्वप्नाः ?
6. ''अपुत्राणां न सन्ति लोकाः शुभाः'' रेखाङ्कित अंश का अनुवाद कीजिए?

16. कतिपयदिवसापगमे च देवताप्रसादात् विवेश गर्भो विलासवतीम्। शनैः शनैश्च प्रतिदिनम् उपचीयमानगर्भा सा पूर्णे प्रसवसमये प्रशस्तायां वेलायां सकललोकहृदयानन्दकारिणं सुतम् असूत। अथ पार्थिवः मौहूर्तिकगणोपदिष्टे प्रशस्ते मुहूर्ते शुकनासद्वितीयः मङ्गलकलशयुगलाशून्येन द्वारदेशेन विराजमानम्, अविच्छिन्नपठ्यमाननारायणनामसहस्रम्, सूतिकागृहं प्रविश्य विलासवत्याः प्रसवपरिक्षामपाण्डुमूर्तेः उत्सङ्गगतम् महापुरुषलक्षणोपेतम् आत्मजम् ददर्श। विगतनिमेषेण निश्चलपक्ष्मणा चक्षुषा पिबन् इव सस्पृहम् ईक्षमाणः तनयाननम् अतितराम् मुमुदे।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – कतिपयदिवसापगमे–कतिपयाश्च दिवसाः तेषाम् अपगमे (षष्ठी तत्पुरुषः)। **सकललोकहृदयानन्दकारिणम्**–सकलाः लोकाः तेषाम् हृदयानन्दकारिणम्। **मौहूर्तिकगणोपदिष्टे**–मुहूर्तं जानन्ति ये ते मौहूर्तिकाः तेषां गणः तेन उपदिष्टः तस्मिन् (षष्ठी तत्पुरुषः)। **मङ्गलकलशयुगलाशून्येन**– मङ्गलं च तत् कलशयुगलं तेन अशून्यम् तेन। **प्रसवपरिक्षामपाण्डुमूर्तेः**– प्रसवात् परिक्षामः पाण्डुः मूर्तिः यस्याः सा तस्याः (बहुव्रीहिः)। **महापुरुषलक्षणोपेतम्**–महतां च पुरुषाणां लक्षणानि तानि उपेतः तम्। **तनयाननम्**–तनयस्य आननम् तम् (षष्ठी तत्पुरुषः)।

शब्दार्थ – कतिपय = कुछ। **दिवसापगमे** = दिन बीत जाने पर। **देवताप्रसादात्** = देवताओं की कृपा से। **विवेश** = प्रवेश किया। **शनैः शनैः** = धीरे-धीरे। **उपचीयमानगर्भा** = बढ़ते हुए गर्भवाली। **प्रसवः** = बच्चे को जन्म देना। **प्रशस्त** = अत्यन्त श्रेष्ठ। **वेलायाम्** = समय में। **सकललोक–हृदयानन्दकारिणम्** = सम्पूर्ण लोक के हृदय को आनन्दित करने वाले। **सुतम्** = पुत्र को। **असूत** = जन्म दिया। **अथ** = इसके बाद। **पार्थिवः** = राजा ने। **मौहूर्तिकगणोपदिष्टे** = मुहूर्त के जानकारों द्वारा बताये गये। **मुहूर्ते** = समय में। **शुकनासद्वितीयः** = शुकनास के साथ (शुकनासः द्वितीयः यस्य सः)। **मङ्गलकलशयुगलाशून्येन** = दो मङ्गल कलशों से युक्त। **द्वारदेशेन** = दरवाजे से। **विराजमानम्** = सुशोभित। **अविच्छिन्नपठ्यमाननारायणनामसहस्रम्** = निरन्तर पढ़े जाते हुए नारायणसहस्रनाम वाले। **सूतिकागृहम्** = प्रसूतिगृह (बच्चा जन्मने का घर)। **प्रसवपरिक्षामपाण्डुमूर्तेः** = बच्चे को जन्म देने के कारण क्षीण और पीले शरीर वाली। **विलासवत्याः** = विलासवती के। **उत्सङ्गतम्** = गोद में स्थित। **महापुरुषलक्षणोपेतम्** = महापुरुष के लक्षणों (को प्राप्त) से युक्त। **आत्मजम्** = पुत्र को। **ददर्श** = देखा। **विगतनिमेषेण** = बिना पलक गिराये, निर्निमेष। **निश्चलपक्ष्मणा** = स्थिर बरौनियों वाले, एकटक।

चक्षुषा = दृष्टि से। **पिबन् इव** = पीते हुए–से (अत्यधिक देखते हुए)। **सस्पृहम्** = विशेष चाह के साथ। **ईक्षमाणः** = देखता हुआ। **तनयाननम्** = पुत्र के मुख को। **अतितराम्** = अत्यधिक। **मुमुदे** = प्रसन्न हुआ।

अनुवाद – और कुछ दिन बीतने पर देवताओं की कृपा से रानी विलासवती ने गर्भ धारण किया और धीरे-धीरे प्रतिदिन पुष्ट होते हुए गर्भवाली उस (रानी) ने प्रसव का समय पूर्ण हो जाने पर श्रेष्ठ (शुभ) समय में सम्पूर्ण संसार के हृदय को आनन्दित करनेवाले पुत्र को जन्म दिया। इसके बाद राजा (तारापीड) ने मुहूर्त्त के जानकारों द्वारा बताये गये श्रेष्ठ मुहूर्त्त में शुकनास सहित दो मङ्गल कलशों से युक्त दरवाजे से निरन्तर पढ़े जाते हुए नारायणसहस्रनाम वाले प्रसूति-गृह में प्रवेश करके प्रसव (बच्चे को जन्म देने) के कारण क्षीण और पीले शरीरवाली विलासवती की गोद में स्थित महापुरुषों के लक्षणों से युक्त पुत्र को देखा। बिना पलक गिराये एकटक दृष्टि से पीते हुए-से विशेष चाह के साथ पुत्र के मुख को देखते हुए अत्यधिक प्रसन्न हुआ।

प्रश्नाः

1. गद्यांशोऽयं कस्मात् पुस्तकात् समुद्धृतः ?
2. 'विगतनिमेषेण निश्चलपक्ष्मणा चक्षुषा पिबन् इव सस्पृहं ईक्षमाणः तनयाननम् अतितरां मुमुदे।' अस्य वाक्यस्य हिन्दीभाषायाम् अनुवादं कुरुत।
3. कस्य प्रसादात् विवेश गर्भो विलासवतीम् ?
4. राजा तारापीडः केन सह सूतिकागृहं प्राविशत् ?
5. तनयाननम् ईक्षमाणः कः अतितरां मुमुदे ?

17. तस्मिन्नेव समये शुकनासस्यापि ज्येष्ठायां ब्राह्मण्यां मनोरमायां तनयः जातः। अथ नृपतिः अमृतवृष्टिप्रतिमम् तज्जननवृत्तान्तम् आकर्ण्य, "अहो कल्याणपरम्परा" इत्यभिधाय, शुकनासभवनं गत्वा द्विगुणतरम् उत्सवम् अकारयत्। प्राप्ते च दशमेऽहनि पुण्ये मुहूर्ते स्वप्नानुरूपमेव राजा स्वसूनोः "चन्द्रापीडः" इति नाम चकार। अपरेद्युः शुकनासोऽपि ब्राह्मणोचिताः सकलाः क्रियाः कृत्वा, विप्रजनोचितम् आत्मजस्य 'वैशम्पायनः' इति नाम चक्रे। क्रमेण च कृतचूडाकरणादिबालक्रियाकलापस्य शैशवम् अतिचक्राम सवैशम्पायनस्य चन्द्रापीडस्य।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – अमृतवृष्टिप्रतिमम् = अमृतस्य वृष्टिः तस्य प्रतिमा यस्य तम् (षष्ठी तत्पुरुष)। **तज्जननवृत्तान्तम्** = तस्य जननं तज्जननं तस्य वृत्तान्तः तम् (षष्ठी तत्पुरुषः)। **इत्यभिधाय** = इति + अभिधाय, यण् सन्धिः। **कृतचूडाकरणादिबालक्रियाकलापस्य**–कृतः चूडाकरणादिबालक्रियाकलापः यस्य तस्य (बहुव्रीहिः)।

शब्दार्थः – तस्मिन् एव समये = उसी समय। **ज्येष्ठायाम्** = बड़ी। **ब्राह्मण्याम्** = ब्राह्मणी में। **तनयः** = पुत्र। **जातः** = पैदा हुआ। **अमृतवृष्टिप्रतिमम्** = अमृतवर्षा के समान। **तज्जननवृत्तान्तम्** = उसके जन्म का समाचार। **आकर्ण्य** = सुनकर। **इत्यभिधाय** = ऐसा कहकर। **द्विगुणतरम्** =

दोगुना। **अकारयत्** = कराया। **दशमेऽहनि** = दसवें दिन। **अपरेद्युः** = दूसरे दिन। **कृतचूडाकरणादिबालक्रियाकलापस्य** = जिनकी मुण्डन आदि बाल-क्रियाएँ की गयी हों, उसका। **अतिचक्राम** = व्यतीत हुआ।

अनुवाद – उसी समय शुकनास की भी ज्येष्ठ पत्नी मनोरमा को पुत्र उत्पन्न हुआ। इसके पश्चात् राजा ने अमृत की वर्षा के समान उसके जन्म का समाचार सुनकर, ''अरे कल्याण की परम्परा'' ऐसा कहकर, शुकनास के भवन जाकर दोगुना उत्सव मनाया। और दसवें दिन पुण्य मुहूर्त में स्वप्न के अनुरूप ही राजा ने अपने पुत्र का 'चन्द्रापीड' ऐसा नाम रखा। दूसरे दिन शुकनास ने भी ब्राह्मण वर्ण के अनुरूप समस्त क्रियाओं को करके, ब्राह्मणों के अनुरूप अपने पुत्र का 'वैशम्पायन' ऐसा नाम रखा। और क्रमशः वैशम्पायन के साथ चन्द्रापीड का मुण्डन आदि बालोचित क्रिया कलाप के साथ शैशवकाल व्यतीत हुआ।

प्रश्नाः

1. मनोरमा का ?
2. कस्यां तनयः जातः ?
3. शुकनासभवनं गत्वा कः द्विगुणतरम् उत्सवम् अकारयत् ?
4. तारापीडः स्वपुत्रस्य किं नाम चकार ?
5. 'आत्मजस्य' इति पदस्य अर्थः किम् ?
6. शुकनासतनयस्य नाम किम् ?'

18. अथ तारापीडो बहिर्नगरात् अनुशिप्रम् अतिमहता सुधाधवलेन प्राकारमण्डलेन परिवृतं विद्यामन्दिरम् अकारयत्। तत्र शोभने दिवसे चन्द्रापीडम् वैशम्पायनद्वितीयम् आचार्येभ्यः निखिलविद्योपादानार्थम् अर्पयाम्बभूव। प्रतिदिनम् सह विलासवत्या तत्रैव गत्वा एनम् आलोकयामास। चन्द्रापीडोऽपि अचिरेणैव कालेन, यथास्वम् आत्मकौशलं प्रकटयद्भिः पात्रवशात् उपजातोत्साहैः आचार्यैः उपदिश्यमानाः सर्वाः विद्याः जग्राह। तथा हि पदे, वाक्ये, प्रमाणे, धर्मशास्त्रे, राजनीतिषु, व्यायामविद्यासु, सर्वेष्वायुधविशेषेषु, रथचर्यासु, गजपृष्ठेषु, तुरङ्गमेषु, वीणावेणुप्रभृतिषु, वाद्येषु, नृत्तशास्त्रेषु, गान्धर्वविद्यासु, शकुनिरुतज्ञाने, यन्त्रप्रयोगे, विषापहरणे, सर्वलिपिषु, सर्वदेशभाषासु, अन्येष्वपि कलाविशेषेषु परं कौशलम् अवाप। सहजा चास्य वृकोदरस्येव आविर्बभूव सर्वलोकविस्मयजननी महाप्राणता। एकैकेन कृपाणप्रहारेण बालतरून् मृणालदण्डानिव लुलाव। दशपुरुषसंवहनयोग्येन अयोदण्डेन श्रमम् अकरोत्। ऋते च महाप्राणतायाः सर्वाभिः अन्याभिः कलाभिः अनुचकार तं वैशम्पायनः। सः चन्द्रपीडस्य सर्वविस्रम्भस्थानम् द्वितीयमिव हृदयं परं मित्रम् आसीत्। निमेषमपि तेन विना स्थातुं न शशाक। वैशम्पायनोऽपि तं न क्षणमपि विरहयाञ्चकार।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – आत्मकौशलम् = आत्मनः कौशलम् तत् (षष्ठी तत्पुरुषः)। **अनुशिप्रम्** = शिप्रायाः समीपम् (अव्ययीभावः समासः)। **सुधाधवलेन** = सुधया धवलेन (तृतीया तत्पुरुषः)। **उपजातोत्साहैः** = उपजातः उत्साहः येषां तैः (बहुव्रीहिः)। **कृपाणप्रहारेण** = कृपाणस्य प्रहारः तेन (षष्ठी तत्पुरुषः)। **विद्यामन्दिरम्** = विद्यायाः मन्दिरम् (षष्ठी तत्पुरुषः)।

शब्दार्थः – अनुशिप्रम् = शिप्रा नदी के किनारे। **सुधाधवलेन** = चूने से सफेद। **प्राकारमण्डलेन** = चहारदीवारी से। **यथास्वम्** = अपनी सामर्थ्य के अनुसार। **वृकोदरस्येव** = भीम के समान। **शकुनिरुतज्ञाने** = पक्षियों की भाषा के ज्ञान में। **सर्वविस्रम्भस्थानम्** = सभी प्रकार का विश्वासपात्र। **निमेषमपि** = पल भर भी। **परिवृतम्** = घिरा हुआ। **निखिलविद्योपादानार्थम्** = समस्त विद्याओं के अध्ययन हेतु। **अर्पयाम्बभूव** = सौंप दिया। **वेणु** = बाँसुरी। **कृपाणप्रहारेण** = तलवार के प्रहार से। **लुलाव** = काट देता था। **दशपुरुषसंवहनयोग्येन** = दस पुरुषों के द्वारा उठाये जा सकने योग्य। **अयोदण्डेन** = लोहे के दण्ड से। **विरहयाञ्चकार** = छोड़ता था।

अनुवाद – तदनन्तर तारापीड ने नगर से बाहर शिप्रा नदी के किनारे बहुत बड़ी चूने से (चूने से पुते होने के कारण) उजले चहारदीवारी से घिरी पाठशाला बनवायी। वहाँ शुभदिन वैशम्पायन के साथ चन्द्रापीड को आचार्यों द्वारा समस्त विद्यायें सीखने भेजा। प्रतिदिन रानी विलासवती के साथ वहाँ जाकर उनको देख लेते थे। चन्द्रापीड ने भी शीघ्र ही अपनी सामर्थ्य भर अपने कौशल को प्रकट करते हुए योग्य पात्र पाकर उत्साहित आचार्यो द्वारा उपदेश दिये जाते हुए समस्त विद्यायें प्राप्त कर ली। जैसा कि व्याकरण में, मीमांसा में, न्यायविद्या में, धर्मशास्त्र में, राजनीति में, व्यायामविद्या में, सभी आयुध विशेषों में, रथ हाँकने में, हाथी की सवारी में, घुड़सवारी में, वीणा, बासुँरी इत्यादि में, वाद्यों में, नृत्यशास्त्र में, गान्धर्वविद्या में, पक्षियों की भाषा-ज्ञान में, यन्त्र-प्रयोग में, विष को दूर करने में, सभी लिपियों में सभी देश की भाषाओं में, अन्य कलाविशेषों में भी परम कुशलता प्राप्त की। और उसमें सहज ही भीम के समान सभी लोकों को आश्चर्यचकित करने वाली महानशक्ति उत्पन्न हुई। एक ही कृपाण के प्रहार से बाल तरुओं को मृणालदण्ड के समान काट देता था। दश पुरूषों द्वारा उठाए जा सकने वाले लोहे के दण्ड से व्यायाम करता था। शारीरिक शक्ति को छोड़कर सभी अन्य कलाओं में वैशम्पायन ने उसका अनुकरण किया। वह चन्द्रापीड का विश्वासपात्र, मानों दूसरे हृदय के समान परम मित्र था। क्षणभर भी उसके बिना नहीं रहता था। वैशम्पायन भी उसको क्षणभर भी नहीं छोड़ता।

प्रश्नाः

1. तारापीडः कुत्र विद्यामन्दिरम् अकारयत् ?
2. कस्याः नद्याः समीपे पाठशाला आसीत् ?
3. कस्य वृकोदरस्येव महाप्राणता आविर्बभूव ?
4. वृकोदर इति पदस्य तात्पर्यं किम् ?
5. चन्द्रापीडस्य अभिन्नं मित्रं किम् ?

19. अथ तस्य चन्द्रापीडस्य यौवनारम्भः प्रादुर्भवन् द्विगुणां रमणीयतां पुपोष। वक्षःस्थलं वितस्तार। ऊरुदण्डद्वयम् अपूर्यत। मध्यभागः तनिमानम् अभजत्। नितम्बभागः प्रथिमानम् आततान। भुजयुगलं प्रलम्बताम् उपययौ। भुजशिखरदेशः गुरुः बभूव। स्वरश्च गम्भीरताम् आजगाम। एवं च क्रमेण समारूढयौवनारम्भम् अधीताशेषविद्यम् अनुमोदितम् आचार्यैः चन्द्रापीडम् आनेतुं राजा बलाधिकृतं वलाहकनामानं प्राहिणोत्। स गत्वा विद्यागृहम्,

द्वाःस्थैः समावेदितः प्रविश्य प्रणम्य व्यजिज्ञपत्– ''कुमार! महाराजः समाज्ञापयति– पूर्णाः नः मनोरथाः।'' अधीतानि शास्त्राणि अनुमतोऽसि निर्गमाय सर्वाचार्यैः। अयम् अत्र भवतो दशमः वत्सरः विद्यागृहम् अधिवसतः। प्रविष्टोऽसि षष्ठे वर्षे। एवं संपिण्डितेन षोडशेन प्रवर्धसे। तत् अद्य निर्गत्य यथासुखम् अनुभव राज्यसुखानि।''

व्याकरणात्मक टिप्पणी – **राज्यसुखानि** = राज्यस्य सुखानि (षष्ठी तत्पुरुषः)। **यौवनारम्भः** = यौवनस्य आरम्भः (षष्ठी तत्पुरुषः)। **अधीताशेषविद्यम्** = अधीताः अशेषाः विद्याः येन तम् (बहुव्रीहिः)। **निर्गत्य**– निर् + गम् + ल्यप् प्रत्यय। **भुजयुगलम्** = भुजयोः युगलम् (षष्ठी तत्पुरुषः)।

शब्दार्थः – **ऊरुदण्डद्वयम्** = दोनों जाँघें। **तनिमानम्** = क्षीणता को। **प्राहिणोत्** = भेजा। **संपिण्डितेन** = मिलाने से। **निर्गमाय** = जाने के लिए। **प्रथिमानम्** = स्थूलता। **प्रादुर्भवन्** = प्रकट होता हुआ। **पुपोष** = पोषित किया। **वितस्तार** = विस्तृत हो गयी। **प्रलम्बताम्** = लम्बापन को। **उपययौ** = प्राप्त हो गयी। **आनेतुम्** = लाने के लिए। **गुरुः** = भारी। **अधीताशेषविद्यम्** = सभी विद्याओं को सीखकर। **बलाधिकृतम्** = सेनापति को। **द्वाःस्थैः** = द्वारपालों द्वारा। **व्यजिज्ञपत्** = निवेदन किया (सूचित किया)।

अनुवाद – इसके पश्चात् उस चन्द्रापीड में युवावस्था का आरम्भ होने से दुगुनी रमणीयता का प्रादुर्भाव हुआ। वक्षस्थल विस्तृत हो गया। दोनों जाँघे भर गयीं। मध्यभाग कृश हो गया। नितम्ब मोटे होकर फैल गये। दोनों भुजाएँ लम्बी हो गयीं। भुजाओं के सिरे भारी हो गये और वाणी में गम्भीरता आ गयी। और इसी प्रकार क्रम से युवावस्था में प्रविष्ट, समस्त विद्याओं को सीख कर, आचार्यों द्वारा अनुमोदन प्राप्त करके चन्द्रापीड को लेने के लिए राजा ने बलाहक नाम के सेनापति को भेजा। वह विद्यागृह जाकर, द्वारपालों द्वारा निवेदित होकर भीतर पहुँचा और प्रणाम करके बोला' ''कुमार! महाराज आज्ञा देते हैं – हमारे मनोरथ पूर्ण हुए। आपने शास्त्रों का अध्ययन कर लिया एवं आचार्यों द्वारा जाने की अनुमति प्राप्त हो गयी है। यहाँ विद्यागृह में रहते हुए आपका दसवाँ वर्ष है। छः वर्ष में यहाँ प्रवेश किया था, इस प्रकार मिलाकर सोलह वर्ष के हो गये हैं। अतः आज यहाँ से निकलकर राज्यसुखों का अनुभव करें।''

प्रश्नाः

1. कस्य यौवनारम्भः प्रादुर्भवन् ?
2. तारापीडः चन्द्रापीडम् आनेतुं कम् प्रेषितवान् ?
3. कदा चन्द्रापीडः विद्यामन्दिरे प्रविष्टः ?
4. कति वर्षाणि चन्द्रापीडः तत्र न्यवसत् ?
5. वलाहकः कः आसीत् ?
6. 'बलाधिकृतः' इति शब्दस्य कः अर्थः ?

20. अयं च ते त्रिभुवनैकरत्नम् इन्द्रायुधनामा तुरङ्गमः महाराजेन प्रेषितः द्वारि तिष्ठति। एष खलु देवस्य पारसीकाधिपतिना 'जलनिधिजलात् उत्थितम् अयोनिजम् अश्वरत्नम् आसादितं मया महाराजाधिरोहणयोग्यम्' इति संदिश्य प्रहितः। तदयम् अनुगृह्यताम् अधिरोहणेन''

इत्यभिधाय विरतवचसि वलाहके चन्द्रापीडः पितुः आज्ञां शिरसि कृत्वा, निर्जिगमिषुः अखिललक्षणोपेतम् अतिप्रमाणम् इन्द्रायुधम् अद्राक्षीत्। दृष्ट्वा च तम् अदृष्टपूर्वम् अश्वरूपातिशयं नितरां चन्द्रापीडः विस्मितः बभूव। आसीच्चास्य मनसि– अतितेजस्वितया महाप्राणतया च सदैवतेव इयम् अस्य आकृतिः। यत् सत्यम् आरोहणे शङ्कामिव मे जनयति। दैवतान्यपि हि शापवशात् शरीरान्तराणि अध्यासत एव। असंशयम् अनेनापि केनापि महात्मना शापभाजा भवितव्यम्। आवेदयतीव मदन्तःकरणम् अस्य दिव्यताम्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – संदिश्य = सम् + दिश् + ल्यप् प्रत्यय। **कृत्वा** = कृ + क्त्वा प्रत्यय। **निर्जिगमिषुः**= निर् + गम् + सन्नन्त प्रत्यय (द्वित्व)। **आकृतिः** = आ + कृ + क्तिन्। **भवितव्यम्** = भू + तव्यत्। **प्रेषितः** = प्रेष् + क्त। **त्रिभुवनैकरत्नम्** = त्रयाणां भुवनानाम् एकमेव रत्नम् (षष्ठी तत्पुरुषः)। **इन्द्रायुधनामा** = इन्द्रस्य आयुधम् तदेव नाम यस्य सः (बहुव्रीहिः)।

शब्दार्थः – त्रिभुवनैकरत्नम् = तीनों लोकों का एक मात्र रत्न। **तुरङ्गमः** = घोड़ा। **पारसीकाधिपतिना** = फारस देश के राजा। **निर्जिगमिषुः** = जाने की इच्छा वाला। **अदृष्टपूर्वम्** = पहले नहीं देखे गये। **प्रेषितः** = भेजा गया। **जलनिधिजलात्** = समुद्र के जल से। **आसादितम्** = प्राप्त किया। **संदिश्य** = सन्देश देकर। **शिरसि कृत्वा** = शिरोधार्य करके। **अध्यासते** = आश्रय लेते हैं। **शापभाजा** = शापग्रस्त।

अनुवाद – और यह तुम्हारे लिए तीनों लोकों के रत्न स्वरूप इन्द्रायुध नाम का अश्व महाराज द्वारा भेजा हुआ द्वार पर स्थित है। यह फारस देश के राजा द्वारा– ''समुद्र के जल से निकला, अयोनिज अश्वरत्न महाराज की सवारी के योग्य है, ऐसा मेरा मानना है''– यह संदेश देकर भेजा गया है। अतः इस पर सवारी करके इसे अनुगृहीत करें। ऐसा कहकर वलाहक के चुप हो जाने पर चन्द्रापीड ने पिता की आज्ञा शिरोधार्य करके, जाने की इच्छा से समस्त लक्षणों से युक्त, बड़ी आकृति वाले इन्द्रायुध को देखा। और पहले न देखे गये, अश्व के रूप का अतिक्रमण करने वाले उसको देखकर चन्द्रापीड अत्यन्त विस्मित हो गया। और मन में विचार किया– अत्यन्त तेजस्विता एवं शक्ति के कारण इसकी आकृति देवता के समान प्रतीत हो रही है। जिससे सत्य ही इस पर सवारी करने में शङ्का उत्पन्न हो रही है। देवता भी शाप के वश दूसरे शरीर को धारण किए हैं। निःसन्देह ये किसी महात्मा के शाप से ग्रस्त होकर उत्पन्न हुए हैं। मेरा अन्तःकरण इनकी दिव्यता को बता रहा है।

प्रश्नाः

1. इन्द्रायुधः कः ?
2. तारापीडः इन्द्रायुधं कुतः प्राप्तवान् ?
3. इन्द्रायुधं दृष्ट्वा चन्द्रापीडः किम् अचिन्तयत् ?
4. 'निर्जिगमिषुः' शब्दस्य अर्थः किम् ?
5. त्रिभुवनैकरत्नम् कः ?

21. इति विचिन्तयन्नेव आरुरुक्षुः तं तुरङ्गमम् उपसृज्य, महात्मन्! अर्वन्! योऽसि सोऽसि। नमोऽस्तु ते। मर्षणीयोऽयम् आरोहणातिक्रमः इति आमन्त्रयांबभूव। विदिताभिप्राय इव सः इन्द्रायुधः तम् तिर्यक् चक्षुषा विलोक्य, ह्रेषारवम् अकरोत्। अथानेन मधुरह्रेषितेन दत्ताभ्यनुज्ञ इव इन्द्रायुधम् आरुह्य चन्द्रापीडः तुरगान्तरारूढेन वैशम्पायनेन अनुगम्यमानः, प्रस्थाय सकुतूहलैः नागरलोकैः प्रणम्यमानः, राजगृहद्वारम् आसाद्य तुरगात् अवततार। अवतीर्य च करतले करे वैशम्पायनम् अवलम्ब्य, सविनयं पुरः प्रस्थितेन वलाहकेन उपदिश्यमानमार्गः, सप्तकक्षान्तराणि अतिक्रम्य, हंसधवले शयनतले निषण्णम् पितरम् अपश्यत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – उपसृज्य = उप + सृज् + ल्यप्। **अनुगम्यमानः** = अनु + गम् + यक् + शानच् प्रत्यय। **प्रस्थाय** = प्र + स्था + ल्यप्। **उपदिश्यमानमार्गः** = उपदिश्यमानः मार्गः यस्मै सः (बहुव्रीहिः)। **विचिन्तयन्** = वि + चिन्त् + शतृ। **निषण्णम्** = नि + सद् + क्त + द्वितीया एकवचन।

शब्दार्थः – आरुरुक्षुः = चढ़ने की इच्छा। **मर्षणीयः** = क्षमा के योग्य। **आरोहणातिक्रमः** = चढ़ने का अपराध। **ह्रेषारवम्** = हिनहिनाने का शब्द। **निषण्णम्** = बैठे हुए। **विचिन्तयन्** = विचार करते हुए। **विदिताभिप्रायः** = अभिप्राय को जानता हुआ। **तिर्यक्चक्षुषा** = तिरछी आँखों से। **नागरलोकैः** = नगरवासियों द्वारा। **आसाद्य** = पहुँचकर। **अवततार** = उतर गया। **अतिक्रम्य** = पार करके।

अनुवाद – ऐसा सोचते हुए चढ़ने की इच्छा से उस घोड़े के पास जाकर, हे महात्मा घोड़े! जो हो सो हो, तुम्हें नमस्कार है। इस आरोहण के अपराध को क्षमा करें, ऐसा कहकर बैठने के लिए आमन्त्रित किया। मानों अभिप्राय को जानकर उस इन्द्रायुध ने उसको तिरछी आँखों से देखकर, हिनहिनाने का शब्द किया। इसके पश्चात् इस मधुर हिनहिनाने से मानों अनुमति दे दी गयी हो अतः इन्द्रायुध पर चढ़कर चन्द्रापीड दूसरे घोड़े पर चढ़े वैशम्पायन के द्वारा अनुसरण किया जाता हुआ प्रस्थान करके उत्पन्न हुए कुतूहल वाले नागरिकों के द्वारा प्रणाम किये जाते हुए, राजगृह के द्वार पर पहुँच कर घोड़े से उतरा और उतरकर वैशम्पायन के हाथ को हाथ में लेकर, विनम्रता के साथ आगे चलने वाले वलाहक द्वारा दिखाये गये मार्ग वाले, सात कक्षों को पार करके हंस के समान श्वेत शयनतल पर बैठे हुए पिता को देखा।

प्रश्नाः

1. अत्र 'अर्वन्' इति शब्दस्य अर्थः कः ?
2. कः तुरङ्गम् प्रणामम् अकरोत् ?
3. 'मर्षणीयः' इति शब्दस्य आशयं लिखतु।
4. कः कं दृष्ट्वा ह्रेषारवम् अकरोत् ?
5. चन्द्रापीडः केन सह गत्वा पितरम् अपश्यत् ?

22. दृष्ट्वा च तम् अतिदूरावनतेन शिरसा प्रणनाम। तारापीडस्तु तम् 'एहि एहि' इत्यभिदधानः दूरादेव प्रसारितभुजयुगलः सुदृढम् आलिलिङ्ग। आलिङ्गितोन्मुक्तश्च चन्द्रापीडः पितुः चरणसमीपे क्षितितले एव निषसाद। मुहूर्तमिव स्थित्वा पित्रा विसर्जितः मातरम् उपसृत्य प्रणम्य वैशम्पायनद्वितीयः शुकनासं द्रष्टुम् अयासीत्। द्वारदेश एव अवस्थाप्य तुरङ्गमम् उपदर्शितविनयः प्रविश्य भवनं दूरावनतेन मौलिना शुकनासं ववन्दे। शुकनासः ससम्भ्रमम् उत्थाय गाढम् आलिलिङ्ग। अथ तेन सबहुमानम् आशीर्भिः अभिनन्द्य विसर्जितः स्वभवनम् आजगाम। तत्र स्नानादिकाः क्रियाः कृत्वा तं दिवसम् अत्यवाहयत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – **इत्यभिदधानः** = इति + अभिदधानः, यण् सन्धिः। **प्रणम्य** = प्र + नम् + ल्यप्। **द्रष्टुम्** – दृश् + तुमुन्। **प्रविश्य** = प्र + विश् + ल्यप्। **अत्यवाहयत्** = अति + अवाहयत्, यण् सन्धिः।

शब्दार्थः – **अतिदूरावनतेन** = अत्यन्त दूर से झुके हुए। **क्षितितले** = पृथ्वी पर। **निषसाद** = बैठ गया। **अवस्थाप्य** = खड़ा करके। **मौलिना** = सिर से। **अत्यवाहयत्** = बिताया। **दृष्ट्वा** = देखकर। **आलिलिङ्ग** = गले लगा लिया। **प्रणम्य** = प्रणाम करके। **क्षितितले** = भूमि पर। **सबहुमानम्** = सम्मान के साथ। **अभिनन्द्य** = अभिनन्दन करके।

अनुवाद – और उनको देखकर बहुत दूर से ही सिर झुकाकर प्रणाम किया। तारापीड ने तो 'आओ-आओ' ऐसा कहते हुए उसको दूर से ही दोनों भुजाएँ फैलाकर भली भाँति आलिंगन किया। आलिंगन से मुक्त होकर चन्द्रापीड पिता के चरण के समीप भूमि पर ही बैठ गया। कुछ क्षण स्थित रह कर पिता से विदा लेकर माता के पास जाकर प्रणाम करके वैशम्पायन के साथ शुकनास को देखने चला गया। द्वार पर ही घोड़े को खड़ा करके विनय का प्रदर्शन करते हुए भवन में प्रवेश करके दूर से ही सिर झुका कर शुकनास को प्रणाम किया। शुकनास ने सहसा उठकर जोर से गले लगाया। इसके पश्चात् उनके द्वारा दिए गए आशीर्वचनों से आनन्दित होकर विदा पाकर अपने भवन लौट आया। वहाँ स्नानादि क्रियाओं को करके उस दिन को व्यतीत किया।

प्रश्नाः

1. कः कं शिरसा प्रणनाम ?
2. तारापीडः कं सुदृढम् आलिलिङ्ग ?
3. चन्द्रापीडः कस्य चरणसमीपे निषसाद ?
4. शुकनासः ससम्भ्रमम् उत्थाय कं गाढम् आलिलिङ्ग ?
5. चन्द्रापीडः कुत्र स्नानादिकाः क्रियाः कृत्वा दिवसम् अत्यवाहयत् ?

23. अपरेद्युश्च प्रभाते सर्वान्तःपुराधिकृतः कैलासनामा कञ्चुकी रक्तांशुकेन रचितावगुण्ठनया महानुभावाकारया कन्यकया अनुगम्यमानः समुपसृत्य चन्द्रापीडं विज्ञापयामास। कुमार, महादेवी विलासवती समाज्ञापयति–इयं खलु कन्यका, महाराजेन पूर्वं कुलूतराजधानीम् अवजित्य, कुलूतेश्वरदुहिता पत्रलेखाभिधाना बालिका सती बन्दीजनेन सह आनीय अन्तःपुरपरिचारिकामध्यम् उपनीता। सा मया 'विगतनाथा राजदुहिता' इति समुपजातस्नेहया दुहितृनिर्विशेषम् उपलालिता संवर्धिता च। तदियम् इदानीम् 'उचिता भवतः ताम्बूलकरङ्कवाहिनी' इति कृत्वा मया प्रेषिता। न चास्याम् आयुष्मता परिजन–सामान्यदृष्टिना भवितव्यम्। स्वचित्तवृत्तिरिव सा चापलेभ्यः निवारणीया। शिष्येव द्रष्टव्या। अविदितशीलश्चास्याः कुमारः इति संदिश्यते। सर्वथा तथा प्रयतितव्यम् यथेयम् अतिचिरम् उचिता परिचारिका ते भवति। इत्यभिधाय विरतवचसि कैलासे, चन्द्रापीडः 'यथाज्ञापयत्यम्बा' इत्युक्त्वा तं प्रेषयामास। पत्रलेखा तु, ततः प्रभृति समुपजातसेवारसा, सर्वदा राजसूनोः पार्श्वं न मुमोच।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – रचितावगुण्ठनया = रचितम् अवगुण्ठनम् यया तया। **समुपजातस्नेहया** = समुपजातः स्नेहः यस्यां तया (बहुव्रीहिः)। **संवर्धिता** = सम् + वृध् + क्त + टाप्। **कृत्वा** = कृ + क्त्वा प्रत्यय। **द्रष्टव्या** = दृश् + तव्यत् + टाप् प्रत्यय। **इत्युक्त्वा** = इति + उक्त्वा, यण् सन्धिः।

शब्दार्थः – अपरेद्युश्च = और दूसरे दिन। **रक्तांशुकेन** = लाल रेशमी वस्त्र से। **रचितावगुण्ठनया** = घूँघट किए हुए। **ताम्बूलकरङ्कवाहिनी** = पान का डिब्बा लेकर चलने वाली। **प्रयतितव्यम्** = प्रयत्न करें। **मुमोच** = छोड़ा। **अवजित्य** = जीतकर। **उपनीता** = लाई गई। **विगतनाथा** = अनाथ। **राजदुहिता** = राजपुत्री। **चापलेभ्यः** = चञ्चलता से। **द्रष्टव्या** = देखना चाहिए। **अतिचिरम्** = चिरकाल तक। **विरतवचसि** = चुप होने पर। **प्रेषयामास** = भेज दिया।

अनुवाद – और दूसरे दिन प्रातःकाल अन्तःपुर का अधिकारी कैलास नाम का कञ्चुकी लाल रेशमी वस्त्र से घूँघट किए हुए गम्भीर आकृति वाली कन्या के द्वारा अनुसरण किया जाता हुआ चन्द्रापीड के पास पहुँच कर सूचित करता है। कुमार, महादेवी विलासवती आज्ञा देती हैं– यह कन्या, महाराज द्वारा पूर्व में कुलूतराजधानी को जीतकर, कुलूत के राजा की पुत्री पत्रलेखा नाम की बालिका बन्दीजनों के साथ लाई हुई अन्तःपुर की परिचारिकाओं के मध्य रखी गयी। मेरे द्वारा 'यह अनाथ राजपुत्री है'– ऐसा उत्पन्न हुए स्नेहवश अपनी पुत्री के समान लालन-पालन किया गया। तो इसे इस समय 'तुम्हारा पान का डिब्बा वहन करने वाली' करके मेरे द्वारा भेजा गया है। आयुष्मान् इसके प्रति सामान्य सेविका की दृष्टि न रखें। अपनी चित्तवृत्ति के समान इसकी चञ्चलता को भी रोकें। इसे शिष्या के समान देखें। राजकुमार इसके शील स्वभाव को नहीं जानते अतः संदेश दिया जा रहा है। सर्वथा ऐसा प्रयत्न करें जिससे चिरकाल तक यह आपकी योग्य परिचारिका रहे। ऐसा कहकर कैलास के चुप हो जाने पर, चन्द्रापीड ने 'जैसी माता की आज्ञा' यह कहकर उसको भेज दिया। पत्रलेखा ने तो तब से लेकर उत्पन्न हुए सेवारस द्वारा सर्वदा राजपुत्र का साथ नहीं छोड़ा।

प्रश्नाः

1. अत्र सर्वान्तःपुराधिकृतः कः ?
2. कञ्चुकी कया अनुगम्यमानः ?
3. 'रक्तांशुकेन' इति शब्दस्य अर्थः कः ?
4. पत्रलेखा कस्य दुहिता आसीत् ?
5. कया पत्रलेखा चन्द्रापीडस्य ताम्बूलकरङ्कवाहिनीरूपेण प्रेषिता ?

24. एवं समतिक्रामत्सु केषुचित् दिवसेषु, राजा चन्द्रापीडस्य यौवराज्याभिषेकं चिकीर्षुः, प्रतीहारान् उपकरणसम्भारसंग्रहार्थम् आदिदेश। अथ सम्पादितेषु सर्वोपकरणेषु, पुरोधसा राज्याभिषेकमङ्गलानि अशेषाणि निर्वर्त्य नरपतिः शुकनासेन सह स्वयम् उत्क्षिप्तमङ्गलकलशः, सर्वेभ्यः तीर्थेभ्यः समाहृतेन मन्त्रपूतेन वारिणा सुतम् अभिषिषेच। अभिषेकसलिलार्द्रदेहः चन्द्रापीडः सभामण्डपम् उपगम्य, सर्वतः 'जय जय' इति समुद्घुष्यमाणजयशब्दः सिंहासनम् आरुरोह।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – चिकीर्षुः = चिकीर्षति इति कृ + सन् + उ सन्नन्त प्रत्यय। **सर्वोपकरणेषु** = सर्व + उपकरणेषु, गुणसन्धिः। **समाहृतेन** = सम् + आ + हृ + क्त + तृतीया। **अभिषेकसलिलार्द्रदेहः** = अभिषेकस्य सलिलेन आर्द्रः देहः यस्य सः (बहुव्रीहिः)।

शब्दार्थः – समतिक्रामत्सु = बीतने पर। **केषुचित्** = कुछ। **चिकीर्षुः** = करने की इच्छा वाला। **निर्वर्त्य** = पूरा करके। **समाहृतेन** = लाये गये। **उत्क्षिप्त** = उठा कर। **आदिदेश** = आदेश दिया। **पुरोधसा** = पुरोहित द्वारा। **नरपतिः** = राजा। **मन्त्रपूतेन** = मन्त्रों द्वारा पवित्र। **वारिणा** = जल से। **अभिषिषेच** = अभिषेक किया। **अभिषेकसलिलार्द्रदेहः** = अभिषेक के जल से गीले शरीर वाले। **आरुरोह** = चढ़ा (बैठा)।

अनुवाद – इस प्रकार कुछ दिन बीतने पर, राजा ने चन्द्रापीड के युवराज्याभिषेक की इच्छा से प्रतीहारियों को आवश्यक सामग्री एकत्र कर लेने का आदेश दिया। इसके पश्चात् समस्त उपकरणों के सम्पादित हो जाने पर, पुरोहित द्वारा राज्याभिषेक के मङ्गल समस्त कृत्यों को पूरा करके राजा ने शुकनास के साथ स्वयं उठाए गए मङ्गल कलश से सभी तीर्थों से लाए गए अभिमन्त्रित पवित्र जल से पुत्र का अभिषेक किया। अभिषेक के जल से भीगे शरीर वाले चन्द्रापीड ने सभामण्डप में प्रवेश कर चारों ओर से 'जय-जय' ऐसे किए जाते हुए समुद्घोष के बीच सिंहासन पर बैठा।

प्रश्नाः

1. कः चन्द्रापीडस्य यौवराज्याभिषेकं चिकीर्षुः ?
2. राजा कान् उपकरणसम्भारसंग्रहार्थम् आदिदेश ?
3. नरपतिः केन सह सुतम् अभिषिषेच ?
4. 'वारिणा' इति शब्दस्य विशेषणं किम् ?
5. 'अभिषेकसलिलार्द्रदेहः' इति शब्दस्य पर्यायं लिखतु ?

25. अथ दिग्विजयाय प्रस्थितः चन्द्रापीडः महता बलसमूहेन वैशम्पायनेन च अनुगम्यमानः प्रदक्षिणीकृत्य वसुधां परिभ्रमन् प्रथमं प्राचीम्, ततः त्रिशङ्कुतिलकाम्, ततो वरुणलाञ्छनां, अनन्तरं सप्तर्षिताराशबलां दिशं विजिग्ये। तत्र तत्र शरणागतान् रक्षन्, उपायनानि प्रतीच्छन्, देशव्यवस्थाः स्थापयन्, अग्रजन्मनः पूजयन्, यशः विस्तारयन्, पृथिवीं विचचार। एवं क्रमेण अवजितसकलभुवनतलः कदाचित् किरातानां निवासस्थानं सुवर्णपुरं पूर्वजलनिधेः नातिविप्रकृष्टं जित्वा जग्राह। तत्र च निजबलस्य विश्रामहेतोः कतिपयान् दिवसान् अतिष्ठत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – **अनुगम्यमानः** = अनु + गम् + यक् + शानच्। **त्रिशङ्कुतिलकाम्** = त्रिशङ्कुः तिलकः यस्याः ताम्। **वरुणलाञ्छनाम्** = वरुणः लाञ्छं यस्याः ताम्। **सप्तर्षिताराशबलाम्** = सप्तर्षिभिः ताराभिः शबला या ताम्। **जित्वा** = जि + क्त्वा। **प्रस्थितः** = प्र + स्था + क्त। **प्रतीच्छन्** = प्रति + इष् (इच्छ्) + शतृ।

शब्दार्थः – **प्रदक्षिणीकृत्य** = प्रदक्षिणा करके। **त्रिशङ्कुतिलकाम्** = तिलक के समान त्रिशङ्कु राजावाली अर्थात् दक्षिण दिशा को। **वरुणलाञ्छनाम्** = वरुण के चिह्न से सुशोभित अर्थात् पश्चिम दिशा को। **प्राचीम्** = पूर्व दिशा। **सप्तर्षिताराशबलां दिशम्** = सप्तर्षि तारों से सुशोभित अर्थात् उत्तर दिशा। **उपायनानि प्रतीच्छन्** = भेंट स्वीकार करते हुए। **विचचार** = विचरण किया। **नातिविप्रकृष्टम्** = अत्यन्त दूर नहीं अर्थात् समीप। **प्रस्थितः** = प्रस्थान किया हुआ। **महता** = विशाल। **बलसमूहेन** = सेना के द्वारा। **वसुधाम्** = पृथ्वी की। **परिभ्रमन्** = घूमता हुआ। **पूर्वजलनिधेः** = पूर्व सागर के। **जित्वा** = जीतकर। **अतिष्ठत्** = ठहर गया।

अनुवाद – इसके पश्चात् दिग्विजय के लिए प्रस्थान करते हुए चन्द्रापीड ने बड़ी सेना के साथ वैशम्पायन द्वारा अनुसरण किया जाता हुआ, पृथिवी की परिक्रमा करते हुए, पहले पूर्व दिशा फिर दक्षिण दिशा, तत्पश्चात् पश्चिम दिशा और अनन्तर उत्तर दिशा को जीत लिया। वहाँ-वहाँ शरणागत की रक्षा करते हुए, भेंट स्वीकार करते हुए, देश में व्यवस्था स्थापित करते हुए, ब्राह्मणों को पूजते हुए, यश का विस्तार करते हुए पृथिवी पर विचरण किया। इस प्रकार क्रम से समस्त भुवन तल को जीत कर कभी किरातों के निवासस्थान सुवर्णपुर को, जो पूर्व समुद्र के समीप था, जीत कर अपने अधिकार में ले लिया। और वहाँ अपनी सेना के विश्राम के लिए कुछ दिनों तक ठहर गया।

प्रश्नाः

1. कः दिग्विजयाय प्रस्थितः ?
2. चन्द्रापीडः केन सह दिग्विजयाय प्रस्थितः ?
3. 'त्रिशङ्कुतिलकाम्' इति शब्दस्य आशयः कः ?
4. सुवर्णपुरं कुत्र आसीत् ?
5. विश्रामहेतोः चन्द्रापीडः कुत्र अतिष्ठत् ?

26. एकदा तु तत्रस्थ एव इन्द्रायुधम् आरुह्य, मृगयानिर्गतः विचरन् काननं शैलशिखरात् यदृच्छया अवतीर्णं किन्नरमिथुनम् अद्राक्षीत्। अपूर्वदर्शनतया तु समुपजातकुतूहलः कृतग्रहणाभिलाषः तत्समीपम् उपसर्पन् अदृष्टपूर्वपुरुषदर्शनत्रासात् पलायमानं तत् सुदूरम् अनुससार। इदं गृहीतम्, इदं गृहीतम् इति अतिरभसाकृष्टचेताः महाजवतया तुरङ्गस्य तस्मात् प्रदेशात् असहायः पञ्चदशयोजनमात्रं संमुखापतितम् अत्युच्छ्रितम् अचलशिखरम् आरुरोह।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – आरुह्य = आ + रुह् + ल्यप्। **समुपजातकुतूहलः** = समुपजातं कुतूहलं यस्य सः। **अदृष्टपूर्वपुरुषदर्शनत्रासात्** = अदृष्टपूर्वस्य पुरुषस्य दर्शनात् त्रासः तस्मात्। **विचरन्** = वि + चर् + शतृ।

शब्दार्थः – **आरुह्य** = चढ़कर। **मृगयानिर्गतः** = शिकार के लिए निकला। **अवतीर्णम्** = उतरे हुए। **उपसर्पन्** = जाते हुए। **अतिरभसाकृष्टचेताः** = बहुत वेग से आकृष्ट चित्तवाला। **महाजवतया** = बहुत वेग के कारण। **संमुखापतितम्** = सम्मुख पड़ने वाले। **अत्युच्छ्रितम्** = बहुत ऊँचे। **विचरन्** = विचरण करते हुए। **काननम्** = वन में।

अनुवाद – एक बार वहीं रहते हुए इन्द्रायुध पर चढ़कर, मृगया के लिए निकलकर वन में विचरण करते हुए पर्वतशिखर से अपनी इच्छानुसार उतरे हुए किन्नर-जोड़े को देखा। पहले कभी न देखे हुए अतः उत्पन्न हुए कुतूहल वाले, उनको पकड़ने की अभिलाषा से उनके समीप जाते हुए पहले कभी न देखे हुए पुरुष के दर्शन के भय से भागते हुए उनका दूर तक पीछा किया। 'यह पकड़ा, यह पकड़ा', इस प्रकार बहुत वेग से आकृष्ट चित्तवाला बहुत वेग से घोड़े के चलने के कारण उस प्रदेश से अकेले ही पन्द्रह योजन की दूरी पर सामने पड़ने वाले बहुत ऊँचे अचल शिखर (पर्वत की चोटी) पर चढ़ गया।

प्रश्नाः

1. कः इन्द्रायुधम् आरुह्य मृगयानिर्गतः ?
2. कं दृष्ट्वा समुपजातकुतूहलः चन्द्रापीडः ?
3. अदृष्टपूर्वपुरुषदर्शनत्रासात् पलायमानं किन्नरमिथुनं कः अनुससार ?
4. 'महाजवतया' इति शब्दस्य कः अर्थः ?
5. 'अत्युच्छ्रितम्' इति पदस्य सन्धिविच्छेदं कुरु ?

27. आरूढे च तस्मिन् शनैः शनैः ततः दृष्टिं निवर्त्य, प्रस्तरप्रतिहतगतिप्रसरः श्रमस्वेदार्द्रशरीरम् इन्द्रायुधम् आत्मानं च अवलोक्य, स्वयमेव विहस्य अचिन्तयत्– अहो मे निरर्थकव्यापारेषु अभिनिवेशः, अहो मे मूर्खतायाः प्रकारः, अहो मे बालिशचरितेषु आसक्तिः, किमनेन गृहीतेन किन्नरयुगलेन प्रयोजनम् ? कस्मात् अहम् आविष्ट इव निजपरिवारान् उत्सृज्य, भूमिम् एतावतीम् आयातः। न जाने कियताध्वना विच्छिन्नम् इतः बलम् अनुयायि मे।

न चागच्छता मया किन्नरमिथुने बद्धदृष्टिना महावनेऽस्मिन् पन्थाः निरूपितः, येन प्रतिनिवृत्य यास्यामि। न चास्मिन् प्रदेशे परिभ्रमता मया मर्त्यः कश्चित् आसाद्यते, यः सुवर्णपुरगामिनं पन्थानम् उपदेक्ष्यति। श्रुतं च मया बहुशः कथ्यमानम्– 'उत्तरेण सुवर्णपुरं निर्मानुषम् अरण्यं, तच्चातिक्रम्य कैलासगिरिः इति' अयं च कैलासः।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – प्रस्तरप्रतिहतगतिप्रसरः = प्रस्तरैः प्रतिहतः गतिप्रसरः यस्य सः (बहुव्रीहिः)। **श्रमस्वेदार्द्रशरीरम्** = श्रमात् स्वेदेन आर्द्रशरीरं यस्य तम् (बहुव्रीहिः)। **कियताध्वना** = कियता + अध्वना, दीर्घ सन्धिः। **तच्चातिक्रम्य** = तत् + च + अतिक्रम्य। **विहस्य** = वि + हस् + ल्यप्। **बद्धदृष्टिना** = बद्धा दृष्टिः यस्य तेन (बहुव्रीहिः)।

शब्दार्थः – प्रस्तरप्रतिहतगतिप्रसरः = पत्थरों के कारण रुकी हुई गतिवाला। **बालिशचरितेषु** = मूर्ख के जैसे कार्य में। **कियताध्वना** = कितने मार्ग से। **आसाद्यते** = मिलेगा। **आविष्ट इव** = बँधा हुआ। **निवर्त्य** = हटाकर। **आत्मानम्** = स्वयं को। **अवलोक्य** = देखकर। **विहस्य** = हँसकर। **अचिन्तयत्** = सोचा। **विच्छिन्नम्** = अलग हुई। **बद्धदृष्टिना** = दृष्टि हटाये बिना। **इतः** = यहाँ से। **निर्मानुषम्** = मनुष्यरहित।

अनुवाद – और उसके (किन्नर जोड़े के) चढ़ने पर धीरे-धीरे वहाँ से दृष्टि को हटाकर, पत्थरों के कारण रुकी हुई गतिवाला, श्रम के कारण पसीने से भीगे शरीर वाले इन्द्रायुध को तथा स्वयं को देखकर, स्वयं ही हँसते हुए सोचा– 'अरे मेरा निरर्थक कार्य में संलग्न होना, अरे (यह) मेरी किस प्रकार की मूर्खता है। अरे मेरी मूर्खों जैसे कार्य में संलग्नता इस किन्नरयुगल को पकड़ने का क्या प्रयोजन है ? किस प्रकार मैं बँधा हुआ सा अपने परिवार को छोड़कर इस भूमि को प्राप्त हो गया। पता नहीं यहाँ से अलग हुई कितनी दूर मेरी सेना और मेरे अनुयायी होंगे ? और मेरे द्वारा किन्नर युगल पर दृष्टि रखने से इस महावन का रास्ता भी नहीं देखा गया जिससे लौट सकूँगा और न इस प्रदेश में घूमते हुए मेरे द्वारा किसी मनुष्य को देखा गया जो सुवर्णपुरी जाने का मार्ग बता दे। मैंने अनेक बार यह कहते हुए सुना है कि सुवर्णपुर के उत्तर में मनुष्य से हीन जंगल है और उसको पार करने के बाद कैलास पर्वत है। तो क्या यह कैलास है?

प्रश्नाः

1. चन्द्रापीडः किन्नरयुगलम् अनुसरन् कुत्र गतः?
2. 'अहो मे निरर्थकव्यापारेषु अभिनिवेशः' इति कः अचिन्तयत्?
3. 'कियताध्वना' पदस्य विच्छेदः कः?
4. कैलासगिरिः कुत्र श्रूयते?
5. केन महावने पन्था निरूपितः?

28. तदिदानीं प्रतिनिवृत्य एकाकिना स्वयम् उत्प्रेक्ष्योत्प्रेक्ष्य दक्षिणाम् आशां केवलम् अङ्गीकृत्य गन्तव्यम्। आत्मकृतानां हि दोषाणां नियतम् अनुभवितव्यं फलम् आत्मनैव। अयम् अधुना भगवान् भानुः नभोमध्यम् अलङ्करोति। परिश्रान्तश्चायम् इन्द्रायुधः। तदेनम् आगृहीतकतिपयदूर्वाप्रवालकवलम् कस्मिंश्चित् सरसि स्नातपीतोदकम् अपनीतश्रमं कृत्वा, स्वयं च सलिलं पीत्वा, कस्यचित् तरोः अधः छायायां मुहूर्तमात्रं विश्रम्य ततः गमिष्यामि– इति चिन्तयित्वा सलिलम् अन्वेषमाणः, मुहुर्मुहुः इतस्ततः दत्तदृष्टिः पर्यटन्, जलावगाहोत्थितस्य अचिरात् अपक्रान्तस्य महतः गिरिवरस्य वनगजयूथस्य चरणोत्थापितः पङ्कपटलैः आर्द्रीकृतं मार्गम् अद्राक्षीत्। उपजातजलाशयशङ्कश्च तं प्रतीपम् अनुसरन् कैलासतलेन कञ्चित् अध्वानं गत्वा, तस्यैव कैलासशिखरिणः पूर्वोत्तरे दिग्भागे, तरुषण्डमेकम् अत्यायतं प्रविश्य, तस्य मध्यभागे, स्वच्छसलिलतया, आपूर्णपर्यन्तमपि रिक्तमिव उपलक्ष्यमाणम् अतिमनोहरम् अखिलेन्द्रियाह्लादनसमर्थम् अच्छोदं नाम सरो दृष्टवान्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – गन्तव्यः = गम् + तव्यत् । **अनुभवितव्यम्** = अनु + भू + तव्यत्। **परिश्रान्तश्चायम्** = परिश्रान्तः + च + अयम्। **अखिलेन्द्रियाह्लादनसमर्थम्** = अखिलानि इन्द्रियाणि तेषाम् आह्लादने समर्थम्। **जलावगाहोत्थितस्य** = जलावगाहात् उत्थितस्य (पञ्चमी तत्पुरुष)। **उपजातजलाशयशङ्कः** = उपजाता जलाशयस्य शङ्का यस्मिन् सः (बहुव्रीहिः)।

शब्दार्थः – उत्प्रेक्ष्योत्प्रेक्ष्य = देख–देखकर अर्थात् विचार करके। **परिश्रान्तः** = थका हुआ। **अपनीतश्रमम्** = थकानरहित। **जलावगाहोत्थितस्य** = जल में स्नान करके निकले हुए। **प्रतीपम्** = विरुद्ध। **तरुषण्डम्** = वृक्षों का समूह। **अत्यायतम्** = विशाल। **पङ्कपटलैः** = कीचड़ के समूह में। **मुहुर्मुहुः** = बार–बार। **इतस्ततः** = इधर–उधर। **आपूर्णपर्यन्तमपि** = पूर्णतया भरा हुआ होने पर भी। **उपलक्ष्यमाणम्** = दिखाई देने वाले। **सरः** = सरोवर (तालाब)। **दृष्टवान्** = देखा।

अनुवाद – तब यहाँ से लौटकर अकेले स्वयं विचार करके केवल दक्षिण दिशा को अङ्गीकार करके चलना चाहिए, क्योंकि अपने किए दोषों का फल निश्चय ही स्वयं को भोगना पड़ता है। ये इस समय भगवान सूर्य नभमण्डल के मध्य में सुशोभित हैं। यह इन्द्रायुध थक गया है तो इसके द्वारा कुछ नरम घास के कौर खा लेने पर, किसी सरोवर में स्नान एवं जलग्रहण से थकान दूर करके, और स्वयं भी जल पीकर किसी वृक्ष की छाया के नीचे क्षणभर विश्राम करके जाऊँगा, ऐसा सोचकर जल ढूँढ़ते हुए, बार-बार इधर-उधर दृष्टिपात करते हुए शीघ्र ही जल में स्नान करके निकले हुए बड़े-बड़े वनैले हाथियों के समूह के कीचड़ से सने चरणचिह्नों से भीगे मार्ग को देखा। जलाशय की आशंका से उन प्रतीकों का अनुसरण करते हुए कैलासतल से कुछ दूर जाकर, उसी कैलासशिखर के पूर्वोत्तर भाग में एक विशाल वृक्षों के समूह के मध्य प्रवेश करके, उसके मध्यभाग में, स्वच्छ जल के कारण पूरा भरा होने पर भी रिक्त के समान दिखाई देता हुआ अत्यन्त मनोहर समस्त इन्द्रियों को आह्लादित करने वाला अच्छोद नाम का सरोवर देखा।

प्रश्नाः

1. 'आत्मकृतानां हि दोषाणां नियतम् अनुभवितव्यं फलम् आत्मनैव'– अस्य हिन्दीभाषायां अनुवादं कुरुत।
2. अच्छोदसरोवरः कुत्र आसीत् ?
3. चन्द्रापीडः सरोवरस्य मार्गं कीदृशम् अद्राक्षीत् ?
4. 'अखिलेन्द्रियाह्लादनसमर्थम्' इति विशेषणं कस्य ?
5. 'अध्वानम्' इति शब्दस्य कः अर्थः ?

29. तदावलोकनमात्रेणैव अपगतश्रमः तस्य दक्षिणं तीरमासाद्य, तुरगात् अवततार। अवतीर्य च व्यपनीतपर्याणम् इन्द्रायुधं क्षितितललुठितोत्थितं गृहीतकतिपययवग्रासं सरोऽवतार्य पीतसलिलम् इच्छया स्नातं च उत्थाप्य समीपवर्तिनः तरोः मूलशाखायां कनकमय्या शृङ्खलया चरणौ बद्ध्वा स्वयमपि सलिलम् अवततार। प्रक्षालितकरयुगलः जलमयम् आहारं कृत्वा, सरः सलिलात् उदगात्। प्रत्यग्रभग्नैः अतिशिशिरैः कमलिनीपलाशैः लतामण्डपपरिक्षिप्ते शिलातले स्रस्तरम् आस्तीर्य निषसाद।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – व्यपनीतपर्याणम् = व्यपनीतं पर्याणं यस्मात् तम् (बहुव्रीहिः)। **गृहीतकतिपययवग्रासम्** = गृहीताः कतिपये यवग्रासाः येन तम् (बहुव्रीहिः)। **तदवलोकनमात्रेणैव** = तद् + अवलोकनमात्रेण + एव। **अपगतश्रमः** = अपगतः श्रमः यस्मात् सः (बहुव्रीहिः)। **प्रक्षालितकरयुगलः** = प्रक्षालितं करयुगलं येन सः (बहुव्रीहिः)।

शब्दार्थः – व्यपनीतपर्याणम् = जिसकी जीन उतार दी गई। **क्षितितललुठितोत्थितम्** = पृथ्वी पर लोटकर उठे हुए। **गृहीतकतिपययवग्रासम्** = घास के कुछ ग्रास लेने पर। **कनकमय्या** = सोने से बनी। **स्रस्तरम्** = बिछौना। **आस्तीर्य** = बिछाकर। **तीरमासाद्य** = किनारे पहुँचकर। **उत्थाप्य** = निकालकर। **बद्ध्वा** = बाँधकर। **प्रक्षालितकरयुगलः** = दोनों हाथों को धुल लेने वाले। **उदगात्** = बाहर निकल गया। **प्रत्यग्रभग्नैः** = ताजे तोड़े गये। **कमलिनीपलाशैः** = कमलिनी के पत्रों से।

अनुवाद – उस (सरोवर) को देखने मात्र से ही थकान रहित होकर उसके दक्षिण किनारे पर जाकर घोड़े से उतरा और उतर कर जिसकी जीन उतार दी गई ऐसे इन्द्रायुध को जो पृथ्वीतल पर लोटकर उठ गया था, और जिसने घास के कतिपय कौर को खा लिया था, सरोवर में उतार कर इच्छा भर जल पीकर एवं स्नान करके निकाल कर समीप स्थित वृक्ष की जड़ में सोने की जंजीर से चरणों को बाँधकर स्वयं भी जल में उतर गया। दोनों हाथों को धोकर जल का आहार करके अर्थात् जल पीकर, सरोवर के जल से निकला। ताजे तोड़े गए अत्यन्त शीतल कमलिनी के पत्तों को लतामण्डप में पड़े शिलातल पर बिस्तर बिछाकर बैठ गया।

प्रश्नाः

1. चन्द्रापीडः सरोवरस्य किम् तीरम् आसाद्य तुरगात् अवततार ?
2. 'व्यपनीतपर्याणम्' 'क्षितितललुठितोत्थितम्' इति विशेषणद्वयम् कस्य कृते अस्ति ?
3. कं कनकमय्या शृङ्खलया तरुमूले बद्धवान् ?
4. चन्द्रापीडः विश्रामार्थं कुत्र निषसाद ?
5. 'स्रस्तरम्' इति शब्दस्य आशयः कः ?

30. मुहूर्तं विश्रान्तश्च तस्य सरसः उत्तरे तीरे समुच्चरन्तं श्रुतिसुभगं वीणातन्त्रीझङ्कारमिश्रं, गीतशब्दम् अशृणोत्। श्रुत्वा च 'कुतोऽत्र गीतसंभूतिः' इति समुपजातकुतूहलः दत्तपर्याणम् इन्द्रायुधम् आरुह्य पश्चिमया सरस्तीरसरण्या संप्रतस्थे। तत्र च शून्ये सिद्धायतने चतुःस्तम्भस्फटिकमण्डपिकातलप्रतिष्ठितस्य भगवतः चराचरगुरोः त्र्यम्बकस्य दक्षिणां मूर्त्तिम् आश्रित्य अभिमुखीम् आसीनाम् उपरचितब्रह्मासनाम् दक्षिणेन करेण वीणाम् उत्सङ्गगताम् आस्फालयन्तीम् अनेकभावनानुविद्धया गीत्या देवं विरूपाक्षम् उपवीणयन्तीं, प्रतिपन्नपाशुपतव्रताम् अष्टादशवर्षदेशीयाम् कन्यकां ददर्श। ततोऽवतीर्य तरुशाखायां तुरङ्गमं बद्ध्वा, उपसृत्य भगवते भक्त्या प्रणम्य त्रिलोचनाय तामेव दिव्ययोषितम् अनिमेषपक्ष्मणाचक्षुषा निरूपयन्, तस्यामेव स्फटिकमण्डपिकायाम् अन्यतमं स्तम्भम् आश्रित्य, गीतसमाप्त्यवसरं प्रतीक्षमाणः तस्थौ।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – कुतोऽत्र = कुतः + अत्र। **श्रुतिसुभगम्** = श्रुत्यै सुभगम् (चतुर्थी तत्पुरुषः)। **सरस्तीरसरण्या** = सरः + तीर + सरण्या। **प्रतिपन्नपाशुपतव्रताम्** = प्रतिपन्नं पाशुपतव्रतं यया ताम् (बहुव्रीहिः)। **तस्यामेव** = तस्याम् + एव।

शब्दार्थः – विश्रान्तश्च = आराम करके। **समुच्चरन्तम्** = उच्चरित होने वाले। **श्रुतिसुभगम्** = कानों को मधुर लगने वाले। **आस्फालयन्तीम्** = बजाती हुई। **विरूपाक्षम्** = शिवजी को। **गीतसम्भूतिः** = गीत की उत्पत्ति। **दत्तपर्याणम्** = जीन चढ़ाये हुए। **सिद्धायतने** = मन्दिर में। **शून्ये** = निर्जन। **त्र्यम्बकस्य** = शिव की। **संप्रतस्थे** = प्रस्थान किया। **ददर्श** = देखा। **दिव्ययोषितम्** = दिव्य स्त्री को। **अनिमेषपक्ष्मणा** = बिना पलक गिराये (नेत्रों से)। **स्तम्भम्** = खम्भे का। **आश्रित्य** = आश्रय लेकर। **तस्थौ** = बैठा रहा।

अनुवाद – क्षणभर विश्राम करके उस सरोवर के उत्तरी किनारे पर उच्चरित होने वाले कानों को मधुर लगने वाले वीणा के तारों की झंकार से मिले हुए गीत के शब्द को सुना और सुनकर 'यह गीत कहाँ से उत्पन्न हो रहा है' ऐसा उत्पन्न हुए कुतूहल वाले एवं कसे हुए जीन वाले इन्द्रायुध पर चढ़रकर पश्चिम की ओर सरोवर के किनारे के मार्ग से प्रस्थान किया और वहाँ निर्जन देवमन्दिर में चार खम्भों वाले स्फटिक के मण्डप के नीचे प्रतिष्ठित भगवान चराचर के स्वामी शंकर जी की दक्षिण मूर्त्ति का आश्रय लेकर उनकी ओर मुख किए हुए, ब्रह्मासन लगा कर दाहिने हाथ से गोद में पड़ी वीणा को

झंकृत करके अनेक भावों से बिंधे गीत द्वारा भगवान शिव की स्तुति करने वाली पाशुपत व्रत में संलग्न अठारह वर्ष की कन्या को देखा। तत्पश्चात् उतरकर पेड़ की शाखा में घोड़े को बाँध कर, भगवान के समीप जाकर भक्तिपूर्वक त्रिलोचन को प्रणाम किया, उसी दिव्य स्त्री को अपलक नेत्रों से देखते हुए उसी स्फटिक की मण्डपिका के नीचे एक स्तम्भ का आश्रय लेकर, गीत के समाप्त होने के अवसर की प्रतीक्षा करता हुआ स्थित रहा।

प्रश्नाः

1. चन्द्रापीडः सरसः उत्तरे तीरे किम् अश्रृणोत् ?
2. गीतशब्दं कुतः आगतः ?
3. गीतं का अगायत् ?
4. 'विरूपाक्षम्' इति शब्दस्य पर्यायं लिखतु।
5. कः गीतसमाप्त्यवसरं प्रतीक्षमाणः तस्थौ ?

31. अथ गीतावसाने मूकीभूतवीणा सा कन्यका समुत्थाय प्रदक्षिणीकृत्य कृतहरप्रणामा परिवृत्य चन्द्रापीडम् आबभाषे–"स्वागतम् अतिथये। कथम् इमां भूमिम् अनुप्राप्तो महाभागः? उत्थाय आगम्यताम्। अनुभूयताम् अतिथिसत्कारः" इति। एवम् उक्तस्तु तया संभाषणमात्रेणैव अनुगृहीतम् आत्मानं मन्यमानः उत्थाय भक्त्या कृतप्रणामः– 'भगवति यथाज्ञापयसि' इत्यभिधाय शिष्य इव तां व्रजन्तीम् अनुवव्राज।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – मूकीभूतवीणा = मूकीभूता वीणा यस्याः सा (बहुव्रीहि)। **सम्भाषणमात्रेणैव** = सम्भाषणमात्रेण + एव। **इत्यभिधाय** = इति + अभिधाय। **परिवृत्य** = परि + वृत् + ल्यप्। **कृतप्रणामः** = कृतः प्रणामः येन सः (बहुव्रीहिः)।

शब्दार्थः – मूकीभूतवीणा = वीणा के रुक जाने पर। **परिवृत्य** = घूमकर। **व्रजन्तीम्** = जाती हुई। **अनुवव्राज** = पीछे चला। **समुत्थाय** = उठकर। **कृतहरप्रणामा** = भगवान् शिव को प्रणाम कर चुकी। **आबभाषे** = बोली। **अनुभूयताम्** = स्वीकार कीजिए। **मन्यमानः** = मानता हुआ। **भक्त्या** = भक्तिपूर्वक।

अनुवाद – इसके पश्चात् गीत के समाप्त हो जाने पर और वीणा के मौन हो जाने पर वह कन्या उठकर और प्रदक्षिणा करके, शङ्कर को प्रणाम करके, घूमकर चन्द्रापीड से बोली–"हे अतिथि, स्वागत है, महानुभाव कैसे इस भूमि को प्राप्त हुए ? उठकर, आइए और अतिथि सत्कार ग्रहण कीजिये।" उसके ऐसा कहने पर सम्भाषण मात्र से ही अपने को अनुगृहीत मानते हुए उसने उठकर भक्तिपूर्वक प्रणाम किया और 'देवी की जैसी आज्ञा'– ऐसा कहकर उस जाती हुई कन्या के पीछ-पीछे शिष्य के समान चल पड़ा।

प्रश्नाः

1. कन्यका कम् आबभाषे?
2. सा कस्य आराधनम् अकरोत् ?
3. मूकीभूतवीणा सा कस्य अतिथिसत्कारम् अकरोत् ?
4. 'भगवति यथाज्ञापयसि' इति कः उक्तवान् ?
5. चन्द्रापीडः शिष्य इव काम् अनुवव्राज ?

32. पदशतमात्रमिव गत्वा, निरन्तरैः तमालतरुभिः अन्धकारितपुरोभागाम्, अन्तःस्थापित–मणिकमण्डलुमण्डलाम्, एकान्तावलम्बितयोगपट्टिकां, विशाखिकाशिखरनिबद्धेन नारिकेलफलवल्कलमयेन उपानद्युगेन उपेताम्, वल्कलशयनीयसनाथैकदेशां, शङ्खमयेन भिक्षाकपालेन अधिष्ठिताम्, सन्निहितभस्मालाबुकां गुहाम् अद्राक्षीत्। तस्याश्च द्वारि शिलातले समुपविष्टः वल्कलशयनशिरोभागविन्यस्तवीणया तया विरचिताम् अतिथिसपर्यां सप्रश्रयं प्रतिजग्राह। कृतातिथ्यया तया द्वितीयशिलातलोपविष्टया क्रमेण परिपृष्टः दिग्विजयादारभ्य, किन्नरमिथुनानुसरणप्रसङ्गेन आगमनम् आत्मनः सर्वम् आचचक्षे।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – एकान्तावलम्बितयोगपट्टिकाम् = एकान्ते अवलम्बिता योगपट्टिका यस्यां ताम् (बहुव्रीहिः)। **सन्निहितभस्मालाबुकाम्** = सन्निहितं भस्मनः अलाबुकं यस्यां ताम् (बहुव्रीहिः)। **वल्कलशयनशिरोभागविन्यस्तवीणया** = वल्कलस्य शयनीयं तस्य शिरोभागे विन्यस्ता वीणा यया सा तया (बहुव्रीहिः)। **गत्वा** = गम् + क्त्वा। **समुपविष्टः** = सम् + उप + विश् + क्त।

शब्दार्थः – अन्तःस्थापितमणिकमण्डलुमण्डलाम् = जिसके भीतर मणियों से निर्मित कमण्डलु रखे हुए थे। **एकान्तावलम्बितयोगपट्टिकाम्** = जिसके एक कोने में योगपट्टिका लटकी हुई है। **विशाखिकाशिखरनिबद्धेन** = खूँटी में बँधी। **उपानद्युगेन** = एक जोड़े जूते से। **उपेताम्** = युक्त। **वल्कलशयनीयसनाथैकदेशाम्** = वल्कल शय्या से युक्त एक भागवाली। **सन्निहितभस्मालाबुकाम्** = भस्म की तुम्बी से युक्त। **अतिथिसपर्याम्** = अतिथि का सत्कार। **गुहाम्** = गुफा को। **अद्राक्षीत्** = देखा। **समुपविष्टः** = स्थित। **सप्रश्रयम्** = विनम्रता के साथ। **परिपृष्टः** = पूछे गए।

अनुवाद – मात्र सौ कदम चलकर, लगातार लगे तमाल वृक्षों से जिसका सामने का भाग अन्धकारमय था, अन्दर मणियों से बने कमण्डल रखे थे, एक कोने में योगपट्टिका लटकी हुई थी, खूँटी में बँधी नारियल के छिलके से बने एक जोड़े जूते से युक्त, एक किनारे वल्कल के बिस्तर से युक्त, शङ्ख से बने भिक्षापात्र से युक्त, भस्म की तुम्बी से युक्त गुफा को देखा। और उसके द्वार पर स्थित शिलातल पर बैठ कर वल्कल की शय्या के शिरोभाग में वीणा रखकर उस कन्या द्वारा अतिथि सत्कार किया गया जिसे चन्द्रापीड ने विनम्रता के साथ ग्रहण किया। अतिथि सत्कारोपरान्त उस कन्या द्वारा दूसरे शिलातल पर बैठकर क्रमशः पूछे गए दिग्विजय से आरम्भ करके किन्नर युगल के अनुसरण द्वारा अपने आने की सारी बातें बतायी।

प्रश्नाः

1. गुहां कः अद्राक्षीत् ?
2. का तमालतरुभिः अन्धकारितपुरोभागम् ?
3. उपानद्युगं केन निर्मितम् ?
4. कीदृशः भिक्षाकलापः आसीत् ?
5. कः कां सर्वम् आत्मनः वृत्तान्तम् आचचक्षे ?

33. अथ सा कन्यका समुत्थाय शङ्खमयं भिक्षाकपालम् आदाय, तरुतलेषु विचचार। अचिरेण तस्याः स्वयं पतितैः फलैः अपूर्यत भिक्षाभाजनम्। आगत्य च तेषाम् उपयोगाय नियुक्तवती चन्द्रापीडम्। चन्द्रापीडस्तु "चित्रमिदम् आलोकितम् अस्माभिः अदृष्टपूर्वं, यत् व्यपगतचेतना अपि वनस्पतयः सचेतना इव अस्यै भगवत्यै प्रयच्छन्ति फलानि" इति अधिकतरोपजातविस्मयः उत्थाय तमेव प्रदेशम् इन्द्रायुधम् आनीय, व्यपनीतपर्याणं नातिदूरे संयम्य, निर्झरजलनिर्वर्तितस्नानविधिः, तान्यमृतरसस्वादून्युपभुज्य फलानि, पीत्वा च तुषारशिशिरं प्रस्रवणजलम् उपस्पृश्य एकान्ते तावत् अवतस्थे।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – समुत्थाय = सम् + उत् + स्था + ल्यप्। **आगत्य** = आ + गम् + ल्यप्। **आनीय** = आ + नी + ल्यप्। **उपस्पृश्य** = उप + स्पृश् + ल्यप्।

शब्दार्थः – अपूर्यत = भर गया। **तुषारशिशिरम्** = तुषार जैसे ठंडे। **प्रस्रवणजलम्** = झरने का पानी। **व्यपगतचेतना** = चेतना रहित। **संयम्य** = बाँधकर। **अचिरेण** = शीघ्र ही। **भिक्षाभाजनम्** = भिक्षापात्र को। **आलोकितम्** = देखी गई। **प्रयच्छन्ति** = प्रदान करते हैं। **व्यपनीतपर्याणम्** = हटे हुए जीन वाले (उतारे गए जीन वाले)। **एकान्ते** = एकान्त में। **अवतस्थे** = बैठ गया।

अनुवाद – इसके पश्चात् वह कन्या उठकर शङ्खमय भिक्षापात्र को लेकर वृक्षों के नीचे घूमने लगी। शीघ्र ही स्वयं गिरे हुए फलों से उसका भिक्षापात्र भर गया। लौट कर उन्हें (चन्द्रापीड को) उपयोग के लिये दिया। चन्द्रापीड ने तो 'मेरे द्वारा पहले न देखी गई आश्चर्यजनक घटना देखी गयी, जो अचेतन होते हुए भी वनस्पतियों ने सचेतन के समान देवी को फल प्रदान किए' इस प्रकार अधिक विस्मय को प्राप्त चन्द्रापीड ने उठकर उसी स्थान पर इन्द्रायुध को लाकर, जीन उतार कर निकट ही बाँध दिया। झरने के जल से स्नान करके, उन अमृतरसयुक्त फलों को खाकर बर्फ जैसे ठंडे झरने के जल का सेवन करके एकान्त में बैठ गया।

प्रश्नाः

1. सा कन्यका शङ्खमयं भिक्षाकपालम् आदाय कुत्र विचचार ?
2. कीदृशः तस्याः भिक्षाभाजनम् अपूर्यत ?
3. कन्या फलानि कस्मै अददात् ?
4. कः निर्झरजले स्नानम् अकरोत् ?
5. 'प्रस्रवणजलस्य' इति पदस्य तात्पर्यं किम् ?

34. अथ च निर्वर्तितसन्ध्योचिताचाराम् परिसमापिताहारां शिलातले विस्रब्धम् उपविष्टां तां कन्यकां सप्रश्रयम् उपसृत्य, नातिदूरे समुपविश्य, अवादीत्– ''भगवति! भवद्दर्शनात् प्रभृति मम महत् कौतुकम् अस्मिन् विषये। कतरत् मरुताम्, ऋषीणां, गन्धर्वाणाम्, अप्सरसां वा कुलम् अनुगृहीतम् भगवत्या जन्मना ? किमर्थं वास्मिन् कुसुमसुकुमारे नवे वयसि व्रतग्रहणम् ? किं निमित्तं वा वनम् अमानुषम् एकाकिनी अधिवससि ? क्वेदं वयः, क्वेयम् इन्द्रियाणाम् उपशान्तिः ? अद्भुतमिव मे प्रतिभाति। तत् यदि नातिखेदकरमिव, ततः कथनेन आत्मानम् अनुगृह्यमाणम् इच्छामि। आवेदयतु भवती सर्वम्'' इति।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – निर्वर्तितसन्ध्योचिताचाराम् = निर्वर्तितः सन्ध्योचितः आचारः यया ताम् (बहुव्रीहिः)। **परिसमापिताहाराम्** = परिसमापितः आहारः यया ताम् (बहुव्रीहिः)। **क्वेदम्** = क्व + इदम्। **क्वेयम्** = क्व + इयम्।

शब्दार्थः – विस्रब्धम् = निश्चिन्त होकर। **सप्रश्रयम्** = विनयपूर्वक। **कतरत्** = किस। **निर्वर्तित–सन्ध्योचिताचाराम्** = सन्ध्या–समय के योग्य कर्म को कर लेने वाली। **परिसमापिताहाराम्** = भोजन कर चुकने वाली। **शिलातले** = पत्थर के चट्टान पर। **उपविष्टाम्** = बैठी हुई। **उपसृत्य** = समीप जाकर। **नातिदूरे** = कुछ ही दूरी पर। **समुपविश्य** = बैठकर। **अवादीत्** = कहा। **महत् कौतुकम्** = बड़ी उत्कण्ठा है। **अस्मिन् विषये** = इस विषय में। **मरुताम्** = देवताओं के। **कुलम्** = वंश को। **जन्मना** = जन्म से। **अनुगृहीतम्** = अनुगृहीत किया गया है। **भगवत्या** = आपके द्वारा। **कुसुमसुकुमारे** = फूल जैसे कोमल। **नवे वयसि** = नई आयु (अवस्था) में। **अमानुषम्** = मानवरहित। **एकाकिनी** = अकेली। **अधिवससि** = निवास करती हो। **क्वेदम्** = कहाँ यह। **वयः** = (आपकी) आयु। **क्वेयम्** = कहाँ यह। **इन्द्रियाणाम् उपशान्तिः** = इन्द्रियों की शान्ति। **अद्भुतमिव** = आश्चर्य–सा।

अनुवाद – इसके बाद सन्ध्याकर्म को कर लेने वाली, भोजन कर लेने वाली उस कन्या के निश्चिन्त होकर पत्थर के चट्टान पर (पुनः) बैठ जाने पर, अति विनम्रता के साथ समीप ही बैठकर चन्द्रापीड ने कहा– ''हे देवि! आपके दर्शनकाल से ही मुझे (मेरे मन में) इस विषय में बड़ी उत्कण्ठा है कि आपने किस देवता, ऋषि, गन्धर्व या अप्सरा के कुल को अपने जन्म से अनुगृहीत किया है ? आपके द्वारा फूल के समान कोमल इस नई अवस्था में व्रत ग्रहण किया गया है। किस कारण से आप मानव रहित इस वन में अकेली रहती हैं ? कहाँ आपकी यह अवस्था और कहाँ इस प्रकार इन्द्रियों का दमन ? यह बड़ा अद्भुत–सा लग रहा है। यदि अत्यधिक कष्टकर सा न लगे तो (कृपया) अपने विषय में (अपना वृत्तान्त) कहकर मुझे अनुगृहीत करें ऐसा चाहता हूँ। आप सब कुछ बताइये।''

प्रश्नाः

1. गद्यांशोऽयं कस्मात् पुस्तकात् उद्धृतः ?
2. अस्य गद्यांशस्य लेखकः कः ?
3. 'भगवति! भवद्दर्शनात् प्रभृति मम महत् कौतुकम् अस्मिन् विषये।' इस अंश का हिन्दी अनुवाद कीजिए।
4. चन्द्रापीडः कस्याः समीपम् अगच्छत्?
5. 'भवद्दर्शनात् प्रभृति मम महत् कौतुकम् अस्मिन् विषये' इति कस्योक्तिः ?

35. एवम् अभिहिता सा किमप्यन्तः ध्यायन्ती, दीर्घम् उष्णं च निःश्वस्य, प्रत्यवादीत्– राजपुत्र! किमनेन मम मन्दभाग्यायाः जन्मनः प्रभृति वृत्तान्तेन श्रुतेन ? तथापि यदि महत् कुतूहलम् तत् कथयामि श्रूयताम्। एतत् प्रायेण भवतः श्रुतिविषयम् आपतितमेव यथा दक्षस्य प्रजापतेः अतिप्रभूतानां कन्यकानां मध्ये द्वे सुते मुनिः अरिष्टा च बभूवतुः। तत्र अरिष्टायाः पुत्रः हंसो नाम गन्धर्वराजः सोममयूखसंभवात् अप्सरःकुलात् समुद्भूतां हिमकरकिरणावदातवर्णां गौरीं नाम कन्यकां प्रणयिनीम् अकरोत्। तयोरहम् ईदृशी विगतलक्षणा दुःखसहस्रभाजनम् एकैव सुता समुत्पन्ना। तातस्तु मे अनपत्यतया सुतजन्मातिरिक्तेन महोत्सवेन मज्जन्म अभिनन्दितवान्। प्राप्ते च दशमेऽहनि 'महाश्वेता' इति यथार्थमेव नाम कृतवान्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – किमप्यन्तः = किमपि + अन्तः। **ध्यायन्ती** = ध्यै + शतृ + ङीप्। **प्रत्यवादीत्** = प्रति + अवादीत्। **तयोरहम्** = तयोः + अहम्। **एकैव** = एका + एव। **मज्जन्म** = मत् + जन्म।

शब्दार्थ – एवम् = इस प्रकार। **अभिहिता** = कही गई। **किमप्यन्तः ध्यायन्ती** = मन–ही–मन कुछ चिन्तन करती हुई (सोचती हुई)। **निःश्वस्य** = साँस लेकर। **प्रत्यावदीत्** = उत्तर दिया। **मन्दभाग्यायाः** = अभागिनी का। **जन्मनः प्रभृति** = जन्म से लेकर अब तक। **वृत्तान्तेन श्रुतेन** = वृत्तान्त सुनने से। **श्रुतिविषयम्** = सुनने में। **आपतितमेव** = आया ही होगा, पड़ा ही होगा। **अतिप्रभूताम्** = बहुत–सी। **कन्यकानां मध्ये** = कन्याओं के बीच। **द्वे सुते** = दो पुत्रियाँ। **बभूवतुः** = उत्पन्न हुई। **अरिष्टायाः पुत्रः** = अरिष्टा का पुत्र। **सोममयूखसम्भवात्** = चन्द्रमा की किरणों से उत्पन्न। **अप्सरःकुलात्** = अप्सरा के कुल से। **समुद्भूताम्** = उत्पन्न होने वाली। **हिमकिरणावदातवर्णाम्** = चंद्रकिरण के समान उज्ज्वल वर्ण वाली। **प्रणयिनीम् अकरोत्** = पत्नी बना लिया था। **ईदृशी** = इस प्रकार की। **विगतलक्षणा** = लक्षणों से रहित। **दुःखसहस्रभाजनम्** = हजारों प्रकार के दुःखों का पात्र। **समुत्पन्ना** = उत्पन्न हुई। **सुतजन्मातिरिक्तेन** = पुत्र–जन्म से भी अधिक। **महोत्सवेन** = महोत्सव से। **अभिनन्दितवान्** = मेरे जन्म का अभिनन्दन किया। **दशमेऽहनि** = दसवाँ दिन आने पर।

अनुवाद – ऐसा पूछे जाने पर उसने (महाश्वेता ने) मन–ही–मन कुछ सोचकर लम्बी और गरम साँसें लेकर उत्तर दिया– हे राजकुमार! मुझ अभागिनी का जन्म से लेकर अब तक का वृत्तान्त सुनने से (आपको) क्या लाभ होगा? तथापि यदि महत् कौतूहल है तो कहती हूँ, सुनिये। यह तो आपने सुना ही होगा कि प्रजापति दक्ष की बहुत सी कन्याओं में 'मुनि' और 'अरिष्टा' नाम की दो पुत्रियाँ थीं। उनमें अरिष्टा के पुत्र गन्धर्वों के राजा हंस ने, चन्द्रमा की किरणों से उत्पन्न अप्सरा के कुल में जन्म लेने वाली तथा चंद्रकिरण के समान श्वेत वर्ण वाली गौरी नाम की कन्या से विवाह किया। उन्हीं दोनों से इस प्रकार शुभ लक्षणों से हीन और हजारों दुःखों से पूर्ण केवल मैं ही (एकमात्र) उत्पन्न हुई। सन्तान न होने के कारण मेरे पिता ने पुत्रजन्म से भी अधिक महोत्सव द्वारा मेरे जन्म का स्वागत किया और दसवाँ दिन आने पर मेरी विशेषता के अनुरूप ही 'महाश्वेता' ऐसा मेरा नाम रखा।

प्रश्नाः

1. गद्यांशोऽयं कस्मात् पुस्तकात् उद्धृतः ?
2. अस्य गद्यांशस्य लेखकः कः ?
3. "राजपुत्र! किमनेन मम मन्दभाग्यायाः जन्मनः प्रभृति वृत्तान्तेन श्रुतेन ?" इस अंश का अनुवाद कीजिए।
4. गन्धर्वराजः हंसः कया कन्यकया सह विवाहम् अकरोत् ?

36. साहं पितृभवने बालतया कलमधुरप्रलापिनी वीणेव गन्धर्वाणाम् अङ्कादङ्कं सञ्चरन्ती शैशवम् अतिनीतवती। क्रमेण च कृतं मे वपुषि नवयौवनेन पदम्। अथ सकलजीवलोक–हृदयानन्ददायकेषु मधुमासदिवसेषु एकदा अहम् अम्बया समम् इदम् अच्छोदं सरः स्नातुम् अभ्यागमम्। अत्र च रमणीये तीरतरुतले सखी जनेन सह विचरन्ती झटिति वनानिलेन उपनीतम् अभिभूतान्यकुसुमपरिमलम् अनाघ्रातपूर्वं कुसुमगन्धम् अभ्यजिघ्रम्। कुतोऽयम् ? इत्युपारूढकुतूहला चाहं कतिचित् पदानि गत्वा काममिवापरम् अतिमनोहराकृतिम् तापसकुमारेण सवयसा सह स्नानार्थम् आगतं मुनिकुमारकम् अपश्यम्। तेन च कर्णावतंसीकृतां कुसुममञ्जरीम् अद्राक्षम्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – कलमधुरप्रलापिनी = कलं मधुरं प्रलापिनी या सा तादृशी, **अङ्कादङ्कम्** = अङ्कात् + अङ्कम्, **सञ्चरन्ती** = सम् + चर् + शतृ + ङीप् **सकलजीवलोकहृदयानन्ददायकेषु** = सकलाः ये जीवलोकाः तेषां हृदयानाम् आनन्ददायकेषु। **अभिभूतान्यकुसुमपरिमलम्** = अभिभूताः अन्यकुसुमानां परिमलः येन तम्। **कुतोऽयम्** = कुतः + अयम्। **काममिवापरम्** = कामम् + इव + अपरम्।

शब्दार्थः – पितृभवने = पिता के घर में। **बालतया** = बचपन के कारण। **कलमधुरप्रलापिनी** = अव्यक्त मधुर वचन बोलती हुई। **वीणेव** = वीणा के समान। **गन्धर्वाणाम्** = गन्धर्वों के। **अङ्कादङ्कम** = एक गोद से दूसरी गोद में। **सञ्चरन्ती** = जाती हुई। **शैशवम्** = बचपन को। **अतिनीतवती** = बिता दिया। **मे वपुषि** = मेरे शरीर में। **सकलजीवलोकहृदयानन्ददायकेषु** = समस्त प्राणियों को आनन्द देने

वाले। **मधुमासदिवसेषु** = वसन्त के दिनों में। **एकदा** = एक बार। **अम्बया समम्** = माता के साथ। **स्नातुम्** = स्नान करने के लिए। **अभ्यागमम्** = आयी। **तीरतरुतले** = किनारे के वृक्षों के नीचे। **झटिति** = सहसा। **विचरन्ती** = विचरण करती हुई। **वनानिलेन** = वन की हवा से। **उपनीतम्** = लायी गयी। **अभिभूतान्यकुसुमपरिमलम्** = दूसरे फूलों की गन्ध को ढक लेने वाली। **अनाघ्रातपूर्वं** = पहले कभी नहीं सूँघी गयी। **कुसुमगन्धम्** = फूल की गंध को। **अभ्यजिघ्रम्** = (मैंने) सूँघ लिया। **इत्युपारुढ़कुतूहला** = ऐसी कुतूहल वाली। **कतिचित्** = कुछ। **काममिवापरम्** = दूसरे कामदेव के समान। **कर्णावतंसीकृताम्** = कान के आभूषण के समान रखी गई। **कुसुममञ्जरीम्** = पुष्पमञ्जरी को। **अद्राक्षम्** = देखा।

अनुवाद – वह मैं पिता के घर में बचपन के कारण सुन्दर और मधुर वचन बोलती हुई वीणा के समान गन्धर्वों की एक गोद से दूसरी गोद में विचरण करती हुई अपने बचपन को बिताया। क्रमानुसार मेरे शरीर में यौवन ने स्थान बना लिया। इसके बाद समस्त प्राणियों को आनन्दित करने वाले वसन्त के दिनों में एक बार मैं अपनी माता के साथ इसी अच्छोद सरोवर में स्नान के लिए आयी। यहाँ मनोहर किनारे के वृक्षों के नीचे सखियों के साथ घूमती हुई अचानक वन की हवा से लायी गयी, अन्य पुष्पों की सुगन्ध को तिरस्कृत कर देने वाली एवं पूर्व में कभी भी न सूँघी गयी पुष्प की गन्ध को (मैंने) सूँघा। यह (गन्ध) कहाँ से आ रही है ? ऐसे कुतूहलवाली मैंने कुछ पग जाकर दूसरे कामदेव के समान अति मनोहर आकृति वाले तथा अपनी उम्र वाले एक तपस्वी कुमार के साथ स्नान के लिये आए हुए एक मुनिकुमार को देखा, और उसके द्वारा कान का आभूषण बनाई गई पुष्पमञ्जरी को देखा।

प्रश्नाः

1. 'साहम्' इति पदं कस्याः द्योतकम् ?
2. बालतया कलमधुरप्रलापिनी वीणेव का ?
3. महाश्वेता कया समं स्नातुम् अभ्यागमत् ?
4. महाश्वेता कुत्र स्नातुम् अभ्यागमत् ?

37. 'अस्याः नन्वयं परिमलः' इति मनसा निश्चित्य, विस्मृतनिमेषेण चक्षुषा तं तपोधनयुवानम् अतिचिरं विलोकयन्ती रूपैकपक्षपातिना नवयौवनसुलभेन कुसुमायुधेन परवशीकृता अभवम्। 'अशेषजनपूजनीया चेयं जातिः' इति कृत्वा तस्मै प्रणामम् अकरवम्। कृतप्रणामायां मयि मद्विकारदर्शनापहृतधैर्यं तमपि कुमारं तरलताम् अनयत् अनङ्गः। अथ च उपसृत्य तं द्वितीयम् अस्य सहचरं मुनिबालकं प्रणामपूर्वकम् अपृच्छम्–भगवन्! किमभिधानः ? कस्य वा अयं तपोधनयुवा ? किं नाम्नः तरोः इयम् अनेन अवतंसीकृता कुसुममञ्जरी ? इति। स तु माम ईषत् विहस्य अब्रवीत्– बाले! किम् अनेन पृष्टेन प्रयोजनम् ? अथ कौतुकं चेत् आवेदयामि, श्रूयताम्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – विस्मृतनिमेषेण = विस्मृतः निमेषः येन तेन (बहुव्रीहिः)। **कुसुमायुधेन** = कुसुमस्य आयुधम् यस्य तेन (बहुव्रीहिः), **मद्विकारदर्शनापहृतधैर्यम्** = मम विकाराणां दर्शनात् अपहृतं धैर्यं यस्य तम् (बहुव्रीहिः)।

शब्दार्थ – अस्याः = इसकी (पुष्पमञ्जरी की)। **परिमलः** = सुगन्ध। **मनसा** = मन से। **विस्मृतनिमेषेण** = पलक गिराना भूली हुई। **चक्षुषा** = नेत्रों से। **तं तपोधनयुवानम्** = उस तपस्वी युवक को। **अतिचिरम्** = बहुत देर तक। **विलोकयन्ती** = देखती हुई। **रूपैकपक्षपातिना** = केवल सौन्दर्य के पक्षपाती। **नवयौवनसुलभेन** = नई युवावस्था में सहज ही सुलभ। **कुसुमायुधेन** = कामदेव के द्वारा। **अशेषजनपूजनीया** = सभी के लिए पूजनीय है। **मद्विकारदर्शनापहृतधैर्यम्** = मेरे विकार को देखकर धैर्य खो देने वाले। **अनङ्गः** = कामदेव ने। **तरलताम् अनयत्** = चञ्चल कर दिया। **सहचरम्** = साथी। **उपसृत्य** = निकट जाकर। **अपृच्छम्** = पूछा (मैंने पूछा)। **किमभिधानः** = क्या नाम है ? **ईषत्** = कुछ। **विहस्य** = हँसकर। **चेत्** = यदि।

अनुवाद – निश्चय ही यह सुगन्ध इसी की है, ऐसा मन में निश्चय करके निर्निमेष दृष्टि से उस तपस्वी युवक को बहुत देर तक देखती रही। केवल सौन्दर्य के पक्षपाती एवं नई अवस्था में सहज ही सुलभ कामदेव ने मुझे पराधीन कर दिया। मुनियों की जाति सभी के लिए पूज्य है, इसलिए मैंने उन्हें प्रणाम किया। मेरे प्रणाम करने पर मेरे कामजन्य विकार को देखकर धैर्यहीन हो जाने वाले उस मुनिकुमार को भी कामदेव ने चंचल बना दिया। इसके बाद मैंने उसके साथी दूसरे मुनिकुमार के पास जाकर प्रणाम करके पूछा– भगवन् इनका क्या नाम है ? यह किसके पुत्र हैं ? यह पुष्पमञ्जरी किस वृक्ष की है जिसे इन्होंने अपने कानों पर आभूषण की तरह लगा लिया है। वे कुछ हँसते हुए मुझसे बोले– बाले! इस प्रश्न से तुम्हारा क्या प्रयोजन है ? यदि उत्कण्ठा है तो बताता हूँ, सुनो।

प्रश्नाः

1. 'अस्याः नन्वयं परिमलः' इति कस्याः निश्चयः ?
2. महाश्वेता कं विलोकयन्ती परवशीकृता अभवत् ?
3. मुनिकुमारः विहस्य किम् अब्रवीत् ?
4. 'अशेषजनपूजनीया चेयं जातिः' – इस वाक्य का हिन्दी अनुवाद करें।
5. 'कुसुमायुधेन' इति पदस्य आशयः कः ?

38. अस्ति सकलभुवनप्रख्यातकीर्तिः महामुनिः दिव्यलोकनिवासी श्वेतकेतुः नाम। तस्य च भगवतः सकललोकहृदयानन्दकरम् अतिशयितनलकूबरं रूपम् आसीत्। तस्यायम् आत्मजः पुण्डरीको नाम। सोऽयम् अद्य 'चतुर्दशी' इति भगवन्तम् अम्बिकापतिं कैलासगतम् उपासितुं नन्दनवनसमीपेन गच्छन् वनदेवतया समर्पिताम् इमां पारिजातकुसुममञ्जरीं कर्णपूरीकृतवान् इति। इत्युक्तवति तस्मिन् सः तपोधनयुवा, 'अयि! कुतूहलिनि किमनेन प्रश्नायासेन ? यदि रुचितसुरभिपरिमला गृह्यताम् इयम्।'

व्याकरणात्मक टिप्पणी – सकलभुवनप्रख्यातकीर्तिः = सकलेषु भुवनेषु प्रख्याता कीर्तिः यस्य सः (बहुव्रीहिः)। **अतिशयितनलकूबरम्** = अतिशयितः नलकूबरः येन तत् (बहुव्रीहिः)। **रुचितसुरभिपरिमला** = रुचितः सुरभिः परिमलः यस्याः सा (बहुव्रीहिः)।

शब्दार्थ – सकलभुवनप्रख्यातकीर्तिः = सम्पूर्ण संसार में प्रख्यात यशवाले। **दिव्यलोकवासी** = दिव्यलोक में रहने वाले। **सकललोकहृदयानन्दकरम्** = सारे संसार को आनन्दित करने वाला। **अतिशयितनलकूबरम्** = नलकूबर को भी मात देने वाला। **रूपम्** = सौन्दर्य। **आत्मजः** = पुत्र। **अम्बिकापतिम् उपासितुम्** = शिव की पूजा करने के लिए। **गच्छन्** = जाते हुए। **वनदेवतया** = वन–देवता द्वारा। **समर्पिताम्** = दी गयी। **कर्णपूरीकृतवान्** = कान में लगा लिया (कर्णाभूषण बना लिया)। **प्रश्नायासेन** = प्रश्न के परिश्रम से। **रुचितसुरभिपरिमला** = इसकी सुगन्ध यदि पसन्द हो। **गृह्यताम्** = ले लो।

अनुवाद – सम्पूर्ण संसार में प्रख्यात यश वाले दिव्यलोक के निवासी श्वेतकेतु नाम से प्रसिद्ध एक महामुनि हैं। भगवान् श्वेतकेतु का सौन्दर्य (कुबेर के पुत्र) नलकूबर की सुन्दरता से भी श्रेष्ठ, सम्पूर्ण संसार को आनन्दित करने वाला था। ये उन्हीं के प्रसिद्ध पुत्र पुण्डरीक हैं। आज ये चतुर्दशी के दिन भगवान् शंकर की पूजा के लिए कैलास गए थे। जाते समय नन्दन वन के समीप वनदेवता ने इन्हें पारिजात पुष्प की मञ्जरी दी, जिसे इन्होंने अपने कान में लगा लिया। उसके ऐसा कहने पर उस तपस्वी युवक ने कहा– ''अरी उत्कंठिते! इस प्रकार के प्रश्न करने का कष्ट क्यों उठा रही हो ? यदि इसकी सुगन्ध तुम्हें प्रिय है तो इसे ले लो।''

प्रश्नाः

1. गद्यांशोऽयं कस्मात् पुस्तकात् अवतरितः?
2. सकलभुवनप्रख्यातकीर्तिः महामुनिः कः अस्ति ?
3. श्वेतकेतोः रूपं कीदृशम् आसीत् ?
4. पारिजातपुष्पमञ्जरीं वनदेवतया कस्मै प्रदत्ताः ?
5. चतुर्दश्यां तिथौ पुण्डरीकः कुत्र गतः?

39. इत्युक्त्वा समुपसृत्य श्रवणात् आत्मीयात् अपनीय, मदीये श्रवणपुटे ताम् अकरोत्। तदानीं मत्कपोलस्पर्शसुखेन तरलीकृताङ्गुलिः करतलात् गलिताम् अक्षमालां नाज्ञासीत्। अथाहं ताम् असम्प्राप्तामेव भूतलं गृहीत्वा सलीलं कण्ठाभरणताम् अनयम्। इत्थंभूते च व्यतिकरे छत्रग्राहिणी माम् अवोचत्–"भर्तृदारिके! स्नाता देवी। प्रत्यासीदति गृहगमनकालः। तत् क्रियतां मज्जनविधिः" इति। ततः अहं तन्मुखात् अतिकृच्छ्रेण दृष्टिम् आकृष्य, स्नातुम् उदचलम्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – सलीलम् = लीलया सहितं यथा स्यात् तथा। **प्रत्यासीदति** = प्रति + आ + सीदति। **अपनीय** = अप + नी + ल्यप्। **स्नातुम्** = स्ना + तुमुन्।

शब्दार्थ – श्रवणात् = कान से। **आत्मीयात्** = अपने। **अपनीय** = उतारकर। **मदीये** = मेरे। **मत्कपोलस्पर्शसुखेन** = मेरे कपोल के स्पर्श के सुख से। **तरलीकृतांगुलिः** = जिसकी उँगली काँप गयी हो। **करतलात्** = हाथ से। **गलिताम्** = गिरी हुई। **अक्षमालाम्** = रुद्राक्ष की माला को। **नाज्ञासीत्** = न जान सका। **असम्प्राप्तामेव भूतलम्** = भूतल (पृथ्वी) पर पहुँचने से पूर्व ही। **सलीलम्** = लीला या खुशी के साथ। **कण्ठाभरणताम् अनयम्** = कण्ठ का आभूषण बना लिया। **इत्थंभूते व्यतिकरे** = ऐसी घटना होने पर। **छत्रग्राहिणी** = छाता लेकर चलने वाली सेविका ने। **अवोचत्** = बोली। **भर्तृदारिके** = स्वामिपुत्री। **स्नाता** = स्नान कर चुकी। **प्रत्यासीदति** = निकट आ रहा है। **मज्जनविधिः** = स्नानक्रिया। **अतिकृच्छ्रेण** = कठिनता से। **दृष्टिं समाकृष्य** = दृष्टि (निगाहों) को हटाकर। **उदचलम्** = चल पड़ी।

अनुवाद – ऐसा कहकर और मेरे निकट आकर उन्होंने उस (मञ्जरी) को अपने कान से उतार कर मेरे कान पर रख दिया। उस समय मेरे कपोल (गाल) के स्पर्श-सुख से काँपती हुई उँगलियों वाले हाथ से गिरती हुई रुद्राक्षमाला को न जान सके। मैंने उसे भूमि पर पहुँचने से पहले ही पकड़कर खुशी से अपने गले का आभूषण बना लिया। ऐसी घटना होने पर मेरा छाता ढोने वाली सेविका ने मुझसे कहा– स्वामिपुत्री! महारानी (देवी) स्नान कर चुकी हैं। घर जाने का समय हो रहा है। इसलिए आप भी स्नान कर लें। तत्पश्चात् बड़ी कठिनता से मैं उन (पुण्डरीक) के मुख से दृष्टि को हटाकर स्नान के लिए चल पड़ी।

प्रश्नाः

1. अस्य गद्यांशस्य प्रणेता कः ?
2. ''भर्तृदारिके! स्नाता देवी! प्रत्यासीदति गृहगमनकालः। तत् क्रियतां मज्जनविधिः।'' इस अंश का हिन्दी अनुवाद करें।
3. करतलात् गलिताम् अक्षमालां कः नाज्ञासीत् ?
4. 'उदचलम्' इति पदस्य कः अर्थः ?

40. उच्चलितायां च मयि सः द्वितीयः मुनिदारकः तथाविधं तस्य धैर्यस्खलितम् आलोक्य, किंचित् प्रकटितप्रणयकोपः प्रोवाच– ''सखे पुण्डरीक! नैतदनुरूपं भवतः। क्षुद्रजनक्षुण्ण एष मार्गः। धैर्यधना हि साधवः। कथं करतलात् गलिताम् अक्षमालामपि न लक्षयसि? अहो विगतचेतनः त्वम्'' इति। इत्येवम् अभिधीयमानश्च तेन, किंचित् उपजातलज्ज इव प्रत्यवादीत्– ''सखे कपिञ्जल! किं माम् अन्यथा संभावयसि ? नाहम् अस्याः दुर्विनीतायाः

मर्षयामि अक्षमालाग्रहणापराधम् इमम्'' इति उक्त्वा, अलीककोपकान्तेन मुखेन्दुना माम् अवदत्– ''चपले! अक्षमालाम् इमाम् अदत्त्वा, पदात् पदमपि न गन्तव्यम्'' इति। तच्च श्रुत्वा अहम् आत्मकण्ठात् उन्मुच्य एकावलीम् ''भगवन्! गृह्यताम् अक्षमाला'' इति मन्मुखासक्तदृष्टेः तस्य प्रसारिते पाणौ निधाय स्नातुं सरः अवातरम्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – प्रकटितप्रणयकोपः = प्रकटितः प्रणयकोपः येन सः (बहुव्रीहिः)। **नैतदनुरूपम्** = न + एतदनुरूपम्। **क्षुद्रजनक्षुण्णः** = क्षुद्रजनैः क्षुण्णः (तृतीया तत्पुरुषः)। **धैर्यधनाः** = धैर्यम् एव धनं येषां ते (बहुव्रीहिः)। **इत्येवम्** = इति + एवम्। **नाहम्** = न + अहम्। **अक्षमालाग्रहणापराधम्** = अक्षमालायाः ग्रहणस्य अपराधम् (षष्ठी तत्पुरुषः)। **अलीककोपकान्तेन** = अलीकः कोपः, तेन कान्तः तेन। **मन्मुखासक्तदृष्टेः** = मम मुखे आसक्ता दृष्टिः यस्य तस्य (बहुव्रीहिः)।

शब्दार्थ – उच्चलितायाम् = चलने पर। **द्वितीयः मुनिदारकः** = दूसरा मुनिकुमार। **तस्य** = उसके (पुण्डरीक के)। **तथाविधम्** = उस प्रकार के। **धैर्यस्खलितम्** = धैर्य का नाश होना। **आलोक्य** = देखकर। **प्रकटितप्रणयकोपः** = प्रेममिश्रित क्रोध को प्रकट करने वाला (कपिञ्जल)। **किञ्चित्** = कुछ। **प्रोवाच** = बोला। **नैतदनुरूपम्** = यह (आचरण) योग्य नहीं। **भवतः** = आपके। **क्षुद्रजनक्षुण्णः** = नीच लोगों द्वारा अपनाया गया। **एष मार्गः** = यह रास्ता। **धैर्यधनाः** = धैर्यरूपी धन वाले। **लक्षयसि** = देखते हो। **विगतचेतनः** = चेतनाहीन। **इत्येवम्** = इस प्रकार। **अभिधीयमानश्च** = कहे जाते हुए। **उपजातलज्जः** = कुछ लज्जित–सा होकर। **प्रत्यवादीत्** = उत्तर दिया। **संभावयसि** = संभावना कर रहे हो (समझते हो)। **अस्याः दुर्विनीतायाः** = इस धृष्टा (दुर्विनीता) का। **अक्षमालाग्रहणापराधम्** = अक्षमाला को ग्रहण करने के अपराध को। **न मर्षयामि** = नहीं क्षमा करूँगा। **अलीककोपकान्तेन** = झूठे क्रोध से सुन्दर। **मुखेन्दुना** = मुखचन्द्र से। **माम्** = मुझको। **अदत्त्वा** = न देकर। **पदात्** = एक कदम भी। **न गन्तव्यम्** = नहीं जाना चाहिए। **आत्मकण्ठात्** = अपने गले से। **उन्मुच्य** = उतारकर। **एकावलीम्** = एक लड़ी की माला को। **गृह्यताम्** = ग्रहण करें। **मन्मुखासक्तदृष्टेः** = मेरे मुख में आसक्त नेत्रों वाले। **प्रसारिते पाणौ** = फैलाये गये हाथ में। **निधाय** = रखकर। **स्नातुम्** = स्नान करने के लिए। **सरः** = सरोवर में। **अवातरम्** = उतर गयी।

अनुवाद – मेरे चल देने पर उस दूसरे मुनिकुमार (कपिञ्जल) ने उसका (पुण्डरीक का) उस प्रकार से धैर्य-नाश देखकर कुछ प्रेमपूर्ण क्रोध दिखाते हुए कहा– मित्र पुण्डरीक! यह (आचरण) आपके योग्य नहीं है। यह मार्ग तो नीच लोगों द्वारा अपनाया गया है। सज्जन लोग तो निश्चय ही धैर्यशाली होते हैं। आप अपने हाथ से गिरती हुई जपमाला (रुद्राक्षमाला) को भी न देख सके। आश्चर्य है कि आप इतने चेतनाहीन हो गए हैं। कपिञ्जल के ऐसा कहने पर कुछ लज्जित सा होकर बोला– मित्र कपिञ्जल! मुझ पर अन्य प्रकार की संभावना क्यों कर रहे हो ? (मुझे गलत क्यों समझ रहे हो) मैं इस धृष्टा अक्षमाला (जपमाला) के लेने के इस अपराध को क्षमा नहीं करूँगा। इस प्रकार कहकर झूठे क्रोध से सुन्दर मुखचन्द्र

से मुझसे कहा– ''चंचले! इस जपमाला को बिना दिये हुए तुम एक कदम भी आगे नहीं जा सकती।'' यह सुनकर मैंने अपने गले से एकावली निकालकर, ''भगवन्! अक्षमाला को ग्रहण करें'' इस प्रकार कहकर, मेरे मुख पर दृष्टि गड़ाने वाले (आसक्त नेत्रों वाले) उस पुण्डरीक के फैलाये हुए हाथ में रखकर स्नान करने के लिये (अच्छोद) सरोवर में उतर गयी।

प्रश्नाः

1. द्वितीयः मुनिदारकः कः ?
2. ''धैर्यधना हि साधवः''– इस अंश का हिन्दी अनुवाद कीजिए।
3. पुण्डरीकस्य सख्युः किं नाम आसीत् ?
4. कः विगतचेतनः बभूव ?

41. उत्थाय च कथमपि सखीजनेन नीयमाना, तमेव चिन्तयन्ती स्वभवनम् अम्बया समम् अयासिषम्। गत्वा च प्रविश्य कन्यान्तःपुरम्, ततः प्रभृति तद्विरहविधुरा, सर्वव्यापारान् उत्सृज्य, विसृज्य सखीजनम् एकाकिनी गवाक्षनिक्षिप्तमुखी, तामेव दिशम् ईक्षमाणा तामेवाक्षमालां कण्ठेनोद्वहन्ती दिवसम् अत्यवाहयम्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – **कन्यान्तःपुरम्** = कन्यायाः अन्तःपुरम्। **तद्विरहविधुरा** = तस्य विरहेण विधुरा। **नीयमाना** = नी + यक् + शानच् + टाप्। **ईक्षमाणा** = ईक्ष् + शानच् + टाप्।

शब्दार्थ – उत्थाय = स्नान करने के बाद, पानी से बाहर आकर। **कथमपि** = किसी प्रकार। **सखीजनेन** = सखियों द्वारा। **नीयमाना** = ले जाई जाती हुई। **चिन्तयन्ती** = चिन्तन करती हुई। **अयासिषम्** = चली गई। **कन्यान्तःपुरम्** = कन्याओं के अन्तःपुर या महल में। **ततः प्रभृति** = उस समय से आरम्भ करके। **तद्विरहविधुरा** = उस (पुण्डरीक) के विरह से विह्वल होती हुई। **सर्वव्यापारान्** = सभी कार्यों को। **उत्सृज्य** = छोड़कर। **विसृज्य** = विदा करके। **गवाक्षनिक्षिप्तमुखी** = खिड़की पर मुख रखकर। **तामेव दिशम्** = उसी दिशा की ओर। **ईक्षमाणा** = देखती हुई। **कण्ठेन उद्वहन्ती** = गले में धारण की हुई। **दिवसम्** = दिन को। **अत्यवाहयम्** = बिताया।

अनुवाद – (स्नान के बाद) वहाँ से बाहर निकलकर सखियों द्वारा किसी प्रकार ले जाई जाती हुई मैं उसी का ही चिन्तन करती हुई माता के साथ अपने घर चली गई। घर जाकर तथा कन्या–भवन में प्रवेश करके उसी समय से उनके विरह से विह्वल होती हुई, सभी कार्यों को छोड़कर और सखियों को विदा करके अकेली खिड़की पर मुख रखकर उसी दिशा की ओर देखती हुई, उस अक्षमाला को गले में धारण की हुई सारा दिन बिता दिया।

प्रश्नाः

1. सखीजनेन का नीयमाना ?
2. 'तमेव चिन्तयन्ती स्वभवनम् अम्बया समम् अयासिषम्' का हिन्दी अनुवाद करिए।
3. 'विसृज्य' में कौन–सा प्रत्यय है ?
4. महाश्वेता स्वभवनं कया समम् अयासीत् ?

42. अथ लोहितायति सूर्ये, छत्रग्राहिणी समागत्य माम् अकथयत्– "भर्तृदारिके, तयोः मुनिकुमारयोः अन्यतरः द्वारि तिष्ठति। कथयति च– अक्षमालाम् उपयाचितुम् आगतोऽस्मि" इति। अहं तु समाहूय कञ्चुकिनं गच्छ प्रवेश्यताम् इत्यादिश्य प्राहिणवम्। अथ मुहूर्तादेव तं तस्य अनुरूपं सखायं मुनिकुमारकं कपिञ्जलनामानम् आगच्छन्तम् अपश्यम्। उत्थाय च कृतप्रणामा सादरं स्वयम् आसनम् उपाहरम्। उपविष्टस्य तस्य प्रक्षाल्य चरणौ, उपमृज्य च उत्तरीयांशुकाञ्चलेन अव्यवधानायां भूमावेव तस्यान्तिके समुपाविशम्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – आगतोऽस्मि = आगतः + अस्मि। **इत्यादिश्य** = इति + आदिश्य। **कृतप्रणामा** = कृतः प्रणामः यया सा (बहुव्रीहिः)। **सादरम्** = आदरेण सहितं यथा स्यात् तथा। **उपयाचितुम्** = उप + याच् + तुमुन्।

शब्दार्थ – लोहितायति = लाल हो जाने पर (सन्ध्याकाल में)। **सूर्ये** = सूर्य के। **समागत्य** = आकर। **तयोः मुनिकुमारयोः** = उन दोनों मुनिकुमारों में से। **अन्यतरः** = एक (दूसरा)। **द्वारि तिष्ठति** = दरवाजे पर खड़ा है। **उपयाचितुम्** = माँगने के लिए। **समाहूय** = बुलाकर। **इत्यादिश्य** = ऐसा आदेश देकर। **प्राहिणवम्** = भेजा। **तस्य अनुरूपम्** = उसके समान रूप वाले। **आगच्छन्तम्** = आते हुए। **अपश्यम्** = देखा। **कृतप्रणामा** = प्रणाम कर लेने वाली। **सादरम्** = आदरपूर्वक। **आसनम् उपाहरम्** = आसन दिया (आसन ले आयी)। **उपविष्टस्य** = बैठे हुए (उसके)। **चरणौ प्रक्षाल्य** = दोनों पैरों को धोकर। **उत्तरीयांशुकाञ्चलेन** = रेशमी दुपट्टे के आँचल से। **उपमृज्य** = पोंछकर। **अव्यवधानायाम्** = बिना कुछ बिछाये। **भूमौ** = पृथ्वी पर। **तस्यान्तिके** = उसके समीप। **समुपाविशम्** = बैठ गयी।

अनुवाद – सायंकाल मेरी छत्रग्राहिणी ने आकर मुझसे कहा– "स्वामिपुत्री! उन दोनों मुनिकुमारों में से एक दरवाजे पर खड़ा है और कहता है कि मैं जपमाला माँगने के लिए आया हूँ। मैंने कञ्चुकी को बुलाकर कहा– 'जाओ और प्रवेश कराओ। थोड़ी ही देर में उसके ही समान रूपवाले उसके मित्र कपिञ्जल मुनिकुमार को आते हुए देखा। मैंने उठकर प्रणामकर स्वयं आदर के साथ आसन दिया। उस बैठे हुए मुनिकुमार के चरणों को धोकर और अपने दुपट्टे के आँचल से पोंछकर उसके पास ही बिना कुछ बिछाये ही भूमि पर ही बैठ गयी।

प्रश्नाः

1. अथ लोहितायति सूर्ये का समागता ?
2. 'भर्तृदारिके! तयोः मुनिकुमारयोः अन्यतरः द्वारि तिष्ठति'– अंश का हिन्दी अनुवाद कीजिए।
3. मुनिकुमारः किम् अकथयत् ?
4. मुनिकुमारस्य नाम किम् आसीत् ?
5. 'उत्तरीयांशुकाञ्चलेन' पद में विभक्ति एवं वचन बताइए।

43. अथ मुहूर्त्तमिव स्थित्वा स तस्यां मत्समीपोपविष्टायां तरलिकायां चक्षुः अपातयत्। अहं तु विदिताभिप्राया "भगवन् अव्यतिरिक्तेयम् अस्मच्छरीरात्। अशङ्कितम् अभिधीयताम्" इत्यवोचम्। एवम् उक्तश्च मया कपिञ्जलः प्रत्यवादीत् "राजपुत्रि! किं ब्रवीमि? किमारब्धं दैवेन? वागेव मे न प्रसरति त्रपया। सर्वथा रक्षणीयाः सुहृदसवः इति कथयामि। अस्ति खलु भवत्याः समक्षमेव स मया तथा निष्ठुरम् अभिहितः" इति। तथा चाभिधाय परित्यज्य तम् उपजातमन्युः अन्यं प्रदेशम् अगमम्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – मत्समीपोपविष्टायाम् = मत् + समीपे + उपविष्टायाम्। **विदिताभिप्राया** = विदितः अभिप्रायः यया सा (बहुव्रीहिः)। **अव्यतिरिक्तेयम्** = न व्यतिरिक्ता इति अव्यतिरिक्ता, अव्यतिरिक्ता + इयम्। **अस्मच्छरीरात्** = अस्मत् + शरीरात्। **वागेव** = वाक् + एव। **चाभिधाय** = च + अभिधाय।

शब्दार्थ – मुहूर्त्तमिव = कुछ समय तक। **स्थित्वा** = ठहरकर। **मत्समीपोपविष्टायाम्** = मेरे पास ही बैठी हुई। **चक्षुः अपातयत्** = दृष्टि डाली। **विदिताभिप्राया** = उसके अभिप्राय को समझ लेने वाली। **अव्यतिरिक्तेयम्** = यह भिन्न नहीं है (या अभिन्न)। **अस्मच्छरीरात्** = हमारे शरीर से। **अशङ्कितम्** = निःशङ्क होकर। **अभिधीयताम्** = कहिए। **किं ब्रवीमि** = क्या कहूँ। **किमारब्धम्** = क्या आरम्भ कर दिया। **वागेव** = वाणी ही। **न प्रसरति** = नहीं फैल रही है (नहीं निकल रही है)। **त्रपया** = लज्जा से। **सुहृदसवः** = मित्र के प्राण। **भवत्याः** = आपके। **समक्षमेव** = सामने ही। **निष्ठुरम्** = कठोर। **अभिहितः** = कहा गया। **चाभिधाय** = और कहकर। **परित्यज्य तम्** = उसे छोड़कर। **उपजातमन्युः** = क्रोधित होकर। **अन्यप्रदेशम्** = दूसरी जगह। **अगमम्** = चला गया।

अनुवाद – थोड़ी देर ठहरकर उसने मेरे निकट बैठी हुई तरलिका की ओर देखा। उसके अभिप्राय को समझकर मैं बोली– "भगवन्! यह मुझसे भिन्न नहीं है। अतः आप निःशंक होकर कहें।" मेरे ऐसा कहने पर कपिञ्जल ने उत्तर दिया– "राजपुत्रि! क्या कहूँ ? दैव ने यह क्या (आरम्भ) कर दिया ? लज्जा के कारण वाणी ही नहीं निकल रही है। केवल यही कहता हूँ कि मित्र के प्राणों की रक्षा करनी चाहिए। आपके सामने ही मैंने उसे कठोर बातें कही थीं, वैसा कहकर, उसे छोड़कर, क्रोधित होकर मैं दूसरे स्थान पर चला गया।"

प्रश्नाः

1. 'भगवन्! अव्यतिरिक्तेयम् अस्मच्छरीरात् अशङ्कितम् अभिधीयताम्'– प्रस्तुत अंश का हिन्दी अनुवाद कीजिए।
2. 'सर्वथा रक्षणीयाः सुहृदसवः' इति कस्य उक्तिः?
3. 'परित्यज्य तम्' का क्या तात्पर्य है ?
4. कपिञ्जलः कस्यां चक्षुः अपातयत् ?
5. पुण्डरीकं परित्यज्य कपिञ्जलः कुत्र अगमत्?

44. अपगतायां भवत्यां मुहूर्तमिव स्थित्वा, एकाकी किमयम् इदानीम् आचरतीति सञ्जातवितर्कः प्रतिनिवृत्त्य विटपान्तरितविग्रहः तं प्रदेशं व्यलोकयम्। यावत् तत्र तं नाद्राक्षम्, तेन तस्यादर्शनेन दूयमानः, मनस्यचिन्तयम्– 'स कदाचित् धैर्यस्खलनविलक्षः किंचित् अनिष्टमपि समाचरेत्। तत् न युक्तम् एनम् एकाकिनं कर्तुम्' इत्यवधार्य, अन्वेषमाणः निपुणम् इतस्ततो दत्तदृष्टिः तरुलतागहनानि वीक्षमाणः सुचिरं व्यचरम्। अथ एकस्मिन् सरस्समीपवर्तिनि लतागहने व्युपरतसकलव्यापारतया लिखितमिवावस्थितम्, मन्मथावेशस्य परां कोटिम् अधिरूढं करतलनिहितवामकपोलं शिलातलोपविष्टं तमहमद्राक्षम्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – सञ्जातवितर्कः = सञ्जातः वितर्कः यस्मिन् सः। **नाद्राक्षम्** = न + अद्राक्षम्। **तस्यादर्शनेन** = तस्य + अदर्शनेन। **मनस्यचिन्तयम्** = मनसि + अचिन्तयम्। **धैर्यस्खलनविलक्षः** = धैर्यस्खलनेन विलक्षः। **इत्यवधार्य** = इति + अवधार्य। **दत्तदृष्टिः** = दत्ता दृष्टिः येन सः। **व्युपरतसकलव्यापारतया** = व्युपरतः सकलव्यापारः तस्य भावः, तया। **करतलनिहितवामकपोलम्** = करतले निहितः वामकपोलः येन सः, तम्।

शब्दार्थ – अपगतायां भवत्याम् = आपके चली जाने पर। **स्थित्वा** = ठहरकर। **आचरतीति** = कर रहा है। **सञ्जातवितर्कः** = वितर्क उत्पन्न होने पर (से)। **प्रतिनिवृत्य** = लौटकर। **विटपान्तरितविग्रहः** = वृक्षों की ओट से अपने शरीर को छिपाने वाला। **व्यलोकयम्** = देखा। **नाद्राक्षम्** = नहीं देखा। **तस्यादर्शनेन** = उसके न दिखने से। **दूयमानः** = दुःखी होते हुए। **मनस्यचिन्तयम्** = मन में विचार किया। **धैर्यस्खलनविलक्षः** = धैर्य टूटने से विस्मयान्वित। **अनिष्टमपि** = अप्रिय भी। **समाचरेत्** = कर ले। **एकाकिनं कर्तुम्** = अकेला छोड़ना। **इत्यवधार्य** = ऐसा निश्चय करके। **अन्वेषमाणः** = खोजता हुआ। **इतस्ततः** = इधर-उधर। **दत्तदृष्टिः** = दृष्टि डालते हुए। **तरुलतागहनानि** = वृक्ष-लताओं से घने। **वीक्षमाणः** = देखता हुआ। **सुचिरम्** = देर तक। **व्यचरम्** = विचरण करता (घूमता) रहा। **सरस्समीपवर्तिनि** = सरोवर के निकट। **लतागहने** = घनी लताओं में। **व्युपरतसकलव्यापारतया** = समस्त क्रियाओं से रहित होने से। **लिखितमिव** = चित्र में लिखा हुआ–सा (जड़ीभूत)। **अवस्थितम्** = बैठा हुआ।

मन्मथावेशस्य = कामदेव के आवेश की। **परां कोटिम्** = चरम सीमा पर। **अधिरूढम्** = पहुँचा हुआ। **करतलनिहितवामकपोलम्** = हथेली पर बायें गाल को रखे हुए। **शिलातलोपविष्टम्** = चट्टान पर बैठे हुए। **अद्राक्षम्** = देखा।

अनुवाद – आपके चली जाने पर थोड़ी देर ठहरकर 'इस समय अकेले यह क्या कर रहा है' इस प्रकार का तर्क करके लौटकर अपने को पेड़ की ओट में छिपाकर उस स्थान को देखने लगा। उसके वहाँ न दिखाई देने से दुःखी होता हुआ (अपने) मन में विचार किया– वह (पुण्डरीक) धैर्य टूटने से दुःखी होकर कहीं कोई अप्रिय (अनिष्ट) कार्य न कर डाले, इसलिए उसे अकेला छोड़ना उचित नहीं है। ऐसा निश्चय करके इधर-उधर सावधानी से ढूँढ़ते हुए घने पेड़ों और लताओं में देखता हुआ चिरकाल (देर तक) तक विचरण करता रहा। तत्पश्चात् एक तालाब के निकट एक घनी लता में समस्त क्रियाओं से रहित होने के कारण चित्र में लिखे जैसे (निश्चेष्ट) बैठे हुए कामदेव के आवेश की चरमसीमा पर पहुँचे हुए (अपनी) हथेली पर बायें गाल को रखे हुए प्रस्तर फलक (चट्टान) पर बैठे हुए उसे (पुण्डरीक को) मैंने देखा।

प्रश्नाः

1. मन्मथावेशस्य परां कोटिं कः अधिरूढः ?
2. "एकाकी किमयम् इदानीम् आचरतीति"– इस रेखांकित अंश का हिन्दी अनुवाद कीजिए।
3. 'अवस्थितम्' – पद का क्या अर्थ है ?
4. शिलातलोपविष्टः कः ?
5. विटपान्तरितविग्रहः कः?

45. उपसृत्य च तस्मिन्नेव शिलातलैकपार्श्वे समुपविश्य, अंसदेशावसक्तपाणिः "सखे पुण्डरीक, कथय किमिदं गुरुभिरुपदिष्टम्; उत धर्मशास्त्रेषु पठितम्, उत मोक्षप्राप्तियुक्तिरियं कथमेतद्युक्तं भवतो मनसापि चिन्तयितुम्। धैर्यम् अवलम्ब्य निर्भर्त्स्यताम् अयं दुराचारः कामः" इति अब्रवम्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – तस्मिन्नेव = तस्मिन् + एव। **अंसदेशावसक्तपाणिः** = अंसदेशे अवसक्तः पाणिः येन सः। **मोक्षप्राप्तियुक्तिरियम्** = मोक्षप्राप्तेः युक्तिः इयम्। **कथमेतद्युक्तम्** = कथम् + एतत् + युक्तम्। **उपसृत्य** = उप + सृ + ल्यप् प्रत्यय। **पठितम्** = पठ् + क्त प्रत्यय। **समुपविश्य** = सम् + उप + विश् + ल्यप् प्रत्यय।

शब्दार्थ – उपसृत्य = निकट जाकर। **तस्मिन्नेव** = उसी। **शिलातलैकपार्श्वे** = चट्टान के एक किनारे पर। **समुपविश्य** = बैठकर। **अंसदेशावसक्तपाणिः** = कन्धे पर हाथ रखकर। **कथय** = कहो। **गुरुभिः** = गुरुओं के द्वारा। **उपदिष्टम्** = उपदेश दिया गया है। **उत** = अथवा। **धर्मशास्त्रेषु** = धर्मशास्त्रों में। **पठितम्** = (तुम्हारे द्वारा) पढ़ा गया है। **मोक्षप्राप्तियुक्तिरियम्** = यह (कोई) मोक्ष

पाने का उपाय है ? **कथमेतद्युक्तम्** = क्या यह उचित है ? **मनसापि** = मन से भी। **चिन्तयितुम्** = विचार करने के लिए। **धैर्यम् अवलम्ब्य** = धैर्य को धारण करके। **निर्भर्त्स्यताम्** = निर्भर्त्सना करो (दुत्कार दो)। **दुराचारः कामः** = दुष्ट आचरण वाला कामदेव। **अब्रवम्** = कहा।

अनुवाद – उसके (पुण्डरीक के) पास जाकर उसी चट्टान पर एक किनारे बैठकर तथा उसके कंधे पर हाथ रखकर– ''मित्र पुण्डरीक! बताओं क्या गुरुजनों ने ऐसा ही उपदेश दिया है ? अथवा धर्मशास्त्रों में इसे पढ़ा है (या तुम्हारे द्वारा पढ़ा गया है) या यह (कोई) मोक्षप्राप्ति का उपाय है ? तुम्हारे लिए मन से भी ऐसा सोचना क्या उचित है ? इसलिए धैर्य धारण करो और इस दुष्ट कामदेव की भर्त्सना करो (दुत्कार दो), ऐसा (मैंने अर्थात् कपिञ्जल ने) कहा।

प्रश्नाः

1. अंसदेशावसक्तपाणिः कः ?
2. 'शिलातलैकपार्श्वे' पद का शाब्दिक अर्थ बताएँ ?
3. ''धैर्यम् अवलम्ब्य निर्भर्त्स्यताम् अयं दुराचारः कामः'' इस अंश का हिन्दी में अर्थ लिखें।
4. 'सखे पुण्डरीक! कथय किमिदं गुरुभिरुपदिष्टम्' इति केन उक्तः ?

46. इत्येवं वदत एव मे वचनम् आक्षिप्य, करतलेन पाणौ माम् अवलम्ब्य अवोचत्– ''सखे! किं बहुना उक्तेन ? सर्वथा स्वस्थोऽसि, यतः आशीविषविषवेगविषमाणां कुसुमचापसायकानां पतितोऽसि न गोचरे। सुखम् उपदिश्यते परस्य। मम तु गत इदानीम् उपदेशकालः। को वापरः त्वत्समः मे जगति बन्धुः ? किं करोमि ? न शक्नोमि निवारयितुम् आत्मानम्। यावत् प्राणिमि, तावदस्य मदनसंतापस्य प्रतिक्रियां कर्तुम् इच्छामि। अत्र यत् प्राप्तकालं तत् करोतु भवान्'' इति।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – आशीविषविषवेगविषमाणाम् = आशीविषस्य विषवेगः तस्य इव विषमाः तेषाम्। **कुसुमचापसायकानाम्** = कुसुमचापस्य सायकानाम्। **इत्येवम्** = इति + एवम्। **निवारयितुम्** = नि + वृ + णिच् + तुमुन्।

शब्दार्थ – इत्येवम् = इस प्रकार। **वदतः** = कहते हुए। **मे वचनम्** = मेरी बात को। **आक्षिप्य** = टोककर, काटकर। **करतलेन** = हाथ से। **अवोचत्** = कहा। **बहुना उक्तेन** = अधिक कहने से। **स्वस्थोऽसि** = स्वस्थ हो। **यतः** = क्योंकि। **आशीविषविषवेगविषमाणाम्** = साँप के जहर की लहर के समान भीषण। **कुसुमचापसायकानाम्** = कामदेव के बाणों के। **गोचरे** = निशाने पर। **न पतितोऽसि** = नहीं पड़े हो। **उपदिश्यते** = उपदेश दिया जाता है। **परस्य** = दूसरे को। **गतः** = बीत गया। **उपदेशकालः** = उपदेश का समय। **अपरः** = दूसरा। **त्वत्समः** = तुम्हारे समान। **जगति** = संसार में। **शक्नोमि** = सकता हूँ। **निवारयितुम्** = रोकने में। **आत्मानम्** = अपने को। **प्राणिमि** = जी रहा हूँ। **मदनसंतापस्य** = कामपीड़ा का। **प्रतिक्रियाम्** = उपाय। **प्राप्तकालम्** = उचित अवसर के अनुकूल।

अनुवाद – इस प्रकार कहते हुए मेरी बात को बीच में ही काटकर अपने हाथ से मेरा हाथ पकड़कर उसने कहा– "हे मित्र! अधिक कहने से क्या लाभ ? तुम सब प्रकार से स्वस्थ हो, क्योंकि साँप के विष की लहरों के समान भयंकर कामदेव के बाणों के सामने नहीं पड़े हो। दूसरे को उपदेश देना आसान है। मुझे अब उपदेश देने का समय बीत चुका है। संसार में तुम्हारे समान मेरा कोई अपना (भाई) नहीं है। क्या करूँ ? मैं अपने को (इस मार्ग से) रोकने में असमर्थ हूँ। जब तक जीवित हूँ इस काम-पीड़ा को दूर करने का उपाय करना चाहता हूँ। इसलिए अब इस विषय में समयानुसार जो उचित हो, वह तुम करो।

प्रश्नाः

1. अयम् गद्यांशः कस्मात् ग्रन्थात् उद्धृतोऽस्ति ?
2. कः पाणौ अवलम्ब्य अवोचत् ?
3. कः वचनम् आक्षिप्य अवोचत् ?
4. 'सुखम् उपदिश्यते परस्य' इति कस्य उक्तिः ?
5. कस्य उपदेशकालः गतः?
7. 'जगति' इति पदस्य हिन्दीभाषायाम् कः अर्थः ?

47. एवम् उक्तोऽहम् अचिन्तयम्– "अतिभूमिं गतोऽयं न शक्यते निवर्तयितुम्। अकालान्तरक्षमश्चायमस्य मदनविकारः। प्राणास्तावदस्य रक्षणीयाः। अतिगर्हितेन अकृत्येनापि रक्षणीयान् सुहृदसून् मन्यन्ते साधवः। तत् अतिह्रेपणम् अवश्यकर्तव्यम् आपतितम्। किं करोमि ? कान्या गतिः? प्रयामि तस्याः सकाशम्। आवेदयामि एताम् अवस्थाम्' इति चिन्तयित्वा, कदाचित् अनुचितव्यापारप्रवृत्तं मां विज्ञाय, सञ्जातलज्जः निवारयेत् इति अनिवेद्यैव तस्मै, सव्याजम् उत्थाय तस्मात् प्रदेशात् उपागतोऽहम्। तदेवम् अवस्थिते, यदत्र अवसरप्राप्तं तत्र प्रभवति भवती" इत्यभिधाय, किमियं वक्ष्यतीति मन्मुखासक्तदृष्टिः, तूष्णीमभवत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – अकालान्तरक्षमश्चायमस्य = अकालान्तरक्षमः + च + अयम् + अस्य। **प्राणास्तावदस्य** = प्राणाः + तावत् + अस्य। **निवर्तयितुम्** = नि + वृत् + णिच् + तुमुन् प्रत्यय।

शब्दार्थ – एवम् = इस प्रकार। **उक्तोऽहम्** = कहा गया मैं। **अचिन्तयम्** = विचार किया। **अतिभूमिम्** = बहुत दूर। **गतोऽयम्** = यह चला गया है। **निवर्तयितुम् न शक्यते** = लौटाया नहीं जा सकता है। **अकालान्तरक्षमश्चायमस्य मदनविकारः** = इसका यह कामविकार जीवन भर नहीं जा सकता। **रक्षणीयाः** = बचाना चाहिए। **अतिगर्हितेन** = अत्यन्त निन्दनीय। **अकृत्येन** = बुरे कर्म से। **रक्षणीयान्** = रक्षा योग्य। **सुहृदसून्** = मित्र के प्राणों को। **मन्यन्ते** = मानते हैं। **अतिह्रेपणम्** = अत्यन्त लज्जाजनक। **आपतितम्** = अचानक आ पड़ने वाले। **प्रयामि** = जाता हूँ। **आवेदयामि** =

आवेदन करता हूँ। **चिन्तयित्वा** = विचार करके। **कदाचित्** = कहीं, संभवतः। **अनुचितव्यापारप्रवृत्तम्** = अनुचित कार्य में लगा हुआ। **विज्ञाय** = जानकर। **सञ्जातलज्जः** = लज्जित होकर। **निवारयेत्** = रोके। **अनिवेद्यैव** = बिना कहे ही। **सव्याजम्** = बहाने के साथ। **यदत्र अवसरप्राप्तम्** = इस समय जो उचित हो। **तत्र प्रभवति** = वह आप कर सकती हैं। **मन्मुखासक्तदृष्टिः** = मेरे मुख की ओर टकटकी लगाए हुए। **तूष्णीमभवत्** = चुप हो गया।

अनुवाद – उसके इस प्रकार कहने पर मैं सोचने लगा– ''यह बहुत दूर जा चुका है, अतः अब इसे लौटाया नहीं जा सकता। इसका यह कामविकार जीवनभर नहीं जा सकता। इसलिए इसके प्राणों की रक्षा करनी चाहिए। अत्यन्त निन्दनीय बुरे कर्मों द्वारा भी मित्र के प्राणों की रक्षा करना साधु लोग उचित मानते हैं। अतः बहुत लज्जाजनक होने पर भी अचानक उपस्थित हुए इस काम को करना ही चाहिए। क्या करूँ ? दूसरी गति ही क्या है ? उसके पास जाता हूँ और उसे (महाश्वेता को) इस दशा को बतलाता हूँ, ऐसा सोचकर सम्भवतः मुझे अनुचित कार्य में संलग्न जान लज्जा के कारण वह रोके न, अतः उसे बिना बताए ही, बहाने से उठकर उस स्थान से आया हूँ। इस स्थिति में जो उचित हो, उसे आप कर सकती हैं।'' ऐसा कहकर यह जानने के लिए कि मैं क्या कहती हूँ, मेरे मुख की ओर देखते हुए वह चुप हो गया।

प्रश्नाः

1. अस्य गद्यांशस्य प्रणेता कः ?
2. कस्य मदनविकारः अकालान्तरक्षमः ?
3. कस्य प्राणाः रक्षणीयाः ?
4. कः तूष्णीम् अभवत् ?
5. 'सव्याजम्' इति पदस्य हिन्दीभाषायाम् अर्थं लिखत ?

48. अहं तु तत् आकर्ण्य 'दिष्ट्या अयम् अनङ्गः मामिव तमपि अनुबध्नाति' इति सर्वानन्दानाम् उपरि वर्तमाना 'इत्थंभूते किं मया प्रतिपत्तव्यम्' इति विचारयन्ती आसम्। अत्रान्तरे प्रतीहारी ससंभ्रमं प्रविश्य अकथयत् ''भर्तृदारिके! त्वम् अस्वस्थशरीरेति परिजनात् उपलभ्य महादेवी प्राप्ता'' इति। तत् श्रुत्वा जनसंमर्दभीरुः कपिञ्जलः सत्वरम् उत्थाय, ''राजपुत्रि! भगवानयम् अस्तम् उपगच्छति दिवाकरः। तद् गच्छामि; सर्वथा सुहृत्प्राणरक्षादक्षिणार्थम् अयम् उपरचितोऽञ्जलिः'' इत्यभिधाय, प्रतिवचनकालम् अप्रतीक्ष्यैव प्रययौ।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – जनसंमर्दभीरुः = जनानाम् सम्मर्दात् भीरुः। **सुहृत्प्राणरक्षादक्षिणार्थम्** = सुहृदः प्राणरक्षायाः दक्षिणा तस्यै अर्थम्। **विचारयन्ती** = वि + चर् + णिच् + शतृ + ङीप्।

शब्दार्थ – आकर्ण्य = सुनकर। **दिष्ट्या** = भाग्य से। **अनङ्गः** = कामदेव। **अनुबध्नाति** = पीड़ा दे रहा है। **सर्वानन्दानाम्** = सभी आनन्दों के। **उपरि वर्तमाना** = ऊपर स्थित। **इत्थंभूते** = ऐसा होने पर। **विचारयन्ती आसम्** = विचार कर रही थी। **अत्रान्तरे** = इसी बीच। **ससंभ्रमम्** = शीघ्रता से (झटके के साथ)। **अकथयत्** = कहा। **अस्वस्थशरीरा** = बीमार। **परिजनात्** = सेवकों से। **उपलभ्य** = समाचार पाकर। **जनसंमर्दभीरुः** = लोगों की भीड़ से भयभीत। **सत्वरम्** = शीघ्र ही। **अस्तमुपगच्छति** = अस्त हो रहे हैं। **दिवाकरः** = सूर्य। **सुहृत्प्राणरक्षादक्षिणार्थम्** = मित्र की प्राणरक्षा की दक्षिणा के लिए। **उपरचितोऽञ्जलिः** = हाथ जोड़ता हूँ। **अप्रतीक्ष्य** = प्रतीक्षा किए बिना ही। **प्रययौ** = चला गया।

अनुवाद – मैं तो उस (कपिञ्जल की बात) को सुनकर ''सौभाग्य से यह कामदेव मेरे ही समान उसे भी पीड़ित कर रहा है'', ऐसा जानकर सभी प्रकार के सुखों की चरम सीमा पर पहुँच गयी। इस प्रकार की स्थिति में मुझे क्या करना चाहिए यह सोच ही रही थी कि इसी बीच बड़ी शीघ्रता से प्रतीहारी ने प्रवेश करके कहा– ''स्वामिपुत्री! सेविकाओं से आप की अस्वस्थता का समाचार जानकर महादेवी आयी हैं।'' यह सुनकर लोगों की भीड़ से भयभीत कपिञ्जल शीघ्र ही उठकर बोला– ''राजपुत्रि! यह भगवान् सूर्य अस्त हो रहे हैं, इसलिए मैं जा रहा हूँ और सर्वथा मित्र की प्राणरक्षा की दक्षिणा के लिए हाथ जोड़ता हूँ।'' ऐसा कहकर मेरे उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना ही वह चला गया।

प्रश्नाः

1. गद्यांशोऽयं कस्मात् ग्रन्थात् उद्धृतः ?
2. का सर्वानन्दानाम् उपरि वर्तमाना आसीत् ?
3. का ससंभ्रमं प्रविश्य अकथयत् ?
4. कः प्रतिवचनकालम् अप्रतीक्ष्यैव प्रययौ ?
5. कः जनसंमर्दभीरुः ?

49. अम्बा तु मत्समीपम् आगत्य सुचिरं स्थित्वा स्वभवनम् अयासीत्। गतायां च तस्याम् अस्तम् उपगते भगवति सवितरि, किंकर्तव्यविमूढा तरलिकाम्, अपृच्छम्– ''अयि तरलिके! कथं न पश्यसि दृढमाकुलं मे हृदयम्। उपदिशतु मे भवती यदत्र साम्प्रतम्। अयमेवं त्वत्समक्षमेवाभिधाय गतः कपिञ्जलः। यदि तावत् विहाय विनयम्, विसृज्य लज्जाम्, अचिन्तयित्वा जनापवादम्, अतिक्रम्य सदाचारम्, अननुज्ञाता पित्रा, अननुमोदिता मात्रा, स्वयम् उपगम्य, पाणिं ग्राहयामि तदा गुरुजनातिक्रमात् अधर्मो महान्। अथ धर्मानुरोधे इतरपक्षम् अङ्गीकरोमि, प्रथमं तावत् स्वयम् आगतस्य कपिञ्जलस्य प्रणयभङ्गः। अपरम्– यदि कदाचित् तस्य जनस्य मत्कृतात् आशाभङ्गात् प्राणविपत्तिः उपजायते, तदपि मुनिजनवधजनितं महत् पातकं भवेत्'' इत्येवम् उच्चारयन्त्यामेव मयि अभिनवोदितेन रजनिकरबिम्बेन रमणीयतामनीयत यामिनी।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – आगत्य = आ + गम् + ल्यप्। **गुरुजनातिक्रमात्** = गुरुजनानां अतिक्रमः तस्मात्। **प्रणयभङ्गः** = प्रणयस्य भङ्गः। **मुनिजनवधजनितम्** = मुनिजनस्य वधात् जनितम्। **विसृज्य** = वि + सृज् + ल्यप्।

शब्दार्थ – मत्समीपम् = मेरे समीप। **आगत्य** = आकर। **सुचिरं स्थित्वा** = बहुत देर तक रुककर। **अयासीत्** = चली गयी। **सवितरि** = सूर्य के। **अस्तम् उपगते** = अस्तांचल पर पहुँच जाने पर। **किंकर्तव्यविमूढा** = क्या करूँ, क्या न करूँ इसका निर्णय न कर सकने वाली। **अपृच्छम्** = पूछा। **दृढमाकुलम्** =अत्यन्त व्याकुल। **त्वत्समक्षमेव** = तुम्हारे सामने ही। **अभिधाय** = कह कर। **विहाय** = छोड़कर। **विसृज्य** = त्यागकर। **अचिन्तयित्वा** = चिन्ता न करके। **अतिक्रम्य** = अतिक्रमण करके। **अननुज्ञाता** = बिना अनुमति लिए। **अननुमोदिता** = स्वीकृति पाये बिना। **उपगम्य** = (उसके) पास जाकर। **पाणिम् ग्राहयामि** = विवाह कर लूँ। **गुरुजनातिक्रमात्** = गुरुजनों का अतिक्रमण करने से। **धर्मानुरोधेन** = धर्म के अनुरोध से। **इतरपक्षम्** = दूसरे पक्ष को। **अङ्गीकरोमि** = स्वीकार करूँ। **आगतस्य** = आए हुए। **प्रणयभङ्गः** = प्रेम का भंग। **मत्कृतात्** = मेरे कारण। **आशाभङ्गात्** = आशा के टूट जाने से। **प्राणविपत्तिः उपजायते** = मृत्यु हो जाती है। **मुनिजनवधजनितम्** = मुनि के वध से उत्पन्न। **महत् पातकम्** = बहुत बड़ा पाप। **भवेत्** = होगा। **उच्चारयन्त्यामेव** = कहते ही। **अभिनवोदितेन** = नये-नये निकले हुए। **रजनिकरबिम्बेन** = चन्द्रमण्डल के कारण। **रमणीयतामनीयत** = सुन्दरता को पहुँचाई गई। **यामिनी** = रात।

अनुवाद – मेरी माँ (गौरी) मेरे पास आकर बहुत देर तक रुककर अपने महल में चली गयीं। उनके चले जाने पर सूर्यास्त के समय कुछ निश्चय करने में असमर्थ (किंकर्त्तव्यविमूढ़) मैंने तरलिका से पूछा– "हे तरलिका! क्या मेरे व्याकुल हृदय को नहीं देख रही हो ? इस समय मेरे लिए जो उचित हो बताओ। यह कपिञ्जल तुम्हारे सामने ही वैसा कहकर गया है। यदि विनय को छोड़कर, लज्जा का परित्याग कर लोकापवाद की चिन्ता न करके, सदाचार की सीमा लाँघकर, पिता की आज्ञा और माता की स्वीकृति लिए बिना ही स्वयं उसके पास जाकर अपना हाथ उसे पकड़ा दूँ (विवाह कर लूँ) तो गुरुजनों का उल्लंघन करने से महान् अधर्म होगा। यदि धर्म के अनुरोध से दूसरे पक्ष को (वहाँ न जाने को) स्वीकार करूँ, तो पहले तो स्वयं आने वाले कपिञ्जल का प्रेम टूट जाएगा, दूसरे यदि मेरे कारण आशा टूट जाने से उसकी (पुण्डरीक की) मृत्यु हो गई तो मुनिवध से उत्पन्न महान् पाप होगा" मेरे इस प्रकार कहते समय नये-नये निकले हुए चन्द्रमण्डल के द्वारा रात अत्यन्त रमणीय हो गई।

प्रश्नाः

1. का किंकर्तव्यविमूढा तरलिकाम् अपृच्छत् ?
2. का सुचिरं स्थित्वा स्वभवनम् अयासीत् ?
3. आगतस्य कस्य प्रणयभङ्गः ?
4. यामिनी केन रमणीयताम् अनीयत ?
5. 'यामिनी' इति पदस्य कः अर्थः?

50. तदानीम्– दुर्विषहमदनवेदनातुरां, तथाविधं रजनिकरबिम्बं विलोकयन्तीं मूर्च्छा मां निमीलितलोचनाम् अकार्षीत्। अथ संभ्रान्ता तरलिका सरभसम् उपनीताभिः चन्दनचर्चाभिः तालवृन्तानिलैश्च लब्धसंज्ञां माम् आबद्धाञ्जलिः एवम् अवादीत्– ''भर्तृदारिके ! किं लज्जया, गुरुजनोपेक्षया वा ? प्रसीद प्रेषय माम्। आनयामि ते हृदयदयितम्। उत्तिष्ठ। स्वयं वा तत्र गम्यताम्'' इति। एवंवादिनीम् ताम् ''उत्तिष्ठ, संभावयामि स्वयम् अभिगमनेन हृदयदयितं जनम्'' इति अभिदधाना कथंचित् तामेव अवलम्ब्य, उदतिष्ठम्। उच्चलितायाश्च मे दुर्निमित्तनिवेदकम् अस्पन्दत दक्षिणं चक्षुः। तेन उपजातशङ्का च अचिन्तयम् 'इदमपरं किमप्युत्क्षिप्तं दैवेन' इति।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – दुर्विषहमदनवेदनातुराम् = दुर्विषहया मदनवेदनया आतुरा ताम्। **तालवृन्तानिलैः** = तालस्य वृन्तं तस्य अनिलैः। **लब्धसंज्ञाम्** = लब्धा संज्ञा यया ताम्। **आबद्धाञ्जलिः** = आबद्धा अञ्जलिः यया सा (बहुव्रीहिः)। **गुरुजनोपेक्षया** = गुरुजन + उपेक्षया। **किमप्युत्क्षिप्तम्** = किम् + अपि + उत्क्षिप्तम्।

शब्दार्थ – दुर्विषहमदनवेदनातुराम् = असह्य कामपीड़ा से व्याकुल। **तथाविधम्** = उस प्रकार के। **रजनिकरबिम्बम्** = चन्द्रमण्डल को। **निमीलितलोचनाम्** = बन्द आँखों वाली। **अकार्षीत्** = कर दिया। **संभ्रान्ता** = घबराई हुई। **सरभसम्** = शीघ्रतापूर्वक, शीघ्रता से। **उपनीताभिः** = लाये गये। **चन्दनचर्चाभिः** = चन्दन के लेप द्वारा। **तालवृन्तानिलैः** = ताड़ के पंखे की वायु से। **लब्धसंज्ञाम्** = होश में आने वाली को। **आबद्धांजलिः** = हाथ जोड़ते हुए। **किं लज्जया** = लज्जा से क्या ? **गुरुजनोपेक्षया** = गुरुजनों की उपेक्षा से। **प्रेषय** = भेजो। **आनयामि** = लाती हूँ। **हृदयदयितम्** = प्राणप्रिय को। **उत्तिष्ठ** = उठो। **गम्यताम्** = चलो। **एवंवादिनीम्** = इस प्रकार कहने वाली। **संभावयामि** = सम्मानित करूँ। **अभिदधाना** = कहती हुई। **कथंचित्** = किसी प्रकार। **अवलम्ब्य** = सहारा लेकर। **उच्चलितायाः** = चलने वाली का। **दुर्निमित्तनिवेदकम्** = अपशकुन बताने वाली। **अस्पन्दत** = फड़क उठी। **दक्षिणं चक्षुः** = दाहिनी आँख। **उपजातशंका** = शंकित होकर। **अचिन्तयम्** = मैंने सोचा। **किमप्युत्क्षिप्तम्** = क्या कर डाला गया। **दैवेन** = भाग्य द्वारा।

अनुवाद – उस समय असह्य कामपीड़ा से व्यग्र (व्याकुल) मुझे उस प्रकार के चन्द्रबिम्ब के देखने से मूर्च्छा आ गई और मेरी आँखें बन्द हो गईं। इसके पश्चात् घबराई हुई तरलिका ने शीघ्रतापूर्वक लाकर चन्दन का लेप किया और ताड़ के पंखे से हवा किया, जिससे मैं होश में आ गई। उसने मुझसे हाथ जोड़कर कहा– ''हे स्वामिपुत्री! (इस) लज्जा और गुरुजनों की उपेक्षा से क्या होगा। कृपा करके मुझे भेजिए। मैं आप के प्राणप्रिय को लाती हूँ। अथवा उठिए स्वयं वहाँ चलिए।'' इस प्रकार कहने वाली तरलिका से मैंने कहा– ''उठो, मैं स्वयं वहाँ चलकर प्राणप्रिय को सम्मानित करूँ।'' ऐसा कहकर उसी का सहारा लेते हुए मैं उठ खड़ी हुई। ज्यों ही मैं चलने लगी, त्यों ही अपशकुन की सूचना देने वाली मेरी दाहिनी आँख फड़क उठी जिससे शंकित होकर मैंने विचार किया कि अब भाग्य और कौन दूसरी घटना उपस्थित करना चाहता है ?

प्रश्नाः

1. अयं गद्यांशः कस्मात् ग्रन्थात् उद्धृतः अस्ति ?
2. मूर्च्छा कां निमीलितलोचनाम् अकार्षीत् ?
3. किम् दुर्निमित्तनिवेदकम् अस्पन्दत ?
4. 'लज्जया' पद में कौन-सी विभक्ति है ?
5. 'हृदयदयितम्' पद का अर्थ लिखिए।

51. अथ च गृहीतविविधकुसुमताम्बूलाङ्गरागया तरलिकया अनुगम्यमाना रक्तांशुकेन कृतशिरोवगुण्ठना केनचित् आत्मीयेनापि परिजनेन अनुपलक्ष्यमाणा, प्रमदवनपक्षद्वारेण निर्गत्य, तत्कालोचितैः आलापैः तम् उद्देशम् अभ्युपागमम्। तत्र च तस्मिन्नेव सरसः पश्चिमे तटे पुरुषस्येव रुदितध्वनिम् विप्रकर्षात् नातिव्यक्तम् उपालक्षयम्। दक्षिणेक्षणस्फुरणेन प्रथममेव मनस्याहितशङ्काविषण्णेन अन्तरात्मना ''तरलिके! किमिदम्'' इति सभयम् अभिदधाना, तदभिमुखम् अतित्वरितम् अगच्छम्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – गृहीतविविधकुसुमताम्बूलाङ्गरागया = गृहीतानि विविधानि कुसुमानि ताम्बूलानि अंगरागानि च यया तया। **प्रमदवनपक्षद्वारेण** = प्रमदवनस्य पक्षद्वारेण। **अभ्युपागमम्** = अभि + उपागमम्। **नातिव्यक्तम्** = न + अतिव्यक्तम्। **दक्षिणेक्षणस्फुरणेन** = दक्षिणं ईक्षणं तस्य स्फुरेन। **अनुगम्यमाना** = अनु + गम् + यक् + शानच् + टाप्। **तदभिमुखम्** = तत् + अभिमुखम्।

शब्दार्थ – गृहीतविविधकुसुमताम्बूलाङ्गरागया = अनेक प्रकार के फूल, ताम्बूल और अङगराग को लेने वाली। **अनुगम्यमाना** = अनुगमन की गई। **रक्तांशुकेन** = लाल रेशमी वस्त्र से। **कृतशिरोवगुण्ठना** = सिर पर घूँघट डाली हुई। **आत्मीयेनापि** = खास, निजी। **परिजनेन** = सेवक द्वारा। **अनुपलक्ष्यमाणा** = न देखी हुई, छिपकर। **प्रमदवनपक्षद्वारेण** = प्रमदवन के छोटे द्वार से। **निर्गत्य** = निकलकर। **तत्कालोचितैः** = उस समय के अनुरूप। **आलापैः** = बातचीत द्वारा। **उद्देशम्** = स्थान। **अभ्युपागमम्** = समीप में पहुँची। **पुरुषस्येव** = पुरुष के जैसी। **रुदितध्वनिम्** = रोने की आवाज। **विप्रकर्षात्** = दूर होने से। **नातिव्यक्तम्** = स्पष्ट न होने वाली। **उपालक्षयम्** = सुनी। **दक्षिणेक्षणस्फुरणेन** = दाहिनी आँख फड़कने से। **प्रथममेव** = पहले ही। **मनस्याहितशंकाविषण्णेन** = मन में आई हुई शंका से दुःखी। **अन्तरात्मना** = हृदय से। **सभयम्** = भय के साथ। **अभिदधाना** = कहती हुई। **तदभिमुखम्** = उसी ओर। **अतित्वरितम्** = अत्यधिक शीघ्रता से। **अगच्छम्** = चली।

अनुवाद – इसके पश्चात् अनेक प्रकार के फूल, ताम्बूल तथा अङ्गराग लेकर पीछे-पीछे आने वाली तरलिका के साथ लाल रंग के कपड़े का घूँघट डाल कर और अपने निजी सेवकों से ही छिपकर मैं प्रमदवन के छोटे से दरवाजे से निकलकर समयोचित वार्तालाप करती हुई उस स्थान के समीप पहुँची। वहाँ उसी सरोवर के पश्चिमी किनारे पर दूर होने के कारण स्पष्ट न होने वाली पुरुष के जैसी रोने की

आवाज सुनाई पड़ी। दाहिनी आँख फड़कने के कारण पहले ही मन से सशंक हो उठने वाली मैं दुःखी हृदय से बोली– तरलिके! यह क्या है ? इस प्रकार कहकर मैं उसी ओर जल्दी-जल्दी चलने लगी।

प्रश्नाः

1. अयं गद्यांशः कुतः उद्धृतः अस्ति ?
2. महाश्वेता कया अनुगम्यमाना तम् उद्देशम् अभ्युपागमत् ?
3. महाश्वेता सरसः पश्चिमे तटे कस्य रुदितध्वनिम् अश्रृणोत् ?
4. का अतित्वरितम् अगच्छत् ?
5. 'सरसः' पद में कौन-सी विभक्ति है ?
6. 'अवगुण्ठनम्' पद का अर्थ लिखिए।

52. अथ निशीथप्रभावात् दूरादेव विभाव्यमानस्वरम् उन्मुक्तार्तनादम् "हा हतोऽस्मि, हा किमिदम् आपतितम् ? हा दुरात्मन् मदन ! निर्घृण! किमिदम् अकृत्यम् अनुष्ठितम्। आः पापे दुर्विनीते महाश्वेते! किम् अनेन ते अपकृतम्। आः पाप दुश्चरित! चन्द्र! चाण्डाल! कृतार्थोऽसि इदानीम्। हा भगवन् श्वेतकेतो! न वेत्सि मुषितम् आत्मानम्। हा तपः! निराश्रयमसि। हा सत्य! अनाथमसि। हा सरस्वति! विधवाऽसि। सखे! प्रतिपालय माम्। अहमपि भवन्तम् अनुयास्यामि। न शक्नोमि भवता विना क्षणमप्यवस्थातुम् एकाकी" इत्येतानि अन्यानि च विलपन्तं कपिञ्जलम् अश्रौषम्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – विभाव्यमानस्वरम् = विभाव्यमानः स्वरः यस्य तम्। **उन्मुक्तार्तनादम्** = उन्मुक्तः आर्तनादः येन सः तम्। **इत्येतानि** = इति + एतानि। **कृतार्थोऽसि** = कृतार्थः + असि।

शब्दार्थ – निशीथप्रभावात् = रात के प्रभाव से। **दूरादेव** = दूर से ही। **विभाव्यमानस्वरम्** = जिसका स्वर पहचाना जा रहा हो। **उन्मुक्तार्तनादम्** = जिसकी दुःखपूर्ण आवाज प्रकट हो रही हो। **हतोऽस्मि** = मैं मारा गया हूँ। **किमिदम्** = यह क्या। **आपतितम्** = अचानक आ पड़ा। **निर्घृण** = नीच। **मदन** = कामदेव। **अकृत्यम्** = बुरा कर्म। **अनुष्ठितम्** = किया। **दुर्विनीते** = दुष्ट। **अपकृतम्** = अपराध किया था। **अनेन** = इसके द्वारा। **ते** = तुम्हारा। **कृतार्थोऽसि** = सफल मनोरथ हो जाओ। **न वेत्सि** = नहीं जानते हो। **मुषितम् आत्मानम्** = अपना लुट जाना। **निराश्रयम्** = असहाय, आश्रयहीन। **प्रतिपालय** = प्रतीक्षा करो। **अनुयास्यामि** = पीछे चलूँगा। **क्षणमप्यवस्थातुम्** = एक क्षण भी रहना। **इत्येतानि** = इस प्रकार यह। **अन्यानि** = अन्य प्रकार से। **विलपन्तम्** = विलाप करते हुए। **अश्रौषम्** = सुना।

अनुवाद – इसके बाद मैंने कपिञ्जल को विलाप करते हुए सुना। जिसका स्वर रात्रि होने के कारण दूर से ही पहचान में आ रहा था। वह चिल्ला चिल्ला कर रो रहा था– "हाय! मैं मारा गया। हाय! यह अचानक क्या हो गया। अरे दुष्ट निष्ठुर कामदेव ! तुमने क्यों इतना बुरा कार्य कर डाला।

अरे पापिनी दुष्ट महाश्वेते! इसने तुम्हारा क्या अपराध किया था ? अरे पापी कुकर्मी, चाण्डाल चन्द्रमा ! अब तुम सफल मनोरथ हो जाओ। हाय भगवान् श्वेतकेतु! तुम्हे अपना लुट जाना नहीं मालूम है। हाय तप! तुम असहाय हो गए। हाय सत्य! तुम अनाथ हो गए। हाय सरस्वती! (आज) तुम विधवा हो गयी। मित्र! मेरी प्रतीक्षा करो। मैं भी तुम्हारे साथ चलूँगा। तुम्हारे बिना मैं अकेले एक क्षण भी यहाँ नहीं रह सकता।'' वह इसी प्रकार तथा और दूसरी-दूसरी बातें कहकर रो रहा था।

प्रश्नाः

1. 'आः पापे दुर्विनीते महाश्वेते! किम् अनेन ते अपकृतम्'–इदम् कस्य कथनम् अस्ति ?
2. कः आत्मानम् मुषितम् न वेत्ति ?
3. किम् निराश्रयम् अस्ति ?
4. कः अनाथः अस्ति ?
5. महाश्वेता विलपन्तं कम् अश्रृणोत् ?
6. 'निशीथप्रभावात्' पद का अर्थ लिखिए।

53. तच्च श्रुत्वा दूरादेव मुक्तैकताराक्रन्दा, त्वरितैः पादप्रक्षेपैः पदे पदे प्रस्खलन्ती, तं प्रदेशं गत्वा, सरस्तीरसमीपवर्तिनि शशिमणिशिलातले विरचितं मृणालमयं शयनम्, अधिशयानम्, तत्क्षणविगतजीवितं तं महाभागम् अद्राक्षम्। ''एतद्भूतमूर्च्छान्धकारा च तदा किमकरवम् ? किं व्यलपम् ? इति सर्वमेव नाज्ञासिषम्। अथाहम् अतिचिरात् लब्धचेतना, 'हा हा ! किमिदम् उपनतम्' इति मुक्तार्तनादा 'हा अम्ब! हा तात! हा सख्यः!' इति व्याहरन्ती 'हा नाथ! क्व माम् एकाकिनीम् उत्सृज्य यासि ? हा हतास्मि मन्दभागिनी, धिङ् मां दृष्कृतकारिणीम्। याहमेवंविधं भवन्तम् उत्सृज्य गृहं गतवतीभगवत्यः वनदेवताः! प्रसीदत। प्रयच्छतास्य प्राणान्'' इत्येतानि अन्यानि च ग्रहगृहीतेव उन्मत्तेव व्यलपम्। मुहुर्मुहुः तरलिकां कण्ठे गृहीत्वा प्रारुदम्। 'भगवन्! प्रसीद प्रत्युज्जीवयैनम्' इति मुहुर्मुहुः कपिञ्जलस्य पादयोः अपतम्। तथाभूते तस्मिन् अवस्थान्तरे मरणैकनिश्चया तत्तत् बहु विलप्य, तरलिकाम् अब्रवम् – ''अयि! उत्तिष्ठ, काष्ठान्याहृत्य विरचय चिताम्। अनुसरामि जीवितेश्वरम्'' इति।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – तच्च = तत् + च, **मुक्तैकताराक्रन्दा** = मुक्तः एकतारः आक्रन्दः ययाः सा। **तत्क्षणविगतजीवितम्** = तस्मिन् क्षणे एव विगतम् जीवितम् यः तम्। **लब्धचेतना** = लब्धा चेतना यया सा। **मुक्तार्तनादा** = मुक्तः आर्तनादः यया सा। **प्रयच्छतास्य** = प्रयच्छत + अस्य। **उन्मत्तेव** = उन्मत्ता + इव। **प्रत्युज्जीवयैनम्** = प्रति + उत् + जीवय + एनम्। **मरणैकनिश्चया** = मरणम् एव एकः निश्चयः यस्याः सा। **काष्ठान्याहृत्य** = काष्ठानि + आहृत्य।

शब्दार्थ – तच्च = और वह। **मुक्तैकताराक्रन्दा** = एक स्वर से चिल्लाकर रोने वाली। **त्वरितैः** = जल्दी-जल्दी। **पादप्रक्षेपैः** = कदम डालने से। **पदे-पदे** = पग-पग पर। **प्रसखलन्ती** = लड़खड़ाती हुई। **तं प्रदेशं गत्वा** = उस स्थान पर जाकर। **सरस्तीरसमीपवर्तिनि** = तालाब के किनारे के समीप स्थित। **शशिमणिशिलातले** = चन्द्रकान्तमणि की चट्टान (शिला) पर। **विरचितम्** = बनाई गई। **मृणालमयं शयनम्** = कमल के डंठल की शय्या। **अधिशयानम्** = सोए हुए। **तत्क्षणविगतजीवितम्** = तत्काल के मरे हुए। **एतद्भूतमूर्च्छान्धकारा** = इसके कारण मूर्च्छा के अन्धकार में पड़ने वाली। **किमकरवम्** = क्या किया। **नाज्ञासिषम्** = न जान सकी। **अतिचिरात्** = बड़ी देर के बाद। **लब्धचेतना** = होश में आने वाली। **किमिदम् उपनतम्** = यह क्या हो गया ? **व्याहरन्ती** = पुकारती हुई। **मुक्तार्तनादा** = फूट-फूट कर रोती हुई। **क्व** = कहाँ। **एकाकिनीम्** = अकेली को। **उत्सृज्य** = छोड़कर। **यासि** = जा रहे हो। **हतास्मि** = मारी गयी हूँ। **धिङ्** = धिक्कार है। **दुष्कृतकारिणीम्** = पाप करने वाली। **एवंविधम्** = इस प्रकार। **भवन्तम्** = आप को। **गतवती** = चली गई। **प्रसीदत** = प्रसन्न होइए। **प्रयच्छतास्य** = इसको दो। **ग्रहगृहीतेव** = ग्रह के वश में पड़ी हुई–सी। **उन्मत्तेव** = पगली जैसी। **व्यलपम्** = विलाप करने लगी। **मुहुर्मुहुः** = बार-बार। **कण्ठे गृहीत्वा** = गले लगाकर। **प्रारुदम्** = रोने लगी। **प्रत्युज्जीवयैनम्** = इन्हें फिर से जीवित कर दो। **पादयोः** = पैरों में। **अपतम्** = गिरने लगी। **तथाभूते** = ऐसा होने पर। **अवस्थान्तरे** = मृत्यु हो जाने पर। **मरणैकनिश्चया** = एकमात्र मरने का निश्चय करने वाली। **तत्तत्** = बहुत प्रकार से। **विलप्य** = विलाप करके। **अब्रवम्** = बोली। **उत्तिष्ठ** = उठो। **काष्ठान्याहृत्य** = लकड़ियाँ इकट्ठी करके। **विरचय** = बनाओ (निर्माण करो)। **अनुसरामि** = अनुसरण करती हूँ। **जीवितेश्वरम्** = प्राणनाथ का।

अनुवाद – दूर से ही कपिञ्जल का रोना सुनकर फूट-फूट कर एक स्वर से रोती हुई तथा शीघ्रतापूर्वक पैरों के रखने के कारण पग-पग पर लड़खड़ाती हुई, उस स्थान पर जाकर तालाब के किनारे के समीप ही चन्द्रकान्तमणि की शिला पर कमलदण्ड से बनाई गयी शय्या पर लेटे हुए तथा उसी समय मरे हुए, उस महाभाग को मैंने देखा। उन्हें इस प्रकार देखते ही मैं मूर्च्छित हो गई। इसलिए उस समय मैंने क्या किया? और क्या-क्या कहा? यह सब न जान सकी। बहुत देर बाद होश आने पर हाय! यह क्या हो गया ? इस प्रकार चिल्लाकर हाय माता, हाय पिता, हाय सखियाँ कहकर रोने लगी कि हाय नाथ! मुझे अकेली छोड़कर तुम कहाँ जा रहे हो ? मै अभागन मारी गयी, मुझ पापिनी को धिक्कार है, जो आप को इस दशा में छोड़कर घर चली गयी। भगवती वनदेवता! मेरे ऊपर कृपा करो। इन्हें फिर से जीवन प्रदान करो। इस प्रकार तथा और भी दूसरी तरह ग्रह के वशीभूत तथा पगली के समान विलाप करने लगी। बार-बार तरलिका को गले लगाकर रोने लगी। ''भगवन् कृपा करके इन्हें फिर जीवित कर दो'' ऐसा कहकर बार-बार कपिञ्जल के पैरों में गिरने लगी। इस प्रकार उसकी मृत्यु हो जाने पर एकमात्र मरण का निश्चय कर मैंने नाना प्रकार के विलाप करके तरलिका से कहा ''अरी! उठ, लकड़ियाँ इकट्ठी करके चिता बना। मैं अपने प्राणनाथ का अनुगमन करती हूँ।

प्रश्नाः

1. अस्य गद्यांशस्य प्रणेता कः ?
2. 'हा नाथ! क्व माम् एकाकिनीम् उत्सृज्य यासि' इदम् कस्याः विलापः अस्ति ?
3. का ग्रहगृहीतेव व्यलपत् ?
4. का तरलिकां कण्ठे गृहीत्वा प्रारुदत् ?
5. का मुहुर्मुहुः कपिञ्जलस्य पादयोः अपतत् ?
6. महाश्वेता बहु विलप्य काम् अब्रवीत् ?

54. अत्रान्तरे चन्द्रमण्डलात् विनिर्गतः दिव्याकृतिः पुरुषः गगनात् अवतीर्य, बाहुभ्यां तम् उपरतम् उत्क्षिपन् गंभीरेण स्वरेण ''वत्से महाश्वेते! न परित्याज्याः त्वया प्राणाः। पुनरपि तवानेन सह भविष्यति समागमः।'' इति माम् आदृतः पितेव अभिधाय, सहैव अनेन गगनतलम् उदपतत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– पुनरपि = पुनः + अपि, **तवानेन सह** = तव + अनेन + सह। **विनिर्गतः** = वि + निर् + गम् + क्त प्रत्यय।

शब्दार्थ – अत्रान्तरे = इसी बीच। **चन्द्रमण्डलात्** = चन्द्रमण्डल से। **विनिर्गतः** = निकला हुआ। **दिव्याकृतिः** = दिव्य आकृति वाला। **गगनात्** = आकाश से। **अवतीर्य** = उतर कर। **बाहुभ्याम्** = भुजाओं से। **तम् उपरतम्** = उस मरे हुए (पुण्डरीक) को। **उत्क्षिपन्** = उठाते हुए। **गम्भीरेण स्वरेण** = गम्भीर स्वर से। **परित्याज्याः** = छोड़ना चाहिए। **पुनरपि** = फिर भी। **तवानेन सह** = तुम्हारा इसके साथ। **भविष्यति** = होगा। **समागमः** = मिलन। **आदृतः पितेव** = आदरणीय पिता के समान। **अभिधाय** = कहकर। **सहैव अनेन** = इसके साथ ही। **गगनतलम्** = आकाश में। **उदपतत्** = उड़ गया।

अनुवाद – इसी बीच चन्द्रमण्डल से निकले हुए एक दिव्य आकृति वाले पुरुष ने आकाश से उतरकर अपनी दोनों भुजाओं पर उस मरे हुए पुण्डरीक को उठाते हुए गम्भीर स्वर में आदरणीय पिता के समान मुझसे कहा– ''पुत्री महाश्वेते! तुम प्राणों का परित्याग मत करना। तुम्हारा इसके साथ फिर मिलन होगा।'' इस प्रकार कहकर इसके (पुण्डरीक के) साथ ही आकाश में उड़ गया।

प्रश्नाः

1. चन्द्रमण्डलात् विनिर्गतः कीदृशः पुरुषः गगनात् अवातरत् ?
2. दिव्याकृतिः पुरुषः बाहुभ्यां उपरतम् कम् उत्क्षिप्य गम्भीरस्वरेण उवदत्?
3. ''वत्से महाश्वेते! न परित्याज्याः त्वया प्राणाः। पुनरपि तवानेन सह भविष्यति समागमः।'' इदं कस्य कथनम् अस्ति ?

4. दिव्याकृतिः पुरुषः केन सह गगनतलम् उदपतत् ?
5. कः महाश्वेताम् पितेव अभिधाय पुण्डरीकेन सह गगनतलम् उदपतत् ?
6. 'दिव्याकृतिः' शब्द का अर्थ लिखिए।

55. अहं तु तेन व्यतिकरेण सभया सविस्मया सकौतुका च सती किमिदम् इति कपिञ्जलम् अपृच्छम्। असौ तु संसभ्रमम् अदत्त्वैवोत्तरम्, उत्थाय ''दुरात्मन् क्व मे वयस्यम् अपहृत्य गच्छसि ?'' इत्यभिधाय सकोपः सवेगम् उत्तरवल्कलेन परिकरम् आबध्य, तमेव अनुसरन् अन्तरिक्षम् उदपतत्। पश्यन्त्याः एव मे सर्वे एव ते तारागणमध्यम् अविशन्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– अदत्त्वैवोत्तरम् = अदत्त्वा + एव + उत्तरम्। **इत्यभिधाय** = इति + अभिधाय।

शब्दार्थ – तेन व्यतिकरेण = उस घटना से। **सभया** = भयभीत। **सविस्मया** = चकित। **सकौतुका** = उत्कण्ठित। **सती** = होकर। **अपृच्छम्** = पूछा। **ससंभ्रमम्** = एकाएक। **अदत्त्वैवोत्तरम्** = बिना उत्तर दिए ही। **उत्थाय** = उठकर। **क्व** = कहाँ। **मे वयस्यम्** = मेरे मित्र को। **अपहृत्य** = छीनकर। **गच्छसि** = जा रहे हो। **इत्यभिधाय** = ऐसा कहकर। **सकोपः** = क्रोध के साथ। **सवेगम्** = बड़े वेग से। **उत्तरवल्कलेन** = वल्कल की चादर से। **परिकरम् आबध्य** =कमर को कसकर। **तमेव अनुसरन्** = उसी का पीछा करते हुए। **अन्तरिक्षम्** = आकाश में। **उदपतत्** = उड़ गया। **पश्यन्त्या** = देखने वाली। **सर्वे एव** = वे सभी। **तारागणमध्यम्** = तारों के बीच। **अविशन्** = प्रविष्ट हो गए।

अनुवाद – इस घटना से भयभीत, चकित और उत्कण्ठित होकर मैंने कपिञ्जल से पूछा कि यह क्या है ? वह बिना उत्तर दिए ही एकाएक उठकर 'दुष्ट! मेरे मित्र को छीनकर कहाँ लिए जा रहे हो?' इस प्रकार वल्कल (पेड़ की छाल) के दुपट्टे से कमर को बाँधकर उसके पीछे-पीछे आकाश में उड़ गया और मेरे देखते–ही–देखते वे सभी तारों के बीच प्रविष्ट हो गए।

प्रश्नाः

1. महाश्वेता कम् अपृच्छत् ?
2. ''दुरात्मन्! क्व मे वयस्यम् अपहृत्य गच्छसि'' इयं कस्य उक्तिः अस्ति ?
3. कः दिव्यपुरुषम् अनुसरन् अन्तरिक्षम् उदपतत् ?
4. ते सर्वे कुत्र अविशन् ?
5. कः परिकरेण आबध्य तमेव अनुसरन् अन्तरिक्षम् उदपतत्?
6. 'परिकरम्' शब्द का अर्थ लिखिए।

56. अहं तु कपिञ्जलगमनेन द्विगुणीकृतशोका, किंकर्तव्यतामूढा तरलिकाम् अब्रवम्– ''अयि न जानासि? कथय किमेतत्'' इति। सा तु तत् अवलोक्य स्त्रीस्वभावकातरा विषण्णहृदया अवादीत्– ''भर्तृदारिके! न जानामि किन्तु महदिदम् आश्चर्यम्। अमानुषाकृतिः एष पुरुषः। समाश्वासिता च सानुकम्पं भर्तृदारिका। तमनुसरन् गत एव कपिञ्जलः। तत् कोऽयम्, कुतोऽयम्, किमर्थं वानेनायम् अपगतासुः उत्क्षिप्य नीतः ? क्व वा नीतः इति सर्वम् उपलभ्य जीवितं वा मरणं वा समाचरिष्यसि। कपिञ्जलस्य प्रत्यागमनकालावधि ध्रियन्ताम् अमी प्राणाः'' इत्युक्त्वा पादयोः मे न्यपतत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – द्विगुणीकृतशोका = द्विगुणकृतः शोकः यस्याः सा। **स्त्रीस्वभावकातरा** = स्त्रीस्वभावेन कातरा, **वानेनायम्** = वा + अनेन + अयम्, **अपगतासुः** = अपगता असवः यस्य सः।

शब्दार्थ – कपिञ्जलगमनेन = कपिञ्जल के जाने से। **द्विगुणीकृतशोका** = दो गुना शोक करती हुई। **किंकर्तव्यतामूढा** = कार्य–अकार्य का निर्णय करने में असमर्थ। **अब्रवम्** = बोली। **जानासि** = जानती हो। **कथय** = कहो। **किमेतत्** = यह क्या है ? **अवलोक्य** = देखकर। **स्त्रीस्वभावकातरा** = स्त्री–स्वभाव के कारण भयभीत। **विषण्णहृदया** = दुःखी हृदय वाली। **अवादीत्** = बोली। **महदिदम्** = यह महान। **अमानुषाकृतिः** = मनुष्य जैसी आकृति वाला नहीं, दैवी। **समाश्वासिता** = आश्वस्त किया है। **सानुकम्पम्** = कृपा के साथ। **तमनुसरन्** = उसका पीछा करते हुए। **वानेनायम्** = अथवा उसके द्वारा यह। **अपगतासुः** = मृतक। **नीतः** = ले जाया गया। **उपलभ्य** = जानकर। **समाचरिष्यसि** = करोगी। **प्रत्यागमनकालावधि** = लौटने के समय तक। **ध्रियन्ताम्** = धैर्य धारण कीजिए। **अमी** = इन। **न्यपतत्** = गिर पड़ी।

अनुवाद – कपिञ्जल के जाने से दोगुनी दुःखी होकर तथा कार्य-अकार्य का निर्णय करने में असमर्थ मैंने तरलिका से कहा– ''अरी! नहीं जानती है ? कहो यह क्या है ?'' उसने तो उस घटना को देखकर स्त्रीस्वभाव के कारण भयभीत और दुःखी हृदय से कहा– ''स्वामिपुत्री! मैं नहीं जानती हूँ; किन्तु यह महान् आश्चर्य है। यह पुरुष दिव्य आकृति का है और दयापूर्वक उसने आपको आश्वासन भी दिया है। उसका पीछा करते हुए कपिञ्जल गया ही है। अतः यह कौन है ? कहाँ से आया है और उस मृतक को किसलिए लेकर उड़ गया है ? कहाँ ले गया है ? यह सभी बातें जानकर ही आप जीने अथवा मरने का निश्चय करें। कपिञ्जल के लौटने तक इन प्राणों को धारण किए रहें'' ऐसा कहकर तरलिका मेरे पैरो में गिर पड़ी।

प्रश्नाः

1. महाश्वेता काम् अब्रवीत् ?
2. स्त्रीस्वभावकातरा विषण्णहृदया का अवादीत् ?
3. दिव्याकृतिपुरुषम् अनुसरन् कः गतः ?

4. "कपिञ्जलस्य प्रत्यागमनकालावधि ध्रियन्ताम् अमी प्राणाः" इयं कस्याः उक्तिः अस्ति ?

5. तरलिका कस्याः पादयोः न्यपतत् ?

6. 'विषण्णहृदया' शब्द का अर्थ लिखिए।

57. अहमपि तदेव युक्तं मन्यमाना नोत्सृष्टवती जीवितम्। तस्मिन्नेव सरस्तीरे तरलिकाद्वितीया तां क्षपां क्षपितवती। प्रत्युषसि तु उत्थाय तस्मिन्नेव सरसि स्नात्वा तमेव कमण्डलुम् आदाय, तामेव अक्षमालां गृहीत्वा, गृहीतब्रह्मचर्या बहुविधैः नियमैः शरीरं शोषयन्ती, देवम् शरणार्थिनी स्थाणुम् आश्रिता। अपरेद्युश्च, कुतोऽपि समुपलब्धवृत्तान्तः तातः, सहाम्बया, सह बन्धुवर्गेणागत्य तैस्तैः उपदेशैः गृहगमनाय मे महान्तं यत्नम् अकरोत्। अथ च दृढाध्यवसायां मां विसृज्य सशोक एव गृहान् अयासीत्। "साहम् एवंविधा, निर्लज्जा, निष्फलजीविता, निस्सुखा च" इत्युक्त्वा वल्कलोपान्तेन वदनम् आच्छाद्य, मुक्तकण्ठं प्रारोदीत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – युक्तम् = युज् + क्त। **गृहीतब्रह्मचर्या** = गृहीतम् ब्रह्मचर्यम् यया सा (बहुव्रीहिः)। **समुपलब्धवृत्तान्तः** = समुपलब्धः वृत्तान्तः येन सः (बहुव्रीहिः)। **दृढाध्यवसायाम्** = दृढः अध्यवसायः यस्याः ताम् (बहुव्रीहिः)। **निष्फलजीविता** = निष्फलं जीवितं यस्याः सा (बहुव्रीहिः)।

शब्दार्थ – तदेव = वही। **युक्तम्** = उचित। **मन्यमाना** = मानती हुई। **नोत्सृष्टवती** = नहीं छोड़ा। **जीवितम्** = जीवन को। **तरलिकाद्वितीया** = तरलिका के साथ। **क्षपाम्** = रात को। **क्षपितवती** = बिताया। **प्रत्युषसि** = प्रातःकाल। **सरसि** = तालाब में। **स्नात्वा** = स्नान करके। **आदाय** = देकर। **अक्षमालाम्** = रुद्राक्ष की माला को। **गृहीतब्रह्मचर्या** = ब्रह्मचारिणी का व्रत लेकर। **बहुविधैः नियमैः** = अनेक नियमों से। **शोषयन्ती** = सुखाती हुई। **शरणार्थिनी** = शरण पाने की कामना वाली। **देव स्थाणुम्** = भगवान् शंकर का। **आश्रिता** = सहारा लिया। **अपरेद्युः** = दूसरे दिन। **कुतोऽपि** = कहीं से। **समुपलब्धवृत्तान्तः** = समाचार पाए हुए। **तातः** = पिता। **सहाम्बया** = माता के साथ। **सह बन्धुवर्गेण** = परिवार वालों के साथ। **आगत्य** = आकर। **तैस्तैः उपदेशैः** = विभिन्न प्रकार के उपदेशों से। **गृहगमनाय** = घर चलने के लिए। **दृढाध्यवसायाम्** = दृढ़ निश्चय वाली। **विसृज्य** = छोड़कर। **सशोकः** = दुःख के साथ। **अयासीत्** = चले गये। **एवंविधा** = इस प्रकार। **निर्लज्जा** = लज्जारहित। **निष्फलजीविता** = व्यर्थ जीवन वाली। **निस्सुखा** = सुख रहित। **वल्कलोपान्तेन** = वल्कल के आँचल से। **वदनम्** = मुँह को। **आच्छाद्य** = ढँक कर। **मुक्तकण्ठम्** = खुले गले से। **प्रारोदीत्** = रोने लगी।

अनुवाद – मैंने भी उसी को उचित समझ कर जीवन का परित्याग नहीं किया। उसी सरोवर के किनारे तरलिका के साथ वह रात बिताई और प्रातःकाल उठकर उसी सरोवर में स्नान करके उसी कमण्डल और उसी अक्षमाला को लेकर ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण किया तथा अनेक प्रकार के नियमों से शरीर को सुखाती हुई शरण पाने की कामना से भगवान् शिव का सहारा लिया। दूसरे दिन कहीं से समाचार

पाकर मेरे पिता ने मेरी माता तथा परिवार वालों के साथ आकर विभिन्न उपदेशों द्वारा मुझे घर ले चलने का बहुत अधिक प्रयत्न किया। इसके बाद (घर न लौटने के लिए) दृढ़ निश्चय वाली मुझको छोड़कर दुःख के साथ घर लौट गये। (हे राजकुमार चन्द्रापीड) ''इस प्रकार मैं वही निर्लज्ज, व्यर्थ का जीवन बिताने वाली दुःखिया हूँ।'' इस प्रकार कहकर वल्कल (पेड़ की छाल से बने वस्त्र) के आँचल से मुँह ढँककर फूट-फूटकर रोने लगी।

प्रश्नाः

1. का न उत्सृष्टवती जीवितम् ?
2. का तस्मिन्नेव सरस्तीरे क्षपां क्षपितवती ?
3. शरणार्थिनी का देवं स्थाणुम् आश्रिता ?
4. कः महाश्वेतायै गृहगमनाय महान्तं यत्नम् अकरोत् ?
5. का वल्कलोपान्तेन वदनम् आच्छाद्य मुक्तकण्ठं प्रारोदीत् ?
6. 'शरणार्थिनी' शब्द का अर्थ लिखिए।

58. चन्द्रापीडश्च तस्याः विनयेन दाक्षिण्येन मधुरालापतया च प्रथममेव उपारूढगौरवः, तदानीम् अपरेण प्रदर्शितसद्भावेन स्ववृत्तान्तकथनेन नितरां प्रीतो बभूव। अभाषत च– ''भगवति! क्लेशभीरुः कृत्स्नो लोकः स्नेहसदृशं कर्म अनुष्ठातुम् अशक्तः निष्फलेन अश्रुपातमात्रेण स्नेहम् उपदर्शयन् रोदिति। त्वया तु सर्वं प्रेमोचितम् आचेष्टितम्। किमर्थं रोदिषि ? यदेतत् अनुमरणं नाम, तत् अतिनिष्फलम्, अविद्वज्जनाचरित एषः मार्गः। अज्ञानपद्धतिरियम्। मौर्ख्यस्खलितमिदम्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – उपारूढगौरवः = उपारूढः गौरवः यस्य सः (बहुव्रीहिः)। **प्रदर्शितसद्भावेन** = प्रदर्शितः सद्भावः येन तेन (बहुव्रीहि)। **क्लेशभीरुः** = क्लेशेभ्यः भीरुः (पञ्चमी तत्पुरुष)। **उपदर्शयन्** = उप + दृश् + णिच् + शतृ। **अनुष्ठातुम्** = अनु + स्था + तुमुन् प्रत्यय।

शब्दार्थ – विनयेन = विनम्रता से। **दाक्षिण्येन** = सरलता से। **मधुरालापतया** = मीठी बातचीत से। **प्रथममेव** = पहले ही। **उपारूढगौरवः** = गौरवयुक्त। **तदानीम्** = उस समय। **अपरेण** = दूसरे। **प्रदर्शितसद्भावेन** = सद्भाव प्रकट करने से। **स्ववृत्तान्तकथनेन** = अपना समाचार कहने से। **नितराम्** = अत्यन्त। **प्रीतो बभूव** = प्रसन्न हुआ। **अभाषत** = कहा। **क्लेशभीरुः** = कष्टों से भयभीत। **कृत्स्नो लोकः** = सभी लोग। **स्नेहसदृशम्** = प्रेम जैसा। **अनुष्ठातुम् अशक्तः** = करने के लिए असमर्थ। **निष्फलेन** = व्यर्थ। **अश्रुपातमात्रेण** = केवल आँसू गिराकर। **उपदर्शयन्** = दिखाते हुए। **रोदिति** = रोते हैं। **प्रेमोचितम्** = प्रेम के लिए उचित। **आचेष्टितम्** = आचरण किया। **अनुमरणम्** = किसी के मरने के पीछे मरना। **अतिनिष्फलम्** = अत्यन्त व्यर्थ है। **अविद्वज्जनाचरित** = मूर्खों द्वारा अपनाया गया। **अज्ञानपद्धतिरियम्** = यह अज्ञान की रीति है। **मौर्ख्यस्खलितमिदम्** = यह मूर्खतापूर्ण गलती है।

अनुवाद – चन्द्रापीड उसकी विनम्रता, सरलता एवं मधुर बातचीत से पहले ही अपने को गौरवशाली समझने लगा था। अब उसके इस आत्मीयता दिखाने तथा अपना वृत्तान्त कह सुनाने के कारण अत्यन्त प्रसन्न हो गया। उसने कहा– हे देवि! कष्टों से डरने वाले सभी लोग प्रेम जैसा कर्म करने में असमर्थ होने के कारण व्यर्थ के आँसू गिराकर प्रेम प्रकट करते हुए रोते हैं। तुमने तो केवल प्रेमोचित आचरण किया है। फिर क्यों रो रही हो ? और यह जो किसी के मरने के पीछे मरने की क्रिया (सती होना) है, वह तो अत्यन्त व्यर्थ है। वह मूर्खों द्वारा अपनाया गया मार्ग है। अज्ञान की रीति है। यह मूर्खतापूर्ण गलती है।

प्रश्नाः

1. चन्द्रापीडः कस्याः स्ववृत्तान्तकथनेन नितरां प्रीतो बभूव ?
2. चन्द्रापीडः काम् अभाषत ?
3. कः मार्गः अविद्वज्जनैः आचरितः ?
4. 'किमर्थं रोदिषि'– अयं प्रश्नः कः करोति?
5. अतिनिष्फलम्, अविद्वज्जनाचरितं किम्?
6. 'अनुमरणम्' शब्द का अर्थ लिखिए।

59. स्वयं चेत् न जहति, न परित्याज्याः प्राणाः। अत्र हि विचार्यमाणे स्वार्थ एव प्राणपरित्यागः असह्यशोकवेदनाप्रतीकारत्वात्। उपरतस्य तु न कमपि गुणम् आवहति। न तावत् तस्यायं प्रत्युज्जीवनोपायः, न नरकपतनप्रतीकारः, न धर्मोपचयकारणम्, न दर्शनोपायः, अन्यामेवासौ कर्मणा नीयते कर्मभूमिम्। असावप्यात्मघाती केवलम् एनसा संयुज्यते। जीवस्तु जलाञ्जलिदानादिना बहूपकरोत्युपरतस्यात्मनश्च। मृतस्तु नोभयस्यापि। स्मर तावत् प्रियाम् एकपत्नीं रतिम् भर्तरि मकरकेतौ मृतेऽपि अविरहिताम् असुभिः। उत्तरां च विराट्दुहितरं पञ्चत्वमभिमन्यौ उपगतेऽपि धृतदेहाम्। पृथां च पाण्डौ मृतेऽपि अपरित्यक्तजीविताम्। अतो नार्हस्यनिन्द्यम् आत्मानं निन्दितुम्''। इत्येवंविधैः अन्यैश्च बहुभिः उपसान्त्वनैः संस्थाप्य तम् अञ्जलिपुटोपनीतेन निर्झरजलेन प्रक्षालितमुखीम् अकारयत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – दर्शनोपायः = दर्शनानां उपायः। **अन्यामेवासौ** = अन्याम् + एव + असौ। **असावप्यात्मघाती** = असौ + अपि + आत्मघाती। **नोभयस्यापि** = न + उभयस्य + अपि। **निन्दितुम्** = निन्द् + तुमुन् प्रत्यय। **प्रक्षालितमुखीम्** = प्रक्षालितं मुखं यया सा ताम् (बहुव्रीहि)। **अञ्जलिपुटोपनीतेन** = अञ्जलिपुटेन उपनीतं तेन (तृतीया तत्पुरुषः)। **संस्थाप्य** = सम् + स्था + णिच् + ल्यप्।

शब्दार्थ– चेत् = यदि। **न जहति** = नहीं छोड़ते हैं। **विचार्यमाणे** = विचार करने पर। **असह्यशोकवेदनाप्रतीकारत्वात्** = असह्य शोक की पीड़ा दूर करने का उपाय होने के कारण। **उपरतस्य** = मरे हुए का। **गुणं न आवहति** = कोई लाभ नहीं करता। **प्रत्युज्जीवनोपायः** = पुनः जीवित होने का उपाय। **न नरकपतनप्रतीकारः** = नरक में गिरने से बचने का कोई उपाय नहीं है।

धर्मोपचयकारणम् = धर्मलाभ करने हेतु। **दर्शनोपायः** = देखने का उपाय। **अन्यामेवासौ** = यह दूसरी ही। **कर्मणा** = कर्म द्वारा। **नीयते** = ले जाया जाता है। **असावप्यात्मघाती** = यह आत्मघात करने वाला। **एनसा संयुज्यते** = पाप से युक्त होता है। **जीवस्तु** = जीवित रहकर। **जलाञ्जलिदानादिना** = जल की अंजली देने से, तर्पण आदि करने से। **बहूपकरोत्युपरतस्यात्मनश्च** = मृतक और अपना दोनों का अत्यन्त उपकार करता है। **नोभयस्यापि** = दोनों का नहीं। **स्मर** = स्मरण करो। **एकपत्नीम्** = एक मात्र पत्नी। **मकरकेतौ** = कामदेव की। **भर्तरि** = स्वामी। **असुभिः अविरहिताम्** = प्राणों से युक्त होने वाली। **विराट्दुहितरम्** = विराट कन्या। **पञ्चत्वमभिमन्यौ** = अभिमन्यु के मरने पर। **उपगतेऽपि** = जाने पर भी। **धृतदेहाम्** = शरीरधारण करने वाली। **पाण्डौ मृतोऽपि** = पाण्डु के मरने पर भी। **अपरित्यक्तजीविताम्** = जीवन का परित्याग न करने वाली। **नार्हस्यनिन्द्यम्** = निन्दा न करने योग्य। **उपसान्त्वनैः** = सान्त्वना की बातों से। **संस्थाप्य** = स्थिर करक ढाढस बँधाया, समझाकर। **अञ्जलिपुटोपनीतेन** = अंजलिपुट में लाए गए। **निर्झरजलेन** = झरने के जल से। **प्रक्षालितमुखीम्** = धुले हुए मुखवाली। **अकारयत्** = कराया।

अनुवाद – यदि प्राण स्वयं नहीं छोड़ते हैं तो उनका परित्याग नहीं करना चाहिए। इस विषय में विचार करने पर प्राणों का परित्याग स्वार्थ ही है, क्योंकि वह असह्य शोकवेदना से छुटकारा पाने का उपाय है। इससे मरने वाले को कोई भी लाभ नहीं पहुँचता। यह न तो उसके फिर जीवित हो उठने का उपाय है, न यह नरक में गिरने से बचने का उपाय है, न धर्म संचय का हेतु है और न उसके दर्शन का उपाय है। मरा हुआ व्यक्ति अपने कर्मों द्वारा ही दूसरी कर्मभूमि में पहुँचा दिया जाता है (अर्थात् अपने प्रिय के पीछे मरने वाला व्यक्ति दूसरे जन्म में दूसरा जीवन धारण करता है।) इस प्रकार आत्मघात करने वाला केवल पाप का भागी बनता है। जीवित रहने वाला तर्पण आदि करके मृतक तथा अपना दोनों का लाभ करता है। मरा हुआ तो दोनों का उपकार नहीं कर सकता। अपने पति कामदेव के मरने पर प्राणों का त्याग न करने वाली प्रिय पत्नी रति का, अभिमन्यु के मर जाने पर शरीर धारण करने वाली विराट की पुत्री उत्तरा का और पाण्डु के मरने पर भी जीवन धारण करने वाली कुन्ती का स्मरण करो। इसलिए तुम्हें अपनी पवित्र आत्मा की निन्दा करना उचित नहीं है। इस प्रकार तथा और भी अनेक सान्त्वना की बातों से उसे (महाश्वेता को) स्थिर करके (समझा-बुझाकर) अपनी अंजलि में लाए गये जल से चन्द्रापीड ने उसका मुँह धुलवा दिया।

प्रश्नाः

1. के न परित्याज्याः ?
2. कस्य न कमपि गुणम् आवहति ?
3. जीवस्तु जलाञ्जलिदानादिना कस्य बहु उपकरोति?
4. कः महाश्वेताम् निर्झरजलेन प्रक्षालितमुखीम् अकारयत् ?
5. उत्तरा कस्य दुहिता आसीत्?
6. 'उपनीतेन' पद का अर्थ लिखिए।

60. अथ क्षीणे दिवसे महाश्वेता मन्दं मन्दम् उत्थाय, पश्चिमां सन्ध्याम् उपास्य, वल्कलशयनीये सखेदम् उष्णं च निःश्वस्य निषसाद। चन्द्रापीडोऽपि उत्थाय कृतसन्ध्याप्रणामः तस्मिन् द्वितीये शिलातले मृदुभिः लतापल्लवैः शय्याम् अकल्पयत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – सखेदम् = खेदेन सह। **कृतसन्ध्याप्रणामः** = कृतः सन्ध्यायाः प्रणामः येन सः (बहुव्रीहिः)। **लतापल्लवैः** = लतानाम् पल्लवैः (षष्ठी तत्पुरुषः)। **उत्थाय** = उत् + स्था + ल्यप्। **निःश्वस्य** = निस् + श्वस् + ल्यप्।

शब्दार्थ – क्षीणे दिवसे = दिन के समाप्त होने पर। मन्दं मन्दम् = धीरे-धीरे। **उत्थाय** = उठकर। **पश्चिमां सन्ध्याम्** = सायंकाल की सन्ध्या। **उपास्य** = उपासना करके। **वल्कलशयनीये** = वल्कल के बिछौने पर। **सखेदम्** = कष्ट के साथ। **उष्णं च निःश्वस्य** = और गरम साँस लेकर। **निषसाद** = बैठी। **कृतसन्ध्याप्रणामः** = सन्ध्यावन्दन करने वाले। **मृदुभिः** = कोमल। **लतापल्लवैः** = लताओं के पत्तों से। **अकल्पयत्** = बनाया, लगाया।

अनुवाद – इसके बाद दिन बीत जाने पर महाश्वेता धीर-धीरे उठकर सन्ध्याकालीन सन्ध्योपासना करके वल्कल के बिछौने पर दुःखी हृदय से गरम आहें भरती हुई (चुपचाप आकर) बैठ गयी। चन्द्रापीड ने भी उठकर सन्ध्या-वन्दनादि करके उसी दूसरी चट्टान पर लताओं के कोमल पत्तों से शय्या लगाया।

प्रश्नाः

1. का वल्कलशयनीये निषसाद ?
2. कः द्वितीये शिलातले शय्याम् अकल्पयत् ?
3. द्वितीये शिलातले चन्द्रापीडः काम् अकल्पयत्?
4. 'वल्कलशयनीये' पद का अर्थ लिखिए।

61. उपविष्टश्च तस्याम् पुनः पुनः तमेव महाश्वेतावृत्तान्तं मनसा भावयन्, पुनरेनां पप्रच्छ – "भगवति! सा तव परिचारिका तरलिका क्व गता ?" इति। अथ सा अकथयत् – "महाभाग! श्रूयताम्– अमृतसंभवात् अप्सरः कुलात् मदिरेति नाम्ना कन्यका अभूत्। दक्षदुहितुः मुनेः तनयः चित्ररथो नाम गन्धर्वराजः तस्याः पाणिम् अग्रहीत्। तयोश्च परस्परप्रेमसंवर्धितानि यौवनसुखानि सेवमानयोः दुहितृरत्नम् उदपादि कादम्बरीति नाम्ना। सा च मे जन्मनः प्रभृति द्वितीयमिव हृदयं बालमित्रम्। सेयम् अमुनैव मदीयेन वृत्तान्तेन सशोका निश्चयम् अकार्षीत् – 'नाहं कथञ्चिदपि सशोकायां महाश्वेतायाम् आत्मनः पाणिं ग्राहयिष्यामि' इति।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – पुनरेनाम् = पुनः + एनाम्। **दक्षदुहितुः** = दक्षस्य दुहिता तस्याः (षष्ठी तत्पुरुषः)। **कथञ्चिदपि** = कथञ्चित् + अपि। **सशोकायाम्** = शोकेन युक्तायाम् (तृतीया तत्पुरुषः)। **गता** = गम् + क्त + टाप्। **सेवमानयोः** = सेव् + शानच्, षष्ठी विभक्ति द्विवचन।

शब्दार्थ – उपविष्टश्च = और बैठकर। **मनसा भावयन्** = मन–ही–मन सोचते हुए। **पुनरेनाम्** = फिर उससे। **पप्रच्छ** = पूछा। **तव परिचारिका** = तुम्हारी सेविका। **क्व गता** = कहाँ गई ? **अकथयत्** = कहा। **अमृतसंभवात्** = अमृत से उत्पन्न हुए। **अप्सरःकुलात्** = अप्सरा के वंश से। **अभूत्** = पैदा हुई। **दक्षदुहितुः** = दक्ष की पुत्री। **मुनेः** = मुनि के। **तनयः** = पुत्र। **तस्याः** = उसका। **पाणिम् अग्रहीत्** = पाणिग्रहण किया। **तयोः** = उन दोनों के। **परस्परप्रेमसंवर्धितानि** = परस्पर प्रेम से बढ़े हुए। **यौवनसुखानि** = युवावस्था के सुख। **सेवमानयोः** = भोग करने वाले। **उदपादि** = उत्पन्न हुई। **जन्मनः प्रभृति** = जन्म से ही। **द्वितीयमिव हृदयम्** = दूसरी हृदय के समान। **बालमित्रम्** = बालसखी। **अमुनैव** = इसे ही। **मदीयेन वृत्तान्तेन** = मेरे इस समाचार से। **सशोका** = दुःखी होकर। **अकार्षीत्** = किया। **कथञ्चिदपि** = किसी प्रकार भी। **आत्मनः** = अपना। **पाणिं ग्राहयिष्यामि** = पाणिग्रहण कराऊँगी, विवाह करूँगी।

अनुवाद – उस शय्या पर बैठकर बार-बार उसी महाश्वेता के वृत्तान्त को मन-ही-मन सोचते हुए चन्द्रापीड ने फिर उससे पूछा – "हे देवि! तुम्हारी वह सेविका तरलिका कहाँ गई ?" उसने कहा – "महाभाग! सुनिए – अमृत से उत्पन्न अप्सरा के वंश से मदिरा नाम की एक कन्या उत्पन्न हुई। दक्ष की पुत्री मुनि के पुत्र गन्धर्वराज चित्ररथ ने उससे विवाह कर लिया। परस्पर प्रेम से बढ़े हुए यौवन सुख का अनुभव करने वाले उन दोनों से कादम्बरी नाम की कन्या उत्पन्न हुई। वह जन्म से ही दूसरे हृदय जैसी मेरी बालसखी है। उसने मेरे इस वृत्तान्त से दुःखी होकर निश्चय किया कि जब तक महाश्वेता इस शोकावस्था में रहेंगी, मैं किसी प्रकार भी अपना विवाह नहीं करूँगी।

प्रश्नाः

1. महाश्वेतावृत्तान्तं मनसा भावयन् चन्द्रापीडः काम् पप्रच्छ ?
2. महाश्वेता कम् अकथयत् ?
3. अप्सरःकुलात् का कन्यका अभूत् ?
4. चित्ररथः कस्याः पाणिम् अग्रहीत् ?
5. चित्ररथमदिरयोः का नाम्ना दुहितृरत्नम् उदपादि ?
6. का महाश्वेतायाः बालमित्रम् अस्ति ?

62. तत् आत्मदुहितुः निश्चयवचनं चित्ररथः शुश्राव। गच्छति च काले समुपारूढयौवनाम् आलोक्य सः ताम् एकापत्यतया अतिप्रियतया च, किञ्चिदपि ताम् अभिधातुम् अशक्तः "वत्से ! महाश्वेते! त्वमेव शरणम् इदानीं कादम्बरीम् अनुनेतुम्" इति संदिश्य, क्षीरोदनामानं

कञ्चुकिनम् अद्यैव प्रत्युषसि मत्ससमीपं प्रेषितवान्। ततो मया गुरुवचनगौरवेण सखीप्रेम्णा च, क्षीरोदेन सार्धं सा तरलिका ''सखि कादम्बरि! किं दुःखितमपि जनम् अतितरां दुःखयसि ? जीवन्तीम् इच्छसि चेन्मां तत् कुरु गुरुवचनम् अवितथम्'' इति संदिश्य विसर्जिता। गतायां च तस्याम् अनन्तरमेव इमां भूमिम् अनुप्राप्तः महाभागः। इत्यभिधाय तूष्णीम् अभवत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – गुरुवचनगौरवेण = गुरोः वचनस्य गौरवेण (षष्ठी तत्पुरुष)। **चेन्माम्** = चेत् + माम्। **आत्मदुहितुः** = आत्मनः दुहितुः (षष्ठी तत्पुरुष)। **संदिश्य** = सम् + दिश् + ल्यप्। **विसर्जिता** = वि + सृज् + णिच् + क्त + टाप्। **जीवन्तीम्** = जीव् + शतृ + ङीप्।

शब्दार्थ – आत्मदुहितुः = अपनी कन्या के। **निश्चयवचनं** = निश्चय के वचन को। **शुश्राव** = सुना। **गच्छति काले** = कुछ समय बीतने पर। **समुपारूढयौवनाम्** = युवावस्था (जवानी) में पहुँची हुई। **आलोक्य** = देखकर। **एकापत्यतया** = एक ही सन्तान होने के कारण। **अतिप्रियतया** = बहुत प्रिय होने से। **अभिधातुम्** = समझाने में। **अशक्तः** = असमर्थ होकर। **त्वमेव शरणम्** = तुम्हीं शरण हो, तुम्हीं समर्थ हो। **इदानीम्** = अब। **अनुनेतुम्** = समझाने के लिए। **संदिश्य** = संदेश देकर। **अद्यैव** = आज ही। **प्रत्युषसि** = प्रातःकाल। **मत्समीपम्** = मेरे पास। **प्रेषितवान्** = भेजा। **गुरुवचनगौरवेण** = गुरुवचन के आदर से। **सखीप्रेम्णा** = सखी के प्रेम से। **सार्धम्** = साथ। **दुःखितमपि जनम्** = इस दुःखिया को, दुःखी व्यक्ति को। **अतितराम्** = और अधिक। **दुःखयसि** = दुःखी बना रही हो। **जीवन्तीम्** = जीती रहने वाली। **इच्छसि** = चाहती हो। **चेन्माम्** = यदि मुझको। **कुरु** = करो। **गुरुवचनम्** = माता-पिता की बात। **अवितथम्** = सत्य। **विसर्जिता** = भेजी गई। **गतायां च तस्याम्** = उसके चले जाने पर। **अनन्तरमेव** = बाद ही। **इमाम्** = इस स्थल पर। **अनुप्राप्तः** = आये हैं। **तूष्णीम् अभवत्** = चुप हो गई।

अनुवाद – इसके पश्चात् चित्ररथ ने अपनी कन्या के निश्चय की बात को सुना। कुछ समय बीतने पर उसे भलीभाँति युवावस्था में पहुँची हुई देखकर, इकलौती सन्तान होने तथा अपने अत्यन्त प्रेम के कारण उसे समझाने में असमर्थ चित्ररथ ने क्षीरोद नाम के कञ्चुकी को आज ही प्रातःकाल मेरे पास यह सन्देश लेकर भेजा कि ''पुत्री महाश्वेते! अब कादम्बरी को समझाने के लिए तुम्हीं सहारा हो'' (अर्थात् तुम्हीं मना सकती हो)। इसके बाद गुरुजनों की आज्ञा के प्रति गौरव की भावना तथा सखी के प्रेम के कारण क्षीरोद के साथ उस तरलिका को (आज ही) यह सन्देश भेजा है कि ''सखी कादम्बरी! मुझ दुखिया को और अधिक दुःखी क्यों बना रही हो ? यदि तुम मुझे जीवित देखना चाहती हो, तो गुरुजनों की बात मान लो।'' उसके जाने के तुरन्त बाद महानुभाव यहाँ आये हैं, ऐसा कहकर वह चुप हो गई।

प्रश्नाः

1. चित्ररथः कस्याः निश्चयवचनं शुश्राव ?
2. चित्ररथः काम् अभिधातुम् अशक्तः ?
3. चित्ररथः क्षीरोदनामानं कञ्चुकिनम् कस्याः समीपं प्रेषितवान् ?

4. महाश्वेतया क्षीरोदेन सार्धं का विसर्जिता ?
5. का तूष्णीम् अभवत् ?
6. 'एकापत्यतया' पद का अर्थ लिखिए।

63. क्रमेण च उद्गते कुमुदबान्धवे, चन्द्रापीडः सुप्तामालोक्य महाश्वेताम्, पल्लवशयने समुपाविशत्। "किं नु खलु अस्यां वेलायाम् मामन्तरेण चिन्तयति वैशम्पायनः" इति चिन्तयन्नेव निद्रां ययौ। अथ क्षीणायाम् क्षपायाम्, उषसि सन्ध्याम् उपास्य, शिलातलोपविष्टायां महाश्वेतायाम्, निर्वर्तितप्राभातिकविधौ चन्द्रापीडे, तरलिका षोडशवर्षवयसा केयूरकनाम्ना गन्धर्वदारकेण अनुगम्यमाना प्रादुरासीत्। आगत्य च महाश्वेतायाः समीपम् उपसृत्य कृतप्रणामा, सविनयम् उपाविशत्। महाश्वेता तु तां दृष्ट्वा, "किं त्वया दृष्टा कादम्बरी कुशलिनी ? करिष्यति वा तत् अस्मद्वचनम् ?" इत्यपृच्छत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – **कुमुदबान्धवे** = कुमुदस्य बान्धवः तस्मिन्। **निर्वर्तितप्राभातिकविधौ** = निर्वर्तितः प्राभातिकविधिः येन तस्मिन् (बहुव्रीहिः)। **अनुगम्यमाना** = अनु + गम् + यक् + शानच्। **चिन्तयन्** = चिन्त् + शतृ। **ययौ** = या + लिट्, प्रथम पुरुष, एकवचन।

शब्दार्थ – **उद्गते** = निकलने पर। **कुमुदबान्धवे** = चन्द्रमा के। **सुप्ताम्** = सोई हुई। **आलोक्य** = देखकर। **समुपाविशत्** = बैठ गया। **अस्याम् वेलायाम्** = इस समय। **मामन्तरेण** = मेरे बिना। **चिन्तयति** = सोचता होगा। **चिन्तयन्नेव** = सोचते-सोचते। **निद्रां ययौ** = सो गया। **क्षीणायाम् क्षपायाम्** = रात बीतने पर। **उषसि** = प्रातःकाल। **सन्ध्यामुपास्य** = संध्या करके। **शिलातलोपविष्टायाम्** = शिला पर बैठी हुई। **निर्वर्तितप्राभातिकविधौ** = प्रातःकालीन क्रियाओं को कर लेने वाले। **षोडशवर्षवयसा** = सोलह वर्ष की आयु वाले। **गन्धर्वदारकेण** = गन्धर्वबालक के साथ। **प्रादुरासीत्** = आ पहुँची। **आगत्य** = आकर। **उपसृत्य** = पास पहुँच कर। **कृतप्रणामा** = प्रणाम करके। **उपाविशत्** = बैठ गई। **दृष्टा** = देखी गयी। **कुशलिनी** = कुशल से। **करिष्यति** = करेगी। **अस्मद्वचनम्** = हमारी बात को।

अनुवाद – धीरे-धीरे चन्द्रमा के उदित हो जाने पर चन्द्रापीड महाश्वेता को सोयी हुई देखकर पल्लव की बनी शय्या पर बैठ गया। "इस समय मेरे बिना वैशम्पायन क्या सोचता होगा ?"– ऐसा सोचते-सोचते सो गया। रात के बीत जाने पर प्रातःकाल सन्ध्योपासना करके महाश्वेता जब उसी चट्टान (शिला) पर आकर बैठ गई और चन्द्रापीड ने प्रातःकालीन सभी कार्यों को पूरा कर लिया। ठीक उसी समय सोलह वर्ष की अवस्था वाले केयूरक नामक एक गन्धर्व बालक को पीछे-पीछे लिए हुए तरलिका आ पहुँची। वहाँ आकर वह महाश्वेता के पास गई और प्रणाम करके विनम्रता के साथ बैठ गयी। महाश्वेता ने उसे देखकर पूछा कि "क्या तुमने देखा, कादम्बरी कुशलपूर्वक है न ? और क्या वह हमारे वचन का पालन करेगी ?

प्रश्नाः

1. कः पल्लवशयने समुपाविशत् ?
2. कः चिन्तयन्नेव निद्रां ययौ ?
3. का केयूरकनाम्ना गन्धर्वदारकेण अनुगम्यमाना प्रादुरासीत् ?
4. का महाश्वेतायाः समीपम् उपसृत्य कृतप्रणामा सविनयम् उपाविशत् ?

64. अथ सा तरलिका ''भर्तृदारिके, दृष्टा मया भर्तृदारिका कादम्बरी सर्वतः कुशलिनी। विज्ञापिता च निखिलं भर्तृदुहितुः सन्देशम्। आकर्ण्य च यत् तया प्रतिसन्दिष्टं तदेषः तयैव विसर्जितः तस्या एव वीणावाहकः केयूरकः कथयिष्यति'' इति व्यजिज्ञपत्। विरतवचसि तस्यां केयूरकः अब्रवीत्– ''भर्तृदारिके महाश्वेते ! देवी कादम्बरी त्वां विज्ञापयति– यदियम् आगत्य माम् अवदत् तरलिका किमिदं मच्चित्तपरीक्षणम् ? किं प्रेमविच्छेदाभिलाषः? किं वा प्रकोपः ? यत्र भर्तृविरहविधुरा प्रियसखी महत् कृच्छ्रम् अनुभवति तत्राहम् अविगणय्य एतत् कथम् आत्मसुखार्थिनी पाणिं ग्राहयिष्यामि? कथं वा मम सुखं भविष्यति ? तत् मा कृथाः स्वप्नेऽपि पुनरिममर्थं मनसि'' इति। महाश्वेता तु तत् श्रुत्वा, सुचिरं विचार्य ''गच्छ, स्वयमेव अहम् आगत्य यथार्हम् आचरिष्यामि,'' इत्युक्त्वा केयूरकं प्राहिणोत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – यदियम् = यत् + इयम्। **प्रेमविच्छेदाभिलाषः** = प्रेम्णः विच्छेदस्य अभिलाषः। **भर्तृविरहविधुरा** = भर्तुः विरहेण विधुरा। **पुनरिममर्थम्** = पुनः + इमम् + अर्थम्। **दृष्टा** = दृश् + क्त + टाप्। **अविगणय्य** = न विगणय्य इति नञ् तत्पुरुष समास।

शब्दार्थ – सर्वतः = सब प्रकार से भलीभाँति। **विज्ञापितः** = निवेदन किया। **निखिलम्** = सम्पूर्ण। **भर्तृदुहितुः** = स्वामिपुत्री के। **आकर्ण्य** = सुनकर। **यत्** = जो। **प्रतिसन्दिष्टम्** = सन्देश के उत्तर में जो सन्देश दिया। **तयैव विसर्जितः** = उसके द्वारा भेजा हुआ। **तस्याः एव** = उसका ही। **वीणावाहकः** = वीणा लेकर चलने वाला। **कथयिष्यति** = कहेगा। **व्यजिज्ञपत्** = निवेदन किया। **विरतवचसि** = चुप हो जाने पर। **विज्ञापयति** = निवेदन करती है। **यदियम्** = यह जो। **अवदत्** = कहा। **किमिदम्** = क्या यह। **मच्चित्तपरीक्षणम्** = मेरे हृदय की परीक्षा है। **प्रेमविच्छेदाभिलाषः** = प्रेम तोड़ने की अभिलाषा। **प्रकोपः** = क्रोध। **भर्तृविरहविधुरा** = पति वियोग से दुःखी। **कृच्छ्रम्** = कष्ट को। **अविगणय्य** = ध्यान न देकर। **आत्मसुखार्थिनी** = अपने सुख को चाहने वाली। **पाणिं ग्राहयिष्यामि** = विवाह करूँगी। **मा कृथाः** = मत करो। **स्वप्नेऽपि** = स्वप्न में भी। **पुनरिममर्थम्** = फिर इस विषय को। **मनसि** = मन में। **सुचिरं विचार्य** = बहुत देर तक सोचकर। **यथार्हम्** = यथोचित। **आचरिष्यामि** = आचरण करूँगी। **प्राहिणोत्** = भेज दिया।

अनुवाद – इसके बाद उस तरलिका ने निवेदन किया कि ''स्वामिपुत्री! मैंने देखा कि कादम्बरी भलीभाँति कुशलपूर्वक हैं। मैंने राजकुमारी (आप) के सभी सन्देशों को उनसे निवेदन किया। उसे सुनकर

उत्तर में उन्होंने जो सन्देश दिया है, उसे उन्हीं के द्वारा भेजा गया उन्हीं का वीणावाहक यह केयूरक कहेगा। उसके चुप हो जाने पर केयूरक ने कहा– "राजकुमारी महाश्वेते! देवी कादम्बरी ने आप से निवेदन किया है कि तरलिका ने आकर जो कुछ मुझसे कहा, क्या यह मेरे हृदय की परीक्षा है ? अथवा प्रेम तोड़ने की अभिलाषा है ? अथवा यह मेरे ऊपर क्रोध है ? जहाँ पतिवियोग से दुःखी मेरी प्रियसखी महान् कष्ट का अनुभव करती है, वहाँ मैं उसे न देखकर उसके कष्टों की उपेक्षा करके कैसे अपना सुख चाहने वाली होकर विवाह करूँगी ? और मुझे सुख कैसे मिलेगा ? इसलिए अब स्वप्न में भी फिर इस विषय को वह अपने मन में न लायें। महाश्वेता ने यह सुनकर बहुत देर तक विचार किया और यह कहकर केयूरक को भेज दिया कि–"जाओ, मैं स्वयं आकर जैसा उचित होगा वैसा करूँगी।"

प्रश्नाः

1. का सर्वतः कुशलिनी ?
2. केयूरकः कया विसर्जितः ?
3. विरतवचसि तरलिकायां कः अब्रवीत् ?
4. देवी कादम्बरी कां विज्ञापयति ?
5. का केयूरकं प्राहिणोत् ?
6. 'कृच्छ्रम्' पद का अर्थ लिखिए।

65. गते च केयूरके चन्द्रापीडम् उवाच "राजपुत्र! रमणीयः हेमकूटः। चित्रा च चित्ररथराजधानी। पेशलो गन्धर्वलोकः। सरलहृदया महानुभावा च कादम्बरी। तत इतः मयैव सह गत्वा हेमकूटम् दृष्ट्वा च मन्निर्विशेषां कादम्बरीम्, अपनीय तस्याः मोहविलसितम्, एकम् अहः विश्रम्य, श्वोभूते प्रत्यागमिष्यसि" इत्युक्तवतीं, चन्द्रापीडः "भगवति! दर्शनात् प्रभृति परवान् अयं जनः, कर्तव्येषु यथेष्टं नियुज्यताम्" इत्यभिधाय तया सहैव उदचलत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – चित्ररथराजधानी = चित्ररथस्य राजधानी (षष्ठी तत्पुरुषः)। **गन्धर्वलोकः** = गन्धर्वाणाम् लोकः (षष्ठी तत्पुरुषः)। **मोहविलसितम्** = मोहेन विलसितम् (तृतीया तत्पुरुषः)। **इत्युक्तवतीम्** = इति + उक्तवतीम्। **राजपुत्रः** = राज्ञः पुत्रः (षष्ठी तत्पुरुषः)। **विश्रम्य** = वि + श्रम् + ल्यप्।

शब्दार्थ – गते = चले जाने पर। **उवाच** = बोली। **रमणीयः** = सुन्दर। **चित्रा** = विचित्र। **पेशलः** = सुन्दर। **चित्ररथराजधानी** = चित्ररथ की राजधानी। **सरलहृदया** = सरल हृदय वाली। **गन्धर्वलोकः** = गन्धर्वों का देश। **इतः** = यहाँ से। **मयैव सह गत्वा** = मेरे साथ चलकर। **मन्निर्विशेषाम्** = मुझसे अभिन्न। **अपनीय** = दूर करके। **तस्याः** = उसके। **मोहविलसितम्** = मूढ़ता। **अहः** = दिन। **विश्रम्य** = विश्राम करके। **श्वोभूते** = दूसरे दिन। **प्रत्यागमिष्यसि** = लौट आइएगा। **इत्युक्तवतीम्** = इस प्रकार कहने वाली। **परवान्** = पराधीन, तुम्हारे अधीन। **कर्तव्येषु** = कार्यों में। **यथेष्टम्** = इच्छानुसार। **नियुज्यताम्** = लगाइए। **अभिधाय** = कहकर। **उदचलत्** = चल पड़ा।

अनुवाद – केयूरक के चले जाने पर महाश्वेता ने चन्द्रापीड से कहा– "हे राजकुमार! हेमकूट रमणीय (मनोहर) है। महाराज चित्ररथ की राजधानी अनोखी (विचित्र) है। गन्धर्वों का देश अत्यन्त सुन्दर है। कादम्बरी सरल हृदय वाली और उदार स्वभाव की है। इसलिए यहाँ से मेरे साथ हेमकूट चलकर मुझसे अभिन्न कादम्बरी को देखकर उसकी मूढ़ता को दूर करके एक दिन वहाँ विश्राम कीजिएगा और दूसरे दिन लौट आइएगा।" इस प्रकार कहने वाली महाश्वेता से चन्द्रापीड ने कहा– "देवि! मैंने जब से आप को देखा है तभी से आपके अधीन हो चला हूँ। आप अपनी इच्छानुसार मुझे कार्य में लगाइए।" ऐसा कहकर उसके साथ चल पड़ा।

प्रश्नाः

1. गते केयूरके महाश्वेता कम् उवाच ?
2. कः रमणीयः अस्ति ?
3. का सरलहृदया महानुभावा च अस्ति ?
4. चन्द्रापीडः कया सह उदचलत् ?
5. 'पेशलः' का अर्थ लिखिए।

66. क्रमेण च गत्वा हेमकूटम्, आसाद्य गन्धर्वराजकुलम्, समतीत्य सप्तकक्ष्यान्तराणि, प्रविश्य कन्यान्तःपुरम्, तत्र च कादम्बरीभवनं तन्मध्ये च श्रीमण्डपं ददर्श। तत्र च मध्यभागे, अनेकसहस्रसङ्ख्येन कन्यकाजनेन परिवृताम्, नीलप्रच्छदपटप्रावृतस्य नातिमहतः पर्यङ्कस्य आश्रये धवलोपधानन्यस्तभुजलतावष्टम्भेन अवस्थिताम्, सर्वरामणीयकानाम् एकनिवासभूताम्, कादम्बरीं ददर्श।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – नीलप्रच्छदपटप्रावृतस्य = नीलवर्णः यः प्रच्छदपटः तेन आवृतः तस्य। **गत्वा** = गम् + क्त्वा। **प्रविश्य** = प्र + विश् + ल्यप्। **धवलोपधानन्यस्तभुजलतावष्टम्भेन** = धवलं यत् उपधानं तत्र न्यस्ता या भुजलता तस्याः अवष्टम्भेन।

शब्दार्थ – आसाद्य = पहुँचकर। **समतीत्य** = लाँघकर। **सप्तकक्ष्यान्तराणि** = सात देहिलयों को। **प्रविश्य** = प्रवेश करके। **कन्यान्तःपुरम्** = राजकुमारी के महल में। **तत्र** = वहाँ। **कादम्बरीभवनम्** = कादम्बरी के महल में। **तन्मध्ये** = उसके बीच। **श्रीमण्डपम्** = अत्यन्त सुन्दर मण्डप को। **ददर्श** = देखा। **मध्यभागे** = बीच में। **अनेकसहस्रसंख्येन** = कई हजार। **कन्यकाजनेन** = कुमारियों द्वारा। **परिवृताम्** = घिरी हुई। **नीलप्रच्छदपटप्रावृतस्य** = नीले रंग की चादर से ढके हुए। **नातिमहतः** = मध्यम आकार का। **पर्यङ्कस्य आश्रये** = पलंग के सहारे। **धवलोपधानन्यस्तभुजलतावष्टम्भेन** = उज्ज्वल तकिये पर भुजाओं को रखकर उसी के सहारे। **अवस्थिताम्** = बैठी हुई। **सर्वरामणीयकानाम्** = सभी सुन्दरताओं की। **एकनिवासभूताम्** = एकमात्र निवासभूमि।

अनुवाद – क्रमशः हेमकूट पर जाकर और गन्धर्व राजकुल में पहुँचकर चन्द्रापीड सात ड्योढ़ियों को लाँघने के बाद (अर्थात्-सात दरवाजों को पार करने के बाद) राजकुमारियों के महल (कन्यान्तःपुर) में पहुँचा। वहाँ कादम्बरी का महल और उसके बीच में बने हुए सुन्दर मण्डप को देखा। उस मण्डप के बीच कई हजार कन्याओं से घिरी हुई, नीली चादर से ढँके हुए एक मध्यम आकार के पलंग के सहारे सफेद तकिए पर भुजाओं को रखकर उसी के सहारे बैठी हुई सभी सुन्दरताओं की एकमात्र निवासभूमि कादम्बरी को देखा।

प्रश्नाः

1. कः कन्यान्तःपुरं प्रविश्य श्रीमण्डपं ददर्श ?
2. का अनेकसहस्रसङ्ख्येन कन्यकाजनेन परिवृता ?
3. चन्द्रापीडः सर्वरामणीयकानाम् एकनिवासभूताम् कां ददर्श ?
4. चन्द्रापीडः कुत्र श्रीमण्डपं ददर्श?
5. 'सर्वरामणीयकानाम्' पद का अर्थ लिखिए।

अभ्यासकार्यम्

उचितं विकल्पं चिनुत –

1. विदिशाभिधाना नगरी राजधान्यासीत् –
   (क) शुकनासस्य (ख) वैशम्पायनस्य (ग) शूद्रकस्य (घ) चाण्डालकन्यायाः
2. दक्षिणपथात् का आगता आसीत् ?
   (क) महाश्वेता (ख) चाण्डालकन्या (ग) तरलिका (घ) विलासवती
3. शुकनासः कस्य मन्त्री आसीत् ?
   (क) दिलीपस्य (ख) तारापीडस्य (ग) नारायणस्य (घ) कुमारपालितस्य
4. जीर्णः शाल्मलीवृक्षः कुत्र आसीत् ?
   (क) पम्पाभिधानस्य सरसः पश्चिमे तीरे (ख) गोदावरी तीरे
   (ग) गङ्गायाः तीरे (घ) हिमालयस्य दक्षिणतीरे
5. शूद्रकस्य सभायां शुकम् आदाय का आगता ?
   (क) पत्रलेखा (ख) महाश्वेता (ग) कादम्बरी (घ) चाण्डालकन्या
6. प्रथमे वयसि कः सुखमतिचिरमुवास ?
   (क) तारापीडः (ख) शुकनासः (ग) वैशम्पायनः (घ) शूद्रकः

7. विलासवती कुत्र गता ?

(क) महाकालमन्दिरम् (ख) दुर्गामन्दिरम् (ग) नारायणमन्दिरम् (घ) दक्षिणापथम्

8. राजा तारापीडः स्वप्ने किम् अद्राक्षीत् ?

(क) ब्राह्मणम् (ख) नक्षत्रम् (ग) शशिनम् (घ) गृहम्

9. उज्जयिनी नगरी कुत्र स्थिता ?

(क) अवन्तिराज्ये (ख) वैशालीराज्ये (ग) हेमकूटपर्वते (घ) अन्यत्र

10. हारीतानुसारेण धर्मः कः ?

(क) अनाथपरिपालनम् (ख) नृपपरिपालनम् (ग) सेवकपरिपालनम् (घ) अन्यत्

11. भगवान् जाबालिः कम् अतिप्रशान्तया दृष्ट्या अपश्यत् ?

(क) अजाशिशुम् (ख) चटकाशिशुम् (ग) शुकशिशुम् (घ) गजशिशुम्

12. हारीतः कस्य तनयः आसीत् ?

(क) चाण्डालकन्यायाः (ख) जाबालिमुनेः (ग) तारापीडस्य (घ) शुकनासस्य

13. शुकस्य किम् नाम आसीत् ?

(क) कुमारपालितः (ख) तारापीडः (ग) वैशम्पायनः (घ) चन्द्रापीडः

14. आश्रमपदम् कया सरिता परिगतम् आसीत् ?

(क) गोदवर्या (ख) यमुनया (ग) कावेर्या (घ) गङ्गया

15. शबरसेनापतेः किम् नाम आसीत् ?

(क) मातङ्गकः (ख) शुकनासः (ग) चन्द्रापीडः (घ) तारापीडः

16. वैशम्पायनः कुत्र पतितम् आत्मानम् अपश्यत् ?

(क) शुष्कपत्रराशेः (ख) शुष्कफलराशेः (ग) शुष्कपुष्पराशेः (घ) धरातले

17. जटाभिः उपशोभितः कः आसीत् ?

(क) जाबालिमुनिः (ख) कपिलमुनिः (ग) कण्वमुनिः (घ) गौतममुनिः

18. शुकनासस्य ज्येष्ठभार्या का ?

(क) विलासवती (ख) मनोरमा (ग) गौरी (घ) महाश्वेता

19. शुकनासपुत्रस्य नाम किम् ?

(क) चन्द्रापीडः (ख) तारापीडः (ग) वैशम्पायनः (घ) कपिञ्जलः

20. चन्द्रापीडस्य अभिन्नं मित्रं किम् ?

(क) शुकनासः (ख) हारीतः (ग) वैशम्पायनः (घ) जाबालिः

21. विद्यामन्दिरात् चन्द्रापीडम् आनेतुं राज्ञा कः प्रेषितः ?

(क) कपिञ्जलः (ख) केयूरकः (ग) बलाहकः (घ) पत्रलेखा

22. इन्द्रायुधः कः ?

(क) अश्वः (ख) गजः (ग) शुकः (घ) मुनिः

23. इन्द्रायुधः केन तारापीडाय प्रहितः ?

(क) विदिशायाः राज्ञा (ख) चाण्डालकन्यया (ग) पारसीकाधिपतिना (घ) गन्धर्वराजेन

24. केन सह चन्द्रापीडः दिग्विजयाय अगच्छत् ?

(क) शुकनासेन सह (ख) केयूरकेण सह (ग) वैशम्पायनेन सह (घ) पत्रलेखया सह

25. पत्रलेखा कस्मिन् कार्ये नियुक्ता ?

(क) चन्द्रापीडस्य सेविका (ख) चन्द्रापीडस्य ताम्बूलकरङ्कवाहिनी

(ग) तारापीडस्य परिचारिका (घ) विलासवत्याः सेविका

26. पत्रलेखा का आसीत् ?

(क) कुलूतराजस्य दुहिता (ख) चन्द्रस्य पुत्री (ग) तारापीडस्य सेविका (घ) विलासवत्याः पुत्री

27. पत्रलेखा पूर्वस्मिन् जन्मनि का आसीत् ?

(क) चन्द्रपत्नी रोहिणी (ख) पुण्डरीकस्य माता (ग) शूद्रकस्य माता (घ) श्वेतकेतोः भार्या

28. दिग्विजयप्रसङ्गे चन्द्रापीडः कुत्र अगच्छत् ?

(क) सुवर्णपुरनगरम् (ख) उज्जयिनीम् (ग) विदिशाम् (घ) अमरावतीम्

29. कस्य सरोवरस्य तीरे चन्द्रापीडः महाश्वेताम् अपश्यत् ?

(क) अच्छोदसरोवरस्य (ख) पम्पासरोवरस्य (ग) कमलसरोवरस्य (घ) पद्मसरोवरस्य

30. महाश्वेता कयोः दुहिता आसीत् ?

(क) चित्ररथ-मदिरयोः (ख) हंस-गौर्योः (ग) शुकनास-मनोरमयोः (घ) तारापीड-विलासवत्योः

31. महाश्वेता कस्य देवस्य आराधने संलग्ना ?

(क) रामस्य (ख) कृष्णस्य (ग) महादेवस्य (घ) गणेशस्य

32. महाश्वेता कस्मिन् अनुरक्ता आसीत्–

(क) चन्द्रापीडे (ख) पुण्डरीके (ग) इन्द्रायुधे (घ) कपिञ्जले

33. गन्धर्वराजः हंसः कया कन्यकया सह विवाहम् अकरोत्–

(क) मनोरमया सह (ख) गौर्या सह (ग) विलासवत्या सह (घ) मदिरया सह

34. महाश्वेता कुत्र स्नातुम् अभ्यागमत्–

(क) पम्पासरः (ख) अच्छोदसरः (ग) गङ्गातीरम् (घ) कुत्रापि न

35. चन्द्रापीडः कस्य पुत्रः आसीत्–
(क) शूद्रकस्य (ख) तारापीडस्य (ग) वैशम्पायनस्य (घ) अमात्यस्य

36. 'धैर्यधना हि साधवः' कस्य उक्तिः–
(क) पुण्डरीकस्य (ख) कादम्बर्याः
(ग) कपिञ्जलस्य (घ) महाश्वेतायाः।

37. शूद्रकः कस्य अवतारः आसीत् –
(क) चन्द्रापीडस्य (ख) मुनिकुमारस्य (ग) अश्वस्य (घ) न कस्यापि

38. 'सर्वथा रक्षणीयः सुहृदसवः' उक्तिः अस्ति–
(क) कपिञ्जलस्य (ख) ऋषेः (ग) साधोः (घ) पुण्डरीकस्य

39. पुण्डरीकस्य सख्युः किं नाम आसीत्–
(क) कपिञ्जलः (ख) शुकः (ग) इन्द्रायुधः (घ) चन्द्रः

40. 'अतिभूमिं गतोऽयं न शक्यते निवर्तयितुम्' इदं कस्य कथनम् अस्ति ?
(क) कपिञ्जलस्य (ख) पुण्डरीकस्य (ग) चन्द्रापीडस्य (घ) शूद्रकस्य

41. 'दिष्ट्या अयम् अनङ्गः मामिव तमपि अनुबध्नाति' इदं कस्य कथनम् अस्ति ?
(क) महाश्वेतायाः (ख) कादम्बर्याः (ग) तरलिकायाः (घ) पत्रलेखायाः

42. का किंकर्तव्यतामूढा तरलिकाम् अपृच्छत् ?
(क) महाश्वेता (ख) कादम्बरी (ग) पत्रलेखा (घ) चाण्डालकन्या

43. का रजनिकरबिम्बेन रमणीयताम् अनीयत ?
(क) यामिनी (ख) महाश्वेता (ग) तरलिका (घ) कादम्बरी

44. किम् दुर्निमित्तनिवेदकम् अस्ति ?
(क) दक्षिणचक्षुः (ख) वामचक्षुः (ग) दक्षिणकर्णः (घ) वामकर्णः

45. तरलिका का आसीत् ?
(क) महाश्वेतायाः सेविका (ख) कादम्बर्याः सेविका
(ग) चन्द्रापीडस्य सेविका (घ) तारापीडस्य सेविका

46. महाश्वेता सरसः कस्मिन् तटे पुरुषस्य रुदितध्वनिम् उपालक्षयत् ?
(क) पश्चिमे तटे (ख) उत्तरे तटे (ग) दक्षिण तटे (घ) पूर्वस्मिन् तटे

47. महाश्वेता विलपन्तं कम् अश्रौषीत् ?
(क) कपिञ्जलम् (ख) चन्द्रापीडम् (ग) वैशम्पायनम् (घ) तारापीडम्

48. महाश्वेता तत्क्षणविगतजीवितं कं महाभागम् अद्राक्षीत् ?
(क) पुण्डरीकम् (ख) चन्द्रापीडम् (ग) वैशम्पायनम् (घ) शूद्रकम्

49. का ग्रहगृहीता इव व्यलपत् ?
(क) महाश्वेता (ख) कादम्बरी (ग) तरलिका (घ) पत्रलेखा

50. दिव्याकृतिः पुरुषः कुतः विनिर्गतः ?
(क) चन्द्रमण्डलात् (ख) सूर्यमण्डलात् (ग) मङ्गलमण्डलात् (घ) बृहस्पतिमण्डलात्

51. कः महाश्वेताम् आदृतः पिता इव अभिधाय गगनतलम् उदपतत् ?
(क) दिव्याकृतिः पुरुषः (ख) पुण्डरीकः (ग) कपिञ्जलः (घ) वैशम्पायनः

52. कः दिव्याकृतिपुरुषम् एव अनुसरन् अन्तरिक्षम् उदपतत् ?
(क) कपिञ्जलः (ख) चन्द्रापीडः (ग) वैशम्पायनः (घ) तारापीडः

53. का वल्कलोपान्तेन वदनम् आच्छाद्य मुक्तकण्ठं प्रारोदीत् ?
(क) महाश्वेता (ख) कादम्बरी (ग) मदलेखा (घ) पत्रलेखा

54. चन्द्रापीडः कस्याः स्ववृत्तान्तकथनेन नितरां प्रीतो बभूव ?
(क) महाश्वेतायाः (ख) कादम्बर्याः (ग) तरलिकायाः (घ) मदलेखायाः

55. तरलिका कस्याः परिचारिका आसीत् ?
(क) महाश्वेतायाः (ख) कादम्बर्याः (ग) मदलेखायाः (घ) पत्रलेखायाः

56. कादम्बर्याः पितुः किं नाम आसीत् ?
(क) चित्ररथः (ख) हंसः (ग) शुकनासः (घ) तारापीडः

57. कादम्बर्याः मातुः किं नाम आसीत् ?
(क) मदिरा (ख) गौरी (ग) पत्रलेखा (घ) मदलेखा

58. का जन्मनः प्रभृति महाश्वेतायाः बालमित्रम् अस्ति ?
(क) कादम्बरी (ख) तरलिका (ग) पत्रलेखा (घ) मदलेखा

59. केयूरकः कस्याः वीणावाहकः आसीत् ?
(क) कादम्बर्याः (ख) महाश्वेतायाः (ग) तरलिकायाः (घ) मदलेखायाः

60. हेमकूटस्य राजा कः आसीत् ?
(क) चित्ररथः (ख) शूद्रकः (ग) तारापीडः (घ) शुकनासः।

■

रघुवंशम्

(द्वितीयः सर्गः)

महाकविकालिदासप्रणीतम्

रघुवंशम्

(द्वितीयः सर्गः)

कालिदासस्य जीवनपरिचयः

कविकुलगुरुः कालिदासः संस्कृतसाहित्यस्य श्रेष्ठः कविरिति सर्वैः विद्वद्भिरेकस्वरेण स्वीक्रियते। महाकविः कालिदासः न केवलं भारतीयः कविः, अपितु विश्वस्य उत्कृष्टकविषु तस्य गणना क्रियते प्राच्यपाश्चात्यविद्वद्भिः। कालिदासस्य देशकालजन्मवृत्तविषये नास्ति सुनिश्चितं ज्ञानं, तथापि विपश्चिद्भिरन्तर्बहिःसाक्ष्यमनुसृत्य यत्किञ्चित् तज्जीवनवृत्तविषये समवधार्यते।

स्थितिकालः – कालिदासस्य स्थितिकालः नितरामस्पष्टः। यत्किञ्चिद् ज्ञायते तत्तु अनुमानमात्रम्। केचन विद्वांसः महाकवेः स्थितिं क्रिस्तपूर्वं द्वितीये शतके, केचन च क्रिस्तपूर्वं प्रथमे शतके मन्यन्ते। परन्तु इतरे विपश्चितः क्रिस्तात् परं गुप्तकालिके चतुर्थे शतके, अपरे पञ्चमे शतके, अन्ये च षष्ठे शतके कथयन्ति। कालिदासस्य नाटकैः ज्ञायते यत् सः विक्रमादित्यस्य राज्ञः सभाकविः आसीत्। परं तस्य स्थितिकालोऽपि न निर्णेतुं शक्यते यतो हि भारतीये इतिहासे बहवः विक्रमादित्योपाधिधारिणः राजानः अभवन्। एतत्तु निश्चितम् यत् कालिदासेन शुङ्गवंशीयस्य राज्ञः अग्निमित्रस्य प्रणयकथामाश्रित्य मालविकाग्निमित्रस्य रचना कृता, अतः तस्य स्थितिकालस्य पूर्वसीमा क्रिस्तपूर्वं द्वितीयशतकं यावदस्ति। यतः बाणभट्टः हर्षचरिते सश्रद्धं कालिदासस्य नाम स्मरति– **''निर्गतासु न वा कस्य कालिदासस्य सूक्तिषु।''** अथ च प्रयागात् प्राप्ते ऐहोलशिलालेखेऽपि कालिदासस्योल्लेखः अस्ति– **''स विजयतां रविकीर्तिः कविताश्रित–कालिदासभारविकीर्तिः।''** अतः कालिदासस्य अपरसीमा क्रिस्तस्य षष्ठशतकं यावदस्ति।

जन्मस्थानम् – कालिदासस्य जन्मस्थानविषयेऽपि बहवो मताः प्रचारिताः सन्ति। महाकवेः एतवान् महिमा अस्ति यत् सर्वे तं स्वस्वदेशस्य साधयितुं समुद्यताः सन्ति। कुमारसम्भवे हिमालयवर्णनेन कश्मीरवासिविपश्चितः कालिदासं कश्मीरदेशीयम् उत्तराखण्डवासिविद्वांसश्च उत्तराखण्डनिवासिनं मन्यन्ते। बङ्गवासिनः तं बङ्गदेशीयम् अथ च केरलवासिविद्वांसः तं केरलदेशीयं मन्यन्ते। मागधाः तं मगधदेशस्य साधयितुं तत्पराः सन्ति। परं विदुषां समवायस्य सम्मतिरस्ति यत् कालिदासः उज्जयिन्याः कविरासीत्, यतो हि महाकविः मध्यप्रदेशस्थाम् उज्जयिनीं नगरीं प्रति सातिशयमनुरागं प्रदर्शयति–

''वक्रः पन्थाः यदपि भवतः प्रस्थितस्योत्तराशां,
सौधोत्सङ्गप्रणयविमुखो मा स्म भूरुज्जयिन्याः।'' (मेघदूतम्)

''दिवः कान्तिमत् खण्डमेकम्।'' (मेघदूतम्)

जीवनवृत्तम् – कालिदासस्य जीवनवृत्तविषये नैकाः जनश्रुतयः प्रसृताः सन्ति। किंवदन्तीरस्ति यत् कालिदासः पूर्वं महामूर्खः आसीत्। शारदानन्दस्य दुहिता विद्योत्तमा विदुषी आसीद्, अतः राज्ञा प्रतिज्ञा कृता यत् शास्त्रार्थे यः तस्य पुत्रीं पराजेष्यते तेनैव सह तस्याः विवाहः भविष्यति। देश-देशान्तरेभ्यः बहवो विद्वांसः समागताः परं न केनापि सा पराजिता। तेष्वेव केचित् काश्याः विद्वांसः शास्त्रार्थे पराजिताः अपमानम् असहमानाः काशीं प्रतिगच्छन्तः वने स्वाधिष्ठितां शाखाम् एव कुठारेण कर्तयन्तं कञ्चित् महामूर्खम् अपश्यन्। तमेव पण्डितरूपेण आनीय छलेन विद्योत्तमां पराजितां समुद्घोष्य तेनैव महामूर्खेण कालिदासेन सह तस्याः विवाहम् अकारयन्। अनन्तरे कक्षाभ्यान्तरं प्रविष्टः कालिदासोऽसौ बहिस्ताद् कस्यचिद् उष्ट्रस्य रवं श्रुत्वा 'ऊँट्र- ऊँट्र' इति समुच्चारयन् विद्योत्तमया दृष्टः। महामूर्खोऽयमिति ज्ञात्वा सः गृहान्निसारितः। कालीम् उपास्य किंवा काश्यां द्वादशवर्षाणि यावद् अधीत्य पुनरागतः ''अनावृतकपाटं द्वारं देहि'' इत्यकथयत्। अन्तस्तिष्ठन्ती एव विद्योत्तमा ''अस्ति कश्चिद् वाग्विशेषः'' इत्युक्त्वा द्वारमुद्घाट्य कालिदासं दृष्टवती, परिचीय च स्वागतीकृत्य अन्तः नीतवती इति। पश्चात् कालिदासेन 'अस्त्युत्तरस्यां दिशि' इत्यनेन कुमारसभवस्य, 'कश्चित्' इत्यनेन मेघदूतस्य, अथ च 'वागर्थाविव' इत्यनेन रघुवंशस्य रचना कृता।

कालिदासः न केवलं महाकविः, अपि तु विदुषां शिरोमणिरस्ति। अतएव तस्य विद्याध्ययनं योग्याचार्याणां सन्निधौ सञ्जातमिति। तस्य वेदेषु, बाह्मणग्रन्थेषु, उपनिषत्सु, स्मृतिषु, दर्शनेषु, पुराणेषु, व्याकरणे, कामशास्त्रे, राजनीतिशास्त्रे, इतिहासे, सामुद्रिके, ज्योतिषःशास्त्रे, चित्रकलायां, सङ्गीतेषु, नृत्यकलायां, युद्धशास्त्रे, भौगोलिके ज्ञाने, साहित्यादिषु च समानाधिकारः आसीत्, तथापि अभिमानरहितः सः रघुवंशे विनयं प्रदर्शयन् कथयति–

क्व सूर्यप्रभवो वंशः क्व चाल्पविषया मतिः।
तितीर्षुर्दुस्तरं मोहादुडुपेनास्मि सागरम्।।

असौ कालिदासः सरलहृदयः, विनोदशीलः, न्यायप्रियः, यथार्थवक्ता च आसीत्। परमशैवः सन्नपि अन्यदेवतासु तस्य समाना भक्तिः। रघुवंशे रामं प्रति औदार्येण स्वभक्तिं प्रकटयति। कालिदासः वर्णाश्रमव्यवस्थायाः समर्थकः, स्त्रीणामधिकारस्य च वक्ता भारतीयसंस्कृतेः वैतालिकः, अनुरागस्य सौन्दर्यस्य च सूक्ष्मनिरीक्षकः प्रकृतिप्रेमी च आसीत्।

कालिदास का जीवन-परिचय

कविकुलगुरु कालिदास संस्कृत-साहित्य के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं– यह सभी विद्वान् एक स्वर से स्वीकार करते हैं। महाकवि कालिदास न केवल भारतीय कवि, अपितु विश्व के उत्कृष्ट कवियों में से एक हैं– ऐसा सभी पूर्वी एवं पश्चिमी विद्वान् स्वीकार करते हैं। कालिदास के जन्म स्थान, समय और जीवन के विषय में कुछ भी स्पष्ट ज्ञान नहीं है, फिर भी विद्वज्जन अन्तःसाक्ष्य और बहिःसाक्ष्य के आधार पर कुछ बातें निर्धारित करते हैं।

स्थितिकाल – कालिदास का स्थितिकाल अत्यन्त अस्पष्ट है। जो कुछ ज्ञात किया जाता है, वह अनुमान मात्र है। कुछ विद्वान् महाकवि का स्थितिकाल ईसा पूर्व द्वितीय शतक और कुछ ई0 पू0 प्रथम शतक में मानते हैं; किन्तु कुछ दूसरे विद्वान् ईसवी सन् के बाद गुप्तकालीन चतुर्थ शताब्दी में, तो कुछ छठी शताब्दी ई0 में कहते हैं।

कालिदास के नाटकों से यह ज्ञात होता है कि वे राजा विक्रमादित्य के सभाकवि थे, किन्तु उन विक्रमादित्य का भी स्थितिकाल निर्णीत नहीं किया जा सकता, क्योंकि भारतीय इतिहास में बहुत से राजाओं ने विक्रमादित्य उपाधि धारण की। यह तो निश्चित है कि कालिदास ने शुङ्गवंशीय राजा अग्निमित्र की प्रेमकथा का आश्रय लेकर 'मालविकाग्निमित्रम्' नामक नाटक की रचना की। अतः कालिदास के स्थितिकाल की पूर्वसीमा ई0 पू0 द्वितीय शतक तक है, क्योंकि बाणभट्ट ने हर्षचरितम् के आरम्भ में श्रद्धा के साथ कालिदास का स्मरण किया है– **''निर्गतासु न वा कस्य कालिदासस्य सूक्तिषु''** एवं प्रयाग से प्राप्त ऐहोल शिलालेख में भी कालिदास का उल्लेख है– **''स विजयतां रविकीर्तिः कविताश्रितकालिदासभारविकीर्तिः।''** अतः उपर्युक्त दोनों प्रमाणों से कालिदास के स्थितिकाल की अपरसीमा छठी शताब्दी ई0 तक है।

जन्मस्थान – कालिदास के जन्मस्थान के विषय में बहुत-से मत प्रचलित हैं। महाकवि की इतनी महिमा है कि सभी उन्हें अपने-अपने क्षेत्र का सिद्ध करने के लिए उद्यत हैं। 'कुमारसम्भवम्' महाकाव्य में हिमालय के स्वाभाविक वर्णन को देखकर कश्मीरनिवासी विद्वान् उन्हें कश्मीरी कवि कहते हैं। उत्तराखण्ड के रहनेवाले विद्वान् उन्हें उत्तराखण्ड का निवासी बताते हैं। बंगाल के निवासी 'रघुवंशम्' में धान की खेती का स्वाभाविक वर्णन होने के कारण कालिदास को बंगाल का कवि, तो प्राकृतिक सौन्दर्य वर्णन के आधार पर केरलवासी विद्वान् उन्हें केरल का कवि कहते हैं। बिहार के निवासी उन्हें मगध का कवि बताते हैं। किन्तु अधिकतर विद्वानों की सम्मति यह है कि कालिदास मध्य प्रदेश में स्थित उज्जयिनी नगरी के निवासी हैं। उज्जयिनी के प्रति कालिदास का अत्यधिक अनुराग इस मत को पुष्ट करता है–

''वक्रः पन्थाः यदपि भवतः प्रस्थितस्योत्तराशां
सौधोत्सङ्गप्रणयविमुखो मा स्म भूरुज्जयिन्याः।''

(मेघदूतम्)

''दिवः कान्तिमत् खण्डमेकम्।'' *(मेघदूतम्)*

जीवनवृत्त – कालिदास के जीवनवृत्त के विषय में अनेक जनश्रुतियाँ प्रचलित हैं। किंवदन्ती है कि पहले कालिदास महामूर्ख थे। राजा शारदानन्द की पुत्री विद्योत्तमा अत्यन्त विदुषी थी, अतः राजा ने प्रतिज्ञा की कि जो उनकी पुत्री को शास्त्रार्थ में पराजित करेगा, उसी के साथ वे अपनी कन्या का विवाह करेंगे। अनेक देशों से बहुत-से विद्वान् आये; किन्तु विद्योत्तमा को पराजित नहीं कर सके। उन्हीं में से कुछ काशी के विद्वान् लौट रहे थे। पराजय के अपमान को वे नहीं सह पा रहे थे, अतः उन्होंने

विद्योत्तमा का विवाह किसी महामूर्ख से कराने का विचार किया। रास्ते में वन में उन्होंने, जिस पर बैठा था, उसी डाल को काटते हुए किसी महामूर्ख को देखा। उसी को पण्डित के वेश में लाकर छल से विद्योत्तमा को पराजित घोषित कर उसका विवाह राजकुमारी से करा दिया। विवाह के पश्चात् कक्ष के भीतर प्रविष्ट उस महामूर्ख कालिदास ने किसी ऊँट की बाहर से आती हुई आवाज सुनी और 'उँट्र-उँट्र' ऐसा कहने लगे। विद्योत्तमा ने यह देखकर जान लिया कि उसके साथ पण्डितों ने छलकर उसका विवाह महामूर्ख से करा दिया है। उसने कालिदास को घर से निकाल दिया। कहते हैं कि काली मन्दिर में गिर जाने के कारण जिह्वा कट गयी और रक्त बह निकला। देवी काली साक्षात् प्रकट हो गयी और विद्वत्ता का वरदान दे दिया अथवा काशी में रहकर 12 वर्षों तक संस्कृत का अध्ययन करने के कारण कालिदास विद्वान् हो गये। पुनः आकर उन्होंने दरवाजे को खटखटाकर कहा– **'अनावृतकपाटं द्वारं देहि'।** इसे सुनकर विद्योत्तमा ने अन्दर से ही कहा– **'अस्ति कश्चिद् वाग्विशेषः'** अर्थात् कोई विशिष्टवाणी वाला विद्वान् है। फिर स्वर से कालिदास को पहचान कर वह उनका सम्मान करते हुए उन्हें भीतर ले गयी बाद में कालिदास ने 'अस्ति' से कुमारसम्भवम् **(अस्त्युत्तरस्यां0)** महाकाव्य, 'कश्चिद्' से मेघदूतम् **(कश्चित्कान्ताविरहगुरुणा0)** नामक खण्डकाव्य और 'वागर्थः' से 'रघुवंशम्' **(वागर्थाविव0)** महाकाव्य की रचना की।

कालिदास न केवल महाकवि; अपितु विद्वज्जनशिरोमणि हैं। अवश्य ही उनका अध्ययन सुयोग्य आचार्यों की सन्निधि में हुआ होगा। उनका वेदों, ब्राह्मण ग्रन्थों, उपनिषदों, स्मृतियों, दर्शन, पुराण, इतिहास, राजनीतिशास्त्र, कामशास्त्र, सामुद्रिकशास्त्र, व्याकरण, छन्द, ज्योतिष, चित्रकला, सङ्गीत, नाट्य, नृत्यकला, युद्धशास्त्र, भूगोल और साहित्य आदि में समान अधिकार था। इतना सब होते हुए भी वे अभिमानरहित थे और रघुवंशम् में अपनी विनम्रता प्रदर्शित करते हुए कहते हैं कि–

क्व सूर्यप्रभवो वंशः क्व चाल्पविषया मतिः।
तितीर्षुर्दुस्तरं मोहादुडुपेनास्मि सागरम्।।

कालिदास सरलहृदय, विनोदशील, न्यायप्रिय और यथार्थवक्ता थे। शिव के परम भक्त होते हुए भी अन्य देवताओं के प्रति उनकी समान भक्ति है। रघुवंशम् में राम के प्रति वे अपनी भक्ति को उदारभाव से प्रकट करते हैं। वे वर्णाश्रमव्यवस्था के समर्थक, स्त्रियों के अधिकरों के वक्ता, भारतीय संस्कृति के गायक, प्रेम व सौन्दर्य के सूक्ष्म निरीक्षक और प्रकृतिप्रेमी थे।

कालिदासस्य कर्तृत्वम्

महाकविः कालिदासः राज्ञः विक्रमादित्यस्य राज्याश्रितः कविः आसीत्, अतः काव्यरचनायाः प्रभूतः अवकाशः आसीत्। सः न केवलं काव्यानि नाटकानि च व्यरचयत्, अपितु साहित्ये साहित्यशास्त्रे च प्रतिमानानि अस्थापयत्। महाकवेः नाम्ना बह्व्यः कृतयः समुपलभ्यन्ते; किन्तु प्रामाणिकरूपेण एताः सप्त रचनाः एव कालिदासप्रणीताः मन्यन्ते–

1. ऋतुसंहारम् – 'ऋतुसंहारम्' कालिदासस्य आद्या कृतिः इति कथ्यते। एतत् खण्डकाव्यम् अस्ति। अस्मिन् षट्सर्गाः सन्ति। अत्र षण्णां (ग्रीष्मः, वर्षा, शरद्, हेमन्तः, शिशिरः, वसन्तः) ऋतूनां वैभवेन सौन्दर्यपूर्णं वर्णनमस्ति।

2. मेघदूतम् – इदमपि खण्डकाव्यम् अस्ति। पूर्वमेघः उत्तरमेघश्चेति भागद्वये शताधिकाः श्लोकाः रचिताः इदं विप्रलम्भश्रृङ्गारस्य प्रौढं गीतिकाव्यमस्ति। अत्र यक्षिण्या विरहितस्य यक्षस्य व्यथायाः मर्मस्पृग् वर्णनम् अस्ति।

3. कुमारसम्भवम् – शिवपार्वत्योः विवाहस्य अनन्तरं कुमारस्य (कार्तिकेयस्य) जन्म आधृत्य रचितमिदं श्रृङ्गारप्रधानं महाकाव्यम् अस्ति। अस्मिन् अष्टादशसर्गाः सन्ति।

4. रघुवंशम्– संस्कृतसाहित्यस्य सर्वश्रेष्ठं महाकाव्यमिदम् ऊनविंशतिसर्गात्कम् अस्ति। वीररसप्रधाने महाकाव्येऽस्मिन् एकत्रिंशद्–रघुवंशिनां राज्ञां महच्चरितं वर्णितमस्ति।

5. मालविकाग्निमित्रम् – पञ्चाङ्कात्मकेऽस्मिन् ग्रन्थे मालवराजकुमार्याः, शुङ्गवंशीयस्य राज्ञः अग्निमित्रस्य च प्रणयकथा वर्णिता। श्रृङ्गारप्रधाना इयं रचना काव्यशास्त्रदृष्ट्या नाटिका अस्ति।

6. विक्रमोर्वशीयम् – पञ्चाङ्कात्मकेऽस्मिन्नपि त्रोटके चन्द्रवंशीयनृपतेः पुरूरवसः अप्सरसः उर्वश्याश्च प्रेमकथा वर्णिता अस्ति। इदमपि श्रृङ्गाररसप्रधानम् अस्ति।

7. अभिज्ञानशाकुन्तलम् – सप्ताङ्कात्मकेऽस्मिन्नाटके पुरुवंशीयस्य राज्ञः दुष्यन्तस्य शकुन्तलायाश्च प्रेमकथा वर्णिता अस्ति। श्रृङ्गाररसप्रधानमिदं नाटकं विश्वस्य उत्कृष्टनाटकेषु गण्यते। संस्कृतसाहित्यजगति शाकुन्तलविषये उक्तिरेषा प्रसिद्धा–

काव्येषु नाटकं रम्यं तत्र रम्या शकुन्तला।

हिमालयाद् आरभ्य हिन्दमहासागरं यावद् प्रसृताः भारतस्य गौरवगाथाः पुराविदा कालिदासेन स्वरचनासु निबद्धाः। कुमारसम्भवे, रघुवंशे मेघदूते च भारतवर्षस्य नगराणां पर्वतनदीवनानां च अत्यन्तं स्वाभाविकं मनोहारि च वर्णनं समुपलभ्यते। अनेनं ज्ञायते यद् देशानुरक्तः सः राष्ट्रकविः अस्ति। कथावस्तुवर्णनेन, प्रकृति-चित्रणेन, रसविधानेन, अलङ्कारविन्यासेन, छन्दसां प्रयोगेण, विशेषतः उपमायोजनायां च न केवलं भारते, अपितु विश्वस्मिन् विश्वे उत्कृष्टकविरिति मन्यते। संस्कृतकविशिरोमणिः संस्कृतस्य अद्वितीयः कविरिति सर्वैः विद्वद्भिः एकस्वरेण उररीक्रियते–

पुरा कवीनां गणनाप्रसङ्गे कनिष्ठिकाधिष्ठितकालिदासः।
अद्यापि तत्तुल्यकवेरभावादनामिका सार्थवती बभूव।।

कालिदास का कर्तृत्व

महाकवि कालिदास राजा विक्रमादित्य के राज्याश्रित कवि थे, अतः काव्यरचना के लिए उनके पास पर्याप्त समय था। उन्होंने काव्यों और नाटकों की रचना ही नहीं की, बल्कि साहित्य और साहित्यशास्त्र में रचनाओं के प्रतिमान स्थापित किये। महाकवि कालिदास के नाम से बहुत-सी रचनायें प्राप्त होती हैं; किन्तु प्रामाणिक रूप से ये सात रचनायें ही कालिदास द्वारा रचित मानी जाती हैं–

1. ऋतुसंहारम् – 'ऋतुसंहारम्' कालिदास की पहली कृति मानी जाती है। यह खण्डकाव्य है। इसमें छह सर्गों में छह ऋतुओं– ग्रीष्म, वर्षा, शरद्, हेमन्त, शिशिर और वसन्त का अत्यन्त वैभवपूर्ण सौन्दर्य वर्णन है।

2. मेघदूतम् – यह भी खण्डकाव्य है। पूर्वमेघ और उत्तरमेघ– इन दो भागों को मिलाकर सौ से अधिक श्लोको में रचा गया यह वियोग शृङ्गार का प्रौढ़ गीतिकाव्य है। इसमें यक्षिणी से विरहित यक्ष की विरहव्यथा का मर्मस्पर्शी वर्णन है।

3. कुमारसम्भवम् – शिव और पार्वती के विवाह के पश्चात् कुमार (कार्तिकेय) के जन्म का आश्रय लेकर रचित यह शृङ्गाररसप्रधान महाकाव्य है। इसमें 18 सर्ग हैं।

4. रघुवंशम् – यह संस्कृत का सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य है और इसमें उन्नीस सर्ग हैं। वीररसप्रधान इस महाकाव्य में 31 रघुवंशी राजाओं का महान् चरित वर्णित है।

5. मालविकाग्निमित्रम् – पाँच अङ्कों वाले इस ग्रन्थ में मालवराजकुमारी और शुङ्गवंशीय राजा अग्निमित्र की प्रेमकथा वर्णित है। यह शृङ्गार प्रधान रचना नाट्यशास्त्र की दृष्टि से 'नाटिका' मानी जाती है।

6. विक्रमोर्वशीयम् – इसमें भी पाँच अङ्क हैं और चन्द्रवंशीय राजा पुरूरवा तथा उर्वशी की प्रेमकथा वर्णित है। यह शृङ्गारप्रधानरचना नाट्यशास्त्र की दृष्टि से 'त्रोटक' मानी जाती है।

7. अभिज्ञानशाकुन्तलम् – सात अङ्कोंवाले इस नाटक में पुरुवंशीय राजा दुष्यन्त और शकुन्तला की प्रेमकथा वर्णित है। शृङ्गाररसप्रधान यह नाटक विश्व के उत्कृष्ट नाटकों में गिना जाता है। संस्कृतसाहित्य-जगत् में यह उक्ति प्रसिद्ध है–

काव्येषु नाटकं रम्यं तत्र रम्या शकुन्तला।

हिमालय से लेकर हिन्द महासागर तक फैली भारत की गौरवगाथाओं को कालिदास ने अपनी रचनाओं में वर्णित किया है। कुमारसम्भवम्, रघुवंशम् और मेघदूतम् में भारतवर्ष के नगरों, पर्वत, नदी, वन आदि प्रदेशों का स्वाभाविक और मनोहर वर्णन प्राप्त होता है। इससे यह पता चलता है कि कालिदास देशभक्त और राष्ट्रकवि हैं। कालिदास कथावस्तुवर्णन, प्रकृति-चित्रण, रसाभिव्यक्ति, अलङ्कारों का विन्यास, छन्दों के प्रयोग और विशेष रूप से उपमा-योजना में न केवल भारतवर्ष के, अपितु सम्पूर्ण विश्व के उत्कृष्ट कवि हैं। संस्कृतकविशिरोमणि कालिदास संस्कृत-साहित्य के अद्वितीय कवि हैं– ऐसा सभी विद्वान् एकमत से स्वीकार करते हैं–

"पुरा कवीनां गणनाप्रसङ्गे कनिष्ठिकाधिष्ठितकालिदासः।
अद्यापि तत्तुल्यकवेरभावाद् अनामिका सार्थवती बभूव।।"

कालिदासस्य काव्यशैली

महाकवेः कालिदासस्य काव्यप्रतिभायाः सर्वोत्कृष्टं निदर्शनं रघुवंशम् अस्ति। काव्यसमालोचकाः संस्कृत–साहित्यस्य सर्वश्रेष्ठं महाकाव्यं रघुवंशं मन्यन्ते, अतः कालिदासस्य कृते 'रघुकार' इति अभिधानं प्रयुञ्जति। रघुवंशस्य काव्यसौष्ठवं दर्शं दर्शं साहित्यरसिकाः समुद्घोषयन्ति यत्– **"क इह रघुकारे न रमते।"** रघुवंशे कालिदासस्य शैली प्रकर्षेण राजते।

कथावस्तु – यद्यपि रघुवंशस्य मूलस्रोतः वाल्मीकीयं रामायणमस्ति; तथापि अस्य महाकाव्यस्य वस्तुनि कालिदासस्य नवनवोन्मेषशालिन्याः प्रतिभायाः दर्शनं भवति। रामायणस्य कथा रामचरिते एव केन्द्रीभूता, परं रघुवंशे एकत्रिंशद्रघुवंशिनां राज्ञां कथा कालिदासेन वर्णिता। अस्य महाकाव्यस्य कथा इतिहासाश्रिता अस्ति।

पात्रयोजना – एकत्रिंशद् रघुवंशिनः राजानः अस्य महाकाव्यस्य नायकाः सन्ति। ते राजानः त्यागशीलाः, सत्यप्रियाः, प्रजावत्सलाः, वर्णाश्रमधर्मसंरक्षकाः आसन्; किन्तु रघुवंशे वर्णितः अन्तिमः नृपः अग्निवर्णः अन्तःपुरस्त्रीषु आसक्तः स्वकर्त्तव्यविमुखः अस्ति। रघुवंशे वर्णितानां राज्ञां व्यक्तित्वं वैविध्येन सहृदयानां हृदयम् आवर्जयति। तत्र दिलीपस्य त्यागः, रघोः दानवीरता, अजस्य दाम्पत्यप्रेम, अन्येषां राज्ञां प्रतापः, रामस्य औदार्यम् इत्यादीनि दर्शनीयानि सन्ति।

वर्णनकौशलम् – रघुवंशे कालिदासस्य वर्णनकौशलम् अद्वितीयमस्ति। दिलीपस्य गोसेवा, रघोः दिग्विजययात्रा दानशीलता च, इन्दुमतेः स्वयंवरः, अजस्य विलापः, सीतारामयोः लङ्कातः अयोध्यां प्रति पुष्पकविमानयात्राप्रसङ्गे भारतीयभौगोलिकस्थलानां विहङ्गमचित्राणि, निर्वासितायाः सीतायाः रामाय सन्देशादीनि वर्णनानि स्वाभाविकानि मनोहराणि च। यथा अजसेनायाः अरीणां च सेनायाः युद्धवर्णनम्–

पत्तिः पदातिं रथिनं रथेशस्तुरङ्गसादी तुरगाधिरूढम्।
यन्ता गजस्याभ्यपतद् गजस्थं तुल्यप्रतिद्वन्द्वि बभूव युद्धम्।।

प्रकृतिवर्णनम् – रघुवंशे कालिदास्य प्रकृतिचित्रणं स्वाभाविकं मनोहरं चास्ति। कालिदासस्य कृतिषु प्रकृतिः मानवस्य सहचरी इव व्यवहरति। वनमागतस्य दिलीपस्य स्वागतं वनवृक्षाः वयसां विरावैः जयशब्दमुच्चार्य कुर्वन्ति। एवमेव मरुत्प्रयुक्ताः बाललताः राज्ञः दिलीपस्य उपरि पुष्पवृष्टिं कुर्वन्ति। पल्लवरागताम्रा नन्दिनी पतङ्गस्य च प्रभा उभेऽपि सममेव दिगन्तराणि सञ्चारपूतानि कृत्वा दिनान्ते स्ववासस्थानं गन्तुमारेभे। सायंकाले श्यामायमानस्य वनस्य शोभावर्णनं स्वाभाविकं मनोहरञ्च–

स पल्वलोत्तीर्णवराहयूथान्यावासवृक्षोन्मुखबर्हिणानि।
ययौ मृगाध्यासितशाद्वलानि श्यामायमानानि वनानि पश्यन्।।

रसाभिव्यक्तिः – कविताकामिनीविलासः कालिदासः प्रेम्णः सौन्दर्यस्य च कविरस्ति। कविरसौ श्रृङ्गारस्य विप्रलम्भसंयोगयो उभयोः पक्षयोः वर्णने निपुणः। कुमारसम्भवे शिवपार्वत्योः अनुरागवर्णने श्रृङ्गाराभिव्यक्तिः उत्कृष्टा। करुणरसस्य अभिव्यञ्जनायामपि सः सिद्धहस्तः। परित्यक्तायाः सीतायाः शोकाभिव्यक्तिः हृदयं स्पृशति। तथैव अजविलापप्रसङ्गोऽपि भावपूर्णः मर्मस्पर्शी चास्ति–

स्रगियं यदि जीवितापहा हृदये किं निहिता न हन्ति माम्।
विषमप्यमृतं क्वचिद् भवेद्मृतं वा विषमीश्वरेच्छया।।

भाषा – कविकुलगुरुः कालिदासः वैदर्भीरीतेः कविः। तस्य शैल्यां प्रसादमाधुर्यादयः गुणाः प्राप्यन्ते। प्रसादगुणानुरूपं तस्य भाषा सर्वत्र समासरहिता क्वचिदल्पसमासा, अत एव सरला, मधुरा, साभिप्रायशब्दानां प्रयोगेण प्रभावपूर्णा च। कालिदासस्य भाषायाः मुख्यं वैशिष्ट्यं व्यञ्जनाप्राधान्यम् अस्ति। सीतायाः शोके मयूराः नृत्यं, भ्रमराः पुष्परसास्वादं, हरिण्यश्च कुशचर्वणं तत्यजुः–

नृत्यं मयूराः कुसुमानि भृङ्गा दर्भानुपात्तान् विजहुर्हरिण्यः।
तस्याः प्रपन्ने समदुःखभावमत्यन्तमासीद् रुदितं वनेऽपि।।

वैदर्भीरीतेः सः सर्वश्रेष्ठः कविः।

अलङ्कारः – महाकवेः भाषायाम् असाधारणः अधिकारः। तस्य भाषायाम् अनुप्रासयमकादयः अनायासेन आयान्ति। अर्थालङ्कारेषु उपमारूपकोत्प्रेक्षार्थान्तरान्यासादीनां प्रयोगः स्वाभाविकः। उपमायाः विन्यासे तु कालिदासः अद्वितीयः, अतः एव संस्कृतसाहित्ये **'उपमा कालिदासस्य'** इति भणितिः प्रचलितास्ति। उपमा प्रयोगवैशिष्ट्येन महाकविः **'दीपशिखा'** इत्युपाधिनापि विभूषितोऽस्ति। तस्य उपमाप्रयोगस्य उदाहरणेषु एतानि मुख्यानि सन्ति– **'वागर्थाविव सम्पृक्तौ .... पार्वतीपरमेश्वरौ।'** (रघु0 1/1), **'श्रुतेरिवार्थं स्मृतिरन्वगच्छत्'** (रघु0 2/2), **'जुगोप गोरूपधरामिवोर्वीम्'** (रघु0 2/3), **'दिनक्षपामध्यगतेव सन्ध्या'** (रघु0 2/20), **'श्रद्धेव साक्षाद्विधिनोपपन्ना'** (रघु0 2/16), **'शृङ्गान्तरं द्वारमिवार्थसिद्धेः'** (रघु0 2/21), **'बभूव रामः सहसा सवाष्पस्तुषारवर्षीव सहस्यचन्द्रः'** (रघु0 14/84)।

छन्दोयोजना – कालिदासस्य कृतिषु छन्दःप्रयोगेण ज्ञायते यत् अनुष्टुबुपजातिसदृशलघूनि छन्दांसि प्रियाणि तस्य। सर्गान्ते बृहच्छन्दसां प्रयोगः अस्ति। तस्य अन्येषु प्रयुक्तछन्दःसु वंशस्थः, रथोद्धता, मालिनी, मन्दाक्रान्ता, वसन्ततिलका, हरिणी, पुष्पिताग्रा, द्रुतविलम्बितम्, शार्दूलविक्रीडितम् इत्यादीनि छन्दांसि विशेषेणोल्लेखनीयानि।

कालिदास की काव्यशैली

महाकवि कालिदास की काव्य-प्रतिभा का सर्वोत्कृष्ट निदर्शन **'रघुवंशम्'** है। काव्यसमालोचक संस्कृतसाहित्य का सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य रघुवंशम् को मानते हैं, अतः कालिदास के लिए 'रघुकार' नाम का प्रयोग करते हैं। रघुवंशम् का काव्य-सौष्ठव देखकर साहित्यरसिक घोषणा करते हैं कि कालिदास के रघुवंशम् में कौन आनन्दित नहीं होता **(क इह रघुकारे न रमते)**। रघुवंशम् में कालिदास की शैली अपने उत्कृष्ट रूप में विद्यमान है।

कथावस्तु – यद्यपि रघुवंश का मूल स्रोत वाल्मीकीय रामायण है; फिर भी इसमें कालिदास की नवनवोन्मेषशालिनी प्रतिभा का दर्शन होता है। रामायण की कथा रामचरित पर ही केन्द्रित है; किन्तु रघुवंशम् में 31 रघुवंशी राजाओं का चरित वर्णित है। इस महाकाव्य की कथा इतिहासाश्रित है।

पात्रयोजना – 31 रघुवंशी राजा इस महाकाव्य के नायक हैं। वे राजा त्यागशील, सत्यप्रिय, प्रजावत्सल, वर्णाश्रमधर्मसंरक्षक थे; किन्तु रघुवंश में वर्णित अन्तिम राजा अग्निवर्ण अन्तःपुर की स्त्रियों में आसक्त रहनेवाला एवं स्वकर्तव्यविमुख हैं। रघुवंश में वर्णित राजाओं का अलग-अलग व्यक्तित्व कथाओं के माध्यम से सहृदयों के हृदय को आह्लादित करता है। दिलीप का त्याग, रघु की दानवीरता, अज का पत्नी के प्रति प्रेम, दूसरे राजाओं का प्रताप और राम की उदारता आदि देखने योग्य हैं।

वर्णनकौशल – रघुवंशम् में कालिदास का वर्णन-कौशल अद्वितीय है। दिलीप की गोसेवा, रघु की दिग्विजययात्रा और दानशीलता, इन्दुमती का स्वयंवर, अज का विलाप, सीता और राम की लङ्का से अयोध्या तक पुष्पकविमान द्वारा यात्रा के प्रसङ्ग में भारतीय भौगोलिक स्थलों के विहङ्गम चित्र, निर्वासित सीता का राम के प्रति सन्देश, आदि वर्णन स्वाभाविक और मनोहर हैं, जैसे कि अज की सेना और शत्रुसेना के युद्ध का वर्णन है–

पत्तिः पदातिं रथिनं रथेशस्तुरङ्गसादी तुरगाधिरूढम्।
यन्ता गजस्याभ्यपतद् गजस्थं तुल्यप्रतिद्वन्द्वि बभूव युद्धम्।।

प्रकृतिवर्णन – रघुवंशम् में कालिदास का प्रकृति-चित्रण स्वाभाविक और मनोहारी है। कालिदास की कृतियों में प्रकृति मानव की सहचरी के समान व्यवहार करती है। वन में आये हुए दिलीप के स्वागत में वन के वृक्ष, पक्षियों के कलरव द्वारा 'जय' शब्द का उच्चारण करते हैं। इसी प्रकार वायु द्वारा प्रेरित नई लतायें राजा दिलीप के ऊपर फूलों की वर्षा करती हैं। किसलय के समान लाल रंग की गाय और सूर्य की किरण-दोनों ने अपने सञ्चरण से दिशाओं के अन्तरालों को पवित्र कर सायंकाल अपने-अपने वासस्थान की ओर लौटना आरम्भ कर दिया। सायंकाल होते हुए वनों की शोभा का वर्णन स्वाभाविक और मनोहर है–

स पल्वलोत्तीर्णवराहयूथान्यावासवृक्षोन्मुखबर्हिणानि।
ययौ मृगाध्यासितशाद्वलानि श्यामायमानानि वनानि पश्यन्।।

रसाभिव्यक्ति – कविताकामिनीविलास कविकुलगुरु कालिदास प्रेम और सौन्दर्य के कवि हैं। वे श्रृङ्गार के वियोग और संयोग – दोनों पक्षों के वर्णन में निपुण हैं। 'कुमारसम्भवम्' में शिव-पार्वती के प्रेमवर्णन में श्रृङ्गार की अभिव्यक्ति उत्कृष्ट है। कालिदास करुण रस की अभिव्यञ्जना में भी सिद्धहस्त हैं। परित्यक्ता सीता की शोकाभिव्यक्ति अत्यन्त मर्मस्पर्शी है। उसी प्रकार राजा अज का विलाप-प्रसङ्ग भी भावपूर्ण और मार्मिक है–

स्रगियं यदि जीवितापहा हृदये किं निहिता न हन्ति माम्।
विषमप्यमृतं क्वचिद् भवेदमृतं वा विषमीश्वरेच्छया।।

भाषा – कविकुलगुरु कालिदास वैदर्भीरीति के कवि हैं। उनकी शैली में प्रसाद और माधुर्यादिगुण प्राप्त होते हैं। प्रसाद गुण के अनुरूप उनकी भाषा प्रायः सर्वत्र समासरहित या कहीं अल्पसमासा, अतएव सरल और मधुर है। साभिप्राय शब्दों के प्रयोग के कारण प्रभावपूर्ण है। कालिदास की भाषा का मुख्य

वैशिष्ट्य व्यञ्जनाप्रधानता है। सीता के शोक में मयूरों ने नृत्य, भ्रमरों ने फूलों के रस का आस्वाद और हरिणियों ने कुशचर्वण छोड़ दिया–

नृत्यं मयूरा कुसुमानि भृङ्गा दर्भानुपात्तान् विजहुर्हरिण्यः।
तस्याः प्रपन्ने समदुःखभावमत्यन्तमासीद् रुदितं वनेऽपि।।

अलङ्कार – महाकवि कालिदास का भाषा पर असाधारण अधिकार है। उनकी भाषा में अनुप्रास और यमक आदि अनायास ही आते रहते हैं। अर्थालङ्कारों में उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा और अर्थान्तरन्यास आदि का प्रयोग स्वाभाविक है। उपमा के विन्यास में तो कालिदास अद्वितीय हैं, अतएव संस्कृत-साहित्य-जगत् में 'उपमा कालिदासस्य' उक्ति प्रसिद्ध है। कालिदास की उपमा से रीझकर समालोचकों ने उन्हें **'दीपशिखा'** उपाधि से विभूषित कर दिया। उनकी उपमा के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं– **'वागर्थाविव सम्पृक्तौ .... पार्वतीपरमेश्वरौ'** (रघु0 1/1), **'श्रुतेरिवार्थं स्मृतिरन्वगच्छत्'** (रघु0 2/2), **'जुगोप गोरूपधरामिवोर्वीम्'** (रघु0 2/3), **'दिनक्षपामध्यगतेव सन्ध्या'** (रघु0 2/20), **'श्रद्धेव साक्षद्विधिनोपपन्ना'** (रघु0 2/16), **'शृङ्गान्तरं द्वारमिवार्थसिद्धेः'** (रघु0 2/21), **'बभूव रामः सहसा सवाष्पस्तुषारवर्षीव सहस्यचन्द्रः'** (रघु0 14/84)।

छन्दोयोजना – कालिदास की कृतियों में छन्द प्रयोग देखकर यह ज्ञात होता है कि, उन्हें अनुष्टुप् और उपजाति जैसे छोटे छन्द प्रिय हैं। सर्ग के अन्त में बड़े छन्दों का प्रयोग है। उनके द्वारा प्रयुक्त अन्य छन्दों में वंशस्थ, रथोद्धता, मालिनी, मन्द्राक्रान्ता, वसन्ततिलका, हरिणी, पुष्पिताग्रा, द्रुतविलम्बित और शार्दूलविक्रीडित विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

उपमा कालिदासस्य

कविकुलगुरुः कालिदासः संस्कृतसाहित्यस्य सर्वश्रेष्ठः कविरस्ति। सः काव्यस्य प्रमुखप्रकारेषु ग्रन्थान् विरच्य स्वकाव्यकौशलम् प्राकटयत्। काव्येषु नाट्येषु चोभयत्र तस्य कला समानरूपेण उत्कृष्टा दृश्यते। तथैव काव्याङ्गभूतेषु कथावस्तुविन्यासेषु, पात्रयोजनासु, रसाभिव्यक्तिषु छन्दसां प्रयोगेषु, भाषाप्रयोगेषु अलङ्काराणां विन्यासेषु च सर्वत्र तस्य नवनवोन्मेषशालिन्याः प्रतिभायाः प्रकाशः विद्योतते। उपमायोजनायां तु कालिदासः अद्वितीयः मन्यते, अतः संस्कृतसाहित्याकाशे भणितिरियं प्रकर्षेण गुञ्जायमानास्ति यद्–

उपमा कालिदासस्य भारवेरर्थगौरवम्।
दण्डिनः पदलालित्यं माघे सन्ति त्रयो गुणाः।।

वस्तुतस्तु उपमा न केवलं प्रधानभूतोऽलङ्कारः, अपितु तेषु तेषु उत्प्रेक्षारूपकादिषु चालङ्कारेषु उपमा बीजरूपेण विद्यमाना भवति येषु उपमानोपमेययोः साम्यत्वं परिकल्प्यते। यथा अप्पयदीक्षितेन उक्तम् –

उपमैका शैलूषी सम्प्राप्ता चित्रभूमिकाभेदान्।
रञ्जयति काव्यरङ्गे नृत्यन्ती तद्विदां चेतः।

इत्थं न केवलम् उपमालङ्कारे, अपितु उपमाबीजभूतेषु अन्येषु अलङ्कारेषु चापि उपमाविन्यासे अद्वितीयः महाकविः कालिदासः इति भणितेरर्थः।

उपमा महाकवेः कालिदासस्यातिप्रियोऽलङ्कारः। महाकवेः उपमा सर्वदा सर्वथा च नूतनकल्पनासमन्विता भवति अर्थे चोत्कर्षमावहति। यथा स्वयंवरप्रसङ्गे इन्दुमत्याः उपमा दीपशिखया कृता–

सञ्चारिणी दीपशिखेव रात्रौ यं यं व्यतीयाय पतिंवरा सा।
नरेन्द्रमार्गाट्ट इव प्रपेदे विवर्णभावं स स भूमिपालः।।

अत्र उपमालङ्कारेण न केवलं काव्यशोभा विवर्धते, अपितु यं यं राजानमतिक्रम्य इन्दुमती अग्रे गता तेषां राज्ञां म्लानमुखत्वं हृदयस्य च हताशा सञ्चारिण्या दीपशिखया अभिव्यक्ता भवति। अतएव विपश्चिद्भिः समालोचकैः कालिदासः **'दीपशिखा'** इत्युपाधिना विभूषितः।

कालिदासस्य उपमायां लिङ्गसाम्यस्य, भावसाम्यस्य चारुतायाश्च अद्वितीयसमावेशो भवति। यथा–

पुरस्कृता वर्त्मनि पार्थिवेन प्रत्युद्गता पार्थिवधर्मपत्न्या।
तदन्तरे सा विरराजधेनुः दिनक्षपामध्यगतेव सन्ध्या।।

श्लोकेऽस्मिन् पल्लवरागताम्रा नन्दिनी गौः अरुणसन्ध्या इव, तेजस्वी राजा दिवसः इव, चन्द्रमुखी सुदक्षिणा रजनी इव कथिताः। केचन एतदपि वदन्ति यत् नृपः दिलीपः सूर्यवंशीयः अतएव दिवसेन उपमितः मगधराजकुमारी सुदक्षिणा चन्द्रवंशीया अतः रजन्या तुलिता।

कालिदासस्य शास्त्रीयासु उपमासु तस्य पाण्डित्यं प्रस्फुटीभवति। एतादृशी उपमा अर्थे चारुता चमत्कारं च जनयति। यथा–

तस्याः खुरन्यासपवित्रपांसुमपांसुलानां धुरिकीर्तनीया।
मार्गं मनुष्येश्वरधर्मपत्नी श्रुतेरिवार्थं स्मृतिरन्वगच्छत्।।

एवमेव कालिदासः जगत्पित्रोः पार्वतीपरमेश्वरयोः अभेद्यसम्बन्धं ख्यापयितुं उपमानरूपेण नित्यसम्बद्धौ वागर्थौ गृह्णाति–

वागर्थाविव सम्पृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये।
जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ।।

एतादृगुपमाभिः कालिदासस्य ग्रन्थाः परिपूर्णाः सन्ति। तस्य ग्रन्थेषु पदे-पदे उपमायाः चमत्कृतिः चकास्ति। यथा– **'आसीन्महीक्षितामाद्यः प्रणवः छन्दसामिव', 'प्रांशुलभ्ये फले लोभादुद्बाहुरिव वामनः', 'जुगोप गोरूपधरामिवोर्वीम्', 'छायेव तां भूपतिरन्वगच्छत्', 'श्रद्धेव साक्षाद्विधिनोपपन्ना', 'शृङ्गान्तरं द्वारमिवार्थसिद्धेः', 'अन्तर्मदावस्थ इव द्विपेन्द्रः' 'आचारलाजैरिव पौरकन्याः', 'भोगीव मन्त्रौषधिरुद्धवीर्यः', 'बभूव रामः सहसा सवाष्पस्तुषारवर्षीव सहस्यचन्द्रः'।**

कालिदासस्य नाट्यग्रन्थेष्वपि उपमा सहृदयानां हृदयमावर्जयति। यथा अभिज्ञानशाकुन्तले–

अधरः किसलयरागः कोमलविटपानुकारिणौ बाहू।
कुसुम इव लोभनीयं यौवनमङ्गेषु सन्नद्धम्।।

शकुन्तलायाः सौन्दर्यवर्णने कालिदासस्य उपमाविन्यासकौशलं दृग्गोचरं भवति–

सरसिजमनुविद्धं शैवलेनापि रम्यं
मलिनमपि हिमांशोर्लक्ष्म लक्ष्मीं तनोति।
इयमधिकमनोज्ञा वल्कलेनापि तन्वी
किमिव हि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम्।।

उपमा कालिदासस्य

कविकुलगुरु कालिदास संस्कृत-साहित्य के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं। उन्होंने काव्य के प्रमुख प्रकारों में रचनायें करके अपना काव्यकौशल प्रकट किया है। काव्यों और नाटकों में उनकी कला समान रूप से उत्कृष्ट है। उसी प्रकार काव्याङ्गभूत कथावस्तुविन्यास, पात्रयोजना, रसाभिव्यक्ति, छन्दःप्रयोग, भाषा के प्रयोग और अलङ्कारों के विन्यास में सर्वत्र उनकी नवनवोन्मेषशालिनी प्रतिभा का प्रकाश स्पष्ट है। उपमा की योजना में तो कालिदास अद्वितीय माने जाते हैं। अतः संस्कृत-साहित्याकाश में यह उक्ति गुञ्जायमान है कि–

उपमा कालिदासस्य भारवेरर्थगौरवम्।
दण्डिनः पदलालित्यं माघे सन्ति त्रयो गुणाः।।

वस्तुतः उपमा केवल प्रधान अलङ्कार ही नहीं, अपितु उत्प्रेक्षा, रूपक आदि उन अलङ्कारों में बीजरूप में विद्यमान रहती है, जिनमें उपमान और उपमेय की समानता का भाव कल्पित होता है। जैसा कि अप्पयदीक्षित ने कहा है–

उपमैका शैलूषी सम्प्राप्ता चित्रभूमिकाभेदान्।
रञ्जयति काव्यरङ्गे नृत्यन्ती तद्विदां चेतः।।

इस प्रकार न केवल उपमा अलङ्कार में, अपितु उपमाबीजभूत दूसरे अलङ्कारों में भी उपमा विन्यास में कालिदास अद्वितीय हैं– यह **'उपमा कालिदासस्य'** सूक्ति का अर्थ है।

उपमा महाकवि कालिदास को अत्यन्त प्रिय है। महाकवि की उपमा सर्वदा और सर्वथा नयी कल्पना से युक्त होती है और अर्थ में उत्कर्ष का आधान करती है। यथा– स्वयंवर प्रसङ्ग में इन्दुमती की उपमा 'दीपशिखा' से की गयी है–

सञ्चारिणी दीपशिखेव रात्रौ यं यं व्यतीयाय पतिंवरा सा।
नरेन्द्रमार्गाट्ट इव प्रपेदे विवर्णभावं स स भूमिपालः।।

यहाँ उपमा अलङ्कार न केवल काव्य की शोभा को बढ़ाता है, अपितु जिन राजाओं को छोड़कर इन्दुमती आगे चली गयी, उन राजाओं के मुरझाये मुख और उनके हृदय की हताशा सञ्चारिणी दीपशिखा के द्वारा ठीक ढंग से अभिव्यक्त होती है।

कालिदास की उपमा में लिङ्गसाम्य, भावसाम्य और चारुता का सुन्दर समावेश है। यथा–

पुरस्कृता वर्त्मनि पार्थिवेन प्रत्युद्गता पार्थिवधर्मपत्न्या।
तदन्तरे सा विरराज धेनुर्दिनक्षपामध्यगतेव सन्ध्या।।

इस श्लोक में पल्लवरागताम्रा नन्दिनी गाय अरुण सन्ध्या के समान, तेजस्वी राजा दिन के समान और चन्द्रमुखी रानी सुदक्षिणा रात्रि के समान कही गयी हैं। कुछ लोग यह भी कहते हैं कि राजा दिलीप सूर्यवंशी हैं, अतः दिन से तुलना की गयी और रानी सुदक्षिणा चन्द्रवंशी हैं, अतः उनकी उपमा रात्रि से की गयी।

कालिदास की शास्त्रीय उपमाओं में उनका पाण्डित्य प्रकट हुआ है। ऐसी उपमा अर्थ में सुन्दरता और चमत्कार उत्पन्न करती है। यथा–

तस्याः खुरन्यासपवित्रपांसुमपांसुलानां धुरि कीर्तनीया।
मार्गं मनुष्येश्वरधर्मपत्नी श्रुतेरिवार्थं स्मृतिरन्वगच्छत्।।

इसी प्रकार कालिदास जगत् के माता-पिता पार्वती और परमेश्वर शिव के अटूट सम्बन्ध को बताने के लिए उपमा के रूप में नित्यसम्बन्ध से युक्त शब्द और अर्थ को ग्रहण करते हैं–

वागर्थाविव सम्पृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये।
जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ।।

उपुर्यक्त प्रकार की उपमाओं से कालिदास के ग्रन्थ भरे पड़े हैं। उनके ग्रन्थों में पग-पग पर उपमा काव्य शोभा की विवृद्धि करती हुई सहृदयों के हृदय को आह्लादित करती है। यथा– **'आसीन्महीक्षितामाद्यः प्रणवश्छन्दसामिव'**, **'प्रांशुलभ्ये फले लोभादुद्बाहुरिव वामनः'**, **'जुगोप गोरूपधरामिवोर्वीम्'**, **'छायेव तां भूपतिरन्वगच्छत्'**, **'श्रद्धेव साक्षाद्विधिनोपपन्ना'**, **'शृङ्गान्तरं द्वारमिवार्थसिद्धेः'**, **'अन्तर्मदावस्थ इव द्विपेन्द्रः'**, **'आचारलाजैरिव पौरकन्याः'**, **'भोगीव मन्त्रौषधिरुद्धवीर्यः'**, **'बभूव रामः सहसा सवाष्पतुषारवर्षीव सहस्यचन्द्रः'।**

नाट्यरचनाओं में भी कालिदास की उपमा सहृदयों के हृदय को आह्लादित करती है। यथा अभिज्ञानशाकुन्तल में–

अधरः किसलयरागः कोमलविटपानुकारिणौ बाहू।
कुसुम इव लोभनीयं यौवनमङ्गेषु सन्नद्धम्।।

शकुन्तला के सौन्दर्यवर्णन में कालिदास की उपमा के विन्यास का कौशल दृष्टिगोचर होता है–

सरसिजमनुविद्धं शैवलेनापि रम्यं
मलिनमपि हिमांशोर्लक्ष्म लक्ष्मीं तनोति।
इयमधिकमनोज्ञा वल्कलेनापि तन्वी
किमिव हि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम्।।

रघुवंश-महाकाव्य : संक्षिप्त परिचय

कविकुलगुरु कालिदास की कविता विश्व के समस्त सहृदय-हृदय को आनन्दित करने का सामर्थ्य रखती है। इनके काव्यों को जिस दृष्टि से देखा जाय उसी से काव्यकला की कमनीयता प्रकट होती है। कालिदास संस्कृत-साहित्य के अद्वितीय महाकवि माने जाते हैं। इनकी कविता की मधुरिमा के सामने अन्य कवियों की कवितायें मानव हृदय के सूक्ष्म भावों, संवेदनाओं को प्रकट करने में सम्भवतः उतनी सफल नहीं हैं। प्रत्येक कवि में किसी-न-किसी विषय की विशिष्टता रहती है; परन्तु महाकवि कालिदास में सभी गुणों का सन्निवेश है कहा भी गया है–

उपमा कालिदासस्य भारवेरर्थगौरवम्।
दण्डिनः पदलालित्यं त्रयोऽप्येकैकताऽधिकाः।।

उन्होंने एक से बढ़कर एक उपमाओं का उद्भव किया है। रघुवंश महाकाव्य महाकवि कालिदास की प्रौढ़ प्रतिभा का निदर्शक सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य है। इस महाकाव्य में सौन्दर्य एवं शील का मञ्जुल समन्वय है। ''लघुत्रयी'' जैसी संज्ञाओं से इसे विभूषित किया गया है। प्रस्तुत महाकाव्य में 19 सर्गों में सूर्यवंशी 31 राजाओं का चरित्र वर्णित है। वस्तुतः रघुवंशी राजाओं का चरित्र इतना प्रभावशाली है कि, कालिदास जैसा महाकवि कहने को विवश हो जाता है कि–

क्व सूर्यप्रभवो वंशः क्व चाल्पविषया मतिः।
तितीर्षुर्दुस्तरं मोहादुडुपेनास्मि सागरम्।।

रघुवंश में वर्णाश्रम धर्म का व्यवस्थित वर्णन किया गया है। भारतीय संस्कृति अध्यात्म प्रधान है, जहाँ आश्रम धर्म ही सभी धर्मों का आधार स्तम्भ है। रघुवंशी राजा आश्रमधर्म के अनुरूप ही जीवन-निर्वाह किया करते थे, वे शैशव (ब्रह्मचर्य आश्रम) में वेद आदि विभिन्न शास्त्रों का अध्ययन, युवावस्था (गृहस्थाश्रम) में विषय भोग, वृद्धावस्था (वानप्रस्थ आश्रम) में मुनियों की तरह आचरण तथा अन्तिम अवस्था (संन्यास आश्रम) में योग के माध्यम से शरीर त्याग करने वाले थे।

शैशवेऽभ्यस्तविद्यानां, यौवने विषयैषिणाम्।
वार्धके मुनिवृत्तीनां, योगेनान्ते तनुत्यजाम्।।

(रघुवंशम्–1/8)

इन राजाओं में गुरुभक्ति, अतिथि-सत्कार, प्रजावत्सलता, प्राणियों के प्रति उदारता, त्याग की भावना, विश्वविजय की सामर्थ्य आदि उदात्त गुण स्वभावतः सिद्ध थे। जब ऋषि कौत्स अपने गुरु वरतन्तु को गुरुदक्षिणा देने के लिये 14 करोड़ स्वर्णमुद्राओं की याचना महाराज रघु से करते हैं, उस समय रघु विचलित नहीं होते प्रत्युत धनप्राप्ति के उपाय सोचते हैं। प्रभु की अनुकम्पा से उनके यत्न की रक्षा होती है। रघु जैसे निष्ठावान्, आतिथेय, दानशील नृपति की दिग्विजय भी प्रजा के कल्याणार्थ है, न कि यश-लाभार्थ।

यशस्वी रघु के कारण ही उनका वंश रघुवंश नाम से विख्यात हुआ। रघुवंशम् महाकाव्य वास्तव में कालिदास के कवित्व परिपाक का चरमोत्कर्ष है। रघुवंश में महाकाव्य के सभी लक्षण घटित होते हैं। इसके 19 सर्गों में कवि कालिदास ने इक्ष्वाकुवंशीय महाप्रतापी राजा दिलीप से लेकर अग्निवर्ण तक 31 राजाओं का आदर्शमय वर्णन किया है। भारतीय विद्वानों ने रघुवंश को कालिदास का सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ माना है, इसीलिये कालिदास के लिये ही **'रघुकार'** (रघुवंश का रचयिता) उपाधि का प्रयोग किया गया है। ग्रन्थ की लोकप्रियता तथा व्यापकता का परिचय विभिन्न काल में निर्मित 40 टीकाओं के अस्तित्व से भली-भाँति मिलता है। रघु के जन्म की पूर्वपीठिका से ही इस काव्य का आरम्भ होता है। दिलीप के गोचारण से रघु का जन्म होता है।

रघुवंश में मनु से लेकर सूर्यवंशी 31 राजाओं का जीवनवृत्त वर्णित है। इसमें दिलीप, रघु, अज, दशरथ और राम के जीवन का विशद वर्णन है। सर्गानुसार संक्षिप्त कथा इस प्रकार है–

सर्ग 1– राजा दिलीप की सन्तानहीनता और सन्तान-प्राप्त्यर्थ कुलगुरु वसिष्ठ के आदेशानुसार कामधेनु की पुत्री नन्दिनी की सेवा का व्रत लेना।

सर्ग 2– नन्दिनी की सेवा, राजा की परीक्षा, प्रसन्न नन्दिनी द्वारा सन्तान-प्राप्ति का वरदान।

सर्ग 3– रघु का जन्म, विद्याध्ययन, इन्द्र से युद्ध में विजय-प्राप्ति तथा रघु का राज्याभिषेक।

सर्ग 4– रघु के दिग्विजय का वर्णन।

सर्ग 5– ब्रह्मचारी कौत्स का गुरुदक्षिणार्थ 14 करोड़ रूपये की याचना, तदर्थ रघु का कुबेर पर आक्रमण, धन-वृष्टि, प्रसन्न कौत्स द्वारा रघु को पुत्र-लाभ का आशीर्वाद फलस्वरूप पुत्र अज का जन्म, इन्दुमती-स्वयंवर के लिये अज का प्रस्थान।

सर्ग 6– इन्दुमती स्वयंवर का वर्णन।

सर्ग 7– अज-इन्दुमती परिणय, प्रतिस्पर्धी राजाओं से युद्ध और अज की विजय।

सर्ग 8– अज का राज्याभिषेक, दशरथ-जन्म, इन्दुमती-वियोग और अज का विलाप।

सर्ग 9– दशरथ का मृगया-वर्णन, श्रवण कुमार की हत्या और दशरथ को शाप-प्राप्ति।

सर्ग 10– पुत्रेष्टि यज्ञ, राम आदि चार पुत्रों का जन्म।

सर्ग 11– सीता-स्वयंवर और राम आदि का विवाह।

सर्ग 12– राम-वनवास, सीताहरण, युद्ध, रावणवध।

सर्ग 13– राम का पुष्पक विमान से अयोध्या प्रत्यागमन तथा मार्गस्थ स्थलों का विशद वर्णन।

सर्ग 14– रामराज्याभिषेक, सीतापरित्याग।

सर्ग 15– कुश-लव-जन्म, राम का स्वर्गारोहण।

सर्ग 16– कुश का राज्याभिषेक, कुश का कुमुद्वती से विवाह।

सर्ग 17– कुश का स्वर्गवास, कुश-पुत्र अतिथि का राज्याभिषेक।

सर्ग 18– अतिथि तथा उसके वंशज 21 राजाओं का संक्षिप्त वर्णन।

सर्ग 19– अग्निवर्ण का राज्याभिषेक, उनकी अत्यधिक विषयासक्ति, राजयक्ष्मा से पीड़ित होकर स्वर्गवास, उनकी रानी का राज्याभिषेक, गर्भस्थ बालक के उत्तराधिकारी होने का अमात्यों द्वारा निर्णय।

रघुवंश-महाकाव्य के द्वितीय सर्ग का सारांश

महाराज मनु के वंश में राजा दिलीप हुए। उनके पास कोई सन्तान नहीं थी, अतः वे कुलगुरु वसिष्ठ की शरण में जाते हैं। गुरु वसिष्ठ राजा दिलीप को कामधेनु की पुत्री नन्दिनी नामक गाय की सेवा करने का आदेश देते हैं। राजा दिलीप नन्दिनी की सेवा करने में प्रवृत्त हो जाते हैं।

रात में पर्णशाला के अन्दर विश्राम कर लेने के पश्चात् प्रातःकाल प्रजापालक राजा दिलीप ने गुरु वसिष्ठ की नवप्रसूता उस नन्दिनी गाय को वन में चरने के लिए बन्धन से खोल दिया, जिसकी पूजा रानी सुदक्षिणा ने गन्ध एवं माला से कर दी थी और दूध पी चुकने के पश्चात् जिसका बछड़ा बाँध दिया गया था। कुछ दूर तक उनकी पत्नी सुदक्षिणा तथा सेवक साथ–साथ जाते हैं, परन्तु बाद में राजा उन सभी को वापस भेज देते हैं। राजचिह्न से रहित राजा दिलीप वन में नन्दिनी गाय की सेवा में लग गये। वह वन में उसको स्वादिष्ट घास खिलाकर, उसके शरीर को खुजलाकर तथा जंगली मच्छर एवं मक्खियों को उड़ाकर, जब वह खड़ी होती तो राजा भी खड़े हो जाते तथा जब वह चलती थी तो वे भी उसके पीछे–पीछे चलते थे, जब पानी पीती तो पानी पीते थे। इस प्रकार छाया की तरह राजा दिलीप उस नन्दिनी की सेवा में लगे रहते थे। दिन की समाप्ति पर जब राजा नन्दिनी को लेकर आश्रम आते थे तो महारानी सुदक्षिणा उनकी अगवानी करती थीं।

रात्रि के समय राजा दिलीप उस नन्दिनी के पास दीपक तथा भोजन सामग्री रख देते थे और जब वह सो जाती थी तो राजा भी सो जाते थे। प्रातःकाल उठकर फिर वह नन्दिनी की सेवा में प्रवृत्त हो जाते थे। इस प्रकार राजा को गाय की सेवा करते–करते इक्कीस दिन बीत गये। बाइसवें दिन नन्दिनी ने राजा की परीक्षा लेने के लिए जङ्गल में चरते–चरते हिमालय की एक गुफा में प्रवेश किया और एक शेर ने उस पर आक्रमण कर दिया। उसका करुण क्रन्दन सुनकर अन्दर जाने पर राजा ने देखा कि उसके ऊपर शेर बैठा है और नन्दिनी कातर होकर उनकी ओर देख रही है। यह देखते ही राजा ने शेर को मारने के लिए तरकस से बाण निकालकर उस पर प्रहार करना ही चाहा कि उनका हाथ रुक गया और वे चित्रलिखित से निःस्तब्ध हो गये। बाण चलाने में लज्जित हुए राजा को देखकर शेर मनुष्य की वाणी में कहता है– हे राजन्! मुझे मारने के लिए तेरा प्रयास व्यर्थ है, मैं कुम्भोदर नाम का भगवान् शङ्कर का सेवक हूँ। उनके पैर रखने से मेरी पीठ पवित्र हो गयी है। सामने जो देवदारु का वृक्ष देख रहे हो, इसको माँ पार्वती ने अपने हाथों से सींचा है और जब यहाँ से जाने लगी थी तो शिवजी ने मुझको इसकी रक्षा का कार्य सौंप दिया और कहा कि इस परिधि में जो भी जीव आयेगा वही तुम्हारा भोजन (भक्ष्य) होगा। अतः बहुत दिनों के बाद यह गाय आयी है, यही मेरे व्रत की पारणा है। राजा ने सिंह से कहा आप मेरे शरीर से व्रत की पारणा करें और इसको छोड़ दें। सिंह ने कहा– राजा तुम अत्यन्त मूर्ख मालूम

होते हो, क्योंकि यह सुन्दर शरीर, नयी अवस्था एवं सम्पूर्ण पृथ्वी का एकच्छत्र राज्य इन सबको इस तुच्छ गाय के लिए छोड़ना उचित नहीं है। जो वस्तु शस्त्र से रक्षित हो, परन्तु शस्त्र से उसकी रक्षा न की जा सके तो शस्त्र रखने वाले यशस्वियों का यश क्षीण नहीं होता। अतः आप वापस लौट जायें।

दिलीप ने सिंह से कहा– आप मेरे मित्र हो। अतः आप मेरी प्रार्थना स्वीकार करें और मेरे शरीर से अपने व्रत की पारणा करें। सिंह राजा को खाने के लिए तैयार हो गया। राजा दिलीप का बाण से चिपका हुआ हाथ छूट गया। शस्त्र को रखकर नीचे मुँह करके अपने शरीर को उसके सामने समर्पित कर दिया। उसी समय उनके ऊपर आकाश से पुष्पों की वर्षा होने लगी और राजा के कानों में आवाज आती है कि हे वत्स! उठो। वह उठकर देखते हैं कि सिंह गायब हो गया है तथा सिर्फ गाय खड़ी है। अब गाय राजा से कहती है– माया का आश्रय लेकर मैंने तुम्हारी परीक्षा ली थी। मैं तुम्हारी सेवा से प्रसन्न हूँ, मनचाहा वर माँगो। दिलीप ने वंशकर्त्ता पुत्र सुदक्षिणा के गर्भ से उत्पन्न हो– यह वर माँगा। नन्दिनी ने कहा तुम्हारी मनोकामना पूरी होगी। अनन्तर गाय ने कहा– तुम मेरा दूध पियो। राजा ने कहा–बछड़े के पीने एवं गुरु वसिष्ठ के यज्ञक्रियादि से बचे दूध को गुरुजी की आज्ञा से पीऊँगा। इससे गाय और अधिक प्रसन्न हुई। इसके पश्चात् शाम को वह नन्दिनी के पीछे–पीछे आश्रम को आते हैं और गुरुजी से सम्पूर्ण समाचार निवेदित करते हैं। प्रातःकाल गुरुजी की आज्ञा से गोसेवा व्रत की पारणा करते हैं तथा गुरु, गुरुपत्नी एवं बछड़े सहित गाय की परिक्रमा करके राजा दिलीप अपनी राजधानी को प्रस्थान करते हैं। राजधानी पहुँचने पर पुरवासियों के द्वारा उनका आदर सत्कार होता है और पुनः राज्यभार को धारण करते हैं। गोसेवा के फलस्वरूप रानी सुदक्षिण ने गर्भ धारण किया।

विशेष – 'रघुवंशम्' महाकाव्य के द्वितीय सर्ग में कुल 75 श्लोक हैं। इस सर्ग में प्रायः उपजाति छन्द है तथा अन्तिम 75वाँ श्लोक मालिनी छन्द में है।

महाकविकालिदासप्रणीतम्

रघुवंशम्

(द्वितीयः सर्गः)

अथ प्रजानामधिपः प्रभाते
जायाप्रतिग्राहितगन्धमाल्याम् ।
वनाय पीतप्रतिबद्धवत्सां
यशोधनो धेनुमृषेर्मुमोच ।। 1 ।।

सन्दर्भः – प्रस्तुत श्लोक संस्कृत के सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य 'रघुवंशम्' के द्वितीय सर्ग से उद्धृत है। इसके प्रणेता कविताकामिनीविलास कविकुलगुरु कालिदास हैं।

प्रसङ्ग – प्रस्तुत श्लोक में गुरु वसिष्ठ की आज्ञा से राजा दिलीप द्वारा गोसेवा आरम्भ करने का वर्णन है।

अन्वयः – अथ प्रभाते यशोधनः प्रजानाम् अधिपः जायाप्रतिग्राहितगन्धमाल्याम् पीतप्रतिबद्धवत्सां ऋषेः धेनुं वनाय मुमोच।

अर्थः – इसके बाद प्रातःकाल यश रूपी धनवाले, प्रजा के रक्षक (राजा दिलीप) पत्नी द्वारा स्वीकार करायी गयी गन्ध और पुष्पमालावाली, दूध पी लेने वाले और बाँध दिये गये बछड़े वाली, महर्षि की गाय को, वन के लिए छोड़ा।

हिन्दी व्याख्या – सन्तान-प्राप्ति का उपाय पूछने सूर्यवंशी राजा दिलीप पत्नी सुदक्षिणा के साथ कुलगुरु महर्षि वसिष्ठ के आश्रम गये। महर्षि राजा को अपनी दिव्य गाय नन्दिनी की सेवा करने का आदेश देते हैं। राजा, पत्नी सहित वहीं रुक गये। रात्रि बीतने के पश्चात् दूसरे दिन प्रातःकाल यश को धन समझने वाले प्रजाओं के रक्षक राजा दिलीप गोसेवा में संलग्न हो गये। सर्वप्रथम पत्नी ने चन्दनादि गन्ध और पुष्पमाला से गाय की पूजा की, तत्पश्चात् दूध पी लेने वाले बछड़े को बाँध दिये जाने के बाद राजा, महर्षि वसिष्ठ की गाय कामधेनु की पुत्री नन्दिनी को वन में चराने के लिए चल पड़े।

शब्दार्थ – यशोधनः = यशरूपी धनवाले (यशः एव धनं यस्य सः) – राजा के लिए यश ही धन था, अतएव अनर्ह कार्य गाय चराने में प्रवृत्त हो गये। **प्रजानाम् अधिपः** = प्रजाओं का रक्षक। **जायाप्रतिग्राहितगन्धमाल्याम्** = पत्नी द्वारा स्वीकार करायी गयी गन्ध और मालावाली। **पीतप्रतिबद्धवत्साम्** = दूध पी लेने के बाद बाँध दिये गये बछड़ेवाली। **ऋषेः** = ऋषि की। **धेनुम्** = गाय को। **वनाय** = वन के लिए। **मुमोच** = छोड़ा।

विशेषः – जाया–पुत्रजनन की योग्यता के कारण ही पत्नी को जाया कहते हैं।

सन्दर्भः – श्लोकोऽयं रघुवंशमहाकाव्यस्य द्वितीयसर्गात् समुद्धृतो वर्तते। अस्य प्रणेता कविताकामिनीविलासः कविकुलगुरुः कालिदासोऽस्ति।

संस्कृतव्याख्या – श्लोकेऽस्मिन् कविकुलगुरुः कालिदासः दिलीपस्य गोसेवां वर्णयन् आह – अथ = रात्रिसमाप्तेः अनन्तरम्, प्रभाते = प्रातःकाले, यशोधनः = कीर्तिवित्तः, प्रजानाम् अधिपः = जनानां रक्षकः राजा दिलीपः इत्यर्थः, जायाप्रतिग्राहितगन्धमाल्याम् = भार्यास्वीकारितचन्दनादिगन्धपुष्पमालाम्, पीतप्रतिबद्धवत्साम् = पीतनिबद्धशावकाम्, ऋषेः = महर्षेः वसिष्ठस्य इत्यर्थः, धेनुम् = गाम् कामधेनुपुत्रीं नन्दिनीमित्यर्थः, वनाय = वनं गन्तुम्, मुमोच = मुक्तवान्। श्लोकेऽस्मिन् उपजातिः छन्दः। लक्षणं यथा– अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजौ पादौ यदीयावुपजातयस्ताः।

तस्याः खुरन्यासपवित्रपांसु–
मपांसुलानां धुरि कीर्तनीया।
मार्गं मनुष्येश्वरधर्मपत्नी
श्रुतेरिवार्थं स्मृतिरन्वगच्छत्।।2।।

प्रसङ्गः – सुदक्षिणा ने नन्दिनी के मार्ग का अनुसरण किया।

अन्वयः – अपांसुलानां धुरि कीर्तनीया मनुष्येश्वरधर्मपत्नी तस्याः खुरन्यासपवित्रपांसुं मार्गं श्रुतेः अर्थम् स्मृतिः इव अन्वगच्छत्।

अर्थः – पतिव्रताओं में अग्रगण्य, राजा की धर्मपत्नी (सुदक्षिणा) ने, उस नन्दिनी के खुर रखने से पवित्र धूलिवाले मार्ग का वैसे ही अनुसरण किया, जैसे स्मृति वेद के अर्थ का अनुसरण करती है।

हिन्दी व्याख्या – राजा दिलीप की धर्मपत्नी सुदक्षिणा पति के गोसेवा-कार्य में सहायिका हुई। वह पतिव्रताओं में सर्वप्रथम गिने जाने योग्य थी। ऐसी सुदक्षिणा ने गाय के पैर रखने से पवित्र हो गयी धूलिवाले मार्ग का वैसे ही अनुसरण किया, जैसे स्मृतियाँ वेदों के अर्थ का अनुसरण करती हैं। श्रेष्ठ जन पवित्र मार्ग का ही अनुसरण करते हैं।

शब्दार्थः – अपांसुलानाम् = पतिव्रताओं में (पांसवो दोषा आसां सन्ति इति पांसुलाः व्यभिचारिण्यः, न पांसुलाः इति अपांसुलाः पतिव्रताः, तासाम्)। **धुरि** = आगे। **कीर्तनीया** = गिनी जाने योग्य। **मनुष्येश्वरधर्मपत्नी** = मनुष्यों के स्वामी अर्थात् राजा की धर्मपत्नी। **तस्या** = उस (नन्दिनी) का। **खुरन्यासपवित्रपांसुम्** = खुर रखने से पवित्र धूलिवाले। **मार्गम्** = मार्ग को (का)। **स्मृतिः** = मनु, याज्ञवल्क्य इत्यादि के ग्रन्थ, धर्मशास्त्र (वेदों के अर्थ का स्मरण करने के कारण इन ग्रन्थों को 'स्मृति' कहते हैं)। **श्रुतेः** = वेद के (गुरु-शिष्यों द्वारा श्रवण-परम्परा से संरक्षित होने कारण वेदों को **'श्रुति'** कहते हैं)। **अर्थम्** = अर्थ (का)। **इव** = के समान। **अन्वगच्छत्** = अनुसरण किया, पीछे चली।

अलङ्कारः – 1. सुदक्षिणा की स्मृति से और मार्ग की श्रुति से समानता प्रदर्शित करने के कारण यहाँ उपमा अलङ्कार है।

2. अपांसुलाओं में अग्रगण्य होने पर भी सुदक्षिणा पांसुल मार्ग पर चलीं – इस प्रकार विरोधाभास अलङ्कार भी है।

छन्द – इस श्लोक में उपजाति छन्द है।

सन्दर्भः – संस्कृत सन्दर्भ पहले श्लोक की भाँति ही सभी श्लोकों में लिखा जायेगा।

संस्कृतव्याख्या – सुदक्षिणा नन्दिन्याः मार्गम् अनुसृतवती – अपांसुलानाम् = पतिव्रतानाम्, धुरि = अग्रे, कीर्तनीया = गणनीया, मनुष्येश्वरधर्मपत्नी = राजमहिषी सुदक्षिणा इत्यर्थः, तस्याः = नन्दिन्याः, खुरन्यासपवित्रपांसुम् = पादनिक्षेपपवित्ररेणुम्, मार्गम् = पन्थानम्, स्मृतिः = धर्मशास्त्रम्, श्रुतेः = वेदस्य, अर्थम् = अभिधेयम्, इव = यथा, अन्वगच्छत् = अन्वसरत्, 'श्रुतेरिवार्थं स्मृतिरन्वगच्छत्' इत्यत्र उपमालङ्कारः। 'अपांसुलानां धुरि कीर्तनीयापि पांसुलमार्गम् अन्वगच्छत्' इत्यत्र विरोधालङ्कारो ध्वन्यते। उपजातिछन्दः।

निवर्त्य राजा दयितां दयालुस्–
तां सौरभेयीं सुरभिर्यशोभिः।
पयोधरीभूतचतुःसमुद्रां
जुगोप गोरूपधरामिवोर्वीम्।।3।।

प्रसङ्गः – राजा दिलीप ने पत्नी सुदक्षिणा को लौटाकर गाय की रक्षा की।

अन्वयः – दयालुः यशोभिः सुरभिः राजा दयितां निवर्त्य पयोधरीभूतचतुःसमुद्रां सौरभेयीं गोरूपधराम् ताम् उर्वीम् इव जुगोप।

अर्थः – दयालु, यश से सुशोभित राजा (दिलीप) ने पत्नी (सुदक्षिणा) को लौटाकर (अपने) दूध से चारों समुद्रों को तिरस्कृत कर देने वाली, उस सुरभिपुत्री (नन्दिनी) की स्तनीभूत चार समुद्रों वाली गोरूपधारिणी पृथ्वी के समान रक्षा की।

हिन्दी व्याख्या – राजा दिलीप दयालु और यश से सुशोभित थे। अतः उन्होंने गाय का अनुसरण करने वाली दयिता अर्थात् प्रिय पत्नी सुदक्षिणा को वापस आश्रम भेज दिया और अपने दूध से चारों समुद्रों को तिरस्कृत कर देनेवाली सुरभिपुत्री नन्दिनी की रक्षा, चार समुद्र चार स्तन हो गये हों ऐसी गोरूपधारिणी पृथ्वी के समान की। राजा दयालु थे, यशस्वी थे, अतः उसने दया प्रदर्शित करते हुए पत्नी को वापस लौटा दिया अतः वह दिव्य गाय कामधेनुपुत्री नन्दिनी की रक्षा करने लगे, जैसे राजा पृथ्वी की रक्षा करता है। गाय अपने दूध से चारों समुद्रों को तिरस्कृत कर देनेवाली थी और चार समुद्ररूपी स्तनों से गोरूपधारिणी थी।

अलङ्कारः – नन्दिनी की तुलना गोरूपधारिणी पृथ्वी से करने के कारण उपमा अलङ्कार है।

शब्दार्थ – दयालुः = कारुणिक। **यशोभिः** = यशों से। **सुरभिः** = सुन्दर। **ताम्** = उस। **दयिताम्** = प्रिया (सुदक्षिणा) को। **निवर्त्य** = लौटाकर। **पयोधरीभूतचतुःसमुद्राम्** = दूध से चार समुद्रों को तिरस्कृत कर देनेवाली (गोपक्ष में – पयसा अधरीभूताः चत्वारः समुद्राः यस्याः ताम्), चार समुद्र चार स्तन हो गये हों, जिसके (पृथ्वी पक्ष में–पयोधरीभूताः चत्वारः समुद्राः यस्याः ताम्)। **गोरूपधराम्** = गाय रूप धारण करने वाली। **उर्वीम् इव** = पृथ्वी के समान। **जुगोप** = रक्षा की।

संस्कृतव्याख्या – राजा दिलीपः सुदक्षिणां निवर्त्य नन्दिनीम् अरक्षत्। दयालुः = कारुणिकः, यशोभिः = कीर्तिभिः, सुरभिः = मनोज्ञः, राजा = नृपः दिलीपः इत्यर्थः, ताम् = नन्दिनीम् अनुसरन्तीम्, दयिताम् = पत्नीं सुदक्षिणाम् इत्यर्थः, निवर्त्य = परावर्त्य, पयोधरीभूतचतुःसमुद्राम् = दुग्ध-तिरस्कृतसागराम्, सौरभेयीम् = सुरभिपुत्रीं नन्दिनीम् इत्यर्थः, पयोधरीभूतचतुःसमुद्राम् = स्तनीभूतचतुःसागराम्, गोरूपधराम् = धेनुरूपधारिणीम्, उर्वीम् = पृथ्वीम्, इव = यथा, जुगोप = ररक्ष। राज्ञा स्वशीलकीर्त्यनुसारम् आचरितम् इति भावः। 'पयोधरीभूतचतुःसमुद्राम्' इत्यत्र सभङ्गपदश्लेषः। उपजातिवृत्तम्।

व्रताय तेनानुचरेण धेनो–
र्न्यषेधि शेषोऽप्यनुयायिवर्गः।
न चान्यतस्तस्य शरीररक्षा
स्ववीर्यगुप्ता हि मनोः प्रसूतिः।।4।।

प्रसङ्गः – राजा दिलीप ने सेवकों को भी लौटा दिया।

अन्वय – व्रताय धेनोः अनुचरेण तेन शेषः अनुयायिवर्गः अपि न्यषेधि। न च तस्य शरीररक्षा अन्यतः। हि मनोः प्रसूतिः स्ववीर्यगुप्ता (भवति)।

अर्थः – व्रत के लिए गाय के सेवक उस (राजा) के द्वारा सुदक्षिणा से बचे हुए सेवक वर्ग को भी रोक दिया गया। उसके शरीर की रक्षा के लिए दूसरों की आवश्यकता नहीं थी, क्योंकि मनु की सन्तान अपने पराक्रम से ही रक्षित होती हैं।

हिन्दी व्याख्या – सन्तान-प्राप्ति के लिए राजा दिलीप गोसेवा का व्रत कर रहे थे, आजीविका के लिए गोपालन नहीं कर रहे थे, अतः वह गाय के सेवक थे। स्वयं नन्दिनी के प्रति सेवा धर्म को निभाने के लिए राजा ने सुदक्षिणा के आश्रम लौट जाने से बचे हुए सेवकों को भी आगे जाने से रोक दिया अर्थात् उन्हें भी वापस भेज दिया। नृप को अपनी रक्षा के लिए रक्षकों की आवश्यकता नहीं थी, वह अपनी रक्षा करने में स्वयं समर्थ थे, क्योंकि मनु की सन्तान स्वयं पराक्रम से अपनी रक्षा कर लेती है।

शब्दार्थः – व्रताय = व्रत के लिए। **धेनोः** = गाय के। **अनुचरेण** = सेवक के द्वारा (अनु पश्चात् चरति इति अनुचरः तेन)। **तेन** = उसके द्वारा। **शेषः** = बचा हुआ। **अनुयायिवर्गः** = सेवकों का समूह (अनु पश्चाद् यान्ति इति अनुयायिनः तेषां वर्गः)। **अपि** = भी। **न्यषेधि** = रोक दिया गया। **तस्य** = उसकी (नृप की)। **अन्यतः** = दूसरों से। **हि** = क्योंकि। **मनोः** = मनु की। **प्रसूतिः** = सन्तान। **स्ववीर्यगुप्ता** = अपने पराक्रम से रक्षित।

अलङ्कारः – दिलीप को शरीररक्षा के लिए दूसरों की आवश्यकता नहीं थी। इस विशेष कथन का मनु की सन्तान अपने पराक्रम से रक्षित होती है। इस विशेष कथन से समर्थन होने के कारण अर्थान्तरन्यास अलङ्कार है।

छन्दः — उपजाति छन्द है।

संस्कृतव्याख्या – राजा दिलीपः शेषम् अनुचरवर्गम् अपि न्यवारयत्। व्रताय = गोसेवानियमाय, धेनोः = गोः नन्दिन्याः इत्यर्थः, अनुचरेण = सेवकेन, तेन = दिलीपेन इत्यर्थः, शेषः = सुदक्षिणायाः, अवशिष्टः, अपि = समुच्चये, अनुयायिवर्गः = अनुचरसमूहः, न्यषेधि = वारितः, तस्य = राज्ञः दिलीपस्य इत्यर्थः, शरीररक्षा = कायरक्षणम्, अन्यतः = इतरेभ्यः रक्षकेभ्यः न = नो, हि = यतः, मनोः प्रसूतिः = मनुसन्ततिः, स्ववीर्यगुप्ता = स्वपराक्रमरक्षिता भवति, 'तस्य शरीरक्षा' इत्यादिविशेषवाक्यस्य 'स्ववीर्यगुप्ता' इति सामान्यकथनेन समर्थनाद् अर्थान्तरन्यासालङ्कारः। उपजाति छन्दः।

आस्वादवद्भिः कवलैस्तृणानां
कण्डूयनैर्दंशनिवारणैश्च।
अव्याहतैः स्वैरगतैश्च तस्याः
सम्राट् समाराधनतत्परोऽभूत्।।5।।

प्रसङ्गः – सम्राट् दिलीप गाय की सेवा में तत्पर हुए।

अन्वयः – सम्राट् आस्वादवद्भिः तृणानां कवलैः कण्डूयनैः दंशनिवारणैः अव्याहतैः स्वैरगतैः च तस्याः समाराधनतत्परः अभूत्।

अर्थः – चक्रवर्ती (राजा दिलीप) स्वादयुक्त घासों के ग्रासों (कौर) से, खुजलाने से, वनमक्खियों को दूर करने से और स्वच्छन्द विचरण के द्वारा उस (नन्दिनी गाय) की सेवा में प्रयत्नशील हुए।

हिन्दी व्याख्या – यद्यपि राजा दिलीप सम्राट् अर्थात् चक्रवर्ती राजा थे, वह अधीनस्थ राजाओं के स्वामी थे; तथापि उन्होंने नन्दिनी गाय की सेवा में कोई कमी नहीं की। राजा गाय को स्वयं स्वादयुक्त घासों के कौर खिलाते थे। गाय के शरीर में खुजली होने पर अपने हाथों से खुजलाते थे और वनमक्खियों को दूर करते थे। गाय को बिना रुकावट के अर्थात् उसकी इच्छानुसार जंगल में घूमने देते थे– इस प्रकार राजा उस गाय की सेवा में पूर्ण मनोयोग से संलग्न हुए।

अलङ्कारः – 'तृणानां कवलैः, कण्डूयनैः' इत्यादि अनेक बातों का एकत्र सङ्ग्रह होने से समुच्चय अलङ्कार है।

छन्दः – उपजाति छन्द है।

शब्दार्थः – **सम्राट्** = चक्रवर्ती राजा। **आस्वादवद्भिः** = स्वादयुक्त। **तृणानाम्** = घासों के। **कवलैः** = ग्रासों (कौर) से। **कण्डूयनैः** = खुजलाने से। **दंशनिवारणैः** = वनमक्खियों को दूर करने से। **अव्याहतैः** = बिना बाधा या रोक के। **स्वैरगतैः** = स्वच्छन्दगमन से। **च** = और। **तस्याः** = उसके। **समाराधनतत्परः** = सेवा में तत्पर। **अभूत्** = हुए।

विशेषः – सम्राट् उसे कहते हैं जो राजाओं के मण्डल (समूह) का स्वामी हो, जिसने राजसूय यज्ञ किया हो और जो अधीनस्थ राजाओं के ऊपर शासन करता है–

येनेष्टं राजसूयेन मण्डलस्येश्वरश्च यः।
शास्ति यश्चाज्ञया राज्ञः स सम्राडथ राजकम्।।

संस्कृतव्याख्या – सम्राट् दिलीपः नन्दिनीसेवापरायणः अभवत्। सम्राट् = मण्डलेश्वरः दिलीपः, आस्वादवद्भिः = स्वादुभिः, तृणानाम् = घासानाम्, कवलैः = ग्रासैः, कण्डूयनैः = खर्जनैः, दंशनिवारणैः = वनमक्षिकाणां दूरीकरणैः, अव्याहतैः = निर्बाधैः, स्वैरगतैः स्वच्छन्दगमनैः, च = समुच्चये, तस्याः = नन्दिन्याः, समाराधनतत्परः = सेवापरायणः, अभूत् = जातः, श्लोकेऽस्मिन् अनेकवस्तुवर्णनात् समुच्चयालङ्कारः। उपजाति छन्दः।

स्थितः स्थितामुच्चलितः प्रयातां
निषेदुषीमासनबन्धधीरः।
जलाभिलाषी जलमाददानां
छायेव तां भूपतिरन्वगच्छत्।।6।।

प्रसङ्गः – राजा दिलीप ने गाय की सेवा करते हुए उसका परछाईं की तरह अनुसरण किया।

अन्वयः – भूपतिः तां स्थितां स्थितः प्रयाताम् उच्चलितः निषेदुषीम् आसनबन्धधीरः जलम् आददानाम् जलाभिलाषी (ताम्) छाया इव अन्वगच्छत्।

अर्थः – राजा (दिलीप) गाय ने के ठहरने पर ठहर कर, चलने पर चलकर, बैठने पर धैर्यपूर्वक बैठकर, जल पीने पर जल का इच्छुक होकर, उस (नन्दिनी) का परछाईं की भाँति अनुसरण किया।

हिन्दी व्याख्या – महाकवि कालिदास राजा दिलीप की गोसेवा की तत्परता का वर्णन करते हुए कहते हैं कि राजा ने उस नन्दिनी गाय की परछाईं की तरह अनुसरण किया। जैसे किसी की परछाईं उठने पर उठती है, बैठने पर बैठती है, वैसे ही जब जंगल में चरते हुए गाय कहीं ठहर जाती थी तो राजा भी ठहर जाते थे। जब गाय चल देती थी तो राजा भी चल देते थे और जब गाय बैठ जाती थी तो राजा भी बैठ जाते थे। जब गाय जल पीती थी, तब राजा भी जल पीने की इच्छा करते थे – इस प्रकार परछाईं की तरह नन्दिनी गाय का अनुसरण कर राजा दिलीप ने सेवाधर्म के कठोर व्रत का पालन किया।

शब्दार्थः – **भूपतिः** = पृथ्वीपति, राजा। **स्थिताम्** = ठहरी हुई। **स्थितः** = ठहरा हुआ। **प्रयाताम्** = चल देने पर। **उच्चलितः** = चला हुआ। **निषेदुषीम्** = बैठी हुई। **आसनबन्धधीरः** = बैठने में धैर्यवान्। **जलम् आददानाम्** = (गाय द्वारा) जल ग्रहण करने पर। **जलाभिलाषी** = जल का इच्छुक। **ताम्** = उस (नन्दिनी) का। **छाया** = परछाईं। **इव** = के समान। **अन्वगच्छत्** = अनुसरण किया।

अलङ्कार – 'छाया इव' में उपमा अलङ्कार है।

संस्कृतव्याख्या – गोसेवातत्परः राजा दिलीपः छाया इव नन्दिनीम् अन्वसरत्। भूपतिः = पृथ्वीपतिः दिलीपः इत्यर्थः, स्थिताम् = तिष्ठन्तीम्, स्थितः = तिष्ठन्, प्रयाताम् = प्रस्थिताम्, उच्चलितः = प्रस्थितः सन्, निषेदुषीम् = उपविष्टाम्, आसनबन्धधीरः = धैर्येण उपविष्टः, जलम् = नीरम्, आददानाम् = पिबन्तीम्, जलाभिलाषी = जलेच्छुकः सन्, ताम् = नन्दिनीम् इत्यर्थः, छाया = प्रतिबिम्बम्, इव = यथा, अन्वगच्छत् = अन्वसरत्। सेवायाः कठोरव्रतस्य पालनं सुष्ठु कृतवान्। 'छायेव' इत्यत्र उपमा। उपजातिवृत्तम्।

स न्यस्तचिह्नामपि राजलक्ष्मीं
तेजोविशेषानुमितां दधानः।
आसीदनाविष्कृतदानराजि–
रन्तर्मदावस्थ इव द्विपेन्द्रः।।7।।

प्रसङ्गः – राजा दिलीप गजराज के समान सुशोभित हुए।

अन्वयः – न्यस्तचिह्नाम् अपि तेजोविशेषानुमिताम् राजलक्ष्मीम् दधानः सः अनाविष्कृतदानराजिः अन्तर्मदावस्थः द्विपेन्द्रः इव आसीत्।

अर्थः – राजचिह्नों को त्याग देने पर भी, प्रभाव विशेष से अनुमित, राजलक्ष्मी को धारण किये हुए, वह (राजा दिलीप) अप्रकट मदरेखा वाले अन्दर से मतवाले गजराज के समान मालूम पड़ते थे।

हिन्दी व्याख्या – गोचारण करते समय राजा दिलीप ने यद्यपि छत्र, चामर आदि राजचिह्नों को उतार दिया था; तथापि राजा के मुखमण्डल पर जो तेजों की अधिकता थी, उससे सहज ही अनुमान हो जा रहा था कि यह कोई राजा है। इस प्रकार छत्र-चामर आदि राजचिह्नों से रहित होने पर भी दिलीप

राजा की तरह सुशोभित हो रहे थे। उस समय उनकी शोभा ऐसे गजराज के समान थी, जिसकी मदरेखा (मतवाला होने की सूचक हाथी के मस्तक से गिरनेवाले जल की रेखा) बाहर प्रकट न हुई हो; किन्तु मद उसके भीतर विद्यमान हो। दिलीप राजा की तरह शोभायमान हो रहे थे, भले ही वह बाहर अपने शरीर पर छत्र-चामर आदि राजचिह्न धारण नहीं किये थे।

शब्दार्थः – न्यस्तचिह्नाम् = त्याग दिये गये राजचिह्नों वाली (न्यस्तानि छत्रचामरादीनि चिह्नानि यस्याः ताम्)। **अपि** = भी। **तेजोविशेषानुमिताम्** = प्रभाव विशेष से अनुमित। **राजलक्ष्मीम्** = राज्य रूप सम्पत्ति को। **दधानः** = धारण करता हुआ। **सः** = वह (राजा दिलीप)। **अनाविष्कृतदानराजिः** = बाहर अप्रकट मदरेखा वाले। **अन्तर्मदावस्थः** = भीतर स्थित मदवाले (अन्तर्गता मदावस्था यस्य सः)। **द्विपेन्द्रः** = गजराज (द्वाभ्याम् पिबन्ति इति द्विपाः तेषाम् इन्द्रः राजा)। **इव** = के समान। **आसीत्** = था।

अलङ्कार – 'द्विपेन्द्र के समान' यहाँ उपमा अलङ्कार है।

छन्दः – उपजाति छन्द है।

संस्कृतव्याख्या – गोसेवापरायणः राजा दिलीपः गजराजः इव आसीत्– न्यस्तचिह्नाम् = त्यक्तछत्रचामरादिलक्षणाम्, अपि = समुच्चये, तेजोविशेषानुमिताम् = प्रभावातिशयेन 'राजैवाऽयम्' इत्यूहिताम्, राजलक्ष्मीम् = राज्यश्रियम्, दधानः = धारयन्, सः = दिलीपः इत्यर्थः, अनाविष्कृतदानराजिः = अप्रकटितमदरेखः, द्विपेन्द्रः = गजराजः, इव = यथा, आसीत् = अभवत्। श्लोकेऽस्मिन् 'द्विपेन्द्रः इव' इत्यत्र उपमालङ्कारः। उपजातिछन्दः।

लताप्रतानोद्ग्रथितैः स केशै–
रधिज्यधन्वा विचचार दावम्।
रक्षापदेशान्मुनिहोमधेनो–
र्वन्यान् विनेष्यन्निव दुष्टसत्त्वान्।।8।।

प्रसङ्गः – राजा दिलीप वन में विचरण कर रहे थे।

अन्वयः – लताप्रतानोद्ग्रथितैः केशैः अधिज्यधन्वा सः मुनिहोमधेनोः रक्षापदेशात् वन्यान् दुष्टसत्त्वान् विनेष्यन् इव दावं विचचार।

अर्थः – लताओं के कुटिल तन्तुओं से गूँथे हुए केशों से युक्त, चढ़ी हुई प्रत्यञ्चा वाले धनुष को धारण किये हुए, वह (दिलीप) मुनि (वसिष्ठ) की होमधेनु की रक्षा के बहाने मानो जङ्गली दुष्ट जीवों को शिक्षा देते हए घूम रहे थे।

हिन्दी व्याख्या – गोचारण के समय राजा दिलीप नन्दिनी के पीछे-पीछे वन में घूम रहे थे। वह नन्दिनी, मुनि वसिष्ठ के हवन कार्य की साधनभूत थी, उसकी रक्षा में सावधानी अपेक्षित थी, अतः राजा धनुष पर डोरी चढ़ाकर गाय की रक्षा करते हुए घूम रहे थे। जङ्गल की लताओं के टेढ़े-मेढ़े तन्तुओं से उनके केश गुँथ गये थे, अतएव राजा भयानक लग रहे थे। राजा से जङ्गली हिंसक जीव भयभीत होकर अनावश्यक हिंसा त्यागकर विनम्र बन गये थे, अतः ऐसा प्रतीत हो रहा था कि राजा दिलीप मुनि वसिष्ठ की होमधेनु की रक्षा के बहाने मानों जङ्गली हिंसक जीवों को शिक्षा देते हुए घूम रहे थे।

अलङ्कारः – 'मानों शिक्षा देते हुए' यहाँ उत्प्रेक्षा अलङ्कार है।

छन्दः – 'उपजाति' छन्द है।

शब्दार्थः – **लताप्रतानोद्ग्रथितैः** = लताओं के कुटिल तन्तुओ से गूँथे हुए (लतानां वल्लीनां प्रतानाः तैः उद्ग्रथितैः)। **केशैः** = बालों से। **अधिज्यधन्वा** = धनुष पर डोरी चढ़ाये हुए (अधिगता ज्या यस्य तत् अधिज्यम्, अधिज्यं धनुः यस्य स अधिज्यधन्वा)। **मुनिहोमधेनोः** = मुनि के हवन की साधनभूत गाय के। **रक्षापदेशात्** = रक्षा के बहाने से। **वन्यान्** = जङ्गल में उत्पन्न। **दुष्टसत्त्वान्** = हिंसक जीवों को। **विनेष्यन्** = शिक्षा देते हुए। **इव** = मानो। **दावम्** = जंगल में। **विचचार** = घूम रहे थे।

संस्कृतव्याख्या – राजा दिलीपः वनं विचचार– लताप्रतानोद्ग्रथितैः = वल्लीकुटिलतन्तुगुम्फितैः, केशैः = कचैः, अधिज्यधन्वा = आरोपितमौर्वीकः, सः = असौ राजा दिलीपः, मुनिहोमधेनोः = महर्षिवसिष्ठहवन–साधनभूतगोः नन्दिन्याः इत्यर्थः, रक्षापदेशात् = रक्षणव्याजात्, वन्यान् = कानन-समुत्पन्नान्, दुष्टसत्त्वान् = हिंस्रजन्तून्, विनेष्यन् = शिक्षयिष्यन्, इव = उत्प्रेक्षायाम्, दावम् = वनम्, विचचार = व्यचरत्। श्लोकेऽस्मिन् 'विनेष्यन्निव' इत्यत्र उत्प्रेक्षालङ्कारः। उपजातिछन्दः।

विसृष्टपार्श्वानुचरस्य तस्य
पार्श्वद्रुमाः पाशभृता समस्य।
उदीरयामासुरिवोन्मदाना–
मालोकशब्दं वयसां विरावैः।।9।।

प्रसङ्गः – वन में वृक्षों ने राजा दिलीप का स्वागत किया।

अन्वयः – विसृष्टपार्श्वानुचरस्य पाशभृता समस्य तस्य पार्श्वद्रुमाः उन्मदानां वयसां विरावैः आलोकशब्दम् उदीरयामासुः इव।

अर्थः – पार्श्ववर्ती सेवकों को विदा कर देनेवाले, (तथापि) वरुणदेव के समान उस (राजा दिलीप) के समीपवर्ती वृक्षों ने उन्मत्त पक्षियों के कलरव से मानों 'जय' शब्द का उच्चारण किया।

हिन्दी व्याख्या – जब राजा कहीं जाता है, तब वहाँ उपस्थित लोग 'महाराज की जय हो' ऐसा कहकर राजा का स्वागत करते हैं। यहाँ जङ्गल में गाय चराने गये राजा दिलीप का स्वागत समीपवर्ती वृक्षों ने किया। पार्श्ववर्ती सेवकों को लौटा देने के कारण, यद्यपि राजा दिलीप वन में नन्दिनी को चराते हुए अकेले घूम रहे थे; तथापि एकाकी राजा दिलीप की शोभा बिना गणों के रहनेवाले, स्वयं पापियों को दण्ड देने के लिए पाश (रस्सी का फंदा) धारण करने वाले वरुण देव के समान हो रही थी। ऐसे वरुण देव के समान प्रभावशाली राजा को देखकर समीपवर्ती वृक्षों पर बैठे हुए मत्त पक्षियों ने कलरव करना आरम्भ कर दिया। कविकुलगुरु की उत्प्रेक्षा है कि मानों समीपवर्ती वृक्षों ने उन्मत्त पक्षियों के कलरव के द्वारा 'जय' शब्द का उच्चारण करते हुए राजा दिलीप का स्वागत किया।

अलङ्कारः – 'वरुणदेव के समान' में उपमा और 'मानों जय शब्द का उच्चारण किया' में उत्प्रेक्षा अलङ्कार है।

शब्दार्थः – विसृष्टपार्श्वानुचरस्य = समीपवर्ती सेवकों को विदा कर देने वाले। **पाशभृता** = वरुण देव (पाशं बिभर्ति इति पाशभृत् तेन)। **समस्य** = के समान। **तस्य** = उसके (राजा दिलीप)। **पार्श्वद्रुमाः** = समीपवर्ती वृक्षों ने। **उन्मदानाम्** = अत्यधिक मदवाले। **वयसाम्** = पक्षियों के। **विरावैः** = शब्दों से, कलरव से। **आलोकशब्दम्** = 'जय' शब्द का। **उदीरयामासुः इव** = मानों उच्चारण किया।

संस्कृतव्याख्या – पार्श्ववर्तिद्रुमाः वनमागतस्य राज्ञः दिलीपस्य स्वागतं व्याहरन्– विसृष्टपार्श्वानुचरस्य = त्यक्तसमीपवर्तिसेवकस्य; पाशभृता = वरुणदेवेन, समस्य = तुल्यस्य, तस्य = राज्ञः दिलीपस्य इत्यर्थः, पार्श्वद्रुमाः = समीपवर्तिवृक्षाः, उन्मदानाम् = अत्यधिकमत्तानाम्, वयसाम् = पक्षिणाम्, विरावैः = शब्दैः, आलोकशब्दम्= जयशब्दम्, उदीरयामासुः = उच्चारयामासुः, इव = उत्प्रेक्षायाम्। श्लोकेऽस्मिन् 'पाशभृता समस्य' इत्यत्र उपमा, 'उदीरयामासुः इव इत्यत्र च उत्प्रेक्षा अलङ्कारौ। उपजातिवृत्तम्।

मरुत्प्रयुक्ताश्च मरुत्सखाभं
तमर्च्यमारादभिवर्तमानम्।
अवाकिरन् बाललताः प्रसूनै–
राचारलाजैरिव पौरकन्याः।।10।।

प्रसङ्गः – लताओं ने राजा के ऊपर फूलों की वर्षा की।

अन्वयः – मरुत्प्रयुक्ताः बाललताः मरुत्सखाभम् अर्च्यम् आरात् अभिवर्तमानम् तम् पौरकन्याः आचारलाजैः इव प्रसूनैः अवाकिरन्।

अर्थः – वायु से प्रेरित नई लताओं ने अग्नि के समान तेजस्वी, पूज्य, समीप में विद्यमान उस (राजा दिलीप) के ऊपर नगरवासिनी कन्याओं द्वारा माङ्गलिक धान के लावों के समान फूलों की वर्षा की।

हिन्दी व्याख्या – जब राजा नगर में प्रवेश करते थे तो, नगरवासियों द्वारा प्रेरित नगर में रहने वाली कन्यायें राजा के ऊपर मङ्गलाचार के रूप में धान के लावों की वर्षा कर राजा का स्वागत करती थीं। यहाँ वन में भी राजा दिलीप का स्वागत उसी प्रकार हुआ, जिस प्रकार राजमहल में होता था। राजा गाय चराने जङ्गल में गये और वायु द्वारा हिलती हुई नई (कोमल) लताओं से राजा के ऊपर पुष्प झड़ गये। कविकुलगुरु ने बहुत ही सुन्दर उपमा-योजना की है। वन में गये हुए राजा दिलीप मरुत्सखा (वायु के मित्र, अग्नि) के समान तेजस्वी थे अर्थात् मित्र जैसे ही थे अतः मरुत् (वायु) ने बाललताओं को प्रेरित किया। राजा पूज्य अर्थात् इस तरह के स्वागत के सर्वथा योग्य थे और समीप में ही विद्यमान भी थे। अतः बाल लताओं ने राजा के ऊपर नगरकन्याओं द्वारा माङ्गलिक धान के लावों के समान फूलों की वर्षा की।

शब्दार्थः – मरुत्प्रयुक्ताः = वायु से प्रेरित (हिलाई गयी)। **बाललताः** = नयी या कोमल लताओं ने। **मरुत्सखाभम्** = वायु के मित्र (अग्नि) के समान को (मरुतः सखा मरुत्सखः, सः इव आभाति मरुत्सखाभः तम्)। **आरात्** = समीप में। **अर्च्यम्** = पूज्य, पूजा के योग्य। **अभिवर्तमानम्** = सामने विद्यमान। **तम्** = उस (राजा दिलीप) को। **पौरकन्याः** = नगरकन्यायें। **आचारलाजैः** = माङ्गलिक धान के लावों से। **प्रसूनैः** = फूलों से। **अवाकिरन्** = वर्षा की।

अलङ्कारः – वायु के मित्र (अग्नि) के समान 'नगरकन्याओं के समान बाललताओं ने आचारलावों के समान फूलों से'– इन स्थानों पर उपमाओं की तिलतण्डुलवत् स्थिति के कारण संसृष्टि अलङ्कार है।

संस्कृतव्याख्या – बाललताः वनमागतस्य दिलीपस्य स्वागतम् अकुर्वन्। मरुत्प्रयुक्ताः = वायुप्रेरिताः, बाललताः = नूतनवल्लयः, मरुत्सखाभम् = अग्नितुल्यतेजस्विनम्, अर्च्यम् = पूज्यम्, आरात् = समीपे, अभिवर्तमानम् = पुरो विद्यमानम्, पौरकन्याः = नगरबालाः, आचारलाजैः = मङ्गललाजैः, इव = यथा, प्रसूनैः = पुष्पैः, अवाकिरन् = वृष्टिं कृतवत्यः इति। श्लोकेऽस्मिन् 'मरुत्सखाभम्' अथ च 'बाललताः प्रसूनैराचारलाजैरिव पौरकन्याः' इत्युभयत्र तिलतण्डुलवत् स्थित्या उपमासंसृष्टिः। उपजातिछन्दः।

धनुर्भृतोऽप्यस्य दयार्द्रभाव–
माख्यातमन्तःकरणैर्विशङ्कैः।
विलोकयन्त्यो वपुरापुरक्ष्णां
प्रकामविस्तारफलं हरिण्यः।।11।।

प्रसङ्गः – हरिणियों ने वन में आये हुए राजा दिलीप का दर्शन किया।

अन्वयः – धनुर्भृतः अपि अस्य विशङ्कैः अन्तःकरणैः दयार्द्रभावम् आख्यातम् वपुः विलोकयन्त्यः हरिण्यः अक्ष्णाम् प्रकाम-विस्तारफलम् आपुः।

अर्थः – धनुर्धारी होने पर भी इस राजा दिलीप के (हरिणियों के) निःशङ्क अन्तःकरणों से सूचित दयार्द्रभाव वाले शरीर को देखती हुई हरिणियों ने आँखों के अत्यधिक बड़े होने का फल प्राप्त कर लिया।

हिन्दी व्याख्या – जब राजा नगर में प्रवेश करते थे तो, नगर की स्त्रियाँ उन्हें देखा करती थीं। वहाँ वन में आये हुए राजा का दर्शन, हरिणियाँ करती हैं। राजा दिलीप वन में गाय चरा रहे थे और गाय की रक्षा हेतु धनुष भी धारण किये हुए थे, अतः हरिणियों को राजा से भयभीत होना चाहिए था; किन्तु हरिणियाँ डरी नहीं। उनके निःशङ्क अन्तःकरणों ने सूचित कर दिया कि राजा अत्यन्त दयालु है, इससे भयभीत होने की आवश्यकता नहीं है। अतः निर्भीक होकर उस महान् राजा दिलीप के शरीर को देखती हुई हरिणियों ने अपने नेत्रों के अत्यधिक बड़े होने का फल प्राप्त कर लिया। अर्थात् हरिणियों के अत्यधिक बड़े नेत्र महान् राजा दिलीप का दर्शन पाकर धन्य हो गये।

शब्दार्थः – **धनुर्भृतः** = धनुष धारण करनेवाले के (धनुः बिभर्ति इति धनुर्भृत् तस्य)। **अपि** = भी। **अस्य** = इसके। **विशङ्कैः** = शङ्कारहित, निर्भीक। **अन्तःकरणैः** = अन्तःकरणों द्वारा। **दयार्द्रभावम्** = दया से आर्द्र (पूर्ण) भाववाले। **आख्यातम्** = सूचित। **वपुः** = शरीर को। **विलोकयन्त्यः** = देखती हुई। **हरिण्यः** = हरिणियों ने। **अक्ष्णाम्** = आँखों के। **प्रकामविस्तारफलम्** = अत्यधिक बड़े होने के फल को। **आपुः** = प्राप्त किया।

अलङ्कारः – 1. 'राजा के धनुर्धारी होने पर भी हरिणियाँ डरी नहीं। यहाँ कारण होने पर भी कार्य नहीं हुआ, अतः विशेषोक्ति अलङ्कार है।

2. हरिणियों ने निःशङ्क अन्तःकरण से राजा की दयालुता के सूचित होने के कारण उसका दर्शन किया। कार्य के कारण का कथन होने से यहाँ काव्यलिङ्ग अलङ्कार है।

संस्कृतव्याख्या – हरिण्यः वनमागतस्य राज्ञः दिलीपस्य दर्शनम् अकुर्वन्। धनुर्भृतः = चापधारिणः, अपि = समुच्चये अस्य राज्ञः दिलीपस्य इत्यर्थः, विशङ्कैः = निर्भीकैः, अन्तःकरणैः = हृदयैः, दयार्द्रभावम् = कृपारसेन आर्द्रः अभिप्रायः यस्य तत्, आख्यातम् = सूचितम्, वपुः = शरीरम्, विलोकयन्त्यः = पश्यन्त्यः, हरिण्यः = मृग्यः, अक्ष्णाम् = नेत्राणाम्, प्रकामविस्तारफलम् = अत्यन्तविशालतायाः परिणामम्, आपुः = प्राप्नुवन्। श्लोकेऽस्मिन् 'धनुर्भृतोऽपि हरिण्यः न भीताः' इति विशेषोक्तिः अथ च 'हरिण्यः दयार्द्रभावमाख्यातम् वपु एतस्मात् कारणाद् दर्शनं कृतवत्यः इत्यत्र कार्यकारणकथनात् काव्यलिङ्गम्। उपजातिवृत्तम्।

स कीचकैर्मारुतपूर्णरन्ध्रैः
कूजद्भिरापादितवंशकृत्यम्।
शुश्राव कुञ्जेषु यशः स्वमुच्चै–
रुद्गीयमानं वनदेवताभिः।।12।।

प्रसङ्गः – राजा दिलीप ने वन में अपना यशोगान सुना।

अन्वयः – सः मारुतपूर्णरन्ध्रैः कूजद्भिः कीचकैः आपादितवंशकृत्यम् कुञ्जेषु वनदेवताभिः उच्चैः उद्गीयमानं स्वं यशः शुश्राव।

अर्थः – उस (राजा दिलीप) ने वायु से भरे हुए छिद्रों वाले, शब्द करते हुए बाँसों के द्वारा, जिसमें बाँसुरी का काम किया गया हो, लतागृहों में वनदेवियों द्वारा उच्चस्वर से गाये जाते हुए अपने ऐसे यशोगान को सुना।

हिन्दी व्याख्या – जब राजा कहीं जाता है तो चारण-बन्दी इत्यादि उसका यशोगान करते हैं। यहाँ गाय चराने के लिए वन में आये हुए राजा दिलीप का यशोगान वनदेवियों ने किया। बाँसों के छिद्रों में वायु भर रही थी, जिससे बाँसुरी जैसी मधुर ध्वनि निकल रही थी – इस प्रकार बाँसों ने राजा के यशोगान में बाँसुरी का कार्य किया और लतागृहों में वन की अधिष्ठात्री देवियाँ उच्च स्वर से महान् राजा दिलीप का यश गा रही थीं। इस प्रकार वन में भी राजा के स्वागत में वनदेवियों द्वारा बाँसों से निकल रही बाँसुरी जैसी सङ्गीतमय ध्वनि के द्वारा यशोगान किया गया।

शब्दार्थः – सः = उसने। **मारुतपूर्णरन्ध्रैः** = वायु से भरे छिद्रों वाले। **कूजद्भिः** = शब्द करते हुए। **कीचकैः** = बाँसों से। **आपादितवंशकृत्यम्** = जिसमें बाँसुरी का कार्य किया गया, ऐसे (आपादितं वंशस्य कृत्यं यस्मिन् तत्)। **कुञ्जेषु** = लतागृहों में। **वनदेवताभिः** = वनदेवियों द्वारा। **उच्चैः** = उच्च स्वर से। **उद्गीयमानम्** = गाये जाते हुए। **स्वम्** = अपने। **यशः** = यश को। **शुश्राव** = सुना।

संस्कृतव्याख्या – राजा दिलीपः वने आत्मनः यशोगानम् अश्रृणोत्- सः = असौ राजा दिलीप इत्यर्थः, मारुतपूर्णरन्ध्रैः = वायुपूरितछिद्रैः, अतएव कूजद्भिः = स्वनद्भिः, कीचकैः = वेणुभिः, आपादितवंशकृत्यम् = सम्पादितसुषिरवाद्यविशेषकृत्यम्, कुञ्जेषु = लतागृहेषु, उद्गीयमानम् = प्रस्तूयमानम्, स्वम् = आत्मनः, यशः = कीर्तिम्, शुश्राव = श्रुतवान्। उपजातिवृत्तम्।

पृक्तस्तुषारैर्गिरिनिर्झराणा–
मनोकहाकम्पितपुष्पगन्धी।
तमातपक्लान्तमनातपत्र–
माचारपूतं पवनः सिषेवे।।

प्रसङ्गः – वायु ने राजा दिलीप की सेवा की।।13।।

अन्वयः – गिरिनिर्झराणाम् तुषारैः पृक्तः अनोकहाकम्पितपुष्पगन्धी पवनः अनातपत्रम् आतपक्लान्तम् आचारपूतम् तम् सिषेवे।

अर्थः – पर्वतीय झरनों के जलकणों से सिक्त, वृक्षों के मन्द-मन्द हिलते हुए पुष्पों के गन्ध से युक्त वायु ने छत्ररहित (अतएव) धूप से पीड़ित (और) सदाचरण से पवित्र उस (राजा दिलीप) की सेवा की।

हिन्दी व्याख्या – राजा की सेवा में लगे हुए उसके सेवक छत्र ओढ़ाकर एवं चँवर (पंखा) डुलाकर उसकी सेवा करते थे, किन्तु वन में आये हुए राजा दिलीप गोसेवाव्रत पालन के लिए पार्श्ववर्ती सेवकों को भी लौटा दिये थे, अतः छत्रचामर रहित थे। ऐसे गोसेवाव्रती राजा की सेवा वायु ने की। पर्वतीय झरनों के जलकणों से युक्त होने के कारण वायु शीतल थी। वृक्षों के पुष्प मन्द-मन्द हिल रहे थे, अतः वायु मन्द-मन्द बह रही थी। पुष्पों के हिलने के कारण वायु में पुष्पों की गन्ध भी मिश्रित हो रही थी। इस प्रकार शीतल, मन्द, सुगन्धित पवन ने राजा की सेवा की। राजा छत्ररहित थे, अतएव धूप से पीड़ित थे; किन्तु सदाचरण से पवित्र होने के कारण जगत्पावन पवन के द्वारा भी सर्वथा सेवा के योग्य थे। अभिप्राय यह कि वायु ने राजा के छत्ररहित होने पर भी शीतलता प्रदान कर छत्र के अभाव को दूर कर दिया एवं सुगन्धित, मन्द हवा प्रदान करते हुए चँवर (पंखा झलने) का कार्य भी कर दिया।

शब्दार्थः – **गिरिनिर्झराणाम्** = पर्वतीय झरनों के। **तुषारैः** = हिमकणों से। **पृक्तः** = सिक्त, मिश्रित। **अनोकहाकम्पितपुष्पगन्धी** = वृक्षों के हिलते पुष्पों के गन्धवाले। **पवनः** = वायु ने। **अनातपत्रम्** = छत्ररहित। **आतपक्लान्तम्** = धूप से पीड़ित। **आचारपूतम्** = सदाचरण से पवित्र। **तम्** = उस राजा की। **सिषेवे** = सेवा की।

विशेषः – अनोकहाकम्पितपुष्पगन्धी = अनसः शकटस्य अकं मार्गं घ्नन्ति इति अनोकहाः वृक्षाः तेषाम् आकम्पितानि ईषदान्दोलितानि पुष्पाणि तेषां गन्ध अस्यास्ति इति।

संस्कृतव्याख्या – पवनः वने छत्रचामररहितं राजानं दिलीपं सिषेवे। गिरिनिर्झराणाम् = पर्वतीयजलप्रपातानाम्, तुषारैः = हिमकणैः, पृक्तः = सिक्तः, अनोकहाकम्पितपुष्पगन्धी = वृक्षेषदान्दोलितकुसुमामोदयुक्तः, पवनः = वायुः, गोसेवाव्रतपालनार्थम् अनातपत्रम् = छत्ररहितम्, आतपक्लान्तम् = घर्मपीडितम्, आचारपूतम् = सदाचरणपवित्रम्, तम् = राजानं दिलीपम्, सिषेवे = सेवितवान्। राजा जगत्पावनस्य पवनस्यापि सेव्यः आसीदिति भावः। उपजातिछन्दः।

शशाम वृष्ट्यापि विना दवाग्नि–
रासीद्विशेषा फलपुष्पवृद्धिः।
ऊनं न सत्त्वेष्वधिको बबाधे
तस्मिन् वनं गोप्तरि गाहमाने।।14।।

प्रसङ्गः – राजा दिलीप का वन पर विशेष प्रभाव पड़ा।

अन्वयः – तस्मिन् गोप्तरि वनं गाहमाने वृष्ट्या विना अपि दवाग्निः शशाम फलपुष्पवृद्धिः विशेषा आसीत् सत्त्वेषु अधिकः ऊनं न बबाधे।

अर्थः – उस प्रजारक्षक (दिलीप) के वन में प्रवेश करने पर वर्षा के बिना भी जङ्गल की आग शान्त हो गयी। फलों और फूलों की अत्यधिक समृद्धि हुई। जीवों में अधिक शक्तिशाली ने कमजोर को पीड़ित नहीं किया।

हिन्दी व्याख्या – जब महान् पुरुष कहीं जाते हैं तो, उनका वहाँ के वातावरण पर विशेष प्रभाव पड़ता है। प्रजा के रक्षक राजा दिलीप जब गाय चराने के लिए वन में प्रवेश किये तो, वन पर उनका विशेष प्रभाव पड़ा। जङ्गल की आग बिना वर्षा के ही शान्त हो गयी। फलों और फूलों की वृद्धि पहले से अधिक हो गयी। जङ्गली जीवों में जो बल में अधिक सिंह, व्याघ्रादि थे, उन्होंने हरिण आदि कमजोरों को पीड़ित नहीं किया।

अलङ्कारः – 'बिना वर्षा के ही जङ्गल की आग शान्त हो गयी– यहाँ कारण के बिना भी कार्य हो रहा है, अतः विभावना अलङ्कार है।

शब्दार्थः – **तस्मिन्** = उस। **गोप्तरि** = रक्षक के। **वनम्** = वन (में)। **गाहमाने** = प्रवेश करने पर। **वृष्ट्या विना** = वर्षा के बिना। **अपि** = भी। **दवाग्निः** = जङ्गल की आग। **शशाम** = शान्त हो गयी। **फलपुष्पवृद्धिः** = फलों और फूलों की वृद्धि। **विशेष** = पहले से अधिक। **आसीत्** = थी। **सत्त्वेषु** = प्राणियों में। **ऊनम्** = कम को। **न** = नहीं। **बबाधे** = बाधा पहुँचाई, पीड़ित किया।

संस्कृतव्याख्या – कविकुलगुरुः कालिदासः राज्ञः दिलीपस्य वने प्रभावं वर्णयति – तस्मिन् = राज्ञि दिलीपे इत्यर्थः, गोप्तरि = रक्षके, वनम् = अरण्यम्, गाहमाने = प्रविशति, वृष्ट्या विना = वर्षाभावे, अपि = समुच्चये, दवाग्नि = वनानलः, शशाम = शान्तः जातः, फलपुष्पवृद्धिः = फलकुसुमसमृद्धिः, विशेषा = अतिशयिता, आसीत् = अभवत्, सत्त्वेषु = प्राणिषु, अधिकः = बलवान् सिंहादिः, ऊनम् = दुर्बलम् हरिणादिकम्, न = नो, बबाधे = पीडितवान्, श्लोकेऽस्मिन् शशाम वृष्ट्यापि विना दवाग्निः इत्यत्र क्रियायाः प्रतिषेधेऽपि फलव्यक्तिर्जायते अतो विभावना अलङ्कारः। उपजातिवृत्तम्।

सञ्चारपूतानि दिगन्तराणि
कृत्वा दिनान्ते निलयाय गन्तुम्।
प्रचक्रमे पल्लवरागताम्रा
प्रभा पतङ्गस्य मुनेश्च धेनुः।।15।।

प्रसङ्गः – सायंकाल मुनि की गाय ने वन से लौटना आरम्भ किया।

अन्वयः – पल्लवरागताम्रा पतङ्गस्य प्रभा मुनेः धेनुः च दिगन्तराणि सञ्चारपूतानि कृत्वा दिनान्ते निलयाय गन्तुं प्रचक्रमे।

अर्थः – किसलय (नये पत्ते) के समान लाल वर्ण की सूर्य की कान्ति और मुनि की गाय ने दिशाओं के अन्तरालों को सञ्चरण से पवित्र कर दिन के अन्त में अपने वास-स्थान की ओर लौटना आरम्भ किया।

हिन्दी व्याख्या – सायंकाल की शोभा और नन्दिनी के वन से लौटने का वर्णन करते हुए कविकुलगुरु कहते हैं कि दिन का अन्त हो चुका था अर्थात् सायंकाल का समय हो चुका था। अतः सायंकालीन सूर्य की किरण का रंग नये पत्ते के समान लाल रंग का हो गया था और मुनि वसिष्ठ की गाय नन्दिनी भी स्वाभाविक रूप से पल्लव के समान ताम्र वर्ण अर्थात् लाल रंग की थी। दोनों ने दिनभर सञ्चरण करके दिशाओं के अन्तरालों (मध्य के प्रदेशों) को पवित्र कर दिया अर्थात् जहाँ-जहाँ धूप पड़ी और जहाँ-जहाँ नन्दिनी के चरण पड़े – वे सभी स्थान पवित्र हो गये। इस प्रकार सभी दिशाओं में सञ्चरण कर दिशाओं के अन्तरालों को पवित्र कर दोनों ने अपने वासस्थल की ओर जाना आरम्भ किया अर्थात् सूर्य की कान्ति अस्ताचल की ओर वापस जाने लगी और नन्दिनी गाय अपने वासस्थान आश्रम की ओर लौटने लगी।

अलङ्कारः – सूर्य की किरण और मुनि की गाय दोनों प्रस्तुतों का एक ही दिशान्तरालों को पवित्र कर (जाना)– धर्म से सम्बन्ध होने के कारण तुल्ययोगिता अलङ्कार है।

शब्दार्थः – **पल्लवरागताम्रा** = किसलय (नये पत्ते) के समान ताम्र (लाल) वर्ण की। **पतङ्गस्य** = सूर्य की। **प्रभा** = किरण। **मुनेः** = मुनि की। **धेनुः** = गाय। **दिगन्तराणि** = दिशाओं के अन्तरालों को। **सञ्चारपूतानि** = सञ्चरण से पवित्र। **कृत्वा** = करके। **दिनान्ते** = सायंकाल। **निलयाय** = वासस्थान के लिए। **गन्तुम्** = जाने के लिए। **प्रचक्रमे** = आरम्भ किया।

संस्कृतव्याख्या – सायंकाले मुनेः धेनुः नन्दिनी स्ववासस्थानं प्रतिनिवर्तितुम् आरेभे। पल्लवरागताम्रा = किसलयवर्णलोहिता, पतङ्गस्य = सूर्यस्य, प्रभा = कान्तिः, मुनेः = महर्षेः वसिष्ठस्य इत्यर्थः, धेनुः = गौः नन्दिनी, च = समुच्चये, दिगन्तराणि = दिशावकाशान्, सञ्चारपूतानि = सञ्चरणपवित्राणि, कृत्वा = अनुष्ठाय, दिनान्ते = सायङ्काले, निलयाय = वासस्थानम्, गन्तुम् = प्रतिनिवर्तितुम्, प्रचक्रमे = आरेभे, पतङ्गस्य मुनेः धेनोः च उभयोः प्रस्तुतयोः 'सञ्चारपूतानि कृत्वा गन्तुं प्रचक्रमे' इत्येकधर्मेण सम्बन्धात् तुल्ययोगिता अलङ्कारः। उपजातिछन्दः।

तां देवतापित्रतिथिक्रियार्था–
मन्वग्ययौ मध्यमलोकपालः।
बभौ च सा तेन सतां मतेन
श्रद्धेव साक्षाद्विधिनोपपन्ना।। 16।।

प्रसङ्गः – नन्दिनी श्रद्धा के समान सुशोभित हुई।

अन्वयः – मध्यमलोकपालः देवतापित्रतिथिक्रियार्थाम् ताम् अन्वक् ययौ। सताम् मतेन तेन उपपन्ना सा विधिना (उपपन्ना) साक्षात् श्रद्धा इव बभौ।

अर्थः – पृथ्वीलोक का पालन करनेवाले (राजा दिलीप) देव, पितृ और अतिथि की क्रिया– यज्ञ, श्राद्ध और दान रूपी प्रयोजनवाली उस नन्दिनी गाय के पीछे-पीछे चले। सज्जनों से सम्मानित उस राजा से युक्त वह (गाय) अनुष्ठान से युक्त प्रत्यक्ष श्रद्धा के समान सुशोभित हुई।

हिन्दी व्याख्या – वन में चरने के बाद सायंकाल नन्दिनी आश्रम की ओर लौट रही थी, गोसेवा का व्रत (अनुष्ठान) करनेवाले राजा दिलीप, गाय के पीछ-पीछे चल रहे थे। राजा द्वारा गाय का अनुसरण सर्वथा उचित था, क्योंकि राजा दिलीप तो केवल एक ही लोक पृथ्वी के पालनकर्ता थे; किन्तु गाय, देवता, पितृ एवम् अतिथि के लिए की जानेवाली क्रियाओं यज्ञ, श्राद्ध और दान की साधनभूत थी, इस प्रकार वह देवलोक, पितृलोक और पृथ्वीलोक का पालन करती थी। राजा सज्जनों द्वारा सम्मानित थे, अतः उस राजा दिलीप से युक्त वह गाय नन्दिनी अनुष्ठान से युक्त साक्षात् शरीरधारण की हुई श्रद्धा की भाँति सुशोभित हुई। राजा सेवाकार्य में संलग्न थे, अतः अनुष्ठान की तरह थे। गाय श्रद्धास्पद थी, अतएव प्रत्यक्ष श्रद्धारूप थी। इस प्रकार राजा से युक्त वह नन्दिनी गाय अनुष्ठान से युक्त प्रत्यक्ष श्रद्धा के समान सुशोभित हुई।

अलङ्कारः – राजा की अनुष्ठान से एवं गाय की तुलना श्रद्धा से होने के कारण उपमा अलङ्कार है।

शब्दार्थः – **मध्यमलोकपालः** = पृथ्वीलोक का पालन करनेवाला। **देवतापित्रतिथिक्रियार्थाम्** = देवता, पितृ और अतिथिक्रिया अर्थात् यज्ञ, श्राद्ध और दान (भोजन) के प्रयोजनवाली (देवतापित्रतिथीनां क्रियायागश्राद्धदानानि ता एवार्थः प्रयोजनं यस्यास्ताम्)। **अन्वक्** = पीछे। **ययौ** = गया, चला। **सतां मतेन** = सज्जनों द्वारा सम्मानित। **तेन** = उससे। **उपपन्ना** = युक्त। **विधिना** = अनुष्ठान (पूजा-कार्य, कर्मकाण्ड) से। **साक्षात्** = प्रत्यक्ष। **बभौ** = सुशोभित हुई।

संस्कृतव्याख्या – नन्दिनी श्रद्धा इव शुशुभे। मध्यमलोकपालः = पृथ्वीलोकपालः, राजा दिलीपः इत्यर्थः, देवतापित्रतिथिक्रियार्थाम् = देवपित्रतिथीनां क्रियाः यज्ञश्राद्धदानानि तेषां साधनभूताम्, ताम् = नन्दिनीम् इत्यर्थः, अन्वक् =अनुपदम्, ययौ = जगाम, सतां मतेन = सद्भिः मान्येन, तेन = राज्ञा दिलीपेन, उपपन्ना = युक्ता, सा = गौः नन्दिनी, विधिना = अनुष्ठानेन (युक्ता), साक्षात् = प्रत्यक्षा, श्रद्धा = आस्तिक्यबुद्धिः, इव = यथा, बभौ = शुशुभे, श्लोकेऽस्मिन् 'श्रद्धेव साक्षाद्विधिनोपन्ना' इत्यत्र उपमा अलङ्कारः। उपजातिः छन्दः।

स पल्वलोत्तीर्णवराहयूथा–
न्यावासवृक्षोन्मुखबर्हिणानि।
ययौ मृगाध्यासितशाद्वलानि
श्यामायमानानि वनानि पश्यन्।।17।।

प्रसङ्गः – राजा वनों को देखते हुए गये।

अन्वयः – सः पल्वलोत्तीर्णवराहयूथानि आवासवृक्षोन्मुखबर्हिणानि मृगाध्यासितशाद्वलानि श्यामायमानानि वनानि पश्यन् ययौ।

अर्थः – वह (राजा दिलीप) छोटे जलाशयों से निकले हुए सुअरों के झुण्डवाले, आवासवृक्षों की ओर लौटते हुए मयूरोंवाले, मृगों से अधिष्ठित हरी घासों वाले, काले हो रहे वनों को देखते हुए गये।

हिन्दी व्याख्या – सायंकाल राजा दिलीप, नन्दिनी के साथ, आश्रम की ओर लौटते हुए वन की शोभा को देख रहे थे। उस समय सायंकालीन वन की शोभा का सुन्दर एवं स्वाभाविक वर्णन महाकवि कालिदास के द्वारा किया गया है। सायंकाल, छोटे जलाशयों से काले सुअरों के झुण्ड निकल रहे थे, नीले मयूर अपने आवास वृक्षों की ओर लौट रहे थे और काले हरिण हरी घासों पर बैठे थे, अतएव अँधेरा बढ़ने के साथ ही वे हरे वन काले हो रहे थे। ऐसे वनों को देखते हुए राजा दिलीप आश्रम की ओर लौट रहे थे।

अलङ्कारः – सायंकालीन वन की शोभा का स्वाभाविक वर्णन होने से स्वभावोक्ति अलङ्कार है।

छन्दः – उपजाति छन्द है।

शब्दार्थः – **पल्वलोत्तीर्णवराहयूथानि** = छोटे जलाशयों से निकले सुअरों के झुण्डवाले (पल्वलेभ्यो उत्तीर्णानि वराहाणां यूथानि येषु तानि)। **आवासवृक्षोन्मुखबर्हिणानि** = आवासवृक्षों की ओर उन्मुख मयूरों वाले। (बर्हाणि पक्ष्माणि सन्ति इति बर्हिणः, आवासवृक्षाणामुन्मुखाः बर्हिणः येषु तानि)। **मृगाध्यासितशाद्वलानि** = मृगों से अधिष्ठित हरी घासों वाले (मृगैः अध्यासिताः शाद्वलाः येषु तानि)। उपर्युक्त सभी शब्द 'वनानि' के विशेषण हैं। **वनानि** = वनों को। **पश्यन्** = देखते हुए। **ययौ** = गया।

संस्कृतव्याख्या – सः = असौ राजा दिलीपः इत्यर्थः, पल्वलोत्तीर्णवराहयूथानि = क्षुद्रजलाशयनिर्गत–शूकरकुलानि, आवासवृक्षोन्मुखबर्हिणानि = निवासवृक्षोन्मुखमयूराणि, मृगाध्यासितशाद्वलानि = हरिणाधिष्ठितहरिततृणानि, श्यामायमानानि = वराहमयूरमृगैः कृष्णायमानानि, वनानि = काननानि, पश्यन् = अवलोकयन्, ययौ = गतवान्। अत्र स्वभावोक्तिरलङ्कारः। उपजातिछन्दः।

आपीनभारोद्वहनप्रयत्नाद्
गृष्टिर्गुरुत्वाद्वपुषो नरेन्द्रः।
उभावलङ्चक्रतुरञ्चिताभ्यां
तपोवनावृत्तिपथं गताभ्याम्।।18।।

प्रसङ्गः – नन्दिनी और राजा दिलीप ने तपोवन से लौटने के मार्ग को सुशोभित किया।

अन्वयः – गृष्टिः आपीनभारोद्वहनप्रयत्नात् नरेन्द्रः वपुषः गुरुत्वात् उभौ अञ्चिताभ्याम् गताभ्याम् तपोवनावृत्तिपथम् अलङ्चक्रतुः।

अर्थः – पहली बार ब्याई हुई (नन्दिनी) स्तनों के भार को ढोने के प्रयत्न से (और) राजा (दिलीप) शरीर के भारी होने से, दोनों ने सुन्दर (टेढ़ी-मेढ़ी) चाल से तपोवन से लौटने के मार्ग को सुशोभित किया।

हिन्दी व्याख्या – कविकुलगुरु कालिदास के सौन्दर्य की सूक्ष्मनिरीक्षण-दृष्टि उल्लेखनीय है। सायंकाल नन्दिनी और राजा-दोनों तपोवन से आश्रम की ओर लौट रहे हैं। क्योंकि नन्दिनी ने पहली बार बछड़े को जन्म दिया है, अतः स्थूल थनों के भार को ढोने के कारण मार्ग पर उसकी चाल टेढ़ी-मेढ़ी हो जा रही है। इसी तरह भारी-भरकम शरीर के कारण राजा भी मार्ग में टेढ़ी-मेढ़ी चाल से चल रहा है। इस प्रकार नन्दिनी और दिलीप– दोनों मन्थर टेढ़ी-मेढ़ी सुन्दर चाल से तपोवन से आश्रम की ओर लौटने के मार्ग को सुशोभित कर रहे हैं।

शब्दार्थः – **गृष्टिः** = पहली बार ब्याई हुई गाय (सकृत्प्रसूता गौः)। **आपीनभारोद्वहनप्रयत्नात्** = स्तनों के भार को ढोने के प्रयत्न से (आपीनस्य भारोद्वहने प्रयत्नः तस्मात्)। **नरेन्द्रः** = राजा। **वपुषः** = शरीर के। **गुरुत्वात्** = भारी होने से। **उभौ** = दोनों ने। **अञ्चिताभ्याम्** = टेढ़ी-मेढ़ी, सुन्दर। **गताभ्याम्** = चाल से, गमन से। **तपोवनावृत्तिपथम्** = तपोवन से लौटने के मार्ग को। **अलङ्चक्रतुः** = सुशोभित किया।

संस्कृतव्याख्या – गृष्टिः = सकृत्प्रसूता गौः, आपीनभारोद्वहनप्रयत्नाद् = स्तनभारोन्नयनप्रयासात्, नरेन्द्रः = राजा दिलीपः, वपुषः = शरीरस्य, गुरुत्वात् = गौरवात्, उभौ नन्दिनीदिलीपौ इत्यर्थः, अञ्चिताभ्याम् = कुटिलाभ्याम्, गताभ्याम् = गमनाभ्याम्, तपोवनावृत्तिपथम् = आश्रमप्रत्यावर्तनमार्गम्, अलञ्चक्रतुः = भूषितवन्तौ। उपजातिवृत्तम्।

वसिष्ठधेनोरनुयायिनं तम्
आवर्तमानं वनिता वनान्तात्।
पपौ निमेषालसपक्ष्मपङ्क्ति–
रुपोषिताभ्यामिव लोचनाभ्याम्।। 19।।

प्रसङ्गः – रानी सुदक्षिणा ने वन से आते हुए राजा दिलीप को अपलक नेत्रों से देखा।

अन्वयः – वनिता वसिष्ठधेनोः अनुयायिनम् वनान्तात् आवर्तमानम् तम् निमेषालसपक्ष्मपङ्क्तिः (सती) उपोषिताभ्याम् इव लोचनाभ्याम् पपौ।

अर्थः – पत्नी (सुदक्षिणा) ने वसिष्ठ की गाय के पीछे-पीछे चलनेवाले, वनप्रान्त से लौटते हुए, उस (राजा दिलीप) को, पलक गिराने में अलसाई हुई बरौनियों की पङ्क्तिवाली (होकर) मानों उपवास किये नेत्रों से पी लिया।

हिन्दी व्याख्या – प्रातःकाल राजा दिलीप गाय चराने के लिए जङ्गल चले गये और पत्नी सुदक्षिणा को वापस आश्रम भेज दिया। दिन भर पति से वियुक्त रानी, राजा की प्रतीक्षा करती रही। सायंकाल जब राजा गाय चराकार वनप्रान्त से लौट रहे थे, तब वह गाय के पीछे-पीछे चल रहे थे।

रानी सुदक्षिणा बिना पलकों को गिराये, राजा को इस प्रकार देख रही थी मानों उनके नेत्र दिन भर निर्जल उपवास किये हों और राजा को देखते ही रानी ने मानों प्यासे नेत्रों से राजा को पी लिया अर्थात् दर्शन-पान किया। रानी ने राजा को वैसे ही अधिक चाहभरी दृष्टि से देखा जैसे कोई दिनभर उपवास किया हुआ व्यक्ति जल पीता है। महाकवि कालिदास ने इस श्लोक में रानी सुदक्षिणा के वियोग और उनके राजा के प्रति अनुराग की सुन्दर अभिव्यञ्जना की है।

अलङ्कारः – 'मानों उपवास किये हुए नेत्रों से देखा'– यहाँ सम्भावना में उत्प्रेक्षा अलङ्कार है।

शब्दार्थः – **वनिता** = स्त्री, जातानुराग स्त्री। **वसिष्ठधेनोः** = वसिष्ठ के गाय के। **अनुयायिनम्** = अनुचर, पीछे-पीछे चलने वाले से। **वनान्तात्** = वनप्रान्त से, वन के छोर से। **आवर्तमानम्** = लौटते हुए। **तम्** = उनको। **निमेषालसपक्ष्मपङ्क्तिः** = पलक गिराने में अलसाई बरौनियों की पंक्तिवाली, निर्निमेष या अपलक (एकटक) दृष्टिवाली (निमेषेषु अलसा पक्ष्मपङ्क्तिः यस्याः सा)। **उपोषिताभ्याम् इव** = मानों उपवास किये हुए। **लोचनाभ्याम्** = नेत्रों से। **पपौ** = पी लिया।

संस्कृतव्याख्या – वनिता = पत्नी सुदक्षिणा इत्यर्थः, वसिष्ठधेनोः = महर्षेः वसिष्ठस्य गोः नन्दिन्याः इत्यर्थः, अनुयायिनम् = अनुचरम्, वनान्तात् = वनप्रान्तात्, आवर्तमानम् = प्रत्यागच्छन्तम्। तम् = दिलीपम् इत्यर्थः, निमेषालसपक्ष्मपङ्क्तिः = अनिमेषदृष्टिः (सती), उपोषिताभ्याम् = कृतोपवासाभ्याम्, इव = सम्भावनायाम्, लोचनाभ्याम् = नेत्राभ्याम्, पपौ = पीतवती श्लोकेऽस्मिन् 'उपोषिताभ्यामिव लोचनाभ्याम्' इत्यत्र उत्प्रेक्षालङ्कारः। उपजातिः छन्दः।

पुरस्कृता वर्त्मनि पार्थिवेन
प्रत्युद्गता पार्थिवधर्मपत्न्या।
तदन्तरे सा विरराज धेनु–
र्दिनक्षपामध्यगतेव सन्ध्या।। 20।।

प्रसङ्गः – नन्दिनी की शोभा सन्ध्या के समान हुई।

अन्वयः – वर्त्मनि पार्थिवेन पुरस्कृता पार्थिवधर्मपत्न्या प्रत्युद्गता सा धेनुः तदन्तरे दिनक्षपामध्यगता सन्ध्या इव विरराज।

अर्थः – मार्ग में राजा के द्वारा आगे की गयी और राजा की पत्नी द्वारा अगवानी की गयी वह गाय उन दोनों के बीच में दिन और रात के मध्य स्थित सन्ध्या के समान सुशोभित हुई।

हिन्दी व्याख्या – गोचारण के पश्चात् राजा दिलीप गाय को लेकर लौट रहे थे, वह गाय को आगे कर उसके पीछे-पीछे चल रहे थे और आश्रम के समीप आते ही रानी सुदक्षिणा ने बढ़कर गाय के आगे होकर उनका स्वागत किया। इस प्रकार आगे सुदक्षिणा, बीच में गाय और पीछे राजा दिलीप– इस क्रम में हो गये। कविकुलगुरु इसके लिए बहुत सुन्दर उपमा की योजना करते हुए कहते हैं कि राजा और रानी के बीच में स्थित गाय दिन और रात्रि के मध्य स्थित सन्ध्या के समान सुशोभित हुई। राजा दिन के समान तेजस्वी थे और रानी सुदक्षिणा रात्रि के समान सुन्दर (चन्द्रमुखी) थी और उन दोनों के बीच लाल रंग की (पल्लवरागताम्रा) गाय अरुणिम (लाल) सन्ध्या के समान शोभा पा रही थी।

अलङ्कारः – राजा की तुलना दिन से, रानी की तुलना रात्रि से और गाय की समानता सन्ध्या से करने के कारण उपमा अलङ्कार है।

विशेष –उपर्युक्त उपमा अत्यन्त सटीक है और अभिधेय अर्थ को प्रकाशित करने के साथ काव्यचारुता के उत्कर्ष को बढ़ा देती है। इस उपमा पर विद्वान् इतना रीझे हुए हैं कि अनेक अन्य समानताओं को भी ढूँढ़ निकालते हैं। यथा राजा सूर्यवंशी थे अतएव उसकी तुलना दिन से की गयी, रानी चन्द्रवंशी (मगधराजकुमारी) थी, अतः उनकी तुलना रात्रि से की गयी इत्यादि। ऐसी ही अनेक उत्कृष्ट उपमाओं के कारण महाकवि कालिदास संस्कृत-साहित्य में उपमा के अद्वितीय कवि माने जाते हैं– 'उपमा कालिदासस्य'।

शब्दार्थः – **वर्त्मनि** = मार्ग में। **पार्थिवेन** = राजा द्वारा। **पुरस्कृता** = आगे की गयी। **पार्थिवधर्मपत्न्या** = राजा की धर्मपत्नी द्वारा। **प्रत्युद्गता** = खड़े होकर स्वागत की गयी, अगवानी की गयी। **सा** = वह (नन्दिनी)। **तदन्तरे** = उन दोनों के बीच में । **दिनक्षपामध्यगता** = दिन और रात्रि के मध्य स्थित। **सन्ध्या** = सायंकाल। **इव** = के समान। **विरराज** = सुशोभित हुई।

संस्कृतव्याख्याः – नन्दिन्याः शोभा सन्ध्या इव अभूत्। वर्त्मनि = मार्गे, पार्थिवेन = राज्ञा दिलीपेन, पुरस्कृता = अग्रे कृता, पार्थिवधर्मपत्न्या = राजमहिष्या सुदक्षिणया, प्रत्युद्गता = स्वागतीकृता, सा = असौ नन्दिनी इत्यर्थः, धेनुः = गौः, दिनक्षपामध्यगता = दिवसरात्रि मध्यस्थिता, सन्ध्या = सायंकालः, इव = यथा, विरराज = शुशोभ, श्लोकेऽस्मिन् 'दिनक्षपामध्यगतेव सन्ध्या' इत्यत्र उपमालङ्कारः। उपजातिवृत्तम्।

प्रदक्षिणीकृत्य पयस्विनीं तां
सुदक्षिणा साक्षतपात्रहस्ता।
प्रणम्य चानर्च विशालमस्याः
शृङ्गान्तरं द्वारमिवार्थसिद्धेः।। 21।।

प्रसङ्गः – प्रस्तुत श्लोक में राजा दिलीप की पत्नी सुदक्षिणा के द्वारा धेनु नन्दिनी की पूजा का वर्णन है।

अन्वयः – साक्षतपात्रहस्ता सुदक्षिणा तां पयस्विनीं प्रदक्षिणीकृत्य प्रणम्य च अस्याः विशालं शृङ्गान्तरं अर्थसिद्धेः द्वारम् इव आनर्च।

अर्थः – अक्षतों के पात्र को हाथ में ली हुई सुदक्षिणा ने प्रशस्त (उत्तम) दूध वाली उस नन्दिनी की प्रदक्षिणा एवं प्रणाम करके, इसके विशाल सीगों के मध्य भाग का (सन्तानप्राप्ति रूप) कार्य सिद्धि के द्वार की तरह पूजन किया।

हिन्दी व्याख्याः –वन से लौटी हुई गाय नन्दिनी की अगवानी करने के बाद रानी सुदक्षिणा ने उसकी पूजा की। सर्वप्रथम हाथ में अक्षतों का पात्र लेकर उन्होंने उत्तम दूधवाली उस गाय की प्रदक्षिणा की और उसके बाद उसे प्रणाम किया। तदनन्तर उस नन्दिनी गाय के विशाल सींगों के मध्यभाग

(मस्तक) का अक्षत इत्यादि पूजा सामग्रियों से इस प्रकार पूजन किया जैसे उसके सींगों का मध्यभाग सफलता (सन्तान प्राप्ति) का द्वार हो। जिस प्रकार किसी सफलता की कामना से कार्यारम्भ में (देहली इत्यादि की) पूजा की जाती है उसी प्रकार रानी सुदक्षिणा के लिए नन्दिनी के विशाल सींगों का मध्यभाग सफलता का द्वार (दरवाजा) था क्योंकि गाय के प्रसन्न होने पर ही सन्तान–प्राप्ति सम्भव थी।

शब्दार्थः – **साक्षतपात्रहस्ता** = अक्षतों के पात्र को हाथ में ली हुई। **सुदक्षिणा** = राजा दिलीप की भार्या सुदक्षिणा ने। **पयस्विनीम्** = उत्तम दूध देनेवाली। **ताम्** = उस नन्दिनी गाय की। **प्रदक्षिणीकृत्य** = प्रदक्षिणा करके। **प्रणम्य** = प्रणाम करके। **अस्याः** = इस (नन्दिनी गाय) के। **विशालम्** = विशाल। **शृङ्गान्तरम्** = सींगों के मध्य भाग का। **अर्थसिद्धेः** = सन्तान प्राप्ति रूप कार्य सिद्धि के। **द्वारं इव** = द्वार की तरह। **आनर्च** = पूजन किया।

अलङ्कारः – 'अर्थसिद्धि के द्वार के समान' यहाँ उपमा अलङ्कार है।

संस्कृतव्याख्या – सुदक्षिणा वनान्तादागतां नन्दिनी सम्पूजितवती– साक्षतपात्रहस्ता = अक्षतानां पात्रेण सह वर्तते इति साक्षतपात्रौ हस्तौ यस्याः सा, सुदक्षिणा = राजमहिषी, पयस्विनीम् = प्रशस्तक्षीराम्, ताम् = अमुं नन्दिनीमित्यर्थः, प्रदक्षिणीकृत्य = परिक्रम्य, प्रणम्य = नमस्कृत्य, च = समुच्चये, अस्याः = धेनोः इत्यर्थः, विशालम् = विस्तीर्णम्, शृङ्गान्तरम् = शृङ्गमध्यभागम्, अर्थसिद्धेः = कार्यसाफल्यस्य, द्वारम् = प्रवेशमार्गम्, इव = यथा, आनर्च = पूजयामास। श्लोकेऽस्मिन् उपमालङ्कारः। उपजातिछन्दः।

वत्सोत्सुकाऽपि स्तिमिता सपर्यां
प्रत्यग्रहीत्सेति ननन्दतुस्तौ।
भक्त्योपपन्नेषु हि तद्विधानां
प्रसादचिह्नानि पुरःफलानि।।22।।

प्रसङ्गः – दिलीप की पत्नी सुदक्षिणा द्वारा सम्पादित पूजा-अर्चना को नन्दिनी ने स्वीकार किया–

अन्वयः – वत्सोत्सुका अपि सा स्तिमिता (सती) सपर्याम् प्रत्यग्रहीत् इति तौ ननन्दतुः। हि भक्त्या उपपन्नेषु तद्विधानां प्रसादचिह्नानि पुरःफलानि (भवन्ति)।

अर्थः – अपने बछड़े को देखने के लिए उत्कण्ठित होते हुए भी निश्चल (स्थिर) होकर, जो नन्दिनी ने सुदक्षिणा के द्वारा की गयी पूजा को स्वीकार किया, इससे राजा–रानी प्रसन्न हुए। क्योंकि अपने अनुरागी जनों के विषय में, नन्दिनी सदृश महानुभावों की प्रसन्नता के लक्षण, शीघ्र मनोरथ पूर्ण होने का निश्चय प्रकट करते हैं।

हिन्दी व्याख्याः – यद्यपि नन्दिनी गाय दिनभर वन में दूर रहने के कारण आश्रमस्थित अपने बछड़े से मिलने के लिए उत्सुक थी; तथापि उसने रानी सुदक्षिणा द्वारा की गयी पूजा को धैर्यपूर्वक स्वीकार किया– इससे राजा दिलीप और रानी सुदक्षिणा दोनों प्रसन्न हो गये। उन दोनों की प्रसन्नता का कारण यह था कि भक्ति से युक्त भक्तों के प्रति नन्दिनी जैसे आराध्यों की प्रसन्नता के लक्षण शीघ्र फल वाले होते हैं। कहने का अभिप्राय यह है कि अपने बछड़े के लिए उत्सुक होने पर भी नन्दिनी

ने सुदक्षिणा की पूजा को धैर्यपूर्वक स्वीकार किया अर्थात् गाय रानी और राजा के ऊपर प्रसन्न थी। आराध्य गाय के भक्त राजा और रानी के ऊपर, प्रसन्न होने के लक्षण से यह सूचित हो रहा था कि उन दोनों को सन्तान–प्राप्ति का वरदान रूपी फल शीघ्र ही मिलनेवाला है। इसीलिए राजा दिलीप और रानी सुदक्षिणा दोनों प्रसन्न हो गये।

शब्दार्थः – **वत्सोत्सुका** = अपने बछड़े को देखने के लिए उत्कण्ठिता होती हुई। **अपि** = भी। **सा** = उस नन्दिनी ने। **स्तिमिता** = निश्चल (स्थिर)। **सती** = होकर। **सपर्याम्** = पूजा को। **प्रत्यग्रहीत्** = स्वीकार किया। **इति** = इससे। **तौ** = वे दोनों। **ननन्दतुः** = प्रसन्न हुए। **भक्त्या** = भक्ति से। **उपपन्नेषु** = युक्त जनों के प्राप्त होने पर। **तद्विधानाम्** = नन्दिनी सदृश महानुभावों के। **प्रसादचिह्नानि** = प्रसन्नता के लक्षण। **पुरःफलानि** = शीघ्र मनोरथ पूर्ण करने वाले होते हैं।

संस्कृत व्याख्याः – नन्दिनाः प्रसादलक्षणानि दृष्ट्वा राजा दिलीपः राज्ञी सुदक्षिणा च प्रसन्नौ जातौ– वत्सोत्सुका = स्वार्भकाय उत्कण्ठिता, अपि = समुच्चये, सा = असौ नन्दिनीत्यर्थः, स्तिमिता = स्थिरा सती, सपर्याम्, = समर्चाम्, प्रत्यग्रहीत् = स्वीकृतवती, इति = एतस्मात् कारणात्, तौ = सुदक्षिणादिलीपौ, ननन्दतुः = प्रसन्नौ जातौ। हि = यतः, भक्त्या उपपन्नेषु = भक्तियुक्तेषु, तद्विधानाम् = नन्दिनीसदृशपूज्यानाम्, प्रसादचिह्नानि = प्रसन्नतायाः लक्षणानि, पुरःफलानि = प्रत्यासन्नफलानि भवन्ति। अविलम्बितफलसूचकानि चिह्नानि दृष्ट्वा आनन्दः जायत एव। विशेषवाक्यस्य सामान्येन समर्थनादर्थान्तरन्यासालङ्कारः। उपजातिवृत्तम्।

गुरोः सदारस्य निपीड्य पादौ
समाप्य सान्ध्यञ्च विधिं दिलीपः।
दोहावसाने पुनरेव दोग्ध्रीं
भेजे भुजोच्छिन्नरिपुर्निषण्णाम्।।23।।

प्रसङ्गः – राजा दिलीप के सान्ध्यकालीन क्रिया का वर्णन है।

अन्वयः – भुजोच्छिन्नरिपुः दिलीपः सदारस्य गुरोः पादौ निपीड्य सान्ध्यं विधिं च समाप्य दोहावसाने निषण्णां दोग्ध्रीम् पुनः एव भेजे।

अर्थः – अपनी भुजाओं के बल से शत्रुओं को नष्ट करने वाले राजा दिलीप, पत्नी अरुन्धती सहित गुरु वसिष्ठ जी की चरण-सेवा करने के बाद सायं सन्ध्या से निवृत्त होकर दूध दुहने के पश्चात् सानन्द बैठी हुई नन्दिनी गाय की सेवा पुनः शुरू कर दी।

हिन्दी व्याख्याः – राजा दिलीप गुरु के प्रति भी अत्यन्त श्रद्धावान् थे। गोचारण से आश्रम लौटकर राजा दिलीप ने गुरुपत्नी अरुन्धती और गुरु वसिष्ठ के चरणों को उन्हीं हाथों से दबाकर सेवा की, जिन हाथों से उन्होंने बलशाली शत्रुओं को उखाड़ (नष्ट) दिया था। तत्पश्चात् सन्ध्योपासना विधि (सायंकालीन सूर्य को अर्घ्यादि प्रदान) करके उसने दूध दुह लिए जाने के पश्चात् बैठी हुई उस दोग्ध्री (अतिशय दूध देने वाली) गाय की सेवा की।

विशेषः – दोग्ध्री का अर्थ होता है अतिशय दूध देने वाली जो स्वयं दूध टपकाने लगती है। यहाँ नन्दिनी के लिए 'दोग्ध्री' के विशेषण के प्रयोग की व्यञ्जना यह है कि, वह स्वयं कामनाओं को दूध की तरह प्रदान करने वाली गाय थी। अतः नन्दिनी भी कामधेनु (मनोरथों को पूर्ण करने वाली) गाय थी।

शब्दार्थः – **भुजोच्छिन्नरिपुः** = निज बाहुबल से शत्रुओं को नष्ट करनेवाले। **दिलीपः** = राजा दिलीप ने। **सदारस्य** = पत्नी अरुन्धती सहित। **गुरोः** = गुरु वसिष्ठ के। **पादौ** – दोनों पैरों को। **निपीड्य** = दबाकर (सेवा-कर)। **सान्ध्यम्** = सान्ध्यकालीन। **विधिम्** = कार्य को। **समाप्य** = समाप्त (निष्पादित) करके। **दोहावसाने** = दूध दूहने का कार्य समाप्त होने पर। **निषण्णाम्** = बैठी हुई। **दोग्ध्रीम्** = गाय (नन्दिनी) की। **एव** = ही। **पुनः** = फिर से। **भेजे** = सेवा शुरु कर दी।

संस्कृतव्याख्या – राज्ञः सायंकालीनक्रियाकलापस्य वर्णनं क्रियते– भुजोच्छिन्नरिपुः = स्वबाहुभ्याम् उत्सादिताः शत्रवः येन असौ राजा दिलीपः, सदारस्य = पत्नीसहितस्य, गुरोः वसिष्ठस्य इत्यर्थः, पादौ = चरणौ, निपीड्य = संवाह्य, सान्ध्यं विधिम् = सन्ध्योपासनाक्रियाम्, च = समुच्चये, समाप्य = सम्पाद्य, दोहावसाने = दोहनकार्यानन्तरम्, निषण्णाम् = उपविष्टाम्, दोग्ध्रीम् = स्वयमेव दुग्धप्रदानशीलां धेनुं नन्दिनीम्, पुनः = भूयः, एव = निपातने, भेजे = सेवितवान्। उपजातिछन्दः।

तामन्तिकन्यस्तबलिप्रदीपा–
मन्वास्य गोप्ता गृहिणीसहायः।
क्रमेण सुप्तामनुसंविवेश
सुप्तोत्थितां प्रातरनूदतिष्ठत्।।24।।

प्रसङ्गः – प्रस्तुत श्लोक में राजा दिलीप और रानी सुदक्षिणा द्वारा रात्रि में की जाने वाली नन्दिनी गाय की सेवा का वर्णन कवि कालिदास जी कर रहे हैं।

अन्वयः – गोप्ता गृहिणीसहायः (सन्) अन्तिकन्यस्तबलिप्रदीपां ताम् अन्वास्य क्रमेण सुप्ताम् अनुसंविवेश प्रातः सुप्तोत्थिताम् अनु उदतिष्ठत्।

अर्थः – रक्षा करने वाले सपत्नीक राजा दिलीप, पास में रखा है उपहार (पूजा-सामग्री) तथा दीपक जिसके, ऐसी बैठी हुई उस नन्दिनी गाय के पीछे बैठकर क्रम से नन्दिनी के सोने पर सोये और प्रातःकाल (गाय के) उठते ही स्वयं भी उठ गये।

हिन्दीव्याख्या – प्रजा के रक्षक राजा दिलीप आश्रम में पत्नी सुदक्षिणा के साथ नन्दिनी की सेवा में संलग्न हुए। रात्रि में नन्दिनी के समीप पूजा के दीप रख दिये गये थे ऐसी गाय के पास बैठकर उसकी सेवा की और क्रमशः जब वह गाय सो गयी तो पत्नी सहित राजा भी सो गये और प्रातःकाल जैसे ही गाय सोकर उठ गयी, वैसे ही रानी सहित राजा दिलीप भी उठ गये।

शब्दार्थः – **गोप्ता** = रक्षा करनेवाले। **गृहिणीसहायः** = पत्नी सुदक्षिणा सहित। **अन्तिकन्यस्तबलिप्रदीपाम्** = समीप में ही रखी गयी बलि (पूजोपकरण की सामग्री) तथा दीपक

वाली। **ताम्** = उस गाय के। **अन्वास्य** = पीछे बैठकर। **क्रमेण** = क्रम से। **सुप्ताम्** = (गाय के) सोने पर। **अनुसंविवेश** = सोये। **प्रातः** = प्रातः काल। **सुप्तोत्थिताम्** = (गाय के) सोकर उठने के। **अनु** = पश्चात् या बाद में। **उदतिष्ठत्** = (स्वयं भी) उठ जाया करते थे।

संस्कृतव्याख्या – राजा दिलीपः आश्रमे पत्न्या सह गोसेवायां संलग्नः जातः। गोप्ता = प्रजारक्षकः, गृहिणीसहायः = पत्न्या सुदक्षिणया सहितः, अन्तिकन्यस्तबलिप्रदीपाम् = समीपस्थापितपूजाप्रदीपकाम् ताम् = पूर्वोक्तां नन्दिनीम्, अन्वास्य = पश्चादुपविश्य, क्रमेण = क्रमशः, सुप्ताम् = निद्रिताम्, अनु = पश्चात्, संविवेश = सुष्वाप, प्रातः = प्रभाते, सुप्तोत्थिताम् = जागरिताम्, अनु = अनुक्षणमेव, उदतिष्ठत् = उत्थितवान्। उपजातिछन्दः।

इत्थं व्रतं धारयतः प्रजार्थं,
समं महिष्या महनीयकीर्तेः।
सप्त व्यतीयुस्त्रिगुणानि तस्य,
दिनानि दीनोद्धरणोचितस्य।।25।।

प्रसङ्गः – प्रस्तुत श्लोक में कवि कालिदास जी ने नन्दिनी गाय की सेवा करते-करते राजा दिलीप के इक्कीस दिन बीतने का वर्णन किया है।

अन्वयः – इत्थं प्रजार्थं महिष्या समं व्रतं धारयतः महनीयकीर्तेः दीनोद्धरणोचितस्य तस्य सप्त त्रिगुणानि दिनानि व्यतीयुः।

अर्थः – इस प्रकार पुत्र के लिए महारानी सुदक्षिणा के साथ व्रत को धारण करते हुए, प्रशंसनीय कीर्ति वाले, दुःखियों के उद्धारक महाराज दिलीप के इक्कीस दिन बीत गये।

हिन्दी व्याख्याः – प्रशंसनीय कीर्तिवाले और दीनों का उद्धार करने में समर्थ राजा दिलीप, पत्नी महारानी सुदक्षिणा के साथ सन्तान प्राप्ति के लिए गोसेवा का व्रत कर रहे थे। वह दिन भर वन में गोचारण करते थे और आश्रम में पत्नी के साथ गाय की सेवा में संलग्न हो जाते थे। इस प्रकार गाय नन्दिनी की सेवा करते हुए उनके इक्कीस (7 x 3 = 21) दिन बीत गये।

शब्दार्थः – इत्थम् = इस प्रकार। **प्रजार्थम्** = पुत्र के लिए। **महिष्या** = महारानी सुदक्षिणा के। **समम्** = साथ। **व्रतम्** = व्रत को। **धारयतः** = धारण करते हुए। **महनीयकीर्तेः** = प्रशंसनीय कीर्तिवाले। **दीनोद्धरणोचितस्य** = दीनों के उद्धारक। **तस्य** = दिलीप के। **सप्त त्रिगुणानि** = इक्कीस। **दिनानि** = दिन। **व्यतीयुः** = बीत गये।

संस्कृतव्याख्याः – इत्थम् = अनेन प्रकारेण, प्रजार्थम् = सन्तानाय, महिष्या = कृताभिषेकया सुदक्षिणया, समम् = सार्धम्, व्रतम् = नियमम्, धारयतः = दधतः, महनीयकीर्तेः = महनीया कीर्तिः यस्य तादृशस्य दिलीपस्य, दीनोद्धरणोचितस्य = दैन्यविमोचनतत्परस्य, नृपस्य, सप्त त्रिगुणानि = त्रयो गुणाः येषां तानि त्रिगुणानि त्रिरावृत्तानि वा एकविंशतिदिनानि, व्यतीयुः = व्यतीतानि। उपजातिछन्दः।

अन्येद्युरात्मानुचरस्य भावं
जिज्ञासमाना मुनिहोमधेनुः।
गङ्गाप्रपातान्तविरूढशष्पं
गौरीगुरोर्गह्वरमाविवेश।। 26।।

प्रसङ्गः – उपमासम्राट् कवि कालिदास, नन्दिनी द्वारा बाईसवें दिन राजा दिलीप की परीक्षा लेने का वर्णन करते हैं–

अन्वयः – अन्येद्युः मुनिहोमधेनुः आत्मानुचरस्य भावं जिज्ञासमाना गङ्गाप्रपातान्तविरूढशष्पं गौरीगुरोः गह्वरं आविवेश।

अर्थः – अगले दिन अर्थात् बाईसवें दिन नन्दिनी अपने सेवक राजा दिलीप की 'मुझ में दृढ़ भक्ति है कि नहीं' इस भाव को जानने की अभिलााषा करती हुई गङ्गा के झरने के पास उगी हुई हरी-हरी घासों से युक्त हिमालय की गुफा में प्रवेश कर गयी।

हिन्दी व्याख्याः – जब राजा दिलीप के पत्नी सहित सन्तान प्राप्ति के लिए गोसेवा का व्रत करते हुए इक्कीस दिन बीत गये, तब गाय नन्दिनी ने अपने सेवक राजा दिलीप की परीक्षा लेनी चाही। अतः अगले दिन अर्थात् बाईसवें दिन महर्षि वसिष्ठ के हवन के लिए दही, घी आदि प्रदान करने वाली वह गाय अपने सेवक राजा दिलीप के भाव को जानने की इच्छा से गङ्गा के झरने के समीप उगी हुई नई घासोंवाले हिमालय की गुफा में प्रवेश कर गयी।

शब्दार्थ – अन्येद्युः = अगले दिन (22वें दिन)। **मुनिहोमधेनुः** = मुनि वसिष्ठ के हवन की सामग्री प्रदान करने वाली नन्दिनी गाय। **आत्मानुचरस्य** =अपने सेवक दिलीप के। **भावम्** = हृदयगत भाव को। **जिज्ञासमाना** = जानने की अभिलाषा करती हुई। **गङ्गाप्रपात + अन्तविरूढशष्पम्** = गङ्गा के झरने (प्रपात) के पास (अन्त) उगी हुई (विरूढ) हरी-हरी घास से युक्त। **गौरीगुरोः** = पार्वती के गुरु अर्थात् पिता हिमालय के। **गह्वरम्** = गुफा में। **आविवेश** = प्रवेश कर गयी।

संस्कृतव्याख्या – अन्येद्युः = अन्यस्मिन् दिने द्वाविंशे दिने, मुनिहोमधेनुः = मुनेः वसिष्ठस्य होमधेनुः यज्ञसाधनभूता नन्दिनी, आत्मानुचरस्य = आत्मनः, अनुचरः =सेवकः, तस्य = दिलीपस्य, भावं = दृढभक्तिम् अभिप्रायं वा। जिज्ञासमाना = ज्ञातुं इच्छन्ती, नन्दिनी = गौः, गङ्गाप्रपातान्तविरूढशष्पं प्रपतति अस्मिन् इति प्रपातः, गङ्गायाः प्रपातः तस्य अन्तः = समीपं तस्मिन् विरूढानि उत्पन्नानि जातानि शष्पाणि बालतृणानि यस्मिन् तादृशं, गौरीगुरोः = हिमालयस्य। गह्वरम् = गुहां। आविवेश = प्रविष्टवती। उपजातिछन्दः।

सा दुष्प्रधर्षा मनसापि हिंस्रै–
रित्यद्रिशोभाप्रहितेक्षणेन।
अलक्षिताभ्युत्पतनो नृपेण
प्रसह्य सिंहः किल तां चकर्ष।। 27।।

प्रसङ्गः – नन्दिनी गाय के गुफा में प्रवेश कर जाने पर मायावी सिंह ने नन्दिनी पर आक्रमण कर दिया।

अन्वयः – सा हिंस्रैः मनसापि दुष्प्रधर्षा इति अद्रिशोभाप्रहितेक्षणेन नृपेण अलक्षिताभ्युत्पतनः सिंहः तां प्रसह्य किल चकर्ष।

अर्थः – हिंसक दुष्ट व्याघ्रादि जन्तु इस नन्दिनी गाय पर आक्रमण करने की बात भी नहीं सोच सकते, आक्रमण तो दूर रहा, इस कारण निश्चिन्त होकर हिमालय की शोभा देखने में आँखें लगाये हुए राजा दिलीप से जिसका झपटना नहीं देखा गया ऐसे सिंह ने जबरदस्ती नन्दिनी को अपनी ओर खींचा।

हिन्दी व्याख्याः – बाईसवें दिन राजा दिलीप नन्दिनी गाय को चरा रहे थे। हिंसक जीव मुनि वसिष्ठ की इस दिव्य गाय के ऊपर आक्रमण करने को मन से भी नहीं सोच सकते– यह विचार कर राजा दिलीप ने हिमालय पर्वत की सुन्दर शोभा निहारने में अपनी दृष्टि लगा ली। इधर नन्दिनी गाय चरते–चरते गङ्गा के झरने के समीप नयी घासों वाले हिमालय की गुफा में प्रवेश कर गयी। तब तक गुफा में रहने वाले एक सिंह ने गाय के ऊपर आक्रमण करके गाय को बलपूर्वक खींच लिया। पर्वत की शोभा निहारने में लगी दृष्टिवाले राजा दिलीप, सिंह के आक्रमण को नहीं देख पाये।

शब्दार्थः – हिंस्रैः = हिंसक जन्तुओं के द्वारा। **सा** = वह नन्दिनी गाय। **मनसा अपि** = मन से भी। **दुष्प्रधर्षा** = बड़ी ही कठिनता से आक्रमण करने योग्य है। **इति** = ऐसा सोचकर (राजा दिलीप ने)। **अद्रिशोभा-प्रहितेक्षणेन** = हिमालय की शोभा देखने में आँखें लगाए हुए। **नृपेण** = राजा दिलीप से। **अलक्षिताभ्युत्पतनः** = जिस सिंह का झपटना (गाय को पकड़ने के लिए सिंह द्वारा कूदना) नहीं देखा गया ऐसे। **सिंहः** = मायावी सिंह ने। **ताम्** = उस नन्दिनी गाय को। **प्रसह्य** = जबरदस्ती या बलपूर्वक। **चकर्ष** = खींच ले गया। **किल** = मल्लिनाथ का कहना है कि नन्दिनी पर इस सिंह का आक्रमण माया द्वारा रचित था, वास्तविक नहीं। इसी कारण कालिदास ने 'किल' अव्यय शब्द का प्रयोग किया है।

संस्कृतव्याख्या – सा = नन्दिनी धेनुः, हिंस्रैः = व्याघ्रादिभिः जन्तुभिः, मनसा = चित्तेन, अपि = का कथा शरीरेण, दुष्प्रधर्षा = दुर्धर्षा दुर्दमनीया सा नन्दिनी, इति = अस्य हेतोः, अद्रिशोभाप्रहितेक्षणेन = अद्रेः शोभा तस्यां प्रहिते (दत्ते) ईक्षणे (नेत्रे) येन तादृशेन, नृपेण = राजा दिलीपेन, अलक्षिताभ्युत्पतनः = अलक्षितं (अज्ञातं) अभ्युत्पतनं (आक्रमणं) यस्य तथा उक्तः, सिंहः = केसरी, ताम् = नन्दिनीं गाम्, प्रसह्य = हठात् बलपूर्वकं वा, चकर्ष = कृष्टवान्, किल = तस्याः नन्दिन्याः उपरि आक्रमणं अकरोत् इति भावः। उपजातिछन्दः।

तदीयमाक्रन्दितमार्त्तसाधो–
र्गुहानिबद्धप्रतिशब्ददीर्घम्।
रश्मिष्विवादाय नगेन्द्रसक्तां
निवर्तयामास नृपस्य दृष्टिम्।। 28।।

प्रसङ्गः – नन्दिनी के आर्त्तस्वर ने राजा दिलीप का ध्यान उसकी ओर आकृष्ट किया।

अन्वयः – गुहानिबद्धप्रतिशब्ददीर्घम् तदीयम् आक्रन्दितं आर्त्तसाधोः नृपस्य नगेन्द्रसक्तां दृष्टिं रश्मिषु आदाय इव निवर्तयामास।

अर्थः – गुफा में टकराये हुए प्रतिशब्द (प्रतिध्वनि) से दुगुने हुए नन्दिनी के आर्त्तस्वर ने दुःखियों के रक्षक राजा दिलीप की हिमालय की सुन्दरता देखने में लगी हुई दृष्टि को इस प्रकार अपनी ओर फेर लिया, जिस प्रकार लगाम पकड़कर सारथि, घोड़े आदि को फेर (घुमा) लेते हैं।

हिन्दी व्याख्याः – जब गुफा में रहनेवाले सिंह ने नन्दिनी गाय के ऊपर आक्रमण कर उसे बलपूर्वक खींचा, तब गाय आर्त्तस्वर में चिल्लाने लगी। गाय का वह आर्त्तस्वर गुफा में उठी प्रतिध्वनि के कारण अत्यन्त दीर्घ हो उठा। क्योंकि राजा दिलीप पीड़ितों के प्रति दयालु थे, अतः गाय के आर्त्तनाद ने हिमालय पर्वत की शोभा देखने में लगी हुई दृष्टि को मानों लगाम से खींचकर अपनी ओर लौटा लिया। जिस प्रकार सारथि घोड़े को लगाम से खींचकर लौटा लेता है, उसी प्रकार गाय के आर्त्तनाद ने राजा की पर्वत में लगी हुई दृष्टि को बलपूर्वक अपनी ओर लौटा लिया।

शब्दार्थः – गुहानिबद्धप्रतिशब्ददीर्घम् = गुफा में टकराये हुए प्रतिशब्द से दुगुने हुए। **तदीयम्** = उस नन्दिनी के इस। **आक्रन्दितम्** = आर्त्तस्वर ने। **आर्त्तसाधोः** = दीनों के रक्षक। **नृपस्य** = राजा दिलीप की। **नगेन्द्रसक्ताम्** = हिमालय की (सुन्दरता देखने में) लगी हुई। **दृष्टिम्** = दृष्टि को। **इव** = की भाँति। **निवर्तयामास** =(अपनी ओर) लौटा लिया। **रश्मिषु** =लगामों में। **आदाय इव** = मानों बाँधकर।

अल्ङ्कार – 'मानो' लगाम में बाँधकर – यहाँ उत्प्रेक्षा अलङ्कार है।

संस्कृतव्याख्या – गुहानिबद्धप्रतिशब्ददीर्घम् = गुहायां निबद्धः व्याप्तः स च असौ प्रतिशब्दः प्रतिध्वनिः तेन दीर्घम् आयतम्, तथा उक्तम्, तदीयम् = तस्याः नन्दिन्याः इदम्, आक्रन्दितम् = उच्चैः रुदितम्, आर्त्तसाधोः = आर्त्तेषु (पीडितेषु) साधुः हितकारी इति अर्थः तस्य, नृपस्य = राज्ञः दिलीपस्य, नगेन्द्रसक्ताम् = नगेन्द्रे हिमालये, सक्ताम् = संलग्नाम्, दृष्टिम् = नेत्रं, रश्मिषु = प्रग्रहेषु, आदाय = गृहीत्वा, इव = यथा, निवर्तयामास = न्यवर्तयत्। रश्मिष्विवादाय इत्यत्र उत्प्रेक्षालङ्कार उपजातिवृत्तम्।

स पाटलायां गवि तस्थिवांसं
धनुर्धरः केसरिणं ददर्श।
अधित्यकायामिव धातुमय्यां
लोध्रद्रुमं सानुमतः प्रफुल्लम्।। 29।।

प्रसङ्गः – राजा दिलीप ने गाय पर बैठे हुए एक सिंह को देखा।

अन्वयः – धनुर्धरः सः पाटलायां गवि तस्थिवांसं केसरिणं सानुमतः धातुमय्यां अधित्यकायां प्रफुल्लं लोध्रद्रुमम् इव ददर्श।

अर्थः – धनुष को धारण करनेवाले राजा दिलीप ने लालवर्णवाली नन्दिनी गाय के ऊपर बैठे हुए सिंह को पर्वत की गेरुमयी ऊपर की भूमि में विकसित लोध्र नामक वृक्ष की भाँति देखा।

हिन्दी व्याख्या – सिंह द्वारा आक्रान्त नन्दिनी गाय के आर्त्तनाद को सुनकर जब राजा दिलीप ने अपनी दृष्टि को पर्वत से हटाकर देखा तो पाटल (लाल या गुलाबी) रंग की गाय के ऊपर सिंह बैठा हुआ था। लाल रंग की गाय के ऊपर बैठा हुआ पीले रंग का सिंह पर्वत की गेरुआ रंग की ऊपरी भूमि (अधित्यका) पर खिले हुए पुष्पों से लदे हुए लोध्रवृक्ष के समान दिखायी पड़ रहा था।

अलङ्कार – ''लोध्रवृक्ष के समान'' यहाँ उपमा अलङ्कार है।

शब्दार्थः – धनुर्धरः = धनुष को धारण करनेवाले। **सः** = उस राजा दिलीप ने। **पाटलायाम्** = लाल वर्ण वाली। **गवि** = गाय के ऊपर। **तस्थिवांसम्** = बैठे हुए। **केसरिणम्** = सिंह को। **सानुमतः** = पहाड़ की। **धातुमय्याम्** = गेरुमयी। **अधित्यकायाम्** = ऊपर की भूमि में। **प्रफुल्लम्** = उगे हुए। **लोध्रद्रुमम्** = लोध्र नामक वृक्ष की। **इव** = भाँति। **ददर्श** = देखा।

संस्कृतव्याख्या – धनुर्धरः = चापधरः, सः = राजा दिलीपः, पाटलायाम् = रक्तवर्णायाम् (श्वेतरक्तस्तु पाटलः इत्यमरः) गवि = धेनौ नन्दिन्याम्, तस्थिवांसम् = स्थितम्, केसरिणम् = सिंहम्, सानुमतः = सानूनि सन्ति अस्य असौ सानुमान् तस्य सानुमतः पर्वतस्य, धातुमय्याम् = धातोः (गैरिकस्य) विकारः धातुमयी तस्यां गैरिकवत्याम्, अधित्यकायाम् = ऊर्ध्वभूमौ, प्रफुल्लम् = विकसितम्, लोध्रद्रुमम् = लोध्रः च असौ द्रुमः इति लोध्रद्रुमः तं लोध्रवृक्षम्, इव = यथा, ददर्श = अपश्यत्। 'लोध्रद्रुममिव' इत्यत्रोपमालङ्कारः। उपजातिवृत्तम्।

ततो मृगेन्द्रस्य मृगेन्द्रगामी
वधाय वध्यस्य शरं शरण्यः।
जाताभिषङ्गो नृपतिर्निषङ्गा–
दुद्धर्तुमैच्छत्प्रसभोद्धृतारिः ।। 30 ।।

प्रसङ्गः – नन्दिनी गाय पर बैठे हुये हुए सिंह को देखकर राजा दिलीप ने बाण से सिंह को मारने का प्रयास किया।

अन्वयः – ततः मृगेन्द्रगामी शरण्यः प्रसभोद्धृतारिः नृपतिः जाताभिषङ्गः (सन्) वध्यस्य मृगेन्द्रस्य वधाय निषङ्गात् शरम् उद्धर्तुम् ऐच्छत्।

अर्थः – सिंह को देखने के पश्चात् मृगेन्द्र के समान चलनेवाले, शरणागतों की रक्षा करने में निपुण, बलपूर्वक शत्रुओं को नष्ट करनेवाले, अपमान पाये हुए राजा दिलीप ने वध करने योग्य सिंह को मारने के लिए तरकश से बाण को निकालने की इच्छा की।

हिन्दी व्याख्याः – नन्दिनी गाय को आक्रान्त कर उसके ऊपर बैठे हुए सिंह को देखकर राजा दिलीप अपमान का अनुभव करने लगे, क्योंकि वह स्वयं सिंह के समान चलते थे और शरणागतों के शरणस्थल थे तथा उसने बलपूर्वक शत्रुओं को उखाड़ फेंका था, ऐसे प्रतापी राजा द्वारा संरक्षित गाय

के ऊपर सिंह आक्रमण कर बैठ गया था। ऐसा दुस्साहस करने वाले वध के योग्य उस सिंह का वध करने के लिए राजा दिलीप ने तरकश से बाण निकालना चाहा।

शब्दार्थः – ततः = उसके पश्चात् अर्थात् सिंह को देखने के बाद। **मृगेन्द्रगामी** = सिंह के समान चलने वाले। **शरण्यः** = शरण में आये हुए की रक्षा करने में निपुण। **प्रसभोद्धृतारिः** = बलपूर्वक शत्रुओं को नष्ट करने वाले। **जाताभिषङ्गः** = (सिंह द्वारा गाय पर आक्रमण करने के कारण) अपमान पाये हुए राजा दिलीप ने। **वध्यस्य** = वध करने योग्य। **मृगेन्द्रस्य** = सिंह को। **वधाय** = मारने के लिए। **निषङ्गात्** = तरकश से। **शरम्** = बाण को। **उद्धर्तुम्** = निकालने की। **ऐच्छत्** = इच्छा की।

संस्कृतव्याख्या – ततः = मायावीसिंहदर्शनानन्तरम्, मृगेन्द्रगामी = मृगेन्द्र इव गच्छति इति मृगेन्द्रगामी सिंहगतिः, शरण्यः = शरणागतरक्षकः, प्रसभोद्धृतारिः = प्रसभेन बलपूर्वकम्, उद्धृताः उन्मूलिताः (नाशिताः) अरयः शत्रवः येन तादृशः राजा दिलीपः, जाताभिषङ्गः = प्राप्तपराभवः सन्, वध्यस्य = मारणीयस्य मृगेन्द्रस्यः = मायाविनः सिंहस्य, वधाय = हननाय, निषङ्गात् = तूणीरात्, शरम् = बाणम्, उद्धर्तुम् = ग्रहीतुम्, ऐच्छत् = अवाञ्छत्। 'मृगेन्द्रगामी' इत्यत्र उपमालङ्कार। उपजातिवृत्तम्।

वामेतरस्तस्य करः प्रहर्तु–
र्नखप्रभाभूषितकङ्कपत्रे।
सक्ताङ्गुलिः सायकपुङ्ख एव
चित्रार्पितारम्भ इवावतस्थे।। 31।।

प्रसङ्गः – नन्दिनी की रक्षा हेतु राजा दिलीप ने जैसे ही तरकश से बाण निकालकर सिंह को मारना चाहा, वैसे ही राजा का हाथ बाण से चिपक गया।

अन्वयः – प्रहर्तुः तस्य वामेतरः करः नखप्रभाभूषितकङ्कपत्रे सायकपुङ्खे एव सक्ताङ्गुलिः चित्रार्पितारम्भः इव अवतस्थे।

अर्थः – सिंह के ऊपर प्रहार करने की इच्छा रखनेवाले राजा दिलीप का दाहिना हाथ, अपने नख की कान्ति से भूषित, कंकपक्षी के पंख जिसमें लगे हुए हैं, ऐसे बाण के मूल में ही अँगुलियाँ चिपक (सट) जाने से चित्र में लिखित (जड़वत्) बाण निकालने के उद्योग में लगे हुए के समान हो गया।

अलङ्कारः – चित्र में लिखित की भाँति यहाँ उपमा अलङ्कार है।

हिन्दी व्याख्याः – नन्दिनी गाय के ऊपर बैठे हुए सिंह का वध करने के लिए राजा दिलीप ने जैसे ही बाण निकालना चाहा, वैसे ही प्रहार करने वाले उस राजा दिलीप के दाहिने हाथ की अंगुलियाँ नाखून की किरणों से सुशोभित, कङ्क पक्षी के पंख से निर्मित बाण के पिछले भाग में चिपक गयी और राजा का वह दाहिना हाथ चित्र में चित्रित बाण निकालने के व्यापार के समान स्थिर हो गया। अर्थात् बाण के पृष्ठभाग में चिपकी हुई अंगुलियों वाला बाण निकालने की चेष्टावाला दाहिना हाथ चित्रित की भाँति जड़ हो गया।

शब्दार्थ – प्रहर्तुः =(सिंह के ऊपर) प्रहार करने की इच्छा रखनेवाले। **तस्य** = उस राजा दिलीप का। **वामेतरः** = बायें हाथ से भिन्न अर्थात् दाहिना। **करः** = हाथ। **नखप्रभाभूषितकङ्कपत्रे** = अपने नख की कान्ति से भूषित कङ्क नामक पक्षी के पंख से युक्त। **सायकपुङ्ख एव** = बाण के मूल में ही। **सक्ताङ्गुलिः** = चिपके हुए अँगुलियों वाला। **चित्रार्पितारम्भः इव** = चित्र में लिखित आरम्भ (कार्य) अर्थात् चित्रित किये गये (जड़वत्) उद्योग के समान। **अवतस्थे** = हो गया।

संस्कृतव्याख्या – प्रहर्तुः = ताडयितुः (प्रहारकर्तुः)। तस्य = राज्ञः दिलीपस्य। वामेतरः = वामात् करात् इतरः भिन्नः अर्थात् दक्षिणः करः = हस्तः, नखप्रभाभूषितकङ्कपत्रे = नखानां (कररुहाणां) प्रभाः कान्तयः ताभिः भूषितानि = सुशोभितानि, कङ्कस्य = पक्षिविशेषस्य, पत्राणि = पक्षाः, यस्य तस्मिन्, सायकपुङ्खे = सायकस्य बाणस्य पुङ्खः मूलं तस्मिन् शरमूले, एव सक्ताङ्गुलिः = सक्ताः संलग्नाः अङ्गुलयः करशाखाः यस्य तादृशः करः, चित्रार्पितारम्भः इव = चित्रे आलेख्ये अर्पितः लिखितः आरम्भः बाणनिष्कासनोद्योगः यस्य सः, इव = यथा, अवतस्थे = अवस्थितः अभूत्। 'चित्रार्पितारम्भ इव' इत्यत्र उपमालङ्कारः। उपजातिछन्दः।

बाहुप्रतिष्टम्भविवृद्धमन्यु-
रभ्यर्णमागस्कृतमस्पृशद्भिः।
राजा स्वतेजोभिरदह्यतान्त-
र्भोगीव मन्त्रौषधिरुद्धवीर्यः।।32।।

प्रसङ्गः – तरकश में हाथ फँस जाने के कारण कुछ कर सकने में असमर्थ राजा दिलीप अपने ही तेज से जलने लगे।

अन्वयः – बाहुप्रतिष्टम्भविवृद्धमन्युः राजा अभ्यर्णम् आगस्कृतम् अस्पृशद्भिः स्वतेजोभिः मन्त्रौषधिरुद्धवीर्यः भोगी इव अन्तः अदह्यत।

अर्थः – हाथ के रुक जाने से अत्यन्त क्रुद्ध राजा दिलीप, मन्त्र तथा औषधि से बाँध दिया गया है प्रभाव (पराक्रम) जिसका, ऐसे विषधर साँप की भाँति, पास में खड़े अपराधी सिंह को न छू सकनेवाले अपने तेज से भीतर–ही–भीतर जलने लगे।

हिन्दी व्याख्याः – नन्दिनी गाय के ऊपर बैठे हुए सिंह का वध करने के लिए बाण निकालते समय जब राजा दिलीप का बाणपृष्ठ में चिपकी हुई अंगुलियोंवाला दाहिना हाथ जड़ हो गया तो, राजा का क्रोध और अधिक बढ़ गया, क्योंकि वह सामने स्थित अपराधी सिंह को दण्ड देना तो दूर छू भी नहीं पा रहे थे, अतः वह अपने तेज (प्रतापाग्नि) से अन्दर–ही–अन्दर जलने लगे, जैसे मन्त्र तथा औषधियों के बल से रोक दिये गये पराक्रम वाला फणधारी सर्प अपने तेज (विष) से अन्दर ही अन्दर जलने लगता है।

शब्दार्थ – बाहुप्रतिष्टम्भविवृद्धमन्युः = हाथ के रुक (प्रतिष्टम्भ) जाने से बढ़े हुए क्रोधवाले। **राजा** = दिलीप ने। **मन्त्रौषधिरुद्धवीर्यः** = मन्त्र तथा औषधि से बँधे हुये पराक्रमवाले। **भोगी इव** = साँप की भाँति। **अभ्यर्णम्** = पास में स्थित। **आगस्कृतम्** = अपराधी सिंह को। **अस्पृशद्भिः** = न छू सकनेवाले। **स्वतेजोभिः** = अपने ही तेज से। **अन्तः** = भीतर ही भीतर। **अदह्यत** = जलने लगे।

अलङ्कारः – 'भोगीव' में उपमा अलङ्कार है।

संस्कृतव्याख्या – बाहुप्रतिष्टम्भविवृद्धमन्युः = भुजप्रतिबन्धप्रवृद्धक्रोधः अर्थात् बाहोः प्रतिष्टम्भः तेन प्रवृद्धः मन्युः क्रोधः यस्य तादृशः दिलीपः, मन्त्रौषधिरुद्धवीर्यः = मन्त्रश्च सर्पविषनिवारकमन्त्रः औषधिः भैषज्यं चेति मन्त्रौषधी ताभ्यां रुद्धम् प्रतिबद्धं वीर्यम् बलं यस्य असौ, भोगी इव = सर्पः इव, अभ्यर्णम् = समीपस्थम्, आगस्कृतम् = अपराधिनं सिंहम्, अस्पृशद्भिः = न स्पृशद्भिः, स्वतेजोभिः = स्वस्य आत्मनः तेजांसि प्रभावाः तैः, अन्तः = मध्ये, अदह्यत = अतप्यत। श्लोकेऽस्मिन् 'भोगीव' इत्यत्र उपमालङ्कारः उपजातिवृत्तम्।

तमार्यगृह्यं निगृहीतधेनु–
र्मनुष्यवाचा मनुवंशकेतुम्।
विस्माययन्विस्मितमात्मवृत्तौ
सिंहोरुसत्त्वं निजगाद सिंहः।।33।।

प्रसङ्गः – प्रस्तुत श्लोक में सिंह ने राजा दिलीप से मनुष्य की वाणी में कहा।

अन्वय – निगृहीतधेनुः सिंहः आर्यगृह्यं मनुवंशकेतुं सिंहोरुसत्त्वं आत्मवृत्तौ विस्मितं तं मनुष्यवाचा विस्माययन् निजगाद।

अर्थः – नन्दिनी गाय को पीड़ित करनेवाला सिंह, सज्जनों द्वारा माननीय, मनुवंश के शिरोमणि, सिंह के समान पराक्रमी, अपने बाहुस्तम्भन रूप व्यापार के विषय में आश्चर्य करने वाले उस राजा दिलीप को फिर चकित करता हुआ मनुष्य की वाणी में बोला।

हिन्दी व्याख्याः – राजा दिलीप सज्जनों द्वारा सम्माननीय और मनुवंश की पताका स्वरूप अर्थात् मनुवंश की पहचान थे। वह सिंह के समान महाबलशाली थे। राजा बाणपृष्ठ में अँगुलियों के चिपक जाने और दाहिने हाथ के जड हो जाने के कारण अपने बाण निकालने की असफल चेष्टा वाली घटना के विषय में आश्चर्यचकित थे। गाय को वश में किये हुए सिंह ने पहले से ही आश्चर्यचकित राजा दिलीप को मनुष्यवाणी से और अधिक आश्चर्यचकित करते हुए बोला।

शब्दार्थ – निगृहीतधेनुः = नन्दिनी गाय को पीड़ित करने वाला। **सिंहः** = सिंह। **आर्यगृह्यम्** = सज्जनों द्वारा माननीय। **मनुवंशकेतुम्** = मनुवंश के शिरोमणि। **सिंहोरुसत्त्वम्** = सिंह के समान पराक्रमी। **आत्मवृत्तौ** = अपने (तरकश में बाहुस्तम्भन रूप) कार्य पर। **विस्मितं तम्** = आश्चर्ययुक्त हुए उस राजा दिलीप को। **मनुष्यवाचा** = मनुष्य की वाणी से। **विस्माययन्** = चकित करता हुआ (सिंह)। **निजगाद** = बोला।

अलङ्कारः – 'मनुवंशकेतुम्' में रूपक और 'सिंहोरुसत्त्वम्' में उपमा की संसृष्टि है।

संस्कृतव्याख्या – निगृहीतधेनुः = निगृहीता धेनुः येन, पीडितधेनुः, स = सिंहः, आर्यगृह्यं = आर्याणां सतां गृह्यः मान्यः तादृशं दिलीपं, मनुवंशकेतुम् = मनुकुलशिरोमणिं, मनोः वंशः मनुवंशः तस्य केतुः शिरोमणिः तादृशं दिलीपम्, सिंहोरुसत्त्वं = सिंहस्य इव उरु सत्त्वं यस्य तं दिलीपम्, आत्मवृत्तौ = आत्मनः वृत्तिः तस्याम्, मनुष्यवाचा = मनुष्यस्य वाक् तया मनुष्यवाचा, विस्माययन् साश्चर्यं प्रापयन्, निजगाद = उवाच। 'मनुवंशकेतुम्' इत्यत्र रूपकम् अथ च 'सिंहोरुसत्त्वम्' इत्यत्र उपमा। उभयोः तिलतण्डुलवत् स्थित्या संसृष्टिः। उपजातिवृत्तम्।

अलं महीपाल ! तव श्रमेण
प्रयुक्तमप्यस्त्रमितो वृथा स्यात्।
न पादपोन्मूलनशक्तिरंहः
शिलोच्चये मूर्च्छति मारुतस्य।।34।।

प्रसङ्गः – सिंह राजा दिलीप से कहता है।

अन्वयः – महीपाल! तव श्रमेण अलम् इतः प्रयुक्तम् अपि अस्त्रम् वृथा स्यात्। हि मारुतस्य पादपोन्मूलनशक्तिरंहः शिलोच्चये न मूर्च्छति।

अर्थः – हे! पृथिवी के रक्षक राजा दिलीप! तुम मुझे मारने का प्रयत्न मत करो, क्योंकि मेरे ऊपर चलाया हुआ अस्त्र उसी प्रकार व्यर्थ होगा, जिस प्रकार कि वृक्षों को उखाड़ने की शक्ति रखनेवाला वायु का वेग पर्वत को उखाड़ने में विफल होता है।

हिन्दी व्याख्याः – नन्दिनी गाय के ऊपर बैठे हुए सिंह ने बाण चलाने में असमर्थ अतएव आश्चर्यचकित राजा दिलीप से मनुष्यवाणी में बोलकर और अधिक आश्चर्यान्वित करते हुए कहा कि हे राजन्! अब बाण चलाने का प्रयास मत करो। यदि तुम यह सोच रहे हो कि तुम्हारा दाहिना हाथ जड़ता से मुक्त हो जाये तो मुझ पर बाण प्रहार कर मेरा वध कर दोगे, तो ऐसा नहीं है। तुम मेरे ऊपर अस्त्र चला भी दोगे तो वह व्यर्थ हो जायेगा, मेरा कुछ नहीं बिगड़ेगा। वैसे ही जैसे वृक्षों को उखाड़ने की शक्तिवाला वायु का वेग पर्वत पर नहीं समर्थ हो सकता अर्थात् पर्वत को नहीं उखाड़ सकता। सिंह ने यहाँ राजा को वृक्ष को उखाड़ने की शक्ति वाले वायु के वेग के समान अल्पशक्ति वाला और स्वयं पर्वत के समान अविचल अर्थात् राजा के सामर्थ्य से अधिक सामर्थ्यशाली बताया है।

शब्दार्थः – **महीपाल** = हे महीपाल! **तव** = तुझ दिलीप का। **श्रमेण अलम्** = (मुझ सिंह को मारने का) श्रम व्यर्थ है। अर्थात् आप परिश्रम न करें। **इतः** = यहाँ (मुझ पर) । **प्रयुक्तम्** = चलाया हुआ। **अस्त्रम् अपि** = अस्त्र भी। **वृथा स्यात्** = व्यर्थ होगा। **हि** = क्योंकि। **मारुतस्य** = वायु का। **पादपोन्मूलनशक्ति** = वृक्षों को उखाड़ने की शक्ति रखनेवाला। **रंहः** = वेग। **शिलोच्चये** = पर्वत पर। **न मूर्च्छति** = काम नहीं देता। अर्थात् विफल होता है।

संस्कृतव्याख्या – हे महीपाल! = महीं पालयति इति महीपालः तत्सम्बुद्धौ महीपाल-पृथिवीपाल, तव = भवतः दिलीपस्य, श्रमेण = प्रयासेन, अलम् = साध्यं नास्ति। इतः = अस्मिन् मयि सिंहे, प्रयुक्तम् = प्रेरितम् क्षिप्तम् अपि अस्त्रम् = आयुधं, वृथा = व्यर्थम्, स्यात् = भवेत्। हि = यतः, पादपोन्मूलनशक्तिः = पादपानाम् उन्मूलने शक्तिः यस्य तत् वृक्षोत्पाटनसामर्थ्यम्, रंहः = वेगः, शिलोच्चये = पर्वते, न = नो। मूर्च्छति = प्रसरति। विशेषस्य सामान्येन समर्थानादर्थान्तरन्यासालङ्कारः। उपजाति छन्दः।

कैलासगौरं वृषमारुरुक्षोः
पादार्पणानुग्रहपूतपृष्ठम्।
अवेहि मां किङ्करमष्टमूर्तेः
कुम्भोदरं नाम निकुम्भमित्रम्।।35।।

प्रसङ्गः – प्रस्तुत श्लोक में सिंह राजा दिलीप को अपना परिचय बता रहा है।

अन्वयः – कैलासगौरं वृषम् आरुरुक्षोः अष्टमूर्तेः पादार्पणानुग्रहपूतपृष्ठम् निकुम्भमित्रम् कुम्भोदरं नाम किङ्करम् माम् अवेहि।

अर्थः – कैलास पर्वत की तरह श्वेत बैल (नन्दी) पर चढ़ने की इच्छा करने वाले अष्टमूर्ति शिव जी के चरण रखने की कृपा के कारण पवित्र हुए पीठवाले मुझ (सिंह) को तुम निकुम्भ का मित्र कुम्भोदर नाम वाला सेवक जानो।

हिन्दी व्याख्याः – राजा को अपने समक्ष अल्पसामर्थ्य वाला बताते हुए सिंह अपना परिचय देता है। वह कहता है कि पृथिवी आदि आठों विग्रहों में प्रत्यक्ष विराजमान, अष्टमूर्ति और कैलास पर्वत के समान श्वेत बैल पर चढ़ने की इच्छा रखने वाले भगवान् शिव के पैर रखने से मेरी पीठ पवित्र हो गयी है अर्थात् भगवान् शिव मेरी पीठ पर पैर रखकर ही अपने श्वेत बैल नन्दी पर आरूढ़ होते हैं। अतः मेरी पीठ पवित्र है। अर्थात् मैं भगवान् शिव का विशेष कृपापात्र सेवक हूँ और भगवान् शिव के गणों में से एक निकुम्भ का मित्र हूँ तथा मेरा नाम कुम्भोदर (कुम्भ के समान उदरवाला) है।

विशेषः – निकुम्भ 1. शिव का गण, अथवा 2. पार्वती का वाहन सिंह, अथवा 3. सुन्द–उपसुन्द का पिता।

शब्दार्थ – कैलासगौरम् = कैलास पर्वत की तरह श्वेत। **वृषम्** = बैल पर। **आरुरुक्षोः** = चढ़ने की इच्छा करने वाले। **अष्टमूर्तेः** = अष्टमूर्ति शिवजी के। **पादार्पणानुग्रहपूतपृष्ठम्** = चरण रखने की कृपा के कारण पवित्र हुये पीठ वाले। **माम्** = मुझे, सिंह को। **निकुम्भमित्रम्** = निकुम्भ का मित्र। **कुम्भोदरम्** = कुम्भोदर। **नाम** = नाम वाला। **किङ्करम्** = सेवक। **अवेहि** = जानो।

संस्कृतव्याख्या – कैलासगौरम् = कैलासः इव गौरः तम्, वृषम् = नन्दीनामकवृषभम्, आरुरुक्षोः = आरोढुम् इच्छुः तस्य, अष्टमूर्तेः = शिवस्य, पादार्पणानुग्रहपूतपृष्ठम् = पादयोः अर्पणम्, पादार्पणम्, पादार्पणमेव अनुग्रहः तेन पूतं पृष्ठं यस्य तादृशम्, निकुम्भमित्रम् = निकुम्भस्य मित्रम्, कुम्भोदरनामकम्, किङ्करम् = सेवकम्, माम् = सिंहम् अवेहि = जानीहि। उपजाति छन्दः।

अमुं पुरः पश्यसि देवदारुं
पुत्रीकृतोऽसौ वृषभध्वजेन।
यो हेमकुम्भस्तननिःसृतानां
स्कन्दस्य मातुः पयसां रसज्ञः।।36।।

प्रसङ्गः – प्रस्तुत श्लोक में सिंह राजा दिलीप को सामने अवस्थित देवदारु वृक्ष का परिचय दे रहा है।

अन्वयः – पुरः अमुं देवदारुं पश्यसि असौ वृषभध्वजेन पुत्रीकृतः यः स्कन्दस्य मातुः हेमकुम्भस्तननिःसृतानां पयसां रसज्ञः (अस्ति)।

अर्थः – हे राजन्! तुम, सामने खड़े इस देवदारु को देख रहे हो, शिवजी ने इसे अपना पुत्र माना है। यह देवदारु कार्तिकेय की माता पार्वती जी के सोने के घटरूपी स्तनों से निकले हुए दूध के स्वाद को जाननेवाला है।

हिन्दी व्याख्याः – अपना परिचय देने के बाद कुम्भोदर सिंह वहाँ गुफा में रहने का कारण बताने के उद्देश्य से देवदारु वृक्ष के विषय में बताता है। सिंह ने राजा से कहा कि हे राजन्! सामने जिस देवदारु वृक्ष को देख रहे हो, वह कोई साधारण वृक्ष नहीं है, अपितु भगवान् शिव ने इसे अपना पुत्र माना है और कार्तिकेय की माता पार्वती के सोने के घड़े रूपी स्तनों से निकले हुए दूध के आस्वाद को जानने वाला है अर्थात् भगवान् शिव ने इस देवदारू को अपना पुत्र माना है और जैसे माता अपने पुत्र को दूध पिलाती है उसी प्रकार कार्तिकेय की माता पार्वती ने भी इस देवदारु को पुत्रवत् मानते हुए इसे स्वर्णनिर्मित घड़ों के जल से सींच–सींचकर बढ़ाया है।

शब्दार्थ – पुरः = सामने (स्थित), **अमुम्** = इस। **देवदारुम्** = देवदारु वृक्ष को। **पश्यसि** = देख रहे हो। **असौ** = इसे। **वृषभध्वजेन** = भगवान् शङ्कर ने। **पुत्रीकृतः** = अपना पुत्र माना है। **यः** = जो देवदारु। **स्कन्दस्य** = कार्तिकेय की। **मातुः** = माता पार्वती जी के। **हेमकुम्भस्तननिःसृतानाम्** = सोने के घटरूपी स्तनों से निकले हुए। **पयसां** = दूध का। **रसज्ञः** = स्वाद जाननेवाला।

अलङ्कारः – हेमकुम्भस्तन में उपमा अलङ्कार है।

संस्कृतव्याख्या – पुरः = अग्रे , अमुं = दृश्यमानम्, देवदारुवृक्षम्, पश्यसि = अवलोकयसि, असौ = देवदारुः, वृषभध्वजेन = वृषभो ध्वजो यस्य सः तादृशेन तेन शिवेन, पुत्रीकृतः = अपुत्रः पुत्रः कृतः इति पुत्रीकृतः अर्थात् पुत्रत्वेन स्वीकृतः, यः = देवदारुः , स्कन्दस्य = स्वामिकार्तिकेयस्य, मातुः = पार्वत्याः, हेमकुम्भस्तननिःसृतानाम् = हेमकुम्भः एव स्तनः तस्मात् निःसृतानि निर्गतानि तेषाम्, पयसाम् = दुग्धानाम्, रसज्ञः = रसं जानाति इति रसज्ञः इति भावः। 'हेमकुम्भस्तन' इत्यत्रोपमालङ्कारः। उपजातिवृत्तम्।

कण्डूयमानेन कटं कदाचिद्
वन्यद्विपेनोन्मथिता त्वगस्य।
अथैनमद्रेस्तनया शुशोच
सेनान्यमालीढमिवासुरास्त्रैः।। 37।।

प्रसङ्गः – शिव द्वारा पुत्रवत् माने गये देवदारु वृक्ष को गज द्वारा रगड़ने पर माता पार्वती ने सातिशय शोक किया।

अन्वयः – कदाचित् कटं कण्डूयमानेन वन्यद्विपेन अस्य त्वग् उन्मथिता, अथ अद्रेः तनया असुरास्त्रैः आलीढं सेनान्यम् इव एनं शुशोच।

अर्थः – किसी समय कपोल को रगड़ते हुए किसी जंगली हाथी ने इस देवदारु की छाल को छील दिया तो पार्वती जी ने अपने पुत्र कार्तिकेय के राक्षसों के अस्त्रों से घायल होने पर जैसा शोक किया था, वैसा ही शोक इस (देवदारु वृक्ष) के लिए भी किया।

हिन्दी व्याख्याः – देवदारु वृक्ष के साथ घटित दुर्घटना पर माता पार्वती के शोक के विषय में बताते हुए कुम्भोदर सिंह राजा दिलीप से कहता है कि किसी समय किसी जंगली हाथी ने आकर अपने गालों की खुजली शान्त करने के लिए इस देवदारु वृक्ष की छाल को रगड़कर उखाड दिया। इसे देखकर देवदारु वृक्ष के विषय में माता पार्वती को वैसे ही दुःख हुआ, जैसे देवासुर संग्राम में असुरों के अस्त्रों से घायल देव सेनापति पुत्र कार्तिकेय के विषय में दुःख हुआ था।

शब्दार्थः – **कदाचित्** = किसी समय। **कटम्** = कपोल को। **कण्डूयमानेन** = रगड़ते हुये। **वन्यद्विपेन** = किसी जंगली हाथी ने। **अस्य** = इस देवदारु की। **त्वग्** = छाल को। **उन्मथिता** = छील दिया। **अद्रेः तनया** = हिमालय की पुत्री पार्वती जी ने। **असुरास्त्रैः** = राक्षसों के अस्त्रों से। **आलीढम्** = घायल हुए। **सेनान्यम् इव** = कार्तिकेय की तरह। **एनम्** = इस (देवदारु वृक्ष) के (विषय में भी)। **शुशोच** = शोक किया।

अलङ्कारः – 'सेनान्यमिव' में उपमा अलङ्कार है।

संस्कृतव्याख्या – कदाचित् = कश्मिंश्चित् समये, कटम् = कपोलम्, कण्डूयमानेन = घर्षयता, वन्यद्विपेन = वनगजेन, अस्य = देवदारोः वृक्षस्य, त्वग् = वल्कलम्, उन्मथिता = उत्पाटिता, अथ = पश्चात्, अद्रेः = हिमालयस्य, तनया = सुता पार्वती, असुरास्त्रैः = असुराणाम् अस्त्रैः अर्थात् दैत्यायुधैः, आलीढम् = क्षतम्, सेनान्यम् = स्कन्दम् इव, एनम् = देवदारुवृक्षम्, शुशोच = शोचितवती। 'सेनान्यमिव' इत्यत्रोपमालङ्कारः। उपजातिवृत्तम्।

तदाप्रभृत्येव वनद्विपानां
त्रासार्थमस्मिन्नहमद्रिकुक्षौ।
व्यापारितः शूलभृता विधाय
सिंहत्वमङ्कागतसत्त्ववृत्ति।। 38।।

प्रसङ्गः – सिंह राजा दिलीप से बता रहा है कि उस देवदारु वृक्ष की रक्षा के लिए भगवान् शिव ने मुझे अधिकृत किया है।

अन्वयः – तदा प्रभृति एव वनद्विपानाम् त्रासार्थं शूलभृता अङ्कागतसत्त्ववृत्ति सिंहत्वं विधाय अस्मिन् अद्रिकुक्षौ अहं व्यापारितः।

अर्थः – तभी से ही जंगली हाथियों को डराने के लिए त्रिशूलधारी शिव ने गोद या समीप में आये हुए जीवों से अपना जीवन निर्वाह करने वाली सिंह की आकृति देकर मुझे इस गुफा में नियुक्त कर दिया है।

हिन्दी व्याख्या – कुम्भोदर नामक सिंह राजा दिलीप से अपने कार्य (नियोग) के विषय में बताते हुए कहता है कि जंगली हाथी के द्वारा जब गालों को खुजलाने से देवदारु की त्वचा (छाल) उखड़ गयी और माता पार्वती को उसके विषय में घायल कार्तिकेय की ही तरह दुःख हुआ, तभी से इस देवदारु की रक्षा के उद्देश्य से जंगली हाथियों को डराने के लिए त्रिशूलधारी भगवान् शिव ने मुझे सिंह बनाकर इस गुफा में नियुक्त कर दिया अर्थात् काम पर लगा दिया और यह निश्चित कर दिया कि जो कोई जीव इधर तुम्हारे समीप आ जायेगा, वही तुम्हारा भोजन (जीविका–जीने का साधन) होगा।

शब्दार्थ – तदा प्रभृति एव = तभी से ही। **वनद्विपानाम्** = जंगली हाथियों को। **त्रासार्थम्** = डराने के लिए। **शूलभृता** = त्रिशूलधारी शिव ने। **अङ्कागतसत्त्ववृत्ति** = गोद में आये हुये जीवों से अपना जीवन निर्वाह करने वाली। **सिंहत्वं विधाय** = सिंह की आकृति देकर। **अस्मिन्** = इस। **अद्रिकुक्षौ** = गुफा में। **अह** = मैं। **व्यापारितः** = नियुक्त किया गया हूँ।

संस्कृतव्याख्या – तदा प्रभृति (सः कालः आदिः यस्मिन् कर्मणि तद् यथा भवति तथा तदा–प्रभृति), वनद्विपानाम् = वनस्य द्विपाः तेषाम्, त्रासाय एव त्रासार्थम्, शूलभृता = शूलं बिभर्ति इति, शूलभृत् तेन शूलभृता, अङ्कागतसत्त्ववृत्ति = अङ्कम् आगताः सत्त्वा एव वृत्तिः यस्मिन् तत्, अद्रिकुक्षौ = अद्रेः कुक्षिः तस्मिन्, अहं = सिंहः, व्यापारितः = नियुक्तः। उपजातिवृत्तम्।

तस्यालमेषा क्षुधितस्य तृप्त्यै
प्रदिष्टकाला परमेश्वरेण।
उपस्थिता शोणितपारणा मे
सुरद्विषश्चान्द्रमसी सुधेव।। 39।।

प्रसङ्गः – जब भगवान् शिव ने उस सिंह को गुफा में नियुक्त कर दिया तो वह सिंह नन्दिनी गाय को अपना सम्पूर्ण आहार बता रहा है।

अन्वयः – परमेश्वरेण प्रदिष्टकाला उपस्थिता एषा शोणितपारणा सुरद्विषः चान्द्रमसी सुधा इव क्षुधितस्य मे तृप्त्यै अलम्।

अर्थः – शिव जी के बताये हुए भोजन के समय स्वयं प्राप्त यह गोरूप रुधिर भोजन (व्रत की समाप्ति का) राहु के लिए चन्द्रमण्डल में स्थित अमृत की तरह भूखे मुझ सिंह की तृप्ति के लिए पर्याप्त है।

हिन्दी व्याख्या – कुम्भोदर, गाय नन्दिनी को अपना भोजन बताते हुए राजा दिलीप से कहता है कि परमेश्वर भगवान् शिव द्वारा निश्चित भोजन के समय यह गाय मेरी रक्तस्वरूप पारण के रूप में उपस्थित हुई है और मैं बहुत दिनों से भूखा (उपवास किये हुए) हूँ, अतः इसका रक्तपान कर अपनी तृप्ति करूँगा। यह गाय मेरी तृप्ति के लिए उसी प्रकार से पर्याप्त होगी, जिस प्रकार चन्द्रमा की सुधा (अमृत) देवताओं से द्वेष रखने वाले राहु की तृप्ति के लिए पर्याप्त होती है। अर्थात् जिस प्रकार राहु चन्द्रमा को ग्रस कर उसकी सुधा का पान करके तृप्त होता है, उसी प्रकार मैं गाय को मारकर उसके रक्त का पान करके तृप्त होऊँगा। प्रदिष्टकाला का एक अर्थ यह भी है कि परमेश्वर शिव ने यहीं इस गाय का काल (मृत्यु का समय) निश्चित किया था।

शब्दार्थ – **परमेश्वरेण** = शिव जी के द्वारा। **प्रदिष्टकाला** = बताये हुये भोजन के समय। **उपस्थिता** = स्वयं प्राप्त। **एषा** = यह गोरूप। **शोणितपारणा** = रुधिर स्वरूप भोजन। **सुरद्विषः** = राहु के लिए। **चान्द्रमसी** = चन्द्रमण्डल में स्थित। **सुधा इव** = अमृत की तरह। **क्षुधितस्य** = भूखे। **मे** = मुझ सिंह की। **तृप्त्यै** = तृप्ति के लिए। **अलम्** = पर्याप्त है।

संस्कृतव्याख्या – परमेश्वरेण = महादेवेन शिवेन, प्रदिष्टकाला = प्रदिष्टः निर्दिष्टः कालः समयः यस्याः सा, उपस्थिता = प्राप्ता, एषा = गोरूपा नन्दिनी, शोणितपारणा = शोणितस्य, रुधिरस्य पारणा (व्रतान्तभोजनम्), सुरद्विषः = राहोः, चान्द्रमसी = चन्द्रमसः इयं चान्द्रमसी ऐन्दवी, चन्द्रसम्बन्धिनी इति अर्थः, सुधा इव = अमृतं यथा, क्षुधितस्य = बुभुक्षितस्य, मे = मम सिंहस्य, तृप्त्यै = उदरपूर्त्यै, अलम् = पर्याप्तम् एव। 'सुरद्विषश्चान्द्रमसी सुधेव' इत्यत्रोपमा अलङ्कारः। उपजातिवृत्तम्।

स त्वं निवर्तस्व विहाय लज्जां
गुरोर्भवान्दर्शितशिष्यभक्तिः।
शस्त्रेण रक्ष्यं यदशक्यरक्षं
न तद्यशः शस्त्रभृतां क्षिणोति।।40।।

प्रसङ्गः – प्रस्तुत श्लोक में सिंह राजा दिलीप को नन्दिनी गाय को छोड़कर लौट जाने का परामर्श दे रहा है।

अन्वयः – सः त्वं लज्जां विहाय निवर्तस्व भवान् गुरोः दर्शितशिष्यभक्तिः अस्ति यद् रक्ष्यं शस्त्रेण अशक्यरक्षं तद् शस्त्रभृतां यशः न क्षिणोति।

अर्थः – उपायशून्य हुए तुम (दिलीप) लज्जा को छोड़कर लौट जाओ। गुरु के सम्बन्ध में आपने शिष्योचित भक्ति दिखला दी। जो रक्षणीय वस्तु शस्त्र से रक्षा करने के योग्य ही नहीं होती, वह वस्तु नष्ट होती हुई भी शस्त्रधारी की कीर्ति को नष्ट नहीं करती है।

हिन्दी व्याख्या – कुम्भोदर सिंह राजा दिलीप से कहता कि मैं नन्दिनी गाय के रक्त से अपनी पारणा करूँगा, अतः तुम गाय की रक्षा न कर पाने के कारण होनेवाली लज्जा को त्यागकर लौट जाओ। तुमने अपने गुरु वसिष्ठ के प्रति अपनी शिष्यभक्ति दिखला दी। तुम्हें जितना प्रयास करना था कर चुके। मुझ भगवान् शिव के सेवक के समक्ष तुम इस गाय की रक्षा कर सकने में असमर्थ हो और भगवान् के निर्दिष्ट काल के अनुसार मैं इसे खाऊँगा। यह सोचकर राजा दिलीप गाय की रक्षा न कर पाने के कारण अपयश के भय से डरे हुए हैं, सिंह ने उन्हें परामर्श देते हुए कहा कि–जिस रक्षणीय वस्तु की शस्त्र से रक्षा सम्भव नहीं है, वह शस्त्रधारियों के यश को क्षीण नहीं करती। अर्थात् हे राजन् दिलीप! तुम लज्जा त्यागकर लौट जाओ, तुम्हारा अपयश नहीं होगा क्योंकि तुम भले ही शस्त्रधारण किये हुए हो, किन्तु मुझसे इस गाय को बचा लेना तुम्हारे द्वारा सम्भव नहीं है।

शब्दार्थः – सः = वह (अर्थात् जब बाण के पृष्ठभाग में चिपकी अँगुलियों वाले हाथ के जड होने के कारण उपायशून्य हो गये थे ऐसे) **त्वम्** = तुम दिलीप। **लज्जाम्** = लज्जा को। **विहाय** = छोड़कर। **निवर्तस्व** = लौट जाओ। **गुरोः** = गुरु के सम्बन्ध में। **दर्शितशिष्यभक्तिः** = आपने शिष्योचित (अर्थात् शिष्यों के द्वारा जो किया जाना नितान्त अपेक्षित होता है) भक्ति दिखला दी। **अस्ति** = है। **यद् रक्ष्यम्** = रक्षा करने के योग्य जो वस्तु। **अशक्यरक्षं** = शस्त्र से रक्षा करने के योग्य ही नहीं होती। **तद्** = वह वस्तु (नष्ट होती हुई भी)। **शस्त्रभृताम्** = शस्त्रधारियों की। **यशः** = कीर्ति को। **न क्षिणोति** = नष्ट नहीं करती है।

संस्कृत व्याख्या – सः = एवम् उपायशून्यं बाहुस्तम्भनेन इति अर्थः, त्वं = दिलीपः, लज्जां = त्रपां, विहाय = त्यक्त्वा, निवर्तस्व = परावर्तस्व, निवृत्तो भव इति वा, भवान् = दिलीपः, गुरोः = वसिष्ठस्य, दर्शितशिष्यभक्तिः = दर्शिता प्रकाशिता, शिष्यभक्तिः = छात्रानुरागः येन तादृशः दिलीपः अस्ति इति भावः, यत् रक्ष्यम् = यद् वस्तु रक्षणीयम्, शस्त्रेण = आयुधेन, अशक्यरक्षम् = अरक्षणीयम्, तद् = असौ वस्तु, शस्त्रभृताम् = चापधारिणाम्, यशः = कीर्तिम्, नहि क्षिणोति = हिनस्ति। विशेषकथनस्य सामान्येन समर्थनादर्थान्तरन्यासालङ्कारः। उपजातिछन्दः।

बहुविकल्पीयप्रश्नाः

1. नन्दिनी कस्य धेनुः आसीत् ?
(क) वसिष्ठस्य (ख) वाल्मीकेः (ग) व्यासस्य (घ) काश्यपस्य

2. ऋषेः धेनुं वनाय कः मुमोच ?
(क) वसिष्ठः (ख) सुदक्षिणा (ग) दिलीपः (घ) अरुन्धती

3. नन्दिनी कस्याः पुत्री आसीत् ?
(क) सुदक्षिणायाः (ख) कामधेनोः (ग) कपिलायाः (घ) अरुन्धत्याः

4. दिलीपस्य पत्न्याः नाम किम् आसीत् ?
(क) भारती (ख) इन्दुमती (ग) ज्ञानवती (घ) सुदक्षिणा

5. अपांसुलानां धुरि कीर्तनीया का आसीत् ?
(क) अरुन्धती (ख) द्रौपदी (ग) सुदक्षिणा (घ) शकुन्तला

6. मनुष्येश्वरधर्मपत्नी कः इव मार्गम् अन्वगच्छत् ?
(क) स्मृतिः (ख) पुराणम् (ग) इतिहासः (घ) वेदः

7. रघुवंशमहाकाव्ये कति सर्गाः सन्ति ?
(क) अष्टादश (ख) विंशतिः (ग) एकोनविंशतिः (घ) एकविंशतिः

8. दिलीपः कस्य आश्रमम् अगच्छत् ?
(क) कण्वस्य (ख) विश्वामित्रस्य (ग) वसिष्ठस्य (घ) व्यासस्य

9. नन्दिनी का आसीत् ?
(क) अजा (ख) महिषी (ग) अश्वा (घ) धेनुः

10. दिलीपः किमर्थं नन्दिन्याः सेवाम् अकरोत् ?
(क) धनाय (ख) सन्ततये (ग) राज्याय (घ) शत्रुनाशाय

11. धेनोः अनुचरः कः आसीत् ?
(क) दिलीपः (ख) वसिष्ठः (ग) रघुः (घ) अजः

12. शस्त्रभृतां किं न क्षिणोति ?
(क) पयः (ख) मनः (ग) यशः (घ) रजः

13. नन्दिनी कीदृशी आसीत् ?
(क) कृष्णवर्णा (ख) कपिलवर्णा (ग) पल्लवरागताम्रा (घ) कौस्तुभवर्णा

14. दिनान्ते कः निलयाय गन्तुं प्रचक्रमे ?
(क) पतङ्गस्य प्रभा (ख) मुनेः धेनुः (ग) उभे (घ) न कोऽपि

15. विधिनोपपन्ना श्रद्धेव का बभौ ?

(क) सुरभिः (ख) नन्दिनी (ग) कपिला (घ) वत्सा

16. दिलीपः कीदृशानि वनानि पश्यन् ययौ ?

(क) हरितानि (ख) रक्तानि (ग) पीतानि (घ) श्यामायमानानि

17. उपोषिताभ्यामिव लोचनाभ्याम् दिलीपं का पपौ ?

(क) नन्दिनी (ख) अरुन्धती (ग) सुदक्षिणा (घ) कामधेनुः

18. धेनुः दिनक्षपामध्यगता का इव विरराज ?

(क) रात्रिः (ख) उषा (ग) सन्ध्या (घ) रजनी

19. रघुवंशस्य प्रणेता कः ?

(क) भारविः (ख) कालिदासः (ग) माघः (घ) श्रीहर्षः

20. रघुवंशम् कीदृशं काव्यम् अस्ति ?

(क) खण्डकाव्यम् (ख) महाकाव्यम् (ग) मुक्तकम् (घ) दूतकाव्यम्

21. 'प्रयुक्तमप्यस्त्रमितो वृथा स्यात्' इति सिंहः कम् उक्तवान् ?

(क) वसिष्ठम् (ख) सुदक्षिणाम् (ग) दिलीपम् (घ) रामम्

22. द्वाविंशे दिने धेनुः नन्दिनी कुत्र प्रविष्टा ?

(क) वाजिशालायाम् (ख) धेनुशालायाम् (ग) गुहायाम् (घ) राजभवने

23. कः नन्दिन्याः समाराधनतत्परः अभूत् ?

(क) अजः (ख) रामः (ग) दिलीपः (घ) वसिष्ठः

24. का नन्दिन्याः द्वारम् इव विशालं शृङ्गान्तरं पूजितवती

(क) सीता (ख) अरुन्धती (ग) अनसूया (घ) सुदक्षिणा

25. 'प्रसादचिह्नानि पुरः ....'श्लोकांशपूर्त्यर्थं किं पदम् समीचीनम् ?

(क) फलानि (ख) वनानि (ग) गिरयः (घ) अरण्यानि

26. धेनुपूजाग्रहणे सति कौ ननन्दतुः (प्रसन्नौ बभूवतु) ?

(क) सुदक्षिणादिलीपौ (ख) अरुन्धतीवसिष्ठौ (ग) रामलक्ष्मणौ (घ) सर्वे

27. व्रतं पालयतः दिलीपस्य कति दिनानि व्यतीतानि ?

(क) त्रिगुणानि सप्त दिनानि (ख) त्रिगुणानि नव दिनानि (ग) पञ्चविंशतिः दिनानि (घ) न कोऽपि

28. दिलीपः कया सह प्रजार्थं व्रतम् अधारयत् ?

(क) महिष्या सुदक्षिणया (ख) अनसूयया (ग) सीतया (घ) रमया

29. अन्येद्युः कस्य भावं जिज्ञासमाना वसिष्ठनन्दिनीधेनुः हिमालयस्य गुहां प्रविष्टवती ?
(क) आत्मानुचरस्य दिलीपस्य (ख) स्वसेवकस्य रामस्य (ग) निजरक्षकस्य वसिष्ठस्य (घ) न कोऽपि

30. नृपदिलीपस्य दृष्टिं कस्याः आक्रन्दनं निवर्तयामास ?
(क) नन्दिन्याः (ख) सुदक्षिणायाः (ग) अरुन्धत्याः (घ) प्रियम्वदायाः

31. राजा दिलीपः निषङ्गात् शरं किमर्थम् उद्धर्तुम् ऐच्छत् ?
(क) मृगेन्द्रवधाय (ख) नरवधाय (ग) लोकवधाय (घ) दिलीपवधाय

32. राज्ञः दिलीपस्य गिरिगुहायां केन सह संवादः अभवत् ?
(क) दिलीपेन (ख) शुना (ग) सिंहेन (घ) वसिष्ठेन

33. सिंहः मनुष्यावाचा कम् अवदत् ?
(क) राजानं दिलीपम् (ख) राजानं रामम् (ग) राजानं दुष्यन्तम् (घ) न कमपि

34. ''अलं महीपाल! तव श्रमेण कः'' अकथयत् रघुवंशमहाकाव्ये ?
(क) दिलीपः (ख) सिंहः (ग) रामः (घ) नन्दिनी

35. अष्टमूर्तेः शिवस्य किङ्करः कः अस्ति ?
(क) कुम्भोदरः (ख) वृकोदरः (ग) पुष्कलोदरः (घ) सहोदरः

36. देवदारुद्रुमः केन पुत्रीकृतः आसीत् ?
(क) वृषभध्वजेन (ख) दिलीपेन (ग) सुदक्षिणया (घ) नन्दिन्या

■

अभिज्ञानशाकुन्तलम्

(चतुर्थोऽङ्कः)

कालिदासस्य नाट्यकला

संस्कृतसाहित्यस्य सर्वश्रेष्ठो नाटककारः कविकुलगुरुः कालिदासो मन्यते। नाटकस्य सर्वाणि प्रमुख-तत्त्वानि कवेरस्य नाटकेषु राजन्ते। नाटकेषु कालिदासस्य अद्भुता प्रतिभा दृश्यते। पाश्चात्त्य-भारतीय-नाट्य-सिद्धान्तयोः निकषे नाटकमिदं पूर्णरूपेण समुचितम्। अतएव उक्तम्–

काव्येषु नाटकं रम्यं तत्र रम्या शकुन्तला,
तत्रापि चतुर्थोऽङ्कः तत्र श्लोकचतुष्टयम्।।

कवेरस्य नाट्यकलायाः अधोलिखिताः विशेषताः दरीदृश्यन्ते। कविरयं नाटकेषु विषयवस्तूनां गुम्फने दक्षः प्रतिभाति। अत्र विषयवस्तुनः चित्राणि दर्शकस्य नेत्रयोः समक्षं तत्क्षणमेव स्पष्टरूपेण आयाति। अत्र मानवहृदयस्य कोमलभावाः जिज्ञासाः विह्वलताः भावावेशाश्च नाटककारेण नाट्यकलया पौनःपुन्येन उपस्थापिताः। कवेः प्रकृतिवर्णनं न केवलं मनोरंजनस्य साधनम्, अपितु शिक्षाप्रदम्। कालिदासेन चरित्रचित्रणं वस्तूनां सजीववर्णनं कुशलतया उपस्थापितम्। महाभारतस्य नीरसकथानकं स्वीकृत्य कालिदासेन अद्भुतरचनाकौशलेन अभिज्ञानशाकुन्तलनामकं एकं सरसं सुविख्यातं नाटकं रचितम्।

अभिज्ञानशाकुन्तले घटनानां संयोजनं पूर्णरूपेण स्वाभाविकम् अवलोक्यते एवं तत्र असाधारणसौष्ठवं विद्यमानम्। सर्वाः घटनाः सार्थकाः अत्र ताः कथानकस्य विकासे पूर्णरूपेण सहायिकाः अतः नाटकस्य गतिः स्वाभाविका अविच्छिन्ना च। यथा राज्ञा सह शकुन्तलायाः गन्धर्वविवाहः, ऋषेः दुर्वाससः शापः, दुष्यन्तेन स्वनामाङ्किताङ्गुलीयकप्रदानम्, अङ्गुलीयकस्य प्रदर्शनेन शापविमोचनम् इत्यादयः घटनाः परस्परम् अन्विताः। अभिज्ञानशाकुन्तलस्य सर्वाः घटनाः सार्थकाः सन्ति एवं ताः विशेषोद्देश्येन प्रस्तुताः।

कालिदासः चरित्रचित्रणे सिद्धहस्तः। अभिज्ञानशाकुन्तलस्य पात्राणि समाजस्य विभिन्नवर्गाणां प्रतिनिधित्वं कुर्वन्ति। तस्य प्रत्येकपात्रस्य स्वकीयविशिष्टव्यक्तित्वमस्ति। यथा दुर्वासाः अतीव क्रोधी, शकुन्तला लज्जाशीला, अनसूया शान्तप्रकृतिः प्रियंवदा हास्यप्रिया च।

कवेः सर्वाणि पात्राणि स्वकीयस्थित्याः अनुसारेण भाषायाः प्रयोगं कुर्वन्ति। प्रियंवदा अनसूया च सखीजनोचितहासपरिहासं कुरुतः। कण्वः पितुः सदृशः शकुन्तलायाः अभिनन्दनं करोति। यथा– **''सुशिष्य-परिदत्ताविद्येवाशोचनीयासि संवृत्ता।''**

अभिज्ञानशाकुन्तलं शृङ्गाररसप्रधानं नाटकमस्ति। अत्र सम्भोगशृङ्गारः अङ्गीरसः एवं विप्रलम्भशृङ्गारः अवलोक्यते। करुण-वीर-अद्भुत-हास्य-भयानक-शान्तादिरसाः भावानुकूलाः अत्र उपस्थाप्यन्ते। शाकुन्तले मुख्यरूपेण विप्रलम्भशृङ्गारस्य विस्तारः दृश्यते परन्तु नाटकमिदं सुखान्तम्। अन्ते शकुन्तलादुष्यन्तयोः मेलनं भवति। अतः नाटकमिदं शृङ्गाररसप्रधानम्।

भावानां दृष्ट्या अत्यन्तमार्मिकप्रसङ्गा अत्र उपस्थापिताः। अत्र कवेः कल्पनाशक्त्याः नाट्यकला कुशलतायाः च परिचयो भवति यथा चतुर्थेऽङ्के शकुन्तलायाः पतिगृहगमनस्य उपस्थापनम्।

कालिदासेन स्वकीयनाटकेषु प्रकृत्याः अत्यन्तसजीववर्णनम् उपस्थापितम्। तद् वर्णनं मानवीयस्वभावेन समन्वितम् अनुभूयते। शकुन्तलया आश्रमस्य वृक्षाः भ्रातृसदृशाः लताः स्वसृ-सदृशाः स्वीकृताः। सा प्रकृतिप्रेम्णा अभिभूता तान् पतिगृहं गन्तुं अनुज्ञां याचते। वृक्षादयः अपि शकुन्तलायै पतिगृहगमनसमये आभूषणानि प्रददति।

कालिदासस्य लोकप्रियतायाः कारणं तस्य सरला परिष्कृता प्रसादगुणयुक्ता भाषा मन्यते। कविरयं वैदर्भीशैल्याः विद्यते। कवेः नाटकानां भाषा सरसा सरला सुमनोहरा च अवलोक्यते। अस्य शब्द-कोषः अगाधः अतः भाषायां मनोरमता प्रवाहः च दरीदृश्यते। कवेः शैली ध्वनिसमन्विता सङ्क्षिप्ता। अनेन नाटकेषु भावना सुमधुरभाषया उपस्थापिता। कवेः कथोपकथनं पात्राणाम् अनुकूलं वर्तते।

कवेः नाटकेषु विषयानुकूलाः अलङ्काराः अवलोक्यन्ते। अत्र प्रमुखरूपेण उपमोत्प्रेक्षा-स्वभावोक्ति-तुल्ययोगिता-समासोक्ति-व्यतिरेकादयः दृश्यन्ते।

बीजबिन्दुपताकादयः अपि कविना स्वकीय-नाटकेषु समीचीनरीत्या उपस्थापिताः।

एवं कथयितुं शक्यते यत् कविकुलगुरुकालिदासस्य नाट्यकला उत्कृष्टाऽस्ति।

कालिदास की नाट्यकला

महाकवि कालिदास संस्कृत साहित्य के सर्वश्रेष्ठ नाटककार माने जाते हैं। उनके तीन नाटकों में से शाकुन्तल ही उनकी नाटकीय प्रतिभा का सर्वोत्तम परिचायक है। कालिदास के नाटकों में जो विशेषताएँ सर्वप्रथम लक्षित होती है वे इस प्रकार हैं–

घटना-संयोजन में सौष्ठव – महाकवि कालिदास ने शाकुन्तल के घटना-संयोजन में असाधारण कुशलता प्रदर्शित की है। घटनाओं का संयोजन इस प्रकार किया गया है कि उनमें पूर्णरूप से स्वाभाविकता ज्ञात होती है। जैसे– प्रथम अङ्क में मृग का पीछा करते हुए राजा के सम्मुख तपस्वी स्वाभाविक ढंग से आते हैं–

न खलु न खलु बाणः सन्निपात्योऽयमस्मिन्। (अभि0 1/10)

घटनाओं और वर्णनों की सार्थकता – प्रत्येक घटना सार्थक है और किसी विशेष उद्देश्य से रखी गयी हैं। जैसे– प्रथम अंक में तपस्वियों के आगमन से राजा को चक्रवर्ती पुत्र का आशीर्वाद प्राप्त होता है।

जन्म यस्य पुरोर्वंशे युक्तरूपमिदं तव।
पुत्रमेवं गुणोपेतं चक्रवर्तिनमाप्नुहि।।

(अभि0 01/12)

वर्णनों में स्वाभाविकता – कविकुलगुरु कालिदास की मुख्य विशेषता है कि उनका प्रत्येक वर्णन स्वाभाविक होता है। जैसे– चतुर्थ अङ्क में शकुन्तला की विदाई का दृश्य–

उद्गलितदर्भकवला मृग्यः परित्यक्तनर्तना मयूराः।
अपसृतपाण्डुपत्रा मुञ्चन्त्यश्रूणीव लताः।। अभि0 4/12

रचना–कौशल – कालिदास कथानक के संचयन और उसके निर्माण में असाधारण कुशल हैं। उन्होंने महाभारत के एक साधारण और नीरस कथानक को अपनी रचना कुशलता के बल पर अनुपम और अति सरस बना दिया है।

चरित्र–चित्रण में वैयक्तिकता – कवि कालिदास चरित्र–चित्रण में बहुत कुशल है। उनके प्रत्येक पात्र में अपना विशिष्ट व्यक्तित्व है। प्रत्येक पात्र की कुछ प्रमुख विशेषताएँ हैं, उनका विकास बहुत व्यवस्थित रूप में हुआ है। जैसे– कण्व अत्यन्त सज्जन महर्षि हैं, वहीं दुर्वासा अत्यन्त क्रोधी ऋषि हैं। इसी प्रकार शकुन्तला बहुत सुशील, विनीत, मितभाषी और विचारशील है, जबकि प्रियंवदा हास्यप्रिय, वाक्चतुर और अधिक बोलने वाली है।

पात्रों के अनुकूल भाषा का प्रयोग – कालिदास ने पात्रों के अनुकूल ही भाषा का प्रयोग किया है। जो पात्र जिस कोटि का जिस स्थिति का है वे उसी के अनुसार भाषा का प्रयोग करते हैं। जैसे– प्रियंवदा को राजा की सचरित्रता पर विश्वास है। वह कहती है–

न तादृशा आकृतिविशेषा गुणविरोधिनो भवन्ति। अभि0 4

इसी प्रकार अनसूया कहती है कि दुर्वासा ही ऐसा शाप दे सकते हैं।

कोऽन्यो हुतवहाद् दग्धुं प्रभवति।

रस, छन्द एवम् अलङ्कार का प्रयोग – शाकुन्तल शृङ्गाररसप्रधान नाटक है। इसमें संयोग शृङ्गार अंगी है और विप्रलम्भ (वियोग) शृङ्गार, करुण, वीर, अद्भुत, हास्य, भयानक और शान्त–ये अंग (गौण) रस हैं। संयोग शृङ्गार का एक उदाहरण द्रष्टव्य है–

अधरः किसलयरागः कोमलविटपानुकारिणौ बाहू।
कुसुममिव लोभनीयं यौवनमङ्गेषु सन्नद्धम्।। अभि0 1/21

अलङ्कारों में महाकवि ने उपमा, अर्थान्तरन्यास आदि अलङ्कारों का प्रयोग किया है। इसी प्रकार छन्दःप्रयोग में भी महाकवि दक्ष हैं। उन्होंने जहाँ एक तरफ आर्या, अनुष्टप् आदि छोटे–बड़े छन्दों का प्रयोग किया है, वहीं दूसरी तरफ शिखरिणी, मालिनी, इन्द्रवज्रा आदि बड़े छन्दों का भी प्रयोग किया है एवंविध महाकवि ने वैदर्भी रीति का समुचित प्रयोग अपने ग्रन्थों में किया है। अतएव कहा गया है–

वैदभीरीतिसन्दर्भे कालिदासो विशिष्यते।

इसी प्रकार महाकवि कालिदास ने अपने नाटकों में नाटकीय कुशलता के साथ कवित्व का समन्वय करके नाटकों को चिरस्थायी बना दिया है। शाकुन्तल में महाकवि ने पाँच अर्थप्रकृतियों (बीज, बिन्दु, पताका, प्रकरी, कार्य), पाँच कार्यावस्थाएँ (आरम्भ, यत्न, प्राप्त्याशा, नियताप्ति, फलागम) एवं पाँच सन्धियों (मुख, प्रतिमुख, गर्भ, विमर्श/अवमर्श, उपसंहृति (निर्वहण) का समुचित प्रयोग किया है।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि दीपशिखा' उपाधि से विभूषित महाकवि कालिदास की अद्‌भुत प्रतिभा का दिग्दर्शन इनके नाटकों में होता है। पाश्चात्य और भारतीय नाट्यसिद्धान्त की कसौटी पर इनके नाटक पूर्णतः सफल हैं। इनके नाटकों में नाटक के सभी तत्त्व पाये जाते हैं। अतएव कहा गया है–

काव्येषु नाटकं रम्यं तत्र रम्या शकुन्तला।
तत्रापि चतुर्थोऽङ्कः तत्र श्लोकचतुष्टयम्।।

चतुर्थ अङ्क का सारांश

पुष्प चुनती हुई प्रियंवदा और अनसूया के आपसी वार्तालाप से चतुर्थ अङ्क का प्रारम्भ होता है जिससे ज्ञात होता है कि दुष्यन्त और शकुन्तला के बीच गान्धर्व विवाह हो चुका है। राजा शकुन्तला को ले जाने का आश्वासन देकर प्रस्थान कर चुका है। शकुन्तला राजा के ध्यान में मग्न होकर कुटी में बैठी है। दुर्वासा ऋषि का अतिथि के रूप में आगमन होता है। अतिथि–सत्कार प्राप्त न होने पर क्रुद्ध दुर्वासा शकुन्तला को शाप देते हैं कि जिसका स्मरण करती हुई तू मुझ आए हुए अतिथि की ओर ध्यान नहीं दे रही है, वह याद दिलाने पर भी तुझे नहीं पहचानेगा।

प्रियंवदा ऋषि को मनाती है और दुर्वासा आश्वासन देते हैं कि पहचान का कोई आभूषण दिखाने पर शाप का प्रभाव समाप्त हो जायेगा। प्रियंवदा और अनसूया दुर्वासा के शाप की बात न शकुन्तला को बताती है और न अन्य किसी को। वे समझती हैं कि राजा की अँगूठी शकुन्तला के पास है इसलिए राजा शकुन्तला को पहचान लेंगे और शाप का कोई प्रभाव नहीं हो सकेगा। यहाँ पर विष्कम्भक समाप्त होता है।

सोमतीर्थ से लौटने पर ऋषि कण्व को आकाशवाणी द्वारा ज्ञात होता है कि, शकुन्तला का गान्धर्व विवाह दुष्यन्त से हुआ है और वह गर्भिणी है। ऋषि इस विवाह का समर्थन करते हैं। दुर्वासा–शाप के प्रभाव के कारण राजा शकुन्तला को सर्वथा भूल जाता है और उसे लाने के लिए किसी व्यक्ति को नहीं भेजता है। शकुन्तला के गर्भ-चिह्न प्रकट हैं, अतः ऋषि द्वारा उसे राजा के पास भेजने का प्रबन्ध किया जाता है। शकुन्तला की विदाई की तैयारी होती है। वनवृक्षों द्वारा आभूषण और रेशमी वस्त्रादि प्राप्त होते हैं। शकुन्तला अपनी सखियों, वन-मृगों आदि से विदाई लेती है। यहाँ वियोग शृङ्गार का प्रभावोत्पादक वर्णन हुआ है। ऋषि कण्व द्वारा शकुन्तला को कर्तव्य-शिक्षा और राजा के लिए सन्देश दिया जाता है। तदनन्तर शकुन्तला का ऋषि से करुणापूर्ण मिलन और विदाई का वर्णन है। शकुन्तला के पतिगृहगमन के अवसर पर उसके साथ गौतमी और दो तपस्वियों का प्रस्थान तथा शकुन्तला को पति के पास भेजकर ऋषि को हार्दिक प्रसन्नता की प्राप्ति का वर्णन है। इसी के साथ चतुर्थ अङ्क की समाप्ति होती है।

अर्थो हि कन्या परकीय एव तामद्य संप्रेष्य परिग्रहीतुः।
जातो ममायं विशदः प्रकामं प्रत्यर्पितन्यास इवान्तरात्मा।।

अभिज्ञानशाकुन्तलम् के प्रमुख पात्रों का चरित्र-चित्रण

(1) दुष्यन्त

राजा दुष्यन्त इस नाटक के नायक हैं। कालिदास के समग्र नायकों में उनके चरित्र की अवधारणा अत्यन्त उत्कृष्ट है। वे इस अप्रतिम नाटक के प्रधान पुरुष पात्र हैं। वे स्वस्थचित्त, प्रजावत्सल, उदात्त चरित्र, धीरोदात्त नायक हैं। दशरूपक के अनुसार धीरोदात्त नायक-महाबली, अतिगम्भीर, क्षमाशील, आत्मप्रशंसा से रहित, स्थिर प्रकृति, निरहंकारी तथा दृढ़व्रत होता है। दुष्यन्त में ये सभी गुण हैं। इन्होंने स्वजन्म से विख्यात कुरुदेश तथा क्षत्रियों में सर्वश्रेष्ठ कुरुवंश को अलङ्कृत किया है। इसका प्रमाण वह भौंरे के द्वारा सतायी जाती हुई शकुन्तला की डरी हुई वाणी के प्रत्युत्तर में देते हैं– **''कः पौरवे वसुमतीं शासति शासितरि दुर्विनीतानाम्।''**

राजा दुष्यन्त की अवस्था लगभग 30-35 वर्ष के मध्य अनुमानित होती है। वे सुन्दर, हृष्ट–पुष्ट, आकर्षक और युवा हैं। उनकी आकृति मनोहर एवं गम्भीर है तथा वाणी मधुर और प्रभावशाली है– **चतुरगम्भीराकृतिः मधुरं प्रियमालापनं प्रभाववानिव लक्ष्यते।** कालिदास ने कलात्मक उद्देश्य को लेकर ऐसे धनी व्यक्तित्वसम्पन्न पुरुष में पुरुषोचित गुणों का समावेश किया है। राजा के बल की तुलना एक पहाड़ी हाथी के साथ की गयी है– **गिरिचर इव नागः प्राणसारं बिभर्ति।** जो प्रत्यञ्चा की टङ्कार मात्र से ही राक्षस रूपी विघ्नों को समाप्त कर देते हैं। **''हुङ्कारेणैव धनुषः स हि विघ्नानपोहति।''** ऐसे पराक्रम एवं शौर्य से सम्पन्न राजा दुष्यन्त के प्रत्यञ्चा चढ़े धनुष पर इन्द्र विश्वास दिखाते हुए देवासुर सङ्ग्राम में उनकी सहायता माँगते हैं। राजा का शस्त्र दुष्टों के नाश तथा दुःखी जनों की रक्षा के लिये ही उठता है, निरपराधों पर अनावश्यक प्रहार के लिये नहीं– **''आर्तत्राणाय वः शस्त्रं न प्रहर्तुमनागसि''।** राजा अपने बाहुबल के पराक्रम पर ही समुद्रपर्यन्त पृथिवी के शासक हैं, साथ ही नगर की अर्गला के समान राज्य के रक्षक भी हैं। मृगयाप्रेमी राजा धनुर्विद्या में अत्यधिक निष्णात भी हैं, उनके लिए चलायमान लक्ष्य का भेदन करना भी सरल कार्य है; किन्तु तपस्वियों के द्वारा रोके जाने पर वे धनुष से बाण उतार कर वर्णाश्रम–धर्म–प्रधान भारत की संस्कृति के प्रति सम्मान भी प्रदर्शित करते हैं– **''मृगया शीलस्य राज्ञः.............।''** अपने रक्ष्य की रक्षा हेतु वे सद्यः बाण चढ़ाते हैं– **यो हनिष्यति वध्यं त्वां रक्ष्यं रक्षिष्यति द्विजम्।**

पराक्रमी होने के साथ ही वे विनम्र भी हैं। कण्व ऋषि के आश्रम को निकटवर्ती जानकर राजा उनके दर्शन के लिये उत्सुक हो जाते हैं– **''पुण्याश्रमदर्शनेन तावदात्मानं पुनीमहे।''** आश्रमदर्शन के समय राजा ने सम्पूर्ण राजोचित वेश तथा आभूषण इत्यादि उतार दिये थे और विनीत वेश में ही आश्रम में प्रवेश किया। ऋषियों के आदेशों का पालन करने को ही अपना सौभाग्य और समृद्ध भविष्य का मन्त्र समझते हैं। धर्मरक्षा की भावना से अनुप्राणित वे आश्रम की रक्षा में लगे हुए होने के कारण अपनी माँ के राजधानी वापस लौट आने के आग्रह को टाल देते हैं। दुष्यन्त प्रजा से प्राप्त कर के रूप में धन-धान्य को अधिक महत्त्व नहीं देते हैं, बल्कि तपस्वियों के द्वारा दिया गया तप का छठाँ हिस्सा उनके लिये महत्त्वपूर्ण है– **तपःषड्भागमक्षय्यं ददत्यारण्यका हि नः।**

दुष्यन्त शकुन्तला में पूर्ण रुचि रखते हैं, किन्तु अपने विश्वास को सुरक्षित रखकर। उनका विचार है कि पुरुवंशियों का मन असत् वस्तुओं की ओर कभी भी प्रवर्तित नहीं होता है– **''सखे, न परिहार्ये वस्तूनि पौरवाणां मनः प्रवर्तते।''** मन का यही प्रवर्तन ही सज्जनों के अन्तःकरण की विशुद्धि का प्रमाण होता है– **सतां हि सन्देहपदेषु वस्तुषु प्रमाणमन्तःकरणप्रवृत्तयः।**

दुर्वासा के शाप के प्रभाव से दुष्यन्त की स्मृति भी मलिन हो गयी। अङ्गूठी की पुनःप्राप्ति ने उन्हें पश्चात्ताप की अग्नि में जला दिया। अपने कर्त्तव्य से च्युत होने का सारा दोष, राजा ने शकुन्तला और भरत से मिलने के पश्चात् स्वयं को दिया। उत्सव, मनोरंजन आदि से अपने को दूर रखकर मानों पश्चात्ताप की अग्नि में स्वयं को पवित्र करते रहे।

राजा दुष्यन्त ललितकला के अनन्य उपासक हैं। काव्य, सङ्गीत तथा चित्रकला में अत्यन्त प्रवीण हैं। प्रिया शकुन्तला के प्रेमपत्र में लिखे गये श्लोक का उत्तर वे तुरन्त ही रचे गये श्लोक से देते हैं। शकुन्तला का चित्र भी स्वयं उन्होंने ही बनाया था, जिस पर सानुमती का कथन है– **''अहो, एषा राजर्षेः निपुणता। जाने सख्याग्रतो मे वर्तते।''**

राजा दुष्यन्त सम्पूर्ण नाटक में अपनी कुल की प्रतिष्ठा के प्रति अत्यन्त सावधान दिखायी पड़ते हैं। वे ऐसा कोई कार्य नहीं करना चाहते हैं जिससे कुल की मर्यादा धूमिल हो। पतिगृह को आयी हुई शकुन्तला को भी (दुर्वासा ऋषि के शाप के प्रभाव से विस्मृत कर देने वाले) दुष्यन्त ने– **'अनिर्वर्णनीयं परकलत्रम्'** कहा।

(2) शकुन्तला

महाकवि कालिदास ने शकुन्तला को एक आदर्श नारी के रूप में प्रस्तुत किया है। इस नाटक की नायिका शकुन्तला के पिता विश्वामित्र हैं तथा माता मेनका हैं। अप्सरा मेनका को इन्द्र ने विश्वामित्र की तपस्या को भंग करने के लिये भेजा था। शकुन्तला का उसके माता–पिता दोनों ने ही परित्याग कर दिया था। उसे शकुन्तों (पक्षियों) ने पोषित किया, अतः उसका नाम शकुन्तला पड़ा। कण्व ऋषि ने अपने आश्रम में रखकर उसका पालन–पोषण किया। इस कारण वह उनकी (धर्म) पुत्री कहलायी। आश्रम में प्रकृति की गोद में पली–बढ़ी होने के कारण उसका सौन्दर्य अत्यन्त नैसर्गिक शोभा वाला था। वह स्वाभाविक रूप से कोमल, मधुर, प्रकृति–प्रेमी और प्राकृतिक सौन्दर्य से युक्त है– **इदं किलाव्याजमनोहरं वपुः।** उसका बाल्यावस्था से लेकर युवावस्था तक का समय माधवी लताओं, सहकारादि तरुओं की छाया, लताओं के झुरमुट, पशुओं के साथ क्रीड़ा और सखियों के साथ हास–परिहास में व्यतीत हुआ। वह ब्रह्मा की ऐसी रचना है जो रूप और सौन्दर्य के समस्त उपादानों को लेकर, विना छुए केवल मन की कल्पना से बनी है, अथवा विधाता के द्वारा केवल चित्र बनाकर उसमें प्राणों का संचार कर दिया गया है–

चित्रे निवेश्य परिकल्पितसत्त्वयोगा,
रूपोच्चयेन मनसा विधिना कृता नु।

शकुन्तला के वल्कल वस्त्र भी उसके अलङ्करण बन गये हैं, तथा उसके रूप की पवित्रता में धरती के सभी उपमान तुच्छ दिखाये गये हैं, चाहे वह अनाघ्रात पुष्प हो, अक्षत किसलय हो, अनाविद्ध रत्न हो, अनास्वादित मधु हो अथवा पुण्यों का अखण्ड फल हो–

अनाघ्रातं पुष्पं किसलयमलूनं कररुहै–
रनाविद्धं रत्नं मधु नवमनास्वादितरसम्।
अखण्डं पुण्यानां फलमिव च तद्रूपमनघं
न जाने भोक्तारं कमिह समुपस्थास्यति विधिः।।

स्नेह प्रकट करने वाली सद्भावना तथा सरलता की प्रतिमूर्ति, लज्जा, प्रेम एवं शान्ति की प्रतीक शकुन्तला का लगाव मानवों के प्रति तो था ही, आश्रम के प्राकृतिक वातावरण में पली होने के कारण तपोवन के वन्य पशुओं तथा वृक्षों तक से भी जुड़ाव था। तपोवन से अलग हटकर वह अपना अस्तित्व नहीं समझती थी। पेड़ों का सिञ्चन करने में केवल पिता का नियोग ही कारण नहीं था, वरन् वह स्वयं भी उनसे सहोदर स्नेह रखती थी– सोदरस्नेहोऽप्येतेषु। आभूषण प्रिय होने पर भी वह पेड़ों से पत्ते और पुष्पों को नहीं तोड़ती थी। वृक्षों को जल देकर ही स्वयं जल पीती थी–

पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जलं युष्मास्वपीतेषु या।
नादत्ते प्रियमण्डनाऽपि भवतां स्नेहेन या पल्लवम्।।

दुष्यन्त का साथ पाने पर शकुन्तला में नैसर्गिक प्रेम उद्भूत होता है, शील और संकोच में लिपटी नारी का प्रथम और पवित्र प्रेम था तभी वह राजा के सामने ढंग से न देखकर सकुचाती थी, आँखें चुराती थी और मन्द-मन्द मुस्कुराती थी। वह अपने प्रेम को न तो प्रकट करती थी और न छिपाने में समर्थ होती थी–

अभिमुखे मयि संहृतमीक्षितं हसितमन्यनिमित्तकृतोदयम्।
विनयवारितवृत्तिरतस्तया न विवृतो मदनो न च संवृतः।।

शकुन्तला अपने प्रेम का निवेदन प्रेमपत्र के माध्यम से करना चाहती है; किन्तु एक नारी का पुरुष से प्रणयनिवेदन करना मर्यादा के प्रतिकूल और अशोभनीय है फिर भी प्रेम-विह्वल होकर पत्र-लेखन करती है।

प्रत्याख्यान के अवसर पर भी जब परिचायक अँगूठी उसकी अँगुली में नहीं मिली, तब वह अपने भोले स्वभाव के कारण राजा को आश्रम में घटित (विवाह की) घटना को बताकर अपनी सत्यता को प्रमाणित करना चाहती है, किन्तु वह उसमें (दुर्वासा के शाप के कारण) सफल नहीं हुई। उसने निष्कपट भाव से अपना तन और मन दोनों ही जिसको समर्पित कर दिया था, उसी ने समस्त स्त्री जाति पर अशिक्षितपटुत्व का आरोप लगाया। उस समय प्रत्याख्यान की असह्य पीड़ा को आँसुओं में न बहाकर राजसभा के अधिपति को ही धिक्कारती हुई कहती है– **अनार्य! आत्मनो हृदयानुमानेन पश्यसि। क इदानीमन्यो... तवानुकृतिं प्रतिपत्स्यते।**

शकुन्तला के चरित्र का यह उत्कर्ष, अदिति और मरीचि ऋषि के आध्यात्मिक सत्सङ्ग के कारण भी है और पुत्र–पालन के गुरुतर दायित्व के कारण भी। अन्तिम रूप में शकुन्तला विजयिनी है, पति उसके चरणों पर गिरकर क्षमा याचना करते हैं, किन्तु वह उलाहने का एक शब्द भी नहीं कहती। केवल यही कहती है कि उठिये आर्यपुत्र ! मेरे पूर्वकृत कर्मों का परिणाम होगा कि इतने दयालु आप भी मेरे प्रति कठोर हो गये। आज उसका जीवन सफल और सम्पूर्ण हुआ, पुत्र के साथ पति की समीपता भी मिली।

कवि के अनुसार शकुन्तला के चरित्र में दो अन्य गुणों– सखीस्नेह और पितृवत्सलता की भी प्रधानता है। आश्रम में सखियों के साहचर्य में उसने लेखन, वाचन, काव्य-संगीत इत्यादि ललित-कलाओं की शिक्षा प्राप्त की है। पुत्री के रूप में शकुन्तला को पिता कण्व का स्नेह प्राप्त है। यद्यपि ऋषि उसके जन्म देने वाले पिता नहीं हैं; परन्तु उन्हीं की देख–रेख ने शकुन्तला के व्यक्तित्व को अप्रतिम बना दिया। पिता द्वारा बताये गये सभी कार्यों– आलवाल (थाल्हा) निर्माण, वृक्षों को सींचना तथा अतिथि–सत्कार आदि को बड़े ही मनोयोग से सम्पन्न करती है। पतिगृहगमन के समय उस पितृवत्सला शकुन्तला की सारी चिन्ता अपने पिता के लिए है– **तपश्चरणपीडितं तातशरीरम्। तन्माऽतिमात्रं मम कृत उत्कण्ठस्व।**

कवि की लेखनी ने शकुन्तला के चरित्र में अचानक ही परिवर्तन दिखाया है। आश्रम की बाला अकस्मात् ही आयु और मानसिक आघात से परिपक्व हो गयी, संसार के प्रति उसकी दृष्टि बदल गयी। शकुन्तला अनुपम और असाधारण है। मानवीय होते हुए भी देवी है, देवी होते हुए भी नारी है।

3. महर्षि काश्यप (कण्व)

उत्तराखण्ड में बहने वाली मालिनी नदी के तट पर स्थित आश्रम के कुलपति महर्षि कण्व हैं। 10 हजार की संख्या वाले आश्रम के छात्रों का भरण–पोषण एवम् अध्यापन करने वाले ऋषि को ही कुलपति का पद प्रदान किया जाता था–

मुनीनां दशसाहस्रं योऽन्नदानादिपोषणात्।
अध्यापयति विप्रर्षिरसौ कुलपतिः स्मृतः।।

कण्व मरीचिपुत्र (कश्यप के पुत्र) होने के कारण काश्यप के नाम से भी जाने जाते हैं। वे नैष्ठिक ब्रह्मचारी हैं। आश्रम में बनी हुई यज्ञशाला में अग्निहोत्र आदि करते हैं। भूत, वर्तमान तथा भविष्य को अपने तप के प्रभाव से जान लेते हैं। तप के प्रभाव से उनकी उपस्थिति में राक्षस विघ्न नहीं डाल पाते हैं। भविष्यद्रष्टा होने के कारण उन्हें आभास हो जाता है कि शकुन्तला पर विपत्ति आने वाली है जिसके शमनार्थ वे सोमतीर्थ पहले ही चले जाते हैं। ऋषि ने अपनी तीव्र अन्तर्दृष्टि से यह जान लिया कि शकुन्तला और दुष्यन्त ने गान्धर्व विवाह कर लिया है साथ ही शकुन्तला गर्भवती भी है। भावी घटनाएँ भी उन्हें सहज रूप से प्रत्यक्ष थीं कि शकुन्तला का गर्भ तेजस्वी और संसार के लिये कल्याणकारी है–

दुष्यन्तेनाहितं तेजो दधानां भूतये भुवः।
अवेहि तनयां ब्रह्मन्नग्निगर्भां शमीमिव।।

शकुन्तला कण्व की पालिता पुत्री है। माता-पिता के द्वारा छोड़ी जाने पर ऋषि ने शकुन्तला को अत्यधिक स्नेह से पाला तथा उसके अनिष्ट के निवारण की चिन्ता उन्हें निरन्तर बनी रहती है जिसको वे अनेक अनुष्ठानों एवं क्रिया विधियों से समाप्त करने का प्रयास करते हैं।

अमी वेदिं परितः क्लृप्तधिष्ण्याः
समिद्वन्तः प्रान्तसंस्तीर्णदर्भाः।
अपघ्नन्तो दुरितं हव्यगन्धै–
वैतानास्त्वां वह्नयः पावयन्तु।।

चतुर्थ अङ्क में शकुन्तला की विदाई के समय ऋषि एक सांसारिक गृहस्थ की तरह अपने शोक के आवेग को दबा नहीं पाते हैं और पुत्री को सान्त्वना देते हैं– **"वत्से! किमेवं कातरासि। वत्से! अलं रुदितेन।"**

पुत्री के शुभ सम्पादन की उनकी इच्छा पतिगृह जाने के समय उनकी वाणी से मुखरित होती है– **सेयं याति शकुन्तला पतिगृहं सर्वैरनुज्ञायताम्।**

ऋषि की यही इच्छा है कि उनका आशीर्वाद शकुन्तला के साथ सदैव बना रहे वह अपना जीवन सुखपूर्वक व्यतीत करे। पतिगृह–गमन के समय शकुन्तला अपने पिता को धीरज बँधाती है कि आप मेरे लिये दुःखी न हों, किन्तु ऋषि शकुन्तला से विहीन आश्रम की कल्पना मात्र से ही दुःखी होकर कहते हैं कि पुत्री! तुमने कुटी के द्वार पर जो नीवार धान्य के कण बोये हैं, वे मुझे तुम्हारी याद दिलाते रहेंगे। इस प्रकार वह अपने हार्दिक प्रेम को प्रकट करते हैं–

शममेष्यति मम शोकः कथं नु वत्से त्वया रचितपूर्वम्।
उटजद्वारविरूढं नीवारबलिं विलोकयतः।।

ऋषि होते हुए भी उनको लौकिक-व्यवहार अच्छी तरह से पता है– **वनौकसोऽपि सन्तो लौकिकज्ञा वयम्।** ऋषि के द्वारा शकुन्तला को दिये गये उपदेश अत्यन्त प्रभावशाली हैं जो पतिगृह को जाती हुई कन्या को मातृपक्ष (माता या पिता) के द्वारा दिये जाते हैं– **शुश्रूषस्व गुरून् कुरु प्रियसखीवृत्तिं सपत्नीजने, भर्तुर्विप्रकृताऽपि रोषणतया मा स्म प्रतीपं गमः।** कण्व ऋषि द्वारा राजा को दिये गये उपदेश में उनके लोकव्यवहारज्ञता का परिचय मिलता है। शकुन्तला के साथ विदाई के समय ऋषि, अनसूया तथा प्रियंवदा को नहीं भेजते हैं, क्योंकि उन दोनों का विवाह अभी नहीं हुआ है। अविवाहिता कन्याओं को बहन या सखी की ससुराल भेजना उनको अनुचित लगा। इसलिए वह दोनों सखियों को शकुन्तला के साथ नहीं भेजते हैं।

मानवस्वभाव से भी ऋषि पूर्णतया परिचित हैं, जैसे– अन्य कार्यों में व्यस्त हो जाने से व्यक्ति अपने दुःख को भूल जाता है। इसी से वे शकुन्तला से कहते हैं कि पतिगृह पहुँच कर तुम वहाँ के कार्यों में व्यस्त हो जाओगी तथा इस दुःख को भूल जाओगी–

अभिजनवतो भर्तुः श्लाघ्ये स्थिता गृहिणीपदे..................
मम विरहजां न त्वं वत्से शुचं गणयिष्यसि।।

कण्व ऋषि कन्या को धरोहर (दूसरे की सम्पत्ति) समझते हैं। उसका सावधानी से पालन-पोषण करके पतिगृह को भेज (सौंप) कर सुख का अनुभव करते हैं–

अर्थो हि कन्या परकीय एव तामद्य सम्प्रेष्य परिग्रहीतुः।
जातो ममायं विशदः प्रकामं प्रत्यर्पितन्यास इवान्तरात्मा।।

ऋषि को इस बात की पूरी जानकारी थी कि राजमहल का वातावरण आश्रम के वातावरण से अत्यन्त भिन्न होगा और उनकी पुत्री को वहाँ सामञ्जस्य बिठाने में कष्ट हो सकता है, इसलिए उन्होंने उसे राजमहल के वातावरण में रहने के लिये जरूरी उपदेश दिये–

यान्त्येवं गृहिणीपदं युवतयो वामाः कुलस्याधयः।

महर्षि कण्व अत्यन्त सहनशील हैं, इसका पता तब चलता है जब शकुन्तला के आश्रम-विरोधी आचरण पर भी वह कुछ नहीं कहते हैं। इस बात का डर प्रियंवदा को था, जिस पर वह कहती है– **तात इदानीमिमं वृत्तान्तं श्रुत्वा न जाने किं प्रतिपत्स्यत इति।** किन्तु ऋषि इस विवाह का समर्थन करते हुए शकुन्तला को उसके पतिगृह भेज भी देते हैं और कहते है– **शिवास्ते पन्थानः सन्तु**।

4. अनसूया

कालिदास ने शकुन्तला के चरित्र में लज्जा, प्रगल्भता और रुक्षता आदि गुणों के निराकरण की दृष्टि से दो सुन्दर सखियों का चरित्र भी रखा है। ये दोनों समान अवस्था और रूप के कारण अत्यधिक अन्तरङ्गता से हास-परिहास करती हैं तथा सुखदुःखादि भावों का आपस में आदान-प्रदान भी इनके आपसी सम्बन्धों को अत्यन्त प्रगाढ़ बना दिया है। अनसूया इन तीनों सखियों में से कुछ बड़ी अतएव दूरदर्शिनी, गम्भीर तथा व्यवहारकुशल है। प्रियंवदा अपेक्षाकृत कनिष्ठ, चञ्चल तथा नाम के अनुरूप प्रिय-वादिनी भी है। शकुन्तला की सारी वाचालता प्रियंवदा ने तथा चिन्ताएँ और जिज्ञासाएँ अनसूया ने ले लिया है।

राजा दुष्यन्त के आश्रम में प्रवेश करने पर अनसूया ही उनका स्वागत करती है। राजा ने जब शकुन्तला के प्रति आकृष्ट होकर पूछा कि– **अपि तपो वर्धते ?** तो अनसूया ही उसका उत्तर देती हुई कहती है कि– "आप जैसे अतिथि-विशेष के आने से ही तप की सफलता है।" शकुन्तला से स्वागत- सामग्री लाने के लिये कहती है और राजा को शकुन्तला का जन्मविषयक वृत्तान्त सुनाती है। राजा से बड़े ही आदर और सम्मान से उनका परिचय पूछकर अपनी वाग्विदग्धता का परिचय देती है– **"आर्यस्य मधुरालापजनितो विस्रम्भो मां मन्त्रयते-कतम आर्येण राजर्षिवंशोऽलङ्क्रियते। कतमो वा विरहपर्युत्सुकजनः कृतो देशः। किं निमितं वा ....पदमुपनीतः।"**

अनसूया प्रेमरोग से सन्तप्त शकुन्तला की चिन्ता करती है तथा नलिनीपत्र में पत्र लिखवाकर और खस के लेपन से अपनी प्रिय सखी शकुन्तला का उपचार भी करती है। यद्यपि प्रेम रोग का अनुभव उसे नहीं है, किन्तु इतिहास, कथाओं के आधार पर वह अनुमान लगा लेती है और उसके अनुरूप ही शकुन्तला की चिकित्सा करती है। जब वह देखती है कि शकुन्तला राजा के प्रति समर्पित होना चाहती हैं तो वह परोक्ष रूप से शकुन्तला के भविष्य के प्रति पहले आश्वस्त होना चाहती हैं– **वयस्य! बहुवल्लभा राजानः श्रूयन्ते। यथा नौ प्रियसखी बन्धुजनशोचनीया न भवेत् तथा क्रियताम्।**

प्रियंवदा की इस आशङ्का पर कि दुष्यन्त और शकुन्तला के विषय में जानकर ऋषि की क्या प्रतिक्रिया होगी, अनसूया अपनी व्यावहारिक बातों से उत्तर देती है कि उत्तम वर की प्राप्ति होने पर परिवार के लोगों को आपत्ति नहीं होनी चाहिए– **गुणवते कन्यका प्रतिपादनीयेत्ययं तावत् प्रथमः संकल्पः। तं यदि दैवमेव संपादयति नन्वप्रयासेन कृतार्थो गुरुजनः।।**

राजा ने हस्तिनापुर जाकर भी जब शकुन्तला की सुध नहीं ली तो अनसूया को चिन्ता हुई और उसने प्रिय सखी के सौभाग्य देवता की अर्चना करने की योजना बनायी। ऋषि विदाई की वेला में रोती हुई शकुन्तला को शान्त करने को कहते हैं– **''अनसूये! अलं रुदितेन। ननु भवतीभ्याम् स्थिरीकर्त्तव्या शकुन्तला।**

5. प्रियंवदा

प्रियवादिनी प्रियंवदा अत्यन्त चञ्चलस्वभाव वाली और सरल हास-परिहास करने वाली है। अपने वस्त्र के कसे हुए होने की बात जब शकुन्तला उससे कहती है तो प्रियंवदा कहती है कि– **''अत्र पयोधरविस्तारयितृ आत्मनः यौवनमुपालभस्व मां किमुपालभसे।''** जब शकुन्तला आम्रवृक्ष पर वनज्योत्स्ना को चढ़ी हुई देखती है तो प्रियंवदा उससे कहती है कि आम्रवृक्ष की तरह तुम भी अपने अनुरूप प्रेमी खोज रही हो। इस पर शकुन्तला कहती है कि–यह निश्चित ही तेरी अपनी इच्छा है। **(एष नूनं तवात्मगतो मनोरथः)।**

राजा जब शकुन्तला से विवाह सम्बन्धी इच्छा पूछने को उत्सुक होता है, तो वह कहती है– आप कुछ भी विचार न करें तपस्विजनों से निःसंकोच प्रश्न पूछा जा सकता है **(अलं विचारेण। अनियन्त्रणानुयोगः तपस्विजनो नाम)।** राजा की जिज्ञासा का समाधान भी प्रियंवदा ही करती है कि विवाह के विषय में यह (शकुन्तला) पराधीन है, इसके पिता ही इसका विवाह करेंगे **(धर्माचरणेऽपि परवशोऽयं जनः)।**

प्रियंवदा पिता कण्व के आगमन को निकट जानकर उनकी प्रतिक्रिया से भयभीत है– **तात इमं वृत्तान्तं श्रुत्वा न जाने किं प्रतिपत्स्यत इति।** दुर्वासा के क्रोध को शान्त करने वही जाती है, और उनके शाप को कदाचित् शान्त भी कर लेती है– **सखि, प्रकृतिवक्रः स कस्यानुनयं प्रति गृह्णाति। किमपि पुनः सानुक्रोशः कृतः।** शकुन्तला को मदनलेख लिखने का और दुष्यन्त को भेजने का प्रस्ताव भी प्रियंवदा का ही था।

कवि ने नायिका शकुन्तला के चरित्र के उत्कर्ष हेतु इन दोनों ही स्त्री पात्रों का सर्जन किया है। अनसूया शकुन्तला के संकटकाल में उपयोगी है तथा प्रियंवदा प्रेम-प्रसङ्ग में। एक शिष्ट है तो दूसरी विनोदी प्रकृति की। दोनों ही अपनी प्रिय सखी से प्रगाढ प्रेम करती हैं और हर समय उसकी सहायता के लिये तत्पर रहती हैं चाहे जलसिञ्चन हो, अतिथि-सत्कार हो, दुर्वासा ऋषि का शाप हो, अलङ्करण का प्रसङ्ग हो या फिर विदाई की वेला हो। दोनों ने ही अपनी-अपनी चारित्रिक विशेषताओं से अपनी सखी के चरित्र के आकर्षण को अधिकाधिक मादकता, सम्मोहन तथा सुगन्धि प्रदान की है।

महाकविकालिदासविरचितम्

अभिज्ञानशाकुन्तलम्

चतुर्थोऽङ्कः

(ततः प्रविशतः कुसुमावचयं नाटयन्त्यौ सख्यौ।)

अनसूया– हला प्रियंवदे, यद्यपि गान्धर्वेण विधिना निर्वृत्तकल्याणा शकुन्तलाऽनुरूपभर्तृगामिनी संवृत्तेति निर्वृतं मे हृदयम्, तथाप्येतावच्चिन्तनीयम्।

प्रियंवदा– कथमिव।

अनसूया– अद्य स राजर्षिरिष्टिं परिसमाप्य ऋषिभिर्विसर्जित आत्मनो नगरं प्रविश्यान्तःपुरसमागत इतोगतं वृत्तान्तं स्मरति वा न वेति।

प्रियंवदा– **विस्रब्धा भव। न तादृशा आकृतिविशेषा गुणविरोधिनो भवन्ति। तात इदानीमिमं वृत्तान्तं श्रुत्वा न जाने किं प्रतिपत्स्यत इति।**

अनसूया– **यथाऽहं पश्यामि, तथा तस्यानुमतं भवेत्।**

प्रियंवदा– **कथमिव ?**

अनसूया– **गुणवते कन्यका प्रतिपादनीयेत्ययं तावत् प्रथमः सङ्कल्पः। तं यदि दैवमेव सम्पादयति नन्वप्रयासेन कृतार्थो गुरुजनः।**

प्रियंवदा– **(पुष्पभाजनं विलोक्य) सखि, अवचितानि बलिकर्मपर्याप्तानि कुसुमानि।**

अनसूया– **ननु सख्याः शकुन्तलायाः सौभाग्यदेवताऽर्चनीया।**

प्रियंवदा– **युज्यते।**

(इति तदेव कर्माभिनयतः।)

(तत्पश्चात् पुष्प चुनने का अभिनय करती हुई (शकुन्तला की) दोनो सखियाँ (अनसूया और प्रियंवदा) प्रवेश करती हैं।

अनसूया– हे सखी प्रियंवदा, यद्यपि गान्धर्वविधि से विवाहित होकर सफल मनोरथ हुई शकुन्तला (अपने) अनुकूल पति को प्राप्त हो गयी है, अतः मेरा मन सुखी हो गया है, तथापि इतना तो विचारणीय (ही) है।

प्रियंवदा– वह क्या ?

अनसूया– आज वह राजर्षि (दुष्यन्त) यज्ञ को समाप्त करके ऋषियों के द्वारा विदा होकर, अपने नगर में प्रवेश कर अन्तःपुर की रानियों से मिलकर यहाँ की बातों को याद भी करेंगे या नहीं?

प्रियंवदा– निश्चिन्त रहो। उस प्रकार के सुन्दर शरीरावयवों (आकृति) वाले (जन) गुणों से रहित नहीं होते। परन्तु पिता (कण्व) इस बात को सुनकर, न जाने क्या सोचेंगे।

अनसूया– जैसा कि मैं समझती हूँ, वे इसका अनुमोदन ही करेंगे।

प्रियंवदा– कैसे ?

अनसूया– गुणवान् व्यक्ति को कन्या देनी चाहिए, यह उनका (माता-पिता का) प्रथम संकल्प होता है, यदि यह कार्य भाग्य ही सम्पन्न कर देता है, तब तो गुरुजन बिना प्रयास के ही कृतार्थ हो गये।

प्रियंवदा– (पुष्पों की टोकरी को देखकर) हे सखि! पूजा के कार्य के लिए (हम लोगों ने) पर्याप्त पुष्प चुन लिए हैं।

अनसूया– किन्तु सखी शकुन्तला के सौभाग्य देवता (पति) की भी तो पूजा करनी है।

प्रियंवदा– ठीक है।

(यह कहकर उसी कार्य का अभिनय करती हैं।)

शब्दार्थ– कुसुमावचयम् (कुसुमानाम् अवचयः तम्) = फूलों का चुनना। **गान्धर्वेण** = गन्धर्व-विवाह की विधि से (विवाह के आठ भेदों में से एक गान्धर्व विवाह होता है। कामसंतप्त नायक-नायिका एकान्त में बिना वेदमन्त्रों के, केवल संकल्प लेकर विवाह करते हैं वह गान्धर्वविवाह है।) **निर्वृत्तकल्याणा** (निर्वृत्तं सम्पन्नं कल्याणं विवाहमंगलं यस्याः सा) = जिसका विवाह रूपी मंगल कार्य हो गया है। **अनुरूपभर्तृगामिनी** = अपनी योग्यता के अनुरूप सुयोग्य पति की प्राप्ति। **निर्वृतम** = सुखी, निश्चिन्त। **इष्टिम्** =(यज् + क्तिन्) = यज्ञ को। **विस्रब्धा** = विश्वास युक्त। **आकृतिविशेषा (आकृतीनां विशेषाः)** = विशेष सुन्दर आकृति वाले। **गुणविरोधिनः** (गुणैः विरोधिनः) = गुणों से विरोध रखने वाले। **बलिकर्म** = नित्य की जाने वाली देवपूजा। **सौभाग्यदेवता** = पति जो सौभाग्य अर्थात् सुहाग देगा।

(नेपथ्ये)

अयमहं भोः।

अनसूया– (कर्णं दत्त्वा) सखि, अतिथीनामिव निवेदितम्।

प्रियंवदा– ननूटजसन्निहिता शकुन्तला।

अनसूया– अद्य पुनर्हृदयेनासन्निहिता। अलमेतावद्भिः कुसुमैः। (इति प्रस्थिते)

(पर्दे के पीछे)

यह मैं (अतिथि) आया हूँ।

अनसूया– (सुनकर) सखी किसी (आदरणीय) अतिथि की सी यह अवाज है।

प्रियंवदा– शकुन्तला तो कुटी में स्थित ही है।

अनसूया– (है तो) पर आज उसका हृदय कहीं और है। तो बस, इतने ही फूल पर्याप्त हैं। (ऐसा कहकर दोनों चल देती हैं।)

(नेपथ्ये)

आः, अतिथिपरिभाविनि,

विचिन्तयन्ती यमनन्यमानसा
तपोधनं वेत्सि न मामुपस्थितम्।
स्मरिष्यति त्वां न स बोधितोऽपि सन्
कथां प्रमत्तः प्रथमं कृतामिव।।1।।

(नेपथ्ये)

ओह! ओ अतिथि का तिरस्कार करने वाली,

अन्वय – अनन्यमानसा यं विचिन्तयन्ती (त्वम्) उपस्थितं तपोधनं मां न वेत्सि, स प्रमत्तः प्रथमं कृतां कथाम् इव बोधितः अपि सन् त्वां न स्मरिष्यति।

अनुवाद – अनन्यहृदय (एकाग्रचित्त) होकर जिस व्यक्ति का ध्यान करती हुई (तुम) मुझ तपस्वी की उपस्थिति को नहीं जान रही हो, वह (तेरे द्वारा) याद दिलाने पर भी तुझे उसी प्रकार याद नहीं करेगा, जैसे विक्षिप्त (उन्मत्त) व्यक्ति पहले कही हुई बात को (स्मरण नहीं करता है)।।1।।

हिन्दी व्याख्या – दुष्यन्त गान्धर्व विवाह के पश्चात् कुछ समय तक शकुन्तला के साथ रहकर अपनी राजधानी वापस चले गये हैं। उनके बिना शकुन्तला को कुछ अच्छा नहीं लग रहा है। शकुन्तला का हृदय एकमात्र दुष्यन्त का चिन्तन कर रहा है। उसी समय कुटी में दुर्वासा मुनि आ जाते हैं और आवाज देते हैं, यह मैं आया हूँ, यहाँ पर कौन है? शकुन्तला एकाग्रचित्ता होने के कारण सुन नहीं पाती, जिससे सुलभकोप दुर्वासा क्रोधित हो कर शाप दे देते हैं कि तुम जिस व्यक्ति (दुष्यन्त) के ध्यान में अनन्यमन होकर लगी हो और मेरी वाणी को नहीं सुन रही हो, वह तुझे भूल जायेगा और फिर याद दिलाने पर भी वह तुम्हारा स्मरण उसी प्रकार नहीं करेगा जैसे प्रमादी व्यक्ति पहले कही बात का स्मरण नहीं करता है।

शब्दार्थ – अनन्यमानसा = एकाग्रचित्त वाली। **यम्** = जिसको। **विचिन्तयन्ती** = ध्यान करती हुई। **उपस्थितम्** = उपस्थित हुए। **तपोधनम्** = तपस्वी। **माम्** = मुझको अर्थात् दुर्वासा ऋषि को। **न वेत्सि** = नहीं समझ रही हो। **प्रमत्तः** = पागल, विक्षिप्त। **प्रथमम्** = पहले। **कृताम्** = कही गयी। **कथाम्** = बात को। **इव** = की तरह। **बोधितः अपि सन्** = (तुम्हारे द्वारा) याद दिलाये जाने पर भी। **त्वां न स्मरिष्यति** = तुझे याद नहीं करेगा।

विशेष– प्रस्तुत पद्य में काव्यलिङ्ग, उपमा और परिकर अलङ्कार हैं। छन्द – **वंशस्थ।**

प्रियंवदा– **हा, धिक्, हा धिक्। अप्रियमेव संवृत्तम्। कस्मिन्नपि पूजार्हेऽपराद्धा शून्यहृदया शकुन्तला। (पुरोऽवलोक्य) न खलु यस्मिन् कस्मिन्नपि। एष दुर्वासाः सुलभकोपो महर्षिः। तथा शप्त्वा वेगबलोत्फुल्लया दुर्वारया गत्या प्रतिनिवृत्तः।**

अनसूया– **कोऽन्यो हुतवहाद् दग्धुं प्रभवति। गच्छ। पादयोः प्रणम्य निवर्तयैनं यावदहमर्घोदकमुपकल्पयामि।**

प्रियंवदा– **तथा। (इति निष्क्रान्ता।)**

अनसूया– **(पदान्तरे स्खलितं निरूप्य) अहो, आवेगस्खलितया गत्या प्रभ्रष्टं ममाग्रहस्तात् पुष्पभाजनम्। (इति पुष्पोच्चयं रूपयति।)**

(प्रविश्य)

प्रियंवदा– **सखि, प्रकृतिवक्रः स कस्यानुनयं प्रतिगृह्णाति। किमपि पुनः सानुक्रोशः कृतः।**

प्रियंवदा– हाय! हाय! अनर्थ (अनचाहा) हो ही गया। किसी पूजनीय जन के प्रति शून्यहृदया शकुन्तला ने कुछ अपराध कर दिया है। (सामने देखकर) वस्तुतः किसी साधारण व्यक्ति के प्रति नहीं। (अपितु) यह (तो) सहज क्रोधी महर्षि दुर्वासा हैं। इस प्रकार (शकुन्तला को) शाप देकर वेग के बल से युक्त (अर्थात् अतितीव्र) और दुर्निवार्य गति से लौटे जा रहे हैं।

अनसूया– अग्नि के अतिरिक्त और कौन दूसरा जला सकता है। (तुरन्त) जाओ और (उनके) चरणों में प्रणाम करके लौटा लाओ, तब तक मैं (उनकी पूजा के लिए) अर्घ और जल तैयार करती हूँ।

प्रियंवदा– अच्छा।

अनसूया– (कुछ आगे चलकर गिरने का अभिनय करके) ओह, घबराहट से लड़खड़ाती हुई चाल के कारण मेरे हाथ से फूल की डलिया गिर गयी। (फूलों को उठाने का अभिनय करती है।)

(प्रवेश करके)

प्रियंवदा– सखि, स्वभाव से कुटिल वे किसकी प्रार्थना स्वीकार करते हैं, फिर भी मैंने उन्हें कुछ दयालु बना लिया।

शब्दार्थ– संवृत्तम् = घटित हुआ। **पूजार्हे** = पूजा के योग्य। **शप्त्वा** = शाप देकर। **हुतवहात् अन्यः** = अग्नि के अलावा। **अर्घोदकम्** = अर्घ और जल। अर्घ में ये आठ चीजें होती हैं–आपः क्षीरं कुशाग्रश्च दधि सर्पिः सतण्डुलम्। यवः सिद्धार्थकश्चैवाष्टाङ्गोऽर्घः परिकीर्तितः। **अग्रहस्तात्** = हाथ से। **प्रकृतिवक्रः** = स्वभाव से कुटिल। **सानुक्रोशः** = दयायुक्त।

अनसूया– **(सस्मितम्) तस्मिन् बह्वेतदपि। कथय।**

प्रियंवदा– **यदा निवर्तितुं नेच्छति तदा विज्ञापितो मया। भगवन्, प्रथम इति प्रेक्ष्याविज्ञाततपःप्रभावस्य दुहितृजनस्य भगवतैकोऽपराधो मर्षयितव्य इति।**

अनसूया– **ततस्ततः।**

प्रियंवदा– **ततो न मे वचनमन्यथाभवितुमर्हति, किं त्वभिज्ञानाभरणदर्शनेन शापो निवर्तिष्यत इति मन्त्रयमाण एवान्तर्हितः।**

अनसूया– **शक्यमिदानीमाश्वसितुम्। अस्ति तेन राजर्षिणा संप्रस्थितेन स्वनामधेयाङ्कितम–ङ्गुलीयकं स्मरणीयमिति स्वयं पिनद्धम्। तस्मिन् स्वाधीनोपाया शकुन्तला भविष्यति।**

अनसूया– (मुस्कुराकर) उनसे इतना भी बहुत है, कहो। (फिर क्या हुआ)

प्रियंवदा– जब वह लौटने के लिए इच्छुक नहीं हुए, तब मैंने (उनसे) प्रार्थना की। भगवन् (आपके) तप के प्रभाव को न जानने वाली पुत्री का यह प्रथम (अपराध) है, यह समझकर आपके द्वारा यह एक अपराध क्षमा करने योग्य है।

अनसूया– तब क्या हुआ?

प्रियंवदा– मेरा वचन असत्य नहीं हो सकता है, किन्तु पहचान के (परिचायक) आभूषण के दिखाने से मेरा शाप समाप्त हो जायेगा'— यह कहते–कहते ही वे अन्तर्धान हो गये।

अनसूया– अब धैर्य धारण किया जा सकता है। प्रस्थान करते हुए उस राजर्षि (दुष्यन्त) के द्वारा अपने नाम से अंकित (एक) अँगूठी, स्मरण-चिह्न के रूप में (शकुन्तला की अंगुली में) स्वयं पहनाई गयी थी (वह) विद्यमान है। उससे शकुन्तला (शाप-निवृत्ति के) उपाय में स्वतन्त्र रहेगी।

शब्दार्थ– निवर्तितुम् = लौटने के लिए। **प्रेक्ष्य** = समझकर। **दुहितृजनस्य** = पुत्री का। **मर्षयितव्यः** = क्षमा करने के योग्य है। **अन्तर्हितः** = अन्तर्धान हो गये, अदृश्य हो गये। **स्मरणीयमिति** = स्मृतिचिह्न के रूप में, इसको देखकर मुझे याद करते रहना। **पिनद्धम्** = पहनाया। **स्वाधीनोपाया** = (शाप-निवृत्ति के) उपाय में स्वतंत्र है।

अनसूया– सखि, एहि। देवकार्यं तावद् निर्वर्तयावः। (इति परिक्रामतः।)

प्रियंवदा– (विलोक्य) अनसूये, पश्य तावत्। वामहस्तोपहितवदनाऽऽलिखितेव प्रियसखी। भर्तृगतया चिन्तायात्मानमपि नैषा विभावयति। किं पुनरागन्तुकम्।

अनसूया– प्रियंवदे, द्वयोरेव नौ मुख एष वृत्तान्तस्तिष्ठतु। रक्षितव्या खलु प्रकृतिपेलवा प्रियसखी।

प्रियंवदा– को नामोष्णोदकेन नवमालिकां सिञ्चति।

(इत्युभे निष्क्रान्ते।)

विष्कम्भकः।

प्रियंवदा– सखि आओ, तब तक (हम दोनों) देवपूजा का कार्य समाप्त करें।

(दोनों चारों ओर घूमती हैं।)

प्रियंवदा– (देखकर) अनसूया, देखो तो (यह हमारी) प्रिय सखी बायें हाथ पर मुँह रखे हुए चित्रित–सी (बैठी) है। पतिगत चिन्ता के कारण यह अपने को भी नहीं समझ रही है (स्वतः की भी सुध नहीं है) फिर अतिथि को (कहाँ समझेगी)।

अनसूया– प्रियंवदा यह (शाप का) वृतान्त हम दोनों के मुख तक ही सीमित रहे। स्वभाव से ही कोमल प्रियसखी की रक्षा करनी चाहिए। (यदि वह इस बात को सुनेगी तो उसे बड़ा दुःख होगा।)

प्रियंवदा– भला कौन नवमालिका को गरम जल से सींचेगा, अर्थात् कोई नहीं।

(दोनों का प्रस्थान)

(विष्कम्भक समाप्त)

शब्दार्थ– निर्वर्तयावः = निभायें, पूरा करें। **वामहस्तोपहितवदना** = जिसने बाँये हाथ पर मुँह रखा हुआ है। **रक्षितव्या** = रक्षणीय है। **प्रकृतिपेलवा** = स्वभाव से ही सुकुमार। **विष्कम्भकः** = वृत्तवर्तिष्यमाणानां कथांशानां निदर्शकः। संक्षिप्तार्थस्तु विष्कम्भ आदावङ्कस्य दर्शितः। विष्कम्भक, भूत और भावी घटनाओं का निर्देश करता है। संक्षिप्त अर्थ वाला यह विषकम्भक अंक के आदि में रखा जाता है। जिसमें एक या दो पात्र मध्यम श्रेणी के हों और वे संस्कृत भाषा का प्रयोग करते हों तो वह शुद्ध विष्कम्भक कहलाता है, और जिसमें एक पात्र मध्यम श्रेणी का हो और दूसरा निम्न श्रेणी का हो तथा प्राकृत एवं संस्कृत भाषा का प्रयोग करते हों तो वह मिश्र या संकीर्ण विष्कम्भक कहलाता है।

(ततः प्रविशति सुप्तोत्थितः शिष्यः।)

शिष्यः– **वेलोपलक्षणार्थमादिष्टोऽस्मि तत्रभवता प्रवासादुपावृत्तेन काश्यपेन। प्रकाशं निर्गतस्तावदवलोकयामि कियदवशिष्टं रजन्या इति। (परिक्रम्यावलोक्य च) हन्त, प्रभातम्। तथाहि–**

(तदनन्तर सोकर उठे हुए शिष्य का प्रवेश)

शिष्यः– प्रवास से वापस आये हुए आदरणीय काश्यप (महर्षि कण्व) ने समय का परिज्ञान करने के लिए मुझे आज्ञा दी है, (तो) बाहर प्रकाश में निकलकर देखता हूँ कि कितनी रात शेष है। (चारों ओर घूमकर और देखकर) ओह! प्रातःकाल हो गया क्योंकि–

यात्येकतोऽस्तशिखरं पतिरोषधीना–
माविष्कृतोऽरुणपुरःसर एकतोऽर्कः।
तेजोद्वयस्य युगपद्व्यसनोदयाभ्यां
लोको नियम्यत इवात्मदशान्तरेषु।।2।।

अन्वय– एकतः ओषधीनां पतिः अस्तशिखरं याति, एकतः अरुणपुरःसरः अर्कः आविष्कृतः। लोकः तेजोद्वयस्य युगपद्व्यसनोदयाभ्याम् आत्मदशान्तरेषु नियम्यते इव।

अर्थ– एक ओर अर्थात् पश्चिम दिशा में वनस्पतियों का स्वामी अर्थात् चन्द्रमा अस्ताचल को जा रहा है (और) दूसरी ओर अरुण को आगे किये हुए सूर्य का उदय हो रहा है। यह संसार दो तेजों (चन्द्रमा और सूर्य) के एक साथ अस्त और उदय के द्वारा मानों अपने दशा-विशेषों में नियन्त्रित हो रहा है।

प्रसङ्ग– प्रथम अङ्क से ज्ञात होता है कि ऋषि कण्व, शकुन्तला के प्रतिकूल भाग्य को शान्त करने के लिए सोमतीर्थ गये हैं। प्रवास से लौटकर आने के पश्चात् जिस शिष्य को समय का पता लगाने का निर्देश दिया था, वही शिष्य प्रातःकाल होने का वर्णन इस श्लोक में कर रहा है।

व्याख्या– बाहर आकर महर्षि कण्व का शिष्य जिसे समय का पता लगाने के लिए नियुक्त किया गया था, देखता है कि पूर्व दिशा में तो सूर्य उदित हो रहा है और साथ ही पश्चिम दिशा में चन्द्र अस्त हो रहा है। सूर्य और चन्द्र रूप दोनों तेजों का एक साथ उदय और अस्त देखकर वह उत्प्रेक्षा करता

है कि मानों ये दोनों तेज एक साथ उदय और अस्त के द्वारा संसार को यह शिक्षा दे रहे हैं कि इस परिवर्तनशील संसार में सुखः–दुख, उन्नति और अवनति, संयोग और वियोग कालक्रमानुसार आते–जाते रहते हैं। किसी की निश्चयात्मक स्थिति नहीं है। इस श्लोक से व्यङ्ग्यार्थ यह भी निकलता है कि दुष्यन्त और शकुन्तला का अनुराग भी जो कि किसी समय चरम सीमा तक पहुँच चुका था, आज दुर्वासा मुनि के शाप के कारण दयनीय स्थिति को प्राप्त हो रहा है, पर यह स्थिति भी सदा नहीं रहेगी, वह अपनी पूर्णता को प्राप्त करेगा।

शब्दार्थ – एकतः = एक ओर। **ओषधीनाम् पतिः** = चन्द्रमा। **अस्तशिखरम्** = अस्ताचल की चोटी पर। **याति** = जा रहा है। **अरुणपुरःसर** = सूर्य का सारथी अरुण जिसके आगे चल रहा है। **अर्कः** = सूर्य। **आविष्कृतः** = प्रादुर्भूत हो गया है, अर्थात् उदित हो गया। **तेजोद्वयस्य** = दो तेजों के अर्थात् सूर्य चन्द्र रूप दो तेजों के। **युगपद्** = एक साथ। **व्यसनोदयाभ्याम्** = अस्त और उदय के द्वारा। **लोकः** = संसार। **इव** = मानों। **आत्मदशान्तरेषु** = अपनी भिन्न-भिन्न सुखात्मक एवं दुःखात्मक दशाओं के विषय में। **नियम्यते** = नियन्त्रित किया जा रहा है।

विशेष – इस श्लोक में समासोक्ति, तुल्योगिता, यथासंख्य एवं उत्प्रेक्षा अलङ्कार है। छन्द वसन्ततिलका है।

अपि च–

अन्तर्हिते शशिनि सैव कुमुद्वती मे
दृष्टिं न नन्दयति संस्मरणीयशोभा।
इष्टप्रवासजनितान्यबलाजनस्य
दुःखानि नूनमतिमात्रसुदुःसहानि।।3।।

अन्वयः – शशिनि अन्तर्हिते सा एव कुमुद्वती संस्मरणीयशोभा (सती) मे दृष्टिं न नन्दयति। नूनम् अबलाजनस्य इष्टप्रवासजनितानि दुःखानि अतिमात्रसुदुःसहानि।

अनुवाद – चन्द्रमा के अस्त हो जाने पर वही कुमुदिनी (कमलिनी) अब स्मरण के योग्य सौन्दर्यवाली हो जाने पर मेरे नेत्रों को अच्छी नहीं लगती है। निश्चय ही स्त्रियों के प्रिय के परदेश गमन से जनित दुःख अत्यधिक दुःसह होते हैं।।3।।

व्याख्या – प्रातःकाल कुम्हलाई (मुरझाई) हुई कुमुदिनी को देखकर कण्व शिष्य कहता है कि अब चन्द्रमा के अस्त हो जाने पर वही कुमुदिनी जो चन्द्र के उदय काल में पूर्ण विकसित होकर सबके नेत्रों को आनन्दित करने वाली और मनोमुग्धकारिणी थी, वही कुमुदिनी अब मेरी दृष्टि को आकृष्ट नहीं कर रही है। अब इसकी वह मनोहारिणी शोभा केवल स्मरण की वस्तु बन गयी है। सच है कि स्त्रियाँ अपने प्रियजन के प्रवास से होने वाले दुःख को बड़ी कठिनता से सहन कर पाती हैं। चन्द्रमा और कमलिनी क्रमशः दुष्यन्त और शकुन्तला के प्रतीक हैं। दुष्यन्त के चले जाने पर शकुन्तला भी कुमुदिनी के समान असह्य दुःख का अनुभव करती हुई म्लान हो गयी है।

शब्दार्थ – शशिनि अन्तर्हिते = चन्द्र के अस्त हो जाने पर। **सा एव** = वही। **कुमुद्वती** = कुमुदिनी। **संस्मरणीयशोभा** = स्मरणीय शोभा वाली होकर। **मे दृष्टिम्** = मेरी दृष्टि को। **न नन्दयति** = आनन्दित नहीं करती है। **नूनम्** = वस्तुतः। **अबलाजनस्य** = स्त्रीजनों को। **इष्टप्रवासजनितानि** = अपने प्रियजन के प्रवास से उत्पन्न। **दुःखानि** = दुःख। **अतिमात्रसुदुःसहानि** = अत्यन्त असहय। **भवन्ति** = होते हैं।

विशेष – इस श्लोक में समासोक्ति, काव्यलिङ्ग एवं अर्थान्तरन्यास अलङ्कार है तथा छन्द वसन्ततिलका है।

(प्रविश्यापटीक्षेपेण)

अनसूया– **यद्यपि नाम विषयपराङ्मुखस्य जनस्यैतन्न विदितं तथापि तेन राज्ञा शकुन्तलायामनार्यमाचरितम्।**

शिष्यः– **यावदुपस्थितां होमवेलां गुरवे निवेदयामि।**

(इति निष्क्रान्तः।)

अनसूया– **प्रतिबुद्धाऽपि किं करिष्यामि। न मे उचितेष्वपि निजकरणीयेषु हस्तपादं प्रसरति। काम इदानीं सकामो भवतु, येनासत्यसन्धे जने शुद्धहृदया सखी पदं कारिता। अथवा दुर्वाससः शाप एष विकारयति। अन्यथा कथं स राजर्षिस्तादृशानि मन्त्रयित्वैतावतः कालस्य लेखमात्रमपि न विसृजति। तदितोऽभिज्ञानमङ्गुलीयकं तस्य विसृजावः। दुःखशीले तपस्विजने कोऽभ्यर्थ्यताम्। ननु सखीगामी दोष इति व्यसिताऽपि न पारयामि प्रवासप्रतिनिवृत्तस्य तातकाश्यपस्य दुष्यन्तपरिणीतामापन्नसत्त्वां शकुन्तलां निवेदयितुम्। इत्थंगतेऽस्माभिः किं करणीयम्।**

(बिना परदा उठाये प्रवेश करके)

अनसूया– यद्यपि (प्रेम आदि) विषयों से स्वभावतः उदासीन हम तापसियों को यह सब बातें ज्ञात नहीं हैं फिर भी (इतना समझती हूँ कि) उस राजा ने शकुन्तला के प्रति अशिष्ट व्यवहार किया है।

शिष्य– मैं गुरु से निवेदन करता हूँ कि हवन का समय हो गया है।

(प्रस्थान)

अनसूया– जागी हुई भी मैं क्या करूँ ? अभ्यस्त दैनिक कार्यों में भी मेरे हाथ–पाँव नहीं चल रहे हैं। कामदेव की इच्छा अब सफल हो, जिसने असत्य प्रतिज्ञा वाले जन के प्रति शुद्धहृदया सखी (शकुन्तला) का प्रेम कराया है। अथवा दुर्वासा का शाप (ही) यह बिगाड़ करा रहा है। नहीं तो कैसे वह राजर्षि उस प्रकार की (प्रेम भरी मीठी बातें) कहकर इतने दिनों तक एक पत्र तक न भेजता। अतः इधर से (हम लोग) परिचायक मुद्रिका को उसके पास भेज दें। कष्ट सहन करने वाले तपस्वियों में से किससे प्रार्थना की जाये। (इससे) सखी पर दोष आयेगा, इसलिए उद्यत होते हुए भी मैं प्रवास से

लौटे हुए पिता कण्व को यह बताने में असमर्थ हूँ कि शकुन्तला का दुष्यन्त के साथ (गान्धर्व) विवाह हो चुका है और वह गर्भवती है। ऐसी स्थिति में हम क्या करें?

शब्दार्थ – अपटीक्षेपेण = पर्दे को हाथ से एक ओर हटाकर अथवा पर्दे को बिना उठाये। **प्रविश्य** = प्रवेश करके। **विषयपराङ्मुखस्य** = विषयों से विमुख। **असत्यसन्धे** = झूठी प्रतिज्ञावाले। **अभिज्ञानम्** = पहचान के लिए दी गयी। **अङ्गुलीयकम्** = अँगूठी। **आपन्नसत्त्वाम्** = गर्भिणी।

(प्रविश्य)

प्रियंवदा– (सहर्षम्) सखि, त्वरस्व त्वरस्व शकुन्तलायाः प्रस्थानकौतुकं निर्वर्तयितुम्।

अनसूया– सखि, कथमेतत्।

प्रियंवदा– शृणु। इदानीं सुखशयितप्रच्छिका शकुन्तलासकाशं गताऽस्मि।

अनसूया– ततस्ततः।

प्रियंवदा– तावदेनां लज्जावनतमुखीं परिष्वज्य तातकाश्यपेनैवमभिनन्दितम्। दिष्टया धूमाकुलितदृष्टेरपि पावक एवाहुतिः पतिता। वत्से, सुशिष्यपरिदत्ता विद्येवाशोचनीयासि संवृत्ता। अद्यैव ऋषिरक्षितां त्वां भर्तुः सकाशं विसर्जयामि इति।

(प्रवेश करके)

प्रियंवदा– (प्रसन्नतापूर्वक) सखी, शकुन्तला के प्रस्थानकालिक मंगलकार्य को पूरा करने के लिए शीघ्रता करो।

अनसूया– सखी, यह कैसे (सम्भव हुआ) ?

प्रियंवदा– सुनो! मैं अभी 'सुखपूर्वक सोई कि नहीं' यह पूछने के लिए शकुन्तला के पास गयी थी।

अनसूया– तब क्या हुआ ?

प्रियंवदा– तब लज्जा से अधोमुखी उसको पिता काश्यप ने सस्नेह आलिङ्गित कर इस प्रकार उसका अभिनन्दन किया– "सौभाग्य से धुँए से व्याकुल दृष्टि वाले यजमान की आहुति अग्नि में ही गिरी। पुत्री! योग्य शिष्य को दी गयी विद्या की तरह तुम अशोचनीय हो गयी हो। आज ही ऋषियों से सुरक्षित करके तुमको (तुम्हारे) पति के पास भेज दूँगा।

अनसूया– अथ केन सूचितस्तातकाश्यपस्य वृत्तान्तः।

प्रियंवदा– अग्निशरणं प्रविष्टस्य शरीरं विना छन्दोमय्या वाण्या।

अनसूया– (सविस्मयम्) कथमिव।

अनसूया– तो (यह) समाचार किसने पिता काश्यप को बताया ?

प्रियंवदा– यज्ञशाला में प्रविष्ट हुए उनको अशरीरिणी छन्दमयी वाणी ने (बताया)।

अनसूया– (आश्चर्य के साथ) किस प्रकार ?

प्रियंवदा– **(संस्कृतमाश्रित्य)**

दुष्यन्तेनाहितं तेजो दधानां भूतये भुवः।
अवेहि तनयां ब्रह्मन्नग्निगर्भां शमीमिव।।4।।

प्रियंवदा– (संस्कृत भाषा में)

अन्वय – ब्रह्मन्! दुष्यन्तेन आहितं तेजः भुवः भूतये दधानां तनयाम् अग्निगर्भां शमीमिव अवेहि।

अनुवाद – हे ब्रह्मन्! दुष्यन्त के द्वारा निषिक्त वीर्य को पृथिवी के कल्याण के लिए धारण करती हुई (अपनी) पुत्री को अपने अन्दर अग्नि रखने वाले शमीवृक्ष की तरह जानो।

व्याख्या – प्रियंवदा कहती है कि उस वाणी ने पिता काश्यप से यह कहा था कि हे ब्रह्मन्! यह आपकी पुत्री शकुन्तला दुष्यन्त द्वारा स्थापित वीर्य को उसी प्रकार अपने अन्दर धारण किये हुए है जैसे कि शमीवृक्ष के अन्दर अग्नि छिपी रहती है, अर्थात् यह गर्भवती है फिर भी इसका यह गर्भ पृथिवी के लिए कल्याणकारी है अर्थात् इससे उत्पन्न पुत्र पृथिवी का कल्याण करने वाला ही होगा।

शब्दार्थ – ब्रह्मन् = हे ब्रह्मवेत्ता महर्षि कण्व। **दुष्यन्तेन** = दुष्यन्त के द्वारा। **आहितम्** = निषिक्त या स्थापित किये गये। **तेजः** = वीर्य को। **भुवः** = पृथिवी के। **भूतये** = कल्याण के लिए। **दधानाम्** = धारण करती हुई। **तनयाम्** = पुत्री को। **अग्निगर्भाम्** = अपने भीतर अग्नि रखने वाले। **शमीम् इव** = शमीवृक्ष की तरह। **अवेहि** = जानो।

विशेष– यहाँ उपमा अलङ्कार एवं अनुष्टुप् छन्द है।

अनसूया– **(प्रियंवदामाश्लिष्य) सखि, प्रियं मे। किन्त्वद्यैव शकुन्तला नीयत इत्युत्कण्ठासाधारणं परितोषमनुभवामि।**

प्रियंवदा– **सखि, आवां तावदुत्कण्ठाम् विनोदयिष्यावः। सा तपस्विनी निर्वृता भवतु।**

अनसूया– **तेन ह्येतस्मिंश्चूतशाखावलम्बिते नारिकेलसमुद्गक एतन्निमित्तमेव कालान्तरक्षमा निक्षिप्ता मया केसरमालिका। तदिमां हस्तसंनिहितां कुरु। यावदहमपि तस्यै गोरोचनां तीर्थमृत्तिकां दूर्वाकिसलयानीति मङ्गलसमालम्भनानि विरचयामि।**

प्रियंवदा– **तथा क्रियताम्।**

(अनसूया निष्क्रान्ता। प्रियंवदा नाट्येन सुमनसो गृह्णाति।)

(नेपथ्ये)

गौतमि, आदिश्यन्तां शाङ्र्गरवमिश्राः शकुन्तलानयनाय।

प्रियंवदा– (कर्णं दत्त्वा) अनसूये, त्वरस्व त्वरस्व। एते खलु हस्तिनापुरगामिनः ऋषयः शब्दाय्यन्ते।

अनसूया– (प्रियंवदा को गले लगाकर) सखी मैं बहुत प्रसन्न हूँ। किन्तु शकुन्तला आज ही (पतिगृह को) ले जाई जा रही है। अतः (मैं) विषादमिश्रित सन्तोष का अनुभव कर रही हूँ।

प्रियंवदा– सखि! हम दोनों तो अपने दुःख को दूर कर ही लेंगी। वह बेचारी (किसी प्रकार) सुखी हो।

अनसूया– तो इस आम की शाखा में लटकते हुए नारियल के डिब्बे में इसी अवसर के लिए कई दिन तक न कुम्हलाने वाली (सुगन्धित रहने वाली) बकुल के (मौलश्री के) फूलों की माला रखी है, तो इस माला को हाथ में ले लो। तब तक मैं भी उसके लिए गोरोचन, तीर्थों की मिट्टी, दूब के अङ्कुर आदि माङ्गलिक वस्तुओं को तैयार करती हूँ।

प्रियंवदा– ऐसा ही करो।

(अनसूया निकल जाती है। प्रियंवदा फूलों को लेने का अभिनय करती है।)

(नेपथ्य में)

गौतमी! शाङ्र्गरव आदि को शकुन्तला को (पतिगृह) ले जाने के लिए आदेश दे दो।

प्रियंवदा– (सुनकर) अनुसूये! जल्दी करो, जल्दी करो। हस्तिनापुर को जाने वाले ऋषियों को बुलाया जा रहा है।

(प्रविश्य समालम्भनहस्ता)

अनसूया– सखि, एहि। गच्छावः। (इति परिक्रामतः)

प्रियंवदा– (विलोक्य) एषा सूर्योदय एव शिखामज्जिता प्रतीष्टनीवारहस्ताभिः स्वस्तिवाचनिकाभिस्तापसीभिरभिनन्द्यमाना शकुन्तला तिष्ठति। उपसर्पाव एनाम्। (इत्युपसर्पतः।)

(ततः प्रविशति यथोद्दिष्टव्यापारा आसनस्था शकुन्तला)

तापसीनामन्यतमा–(शकुन्तलां प्रति) जाते, भर्तुर्बहुमानसूचकं महादेवीशब्दं लभस्व।

द्वितीया– वत्से, वीरप्रसविनी भव।

तृतीया– वत्से, भर्तुर्बहुमता भव।

(इत्याशिषो दत्त्वा गौतमीवर्जं निष्क्रान्ताः।)

सख्यौ– (उपसृत्य) सखि, सुखमज्जनं ते भवतु।

शकुन्तला–स्वागतं मे सख्योः। इतो निषीदतम्।

(माङ्गलिक वस्तुएँ हाथ में लिये हुए प्रवेश करके)

अनसूया– सखी ! आओ चलें।

(दोनों घूमती हैं)

प्रियंवदा– (देखकर) यह शकुन्तला, सूर्योदय के समय ही शिखा सहित स्नान करके नीवार (धान्य) हाथ में लिए, स्वस्तिवचन का पाठ करती हुई, तपस्विनियों से अभिनन्दन की जाती हुई बैठी है। हम इसके पास चलती हैं। (दोनों उसके पास जाती हैं।)

(इसके पश्चात् पूर्वोक्त रूप में आसन पर बैठी हुई शकुन्तला का प्रवेश)

तपस्विनियों में से एक– (शकुन्तला से) पुत्री, पति के अतिसम्मानसूचक महारानी शब्द को प्राप्त करो।

दूसरी– वीर पुत्र को जन्म देने वाली बनो।

तीसरी– पुत्री, पति के बहुत अधिक सम्मान को प्राप्त करो।

(ये आशीर्वाद देकर गौतमी को छोड़कर अन्य सभी तपस्विनियों का प्रस्थान)

दोनों सखियाँ– (पास जाकर) सखी तुम्हारा स्नान सुखकर हो, अर्थात् तू इस स्नान से सदा सुखी रहे।

शकुन्तला– मेरी सखियों! आपका स्वागत है। इधर बैठो।

उभे– (मङ्गलपात्राण्यादाय। उपविश्य) हला, सज्जा भव। यावत्ते मङ्गलसमालम्भनं विरचयावः।

शकुन्तला–इदमपि बहु मन्तव्यम्। दुर्लभमिदानीं मे सखीमण्डनं भविष्यति। (इति बाष्पं विसृजति।)

उभे– सखि, उचितं न ते मङ्गलकाले रोदितुम्। (इत्यश्रूणि प्रमृज्य नाट्येन प्रसाधयतः।)

प्रियंवदा– आभरणोचितं रूपमाश्रमसुलभैः प्रसाधनैर्विप्रकार्यते।

(प्रविश्योपायनहस्तावृषिकुमारकौ)

उभौ– इदमलंकरणम्। अलंक्रियतामत्रभवती।

(सर्वा विलोक्य विस्मिताः।)

गौतमी– वत्स नारद, कुत एतत्।

प्रथमः– तातकाश्यपप्रभावात्।

गौतमी– किं मानसी सिद्धिः?

दोनों– (माङ्गलिक पात्रों को लेकर और बैठकर) सखि, (शकुन्तला) तैयार हो जाओ। अब हम तेरा माङ्गलिक अलङ्करण (शृङ्गार) करते हैं।

शकुन्तला– यह तो बहुत मानने योग्य है। अब मेरे लिए सखियों के द्वारा अलंकृत होना दुर्लभ हो जायेगा। (यह कहकर रोने लगती है।)

दोनों– सखी ! इस शुभ अवसर पर तुम्हारा रोना उचित नहीं है। (यह कहकर आँसुओं को पोंछकर अलंकृत करने का अभिनय करती हैं।)

प्रियंवदा– आभूषणों के योग्य (यह आकर्षक) रूप आश्रम में प्राप्य अलङ्कारों से विकृत किया जा रहा है।

(उपहार में प्राप्त आभूषणों को हाथ में लिए दो ऋषिकुमारों का प्रवेश)

दोनों (ऋषिकुमार)– ये आभूषण हैं, इनसे इस देवी को अलंकृत करें।

(उनको देखकर सभी आश्चर्यान्वित होती हैं।)

गौतमी– पुत्र नारद ! ये कहाँ से (मिले हैं) ?

पहला (ऋषिकुमार)– पिता काश्यप (कण्व) के प्रभाव से।

गौतमी– क्या ये ऋषि के मानसिक संकल्प के फल हैं ?

द्वितीयः– न खलु। श्रूयताम्। तत्रभवता वयमाज्ञप्ताः शकुन्तलाहेतोर्वनस्पतिभ्यः कुसुमान्याहरतेति। तत इदानीम् –

क्षौमं केनचिदिन्दुपाण्डु तरुणा माङ्गल्यमाविष्कृतं
निष्ठ्यूतश्चरणोपरागसुभगो लाक्षारसः केनचित्।
अन्येभ्यो वनदेवताकरतलैरापर्वभागोत्थितै–
र्दत्तान्याभरणानि नः किसलयोद्भेदप्रतिद्वन्द्विभिः।।5।।

दूसरा (ऋषि कुमार)– नहीं। सुनिए। पूजनीय (ऋषि) ने हमें आज्ञा दी थी कि शकुन्तला के लिए वृक्षों के फूल चुनकर लाओ। तब–

अन्वय– केनचित् तरुणा इन्दुपाण्डु माङ्गल्यं क्षौमम् आविष्कृतम्। केनचित् (तरुणा) चरणोपरागसुभगः लाक्षारसः निष्ठ्यूतः। अन्येभ्यः (वृक्षेभ्यः) आपर्वभागोत्थितैः किसलयोद्भेदप्रतिद्वन्द्विभिः वनदेवताकरतलैः आभरणानि दत्तानि।।5।।

अनुवाद– हमको किसी वृक्ष ने चन्द्रमा के तुल्य श्वेत मांगलिक रेशमी वस्त्र दिया। किसी ने पैरों को रंगने के योग्य लाक्षारस (अलक्तक) प्रकट किया (दिया)। अन्य वृक्षों ने कलाई तक उठे हुए, सुन्दर किसलयों (कोपलों) की प्रतिस्पर्धा करने वाले, वन देवता के करतलों से आभूषण दिए।

व्याख्या– ऋषि कुमार गौतमी से कहता है कि जब महर्षि कण्व ने हमें वृक्षों से शकुन्तला के लिए पुष्प लाने को भेजा, तब किसी वृक्ष ने तो शकुन्तला के लिए रेशमी वस्त्रों का जोड़ा दिया जो चन्द्रमा के समान श्वेत एवं मंगल कार्य में पहनने योग्य है और किसी वृक्ष ने पैरों में लगाने योग्य महावर दिया और वृक्षाधिष्ठित देवताओं ने अपने करपल्लवों से आभूषण दिये। देते समय उन वन देवताओं के हाथ, केवल कलाई तक ही बाहर निकले हुए थे और वे वृक्षों के नवीन पल्लवों सदृश कोमल एवं आरक्त थे।

शब्दार्थ – **केनचित् तरुणा** = किसी वृक्ष के द्वारा। **इन्दुपाण्डु** = चन्द्रवत् श्वेत वर्ण वाला। **माङ्गल्यम्** = मङ्गलकर्म में उपयुक्त। **क्षौमम्** = रेशमी वस्त्र। **आविष्कृतम्** = प्रकट किया गया, निकालकर दिया गया। **केनचित्** = किसी वृक्ष के द्वारा। **चरणोपरागसुभगः** = पैरों में लगाने योग्य। **लाक्षारसः** = चरणों को रंगने वाले अलक्तक अर्थात् महावर को। **निष्ठ्यूतः** = निचोड़ा गया। **अन्येभ्यः** = अन्य वृक्षों से। **किसलयोद्भेदप्रतिद्वन्द्विभिः** = वृक्षों के नवीन निकलते हुए पल्लवों से स्पर्धा करने वाले अर्थात् तत्सदृश। **आपर्वभागोत्थितैः** = पर्वभाग अर्थात् मणिबन्धनस्थान तक बाहर निकले हुए। **वनदेवताकरतलैः** = वन देवताओं के कर पल्लवों द्वारा। **आभरणानि** = आभूषणों को। **दत्तानि** = दिया गया।

विशेष– प्रस्तुत पद्य में उपमा एवम् अनुप्रास अलङ्कार है। शार्दूलविक्रीडित छन्द।

प्रियंवदा– (शकुन्तलां विलोक्य) हला, अनयाऽभ्युपपत्त्या सूचिता ते भर्तुर्गेहेऽनुभवितव्या राजलक्ष्मीः।

(शकुन्तला व्रीडां रूपयति)

प्रथमः– गौतम, एह्येहि। अभिषेकोत्तीर्णाय काश्यपाय वनस्पतिसेवां निवेदयावः।

द्वितीयः– तथा। (इति निष्कान्तौ)

सख्यौ– अये, अनुपयुक्तभूषणोऽयं जनः। चित्रकर्मपरिचयेनाङ्गेषु ते आभरणविनियोगं कुर्वः।

शकुन्तला–जाने वां नैपुणम्। (उभे नाट्येनालंकुरुतः।)

प्रियंवदा– (शकुन्तला की ओर देखकर) सखी (वनस्पतियों के) इस अनुग्रह से सूचित होता है कि तुम पति के घर में राजलक्ष्मी का अनुभव करोगी।

(शकुन्तला लज्जा का अनुभव करती है)

पहला– गौतम, आओ आओ। स्नान करके निकले हुए काश्यप को वनस्पतियों की (यह) सेवा बता दें।

दूसरा– ठीक है।

दोनों सखियाँ– ओह, हम लोगों ने कभी आभूषण का उपयोग नहीं किया है। चित्रकारी के कार्य से परिचित होने से हम लोग तेरे अंगों में आभूषण को पहनाती हैं।

शकुन्तला– मैं तुम्हारी निपुणता जानती हूँ।

(दोनों शकुन्तला को आभूषण पहनाने का नाट्य करती हैं।)

(ततः प्रविशति स्नानोत्तीर्णः काश्यपः)

काश्यपः—

यास्यत्यद्य शकुन्तलेति हृदयं संस्पृष्टमुत्कण्ठया
कण्ठः स्तम्भितवाष्पवृत्तिकलुषश्चिन्ताजडं दर्शनम्।
वैक्लव्यं मम तावदीदृशमिदं स्नेहादरण्यौकसः
पीड्यन्ते गृहिणः कथं नु तनयाविश्लेषदुःखैर्नवैः।।6।।

(इति परिक्रामति।)

(तदन्तर स्नान करके निकले हुए काश्यप प्रवेश करते हैं।)

अन्वय — अद्य शकुन्तला यास्यति इति हृदयम् उत्कण्ठया संस्पृष्टम्, कण्ठः स्तम्भितबाष्पवृत्तिकलुषः, दर्शनं चिन्ताजडम्। अरण्यौकसः मम तावत् स्नेहात् ईदृशम् इदं वैक्लव्यम्, गृहिणः नवैः तनयाविश्लेषदुःखैः कथं नु पीड्यन्ते।

काश्यप—

अनुवाद — आज शकुन्तला जायेगी, अतः हृदय दुःख से भर गया है, गला अश्रुप्रवाह को भीतर रोकने के कारण भर आया है, दृष्टि निश्चेष्ट हो गयी है। मुझ वनवासी (भी) को भी (शकुन्तला के प्रति) प्रेम के कारण इस प्रकार का दुःख हो रहा है, तो गृहस्थ लोग पहली बार पुत्री के वियोग के दुःख से कितने अधिक दुःखित होते होंगे।

भावार्थ — काश्यप कहते हैं कि शकुन्तला आज जायेगी, यद्यपि वह अभी गयी नहीं हैं, जाने वाली है फिर भी उसकी चिन्ता से मेरा हृदय दुःख से भर गया है, आँसुओं के बहने को भीतर ही रोक लेने के कारण मेरा गला भर आया है, अतः कण्ठ गद्‌गद हो गया है, मेरी दृष्टि भी निश्चेष्ट हो गयी है, आँखों से स्पष्ट दिखलाई भी नहीं पड़ता। चले जाने पर मन की क्या दशा होगी ? वनवासी, नित्य-तपस्वी, योगी शमदमादिगुणसम्पन्न सांसारिकता के मोह से रहित होते हुए भी महर्षि की उस कन्या के लिए, जिसका उन्होंने केवल पालन मात्र किया है, जो उनकी औरस पुत्री नहीं है, इतनी विकलता है, तब उन गृहस्थ लोगों को कितनी विकलता होती होगी जो कि अपनी औरस पुत्री को प्रथम बार विदा करते होंगे अर्थात् वे तो अति दुःखित होते होंगे।

शब्दार्थ — **अद्य** = आज। **शकुन्तला यास्यति** = शकुन्तला जायेगी। **इति** = इस कारण से। **हृदयम्** = (मेरा) हृदय। **उत्कण्ठया** = विषाद या दुःख से। **संस्पृष्टम्** = आक्रान्त या व्याप्त हो गया है। **कण्ठः** = गला। **स्तम्भितवाष्पवृत्तिकलुषः** = आँसुओं को बहने से रोकने के कारण भर आया है, गद्‌गद हो गया है। **दर्शनम्** = दृष्टि। **चिन्ताजडम्** = शकुन्तलागत चिन्ता से जड़ अर्थात् निश्चेष्ट हो गयी है। **अरण्यौकसः** = जंगल में रहने वाले अर्थात् वनवासी। **मम** = मुझको। **तावत्** = तो। **स्नेहात्** = शकुन्तला के प्रति प्रेम होने से। **ईदृशम् इदम् वैक्लव्यम्** = यह ऐसी विकलता (बेचैनी) है अर्थात्

इस प्रकार का दुःख हो रहा है। (तो) **गृहिणः** = गृहस्थ जन। **नवैः** = नवीन। **तनयाविश्लेषदुःखैः** = पुत्री के वियोग के दुःखों से। **कथं नु** = कितने अधिक। **पीड्यन्ते** = दुःखित होते होंगे।।6।।

अलङ्कार– यहाँ व्यतिरेक अलंकार है। **छन्द** = शार्दूलविक्रीडितम्।

सख्यौ– हला शकुन्तले, अवसितमण्डनाऽसि। परिधत्स्व साम्प्रतं क्षौमयुगलम्। (शकुन्तलोत्थाय परिधत्ते।)

गौतमी– जाते, एष ते आनन्दपरिवाहिणा चक्षुषा परिष्वजमान इव गुरुरुपस्थितः। आचारं तावत् प्रतिपद्यस्व।

शकुन्तला–(सव्रीडम्) तात, वन्दे।

दोनों सखियाँ– सखी शकुन्तला, तुम्हें सजाने-सँवारने (शृंगार-प्रसाधन) का कार्य पूरा हो गया। अब (तुम) दोनों रेशमी वस्त्रों को धारण करो।

(शकुन्तला उठकर पहनती है)

गौतमी– पुत्री आनन्द (के आँसुओं) को बहाने वाले नेत्रों से तुमको गले लगाते हुये तेरे पिता यहाँ उपस्थित हैं। उचित शिष्टाचार का पालन करो।

शकुन्तला– (लज्जा के साथ) पिता जी, प्रणाम।

काश्यपः– वत्से–

ययातेरिव शर्मिष्ठा भर्तुर्बहुमता भव।
सुतं त्वमपि सम्राजं सेव पूरुमवाप्नुहि।।7।।

गौतमी– भगवन्, वरः खल्वेषः। नाशीः।

काश्यप– वत्से, इतः सद्योहुतानग्नीन् प्रदक्षिणीकुरुष्व।

(सर्वे परिक्रामन्ति।)

काश्यप– पुत्री!

अन्वय– शर्मिष्ठा ययातेः इव भर्तुः बहुमता भव। सा पुरुम् इव त्वम् अपि सम्राजं सुतम् अवाप्नुहि।

अनुवाद– शर्मिष्ठा जिस प्रकार ययाति की (अतिप्रिय रानी) थी, उसी प्रकार (तुम) पति की अतिप्रिय (रानी) बनो। उस (शर्मिष्ठा) ने जिस प्रकार (सम्राट्पुत्र) पुरु को (प्राप्त किया) उसी प्रकार तुम भी सम्राट् पुत्र को प्राप्त करो।।7।।

गौतमी– भगवन् ! निश्चय ही यह वर है, केवल आशीर्वाद नहीं।

काश्यप– पुत्री, इधर अभी हवन की गयी अग्नियों की प्रदक्षिणा करो।

(सभी प्रदक्षिणा करते हैं।)

विशेष– चन्द्रवंश के संस्थापक राजाओं में नहुष राजा का पुत्र ययाति नाम का राजा हुआ था, दानवगुरु शुक्राचार्य की पुत्री देवयानी इसकी पत्नी थी। दानवराज वृषपर्वा की पुत्री शर्मिष्ठा उस समय देवयानी की सेविका के रूप में आई थी, पर कालान्तर में शर्मिष्ठा के सौन्दर्य पर मुग्ध होकर ययाति ने उसके साथ गान्धर्व विवाह करके उसे भी अपनी पत्नी बना लिया था और देवयानी से अधिक शर्मिष्ठा पर प्रेम रखने लगा था इससे क्रुद्ध होकर शुक्राचार्य ने उसे वृद्ध हो जाने का शाप दे दिया था। शर्मिष्ठा के पुत्र ने इस शाप को अपने ऊपर ले लिया था, यही पुरु आगे चलकर पुरुवंश का संस्थापक सम्राट् हुआ। इसी पौराणिक कथा का उल्लेख उपर्युक्त श्लोक में हुआ है।

काश्यपः– (ऋक्छन्दसाऽऽशास्ते।) वत्से,

अमी वेदिं परितः क्लृप्तधिष्ण्याः
समिद्वन्तः प्रान्तसंस्तीर्णदर्भाः।
अपघ्नन्तो दुरितं हव्यगन्धै–
र्वैतानास्त्वां वह्नयः पावयन्तु।।8।।

प्रतिष्ठस्वेदानीम्। (सदृष्टिक्षेपम्) क्व ते शाङ्र्गरवमिश्राः।

अन्वय – समिद्वन्तः वेदिं परितः क्लृप्तधिष्ण्याः प्रान्तसंस्तीर्णदर्भाः अमी वैतानाः वह्नयः हव्यगन्धैः दुरितम्, अपघ्नन्तः त्वाम् पावयन्तु।।8।।

काश्यप– (ऋग्वेद के छन्द में बने श्लोक द्वारा आशीर्वाद देते हैं।) पुत्री!

अनुवाद – समिधाओं से युक्त, वेदी के चारों ओर प्रतिष्ठापित, किनारों पर बिछी हुई कुशों वाली, यज्ञीय अग्नियाँ, हव्य पदार्थों की सुगन्ध से पापों (विघ्नों) को नष्ट करती हुईं तुम्हें पवित्र करें। अब तुम प्रस्थान करो। (इधर उधर दृष्टि डालकर) वे शाङ्र्गरव आदि कहाँ हैं।

हिन्दी व्याख्या – शकुन्तला को पतिगृह भेजने से पहले महर्षि कण्व आशीर्वाद देते हुए कहते हैं कि ये यज्ञीय अग्नियाँ, जिसमें समिधायें प्रदीप्त हो रही हैं, और जिन्हें वेदी के चारों ओर संस्थापित किया गया है तथा जिनके किनारों पर कुशों को बिछाया गया है, अपने हवनीय पदार्थों की सुगन्ध से विघ्नों को नष्ट करती हुई तुम्हें पवित्र करें।

शब्दार्थ – **समिद्वन्तः** = समिधाओं (हवन की लकड़ियों) से युक्त। **वेदिम्** = वेदी के। **परितः** = चारों ओर। **क्लृप्तधिष्ण्याः** = प्रतिष्ठापित। **प्रान्तसंस्तीर्णदर्भाः** = किनारे पर बिछे हुए कुशों वाली। **वैतानाः** = यज्ञीय। **हव्यगन्धैः** = हव्यपदार्थों की सुगन्ध से। **दुरितम्** = पाप को। **अपघ्नन्तः** = नष्ट करती हुई। **त्वाम्** = तुमको (शकुन्तला को)। **पावयन्तु** = पवित्र करें।

विशेष– परिकर अलङ्कार, त्रिष्टुप् छन्द।

(प्रविश्य)

शिष्यः– भगवन्, इमे स्मः।

काश्यपः– भगिन्यास्ते मार्गमादेशय।

शाङ्गर्रवः–इत इतो भवती। (सर्वे परिक्रामन्ति।)

काश्यपः– भो भोः संनिहितास्तपोवनतरवः !

पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जलं युष्मास्वपीतेषु या
नादत्ते प्रियमण्डनाऽपि भवतां स्नेहेन या पल्लवम्।
आद्ये वः कुसुमप्रसूतिसमये यस्या भवत्युत्सवः
सेयं याति शकुन्तला पतिगृहं सर्वैरनुज्ञायताम्।।9।।

(प्रवेश करके)

शिष्य– भगवन्, यह हम लोग हैं।

काश्यपः– अपनी बहिन को मार्ग दिखाओ।

शार्ङ्रवः– आप इधर चलें। (सब घूमते हैं।)

अन्वय– युष्मासु अपीतेषु या प्रथमं जलं पातुं न व्यवस्यति। भवतां स्नेहेन या प्रियमण्डना अपि पल्लवं न आदत्ते। वः आद्ये कुसुमप्रसूतिसमये यस्याः उत्सवः भवति। सा इयं शकुन्तला पतिगृहं याति, सर्वैः अनुज्ञायताम्।

काश्यपः– हे समीपस्थ तपोवन के वृक्षों!

अनुवाद– तुम्हें बिना जल पिलाए जो पहले जल नहीं पीती थी, तुम्हारे प्रति प्रेम के कारण जो अलंकारों की प्रेमी होने पर भी तुम्हारे नये पत्ते नहीं तोड़ती थी, तुम्हारे प्रथम पुष्प निकलने के अवसर पर जिसका उत्सव होता था वही यह शकुन्तला पतिगृह जा रही है आप सब स्वीकृति दीजिए।

व्याख्या– तपोवन के समीपस्थ वृक्षों को सम्बोधित करते हुए काश्यप मुनि कहते हैं कि हे वृक्षों! जो शकुन्तला तुम लोगों के जलसिञ्चन करने के बाद ही स्वयं जल पीती थी, अर्थात् शकुन्तला प्रतिदिन पहले वृक्षों में जल देती थी और तब स्वयं जल पीती थी, स्वयं जल पीने की अपेक्षा वह पहले वृक्षों में जल देना अपना प्रथम कर्त्तव्य मानती थी, क्योंकि वृक्षों के प्रति उसका सहोदर जैसा ही स्नेह था। यद्यपि उसे पुष्पों, पत्रों से स्वयं को अलंकृत करना बहुत अच्छा लगता था, तथापि आप लोगों पर उसका इतना अधिक स्नेह था कि वह कभी भी आपके पत्ते नहीं तोड़ती थी। जब आप लोगों में प्रथम बार पुष्प निकलते थे तब उसे बड़ी प्रसन्नता होती थी। वही शकुन्तला आज अपने पति के घर जा रही है आप सभी अनुमति प्रदान कीजिए।

शब्दार्थ – **युष्मासु अपीतेषु** = आप लोगों के अपीत रहने पर अर्थात् आप लोगों को जल पिलाये बिना। **या** = जो (शकुन्तला)। **प्रथमम्** = पहले। **जलम्** = जल। **पातुम्** = पीने के लिए। **न** = नहीं। **व्यवस्यति** = प्रयत्न करती थी। **प्रियमण्डना** = आभूषण प्रिय होते हुए। **अपि** = भी। **पल्लवम्** = पत्ते को। **न आदत्ते** = नहीं तोड़ती थी। **वः** = आप लोगों के। **आद्ये** = प्रथम। **कुसुमप्रसूतिसमये** = पुष्प निकलने के अवसर पर। **यस्याः** = जिसका। **उत्सवः भवति** = उत्सव होता है। **सा इयं शकुन्तला** = वह यह शकुन्तला। **पतिगृहम्** = पतिगृह को। **याति** = जाती है। **सर्वैः अनुज्ञायताम्** = आप सब स्वीकृति दें।

विशेष– इस पद्य में प्रमाणित किया गया है कि प्रकृति सजीव है और मानव तथा प्रकृति के बीच में पारस्परिक घनिष्ठ सम्बन्ध है।

वृक्षों में भ्रातृ व्यवहार के आरोप के कारण समासोक्ति एवं पत्तों को न तोड़ने में स्नेह कारण है अतः काव्यलिङ्ग अलङ्कार है। शार्दूलविक्रीडित छन्द।

(कोकिलरवं सूचयित्वा)

अनुमतगमना शकुन्तला तरुभिरियं वनवासबन्धुभिः।
परभृतविरुतं कलं यथा प्रतिवचनीकृतमेभिरीदृशम्।।10।।

(कोयल का शब्द सुनने का अभिनय करके)

अन्वय – इयं शकुन्तला वनवासबन्धुभिः तरुभिः अनुमतगमना, यथा कलं परभृतविरुतम् एभिः ईदृशं प्रतिवचनीकृतम्।

अनुवाद – इस शकुन्तला को (इसके) वनवास के साथी वृक्षों ने जाने की स्वीकृति दे दी है, क्योंकि सुन्दर कोयल की आवाज को इन्होंने इस प्रकार अपना प्रत्युत्तर बनाया है।

भावार्थ – जब कण्व मुनि तपोवन के वृक्षों से शकुन्तला के प्रस्थान की अनुमति माँग रहे थे, उसी समय कण्व वृक्षस्थ कोयलध्वनिश्रवण का अभिनय करके कहते हैं कि तपोवन के सहवासी बन्धुतुल्य इन वृक्षों ने शकुन्तला को पतिगृह जाने की अनुमति दे दी है, क्योंकि इन्होंने मधुर कोयल-ध्वनि को अपने प्रत्युत्तर के रूप में प्रस्तुत किया है। वृक्ष स्वयं तो बोल नहीं सकते थे, किन्तु इन्होंने अपनी डालियों पर बैठे हुए कोयल की ध्वनि से ही आपको उत्तर देते हुए शकुन्तला को जाने की अनुमति दे दी है।

शब्दार्थ – **इयम् शकुन्तला** = इस शकुन्तला को। **वनवासबन्धुभिः तरुभिः** = तपोवन के बन्धुभूत सहवासी वृक्षों के द्वारा। **अनुमतगमना** = प्रस्थान की अनुमति दे दी गयी है। **यथा** = क्योंकि। **कलम्** = अस्पष्ट एवं मधुर। **परभृतविरुतम्** = कोयल की ध्वनि को। **एभिः** = इन वृक्षों ने। **ईदृशम्** = इस प्रकार से। **प्रतिवचनीकृतम्** = अपना प्रत्युत्तर बनाया है।

विशेष– परिणाम अलङ्कार। **छन्द**– अपरवक्त्र।

सूक्ति व्याख्या

1. न तादृशा आकृतिविशेषा गुणविरोधिनो भवन्ति।

प्रियंवदा का यह कथन कि उस प्रकार की विशिष्ट आकृति वाले व्यक्ति आचरण में भी विशिष्ट होते है, यह वचन प्रियंवदा के लोक अनुभव को सूचित करता है। अनसूया चिन्तित है कि राजा दुष्यन्त ने हस्तिनापुर जाकर न तो एक भी पत्र भेजा न किसी सन्देशवाहक को। राजा दुष्यन्त का यह आचरण उचित नहीं है। प्रियंवदा ने अनसूया को आश्वस्त करते हुए उक्त कथन से राजा के प्रति अगाध विश्वास प्रकट किया है।

2. गुणवते कन्यका प्रतिपादनीयेत्ययं तावत् प्रथमः संकल्पः।

अनसूया का यह कथन कि कन्या गुणवान् व्यक्ति के हाथों सौंपनी है यह माता पिता का प्रथम संकल्प होता है यह वचन भारतीय परिवार में पुत्री के और भारतीय समाज में नारी के महत्त्व को सूचित करता है। पुत्री, माता-पिता के शरीर के हृदय का अंश होती है। वह नेत्रों की पुतली के समान प्रिय और रक्ष्य होती है–**''कन्या कनीनिका भवति।''** माता पिता उसके भविष्य के लिए अत्यन्त चिन्तित भी होतें हैं, क्योंकि उसे दूसरे के घर जाना होता है। वह ऐसे जीवन साथी को पाये जो योग्य, गुणवान्, सुशील और बुद्धिमान् हो तो पुत्री भी दाम्पत्य सुख का भोग करेगी। घर में इन गुणों का अभाव होने पर पुत्री का विवाहित जीवन कष्टमय होगा, अतः पुत्री के लिए उत्तम वर की खोज कर उसके साथ पाणिग्रहण यह माता–पिता का प्रथम संकल्प होता है।

3. स्मरिष्यति त्वां न स बोधितोऽपि सन् कथां प्रमत्तः प्रथमं कृतामिव।

ऋषि दुर्वासा का क्रोध सर्वविदित है। वे कण्व ऋषि की अनुपस्थिति में आश्रम में आते हैं। ऋषि कण्व द्वारा अतिथि सत्कार के लिए नियुक्त शकुन्तला ने पति दुष्यन्त की चिन्ता में रत रहकर उनकी ओर ध्यान नहीं दिया। अपेक्षा के विपरीत आश्रम-बाला का आचरण देखकर उनका क्रोध जागृत हो गया। वे बोले- अनन्य मन से जिसका चिन्तन करती हुई तू उपस्थित हुए मुझ तपस्वी की उपेक्षा कर रही है याद दिलाये जाने पर भी वह तेरा स्मरण नहीं करेगा जैसे उन्मत्त व्यक्ति पहले कही हुई बात को भूल जाता है।

दायित्व का सम्यक् निर्वाह मानव का प्रथम कर्त्तव्य है, इसमें अवहेलना अक्षम्य अपराध है। शकुन्तला ने अपने कर्त्तव्य में प्रमाद किया, उसके चरित्र की यह त्रुटि थी। गुरुजनों की अनुमति के बिना उसने गान्धर्व विवाह किया यह भी उसकी त्रुटि थी। आश्रम की पवित्रता, आचार के नियमों के उल्लंघन का दण्ड तो मिलना ही था। नियति ने दुर्वासा के शाप के माध्यम से शकुन्तला को दण्डित किया और प्रिय प्रेम में मग्न रहकर समाज की उपेक्षा करने वाले युवक-युवतियों को शिक्षा दी।

4. को नामोष्णोदकेन नवमालिकां सिञ्चति।

प्रियंवदा चंचल अवश्य है किन्तु भोली सखी शकुन्तला के प्रति अपार स्नेह से भरी हुई है। सखी के भविष्य के प्रति चिन्तित वह दुर्वासा मुनि के शाप की चर्चा न शकुन्तला से करती है न अन्य किसी से। शाप की चर्चा मात्र सुनकर वह नष्ट हो जायेगी, उसकी मिलने की आशा पर पानी पड़ जायेगा।

अतः स्वभाव से भोली सखी की यदि रक्षा करनी है तो उसे शाप की घटना नहीं बतानी है। अनसूया के इस प्रस्ताव से प्रिंयवदा पूर्णतः सहमत है। उसका प्रत्युत्तर है, वस्तुतः तू ठीक कह रही है। हम इस शाप की चर्चा क्यों उससे (शकुन्तला से) करे, कौन व्यक्ति गर्म जल से नवमलिका की लता को सीचेगा, अर्थात कोई नहीं।

5. तेजोद्वयस्य युगपद् व्यसनोदयाभ्यां लोको नियम्यत इवात्मदशान्तरेषु।

समय का पता लगाने के लिए महर्षि कण्व का शिष्य कुटिया के बाहर आता है। वह देखता है कि प्रभात हो गया। एक ओर चन्द्रमा छुप रहा है तो, दूसरी ओर सूर्य का उदय हो रहा है। इस प्रकार दो तेजस्वी पदार्थ एक ही समय में अस्त और उदय होकर अपनी विशेष दशाओं में मानव संसार को नियमित कर रहें हैं सम्पूर्ण ब्रह्मांड द्वन्द्वों का योग है–जन्म-मृत्यु, सुख-दुःख, लाभ–हानि, यश-अपयश, श्वेत-कृष्ण, जय-पराजय, प्रेम-ईर्ष्या आदि द्वन्द्व मानव को मथते ही रहते हैं। इनमें से एक भी स्थायी नहीं। सूर्य और चन्द्र भी सदा आकाश में स्थित नहीं रहते। इसी प्रकार सुख और दुःख किसी के स्थायी नहीं, आवश्यकता है केवल धैर्य-प्रदर्शन की। आवश्यकता है सुख में गर्व प्रदर्शित न करने की और दुःख में विलाप न करने की क्योंकि सुख और दुख तो चक्र की उस परिधि के समान हैं, जिसका कभी एक हिस्सा ऊपर होता है तो कभी दूसरा।

नोट– शिक्षकों से यह अपेक्षा की जाती है कि पाठ्यक्रम में आई अन्य सूक्तियों को विद्यार्थियों को बतायें और उनसे व्याख्या करायें।

बहुविकल्पीयाः प्रश्नाः

1. अभिज्ञानशाकुन्तलस्य रचयिता कः अस्ति ?
   (क) कालिदासः (ख) वाल्मीकिः (ग) तुलसीदासः (घ) बाणभट्ट
2. प्रियम्वदायाः सख्याः किन्नाम आसीत् ?
   (क) गौतमी (ख) मेनका (ग) अनसूया (घ) गार्गी
3. शकुन्तलायै शापं कः अददात् ?
   (क) कण्वः (ख) दुर्वासाः (ग) वैखानसः (घ) शारद्वतः
4. प्रस्थानकाले शकुन्तलया सह गच्छति–
   (क) कण्वः (ख) अनसूया (ग) गौतमी (घ) प्रियंवदा
5. दुष्यन्तः कस्य राज्यस्य राजा आसीत् ?
   (क) हस्तिनापुरस्य (ख) प्रयागस्य (ग) वाराणसीनगरस्य (घ) कुरुप्रदेशस्य
6. शकुन्तला कस्य पालिता पुत्री आसीत्?
   (क) मारीचस्य (ख) कण्वस्य (ग) कर्दमस्य (घ) पुलस्त्यस्य
7. अभिज्ञानशाकुन्तले मुख्य रसः कः ?
   (क) शृङ्गाररसः (ख) वीररसः (ग) शान्तरसः (घ) करुणरसः

8. अभिज्ञानशाकुन्तलस्य नाटकस्य सर्वश्रेष्ठः अङ्कः कः ?

(क) प्रथमो अङ्कः (ख) द्वितीयो अङ्कः (ग) तृतीयो अङ्कः (घ) चतुर्थो अङ्कः

9. कालिदास्य प्रसिद्धोऽलङ्कारो अस्ति–

(क) उपमा (ख) अनुप्रासः (ग) श्लेषः (घ) रूपकम्

10. 'गुणवते कन्यका प्रतिपादनीया' कथनस्य वक्ता/वक्त्री कः/का ?

(क) दुष्यन्तः (ख) नारदः (ग) अनसूया (घ) शकुन्तला

11. 'कोऽन्योहुतवहाद् दग्धुं प्रभवति' इति कस्याः कथनम् अस्ति ?

(क) अनसूयायाः (ख) प्रियंवदायाः (ग) गौतम्याः (घ) कण्वस्य

12. प्रकृतिवक्रः कः अस्ति ?

(क) शारद्वतः (ख) शाङ्र्गरवः (ग) दुर्वासाः (घ) नारदः

13. कुसुमप्रसूतिसमये कस्याः उत्सवः भवति स्म ?

(क) प्रियंवदायाः (ख) अनसूयायाः (ग) शकुन्तलायाः (घ) गौतम्याः

14. शकुन्तलादुष्यन्तयोः मध्ये कीदृशः विवाहः अभवत् ?

(क) आर्षः (ख) प्राजापत्यः (ग) गान्धर्वः (घ) दैवः

15. 'को नामोष्णोदकेन नवमालिका सिञ्चति' सूक्तिरियं कस्य काव्यस्य अस्ति?

(क) अभिज्ञानशाकुन्तलस्य (ख) कादम्बर्याः (ग) किरातार्जुनीयस्य (घ) चन्द्रापीडकथायाः

नोट– शिक्षकों से यह अपेक्षा की जाती है कि पाठ्यक्रम के अनुसार इसी प्रकार प्रश्न-निर्माण कर छात्रों से हल कराएं।

■

संस्कृतव्याकरणम्

अलङ्कारः रचना च

पत्रलेखन

प्रार्थना–पत्र

जिन पत्रों में निवेदन अथवा प्रार्थना की जाती है, प्रार्थना (आवेदन) पत्र कहलाते हैं। ये पत्र अवकाश, शिकायत, सुधार अथवा आवेदन आदि के लिए लिखे जाते हैं। प्रार्थना पत्र किसी भी सरकारी अधिकारी अथवा विद्यालय के प्रधानाचार्य आदि को सम्बोधित होते हैं। इन्हें औपचारिक पत्रों की श्रेणी में रखा जाता है।

प्रार्थना–पत्र औपचारिक ढंग से, पूर्ण औपचारिक भाषा में लिखे जाते हैं। औपचारिक पत्र का एक प्रभेद होने के कारण इन्हें विशेष प्रारूप में लिखा जाता है, जिसमें रुचि और सुविधानुसार कुछ परिवर्तन किये जा सकते हैं।

प्रार्थना–पत्र का प्रारूप

सेवायाम् – प्रार्थना–पत्र में सबसे ऊपर पहली पंक्ति में, बाँयीं ओर 'सेवायाम्' लिखा जाता है। उसके ठीक नीचे अधिकारी का पदनाम और कार्यालय का पता लिखा जाता है। ध्यातव्य है कि अधिकारी का पदनाम सम्बोधन के एकवचन (सम्बुद्धि) अथवा बहुवचन (आदरार्थ) में लिखना चाहिये तथा पदनाम के बाद सम्बोधन-चिह्न का प्रयोग करना चाहिये।

विषय – जिस बारे में पत्र लिखा जा रहा है, उस विषय को संक्षेप में केवल एक वाक्य में लिखना चाहिए।

विषय के उल्लेख के बाद नीचे की पंक्ति में संबंधित अधिकारी के लिये आदरार्थक सम्बोधन का प्रयोग अवश्य करना चाहिए जैसे– महोदय / महोदये, श्रीमन् / श्रीमति आदि। यहाँ ध्यान रखना चाहिए कि यदि पद का नाम एकवचन में लिखा गया हो, तो सम्बोधन भी एकवचन में तथा यदि पद का नाम बहुवचन में लिखा गया हो, तो सम्बोधन भी बहुवचन में रखना चाहिए।

विषयवस्तु – सम्बोधन के नीचे प्रार्थना–पत्र के विषय को सरल भाषा में, स्पष्ट रूप से साफ-साफ लिखना चाहिए। अलग-अलग लोग अलग-अलग शैली में विषयवस्तु लिखते हैं, फिर भी सामान्यतया इसे दो भागों में लिखना चाहिए।

प्रथम भाग – सविनयं निवेदनमस्ति / सादरं प्रार्थये .... आदि से वाक्य प्रारम्भ करके अपनी समस्या के बारे में लिखें।

द्वितीय भाग – अतः विनम्रनिवेदनमस्ति / निवेद्यते इदम् .... आदि से वाक्य प्रारम्भ करके आप उनसे जो अपेक्षा रखते हैं, वह लिखें।

हस्ताक्षर व नाम – विषयवस्तु लिखने के बाद नीचे की पंक्ति में दायीं ओर भवदीयः / भवदीया, प्रार्थी / प्रार्थिनी, भावत्कः / भावत्की आदि लिखकर अपना हस्ताक्षर करें एवम् उसके नीचे अपना नाम तथा पता अंकित करें। यदि आप छात्र हैं, तो अपनी कक्षा का, यदि कर्मचारी हैं, तो अपने पद का उल्लेख पते के स्थान पर करें।

दिनाङ्क– जिस दिन पत्र लिखा जा रहा है उस दिन की तारीख पत्र के नीचे बाँयी ओर (भवदीय के सामने) अथवा पत्र के ऊपर दाँयीं ओर (सेवायाम् के सामने) अंकित करें।

उदाहरण एवम् अभ्यास के लिये नीचे कुछ पत्र दिये जा रहे हैं।

रुग्णावकाशाय प्रार्थनापत्रम्

सेवायाम्,

श्रीमन् प्रधानाचार्यमहोदय!

दयानन्द–इण्टर–कॉलेजः

बिन्दकी, फतेहपुरम्

विषय : रुग्णावकाशार्थं निवेदनम्।

महोदय,

सादरं सूच्यमस्ति यत् अहं गतरात्रितः तीव्रज्वरग्रस्तोऽस्मि। उपचारार्थं यदा अहं चिकित्सालयम् अगच्छम्, तदा चिकित्सकः दिनत्रयस्य कृते पूर्णविश्रामार्थं कथितवान्। अस्याम् अवस्थायाम् अहं विद्यालयम् आगन्तुं न शक्नोमि।

अस्तु, सविनयं निवेद्यते इदं यत् --------------- दिनाङ्कतः --------------- दिनाङ्कं यावत् दिनत्रयस्य रुग्णावकाशं प्रददातु भवान्। भवतां महती अनुकम्पा भविष्यति।

दिनाङ्कः–

भवदीया छात्रा

कक्षा 11 (ब)

अनुक्रमाङ्कः ....

क्रीडाप्रतियोगितायाः आयोजनाय प्रार्थनापत्रम्

सेवायाम्

प्रधानाचार्यमहोदयाः!

राजकीय–उच्चमाध्यमिक–विद्यालयः, प्रयागराजः

विषय : विद्यालये पञ्चदिवसीयक्रिकेटप्रतियोगितायाः आयोजनसम्बन्धे।

मान्यवराः,

नम्रनिवेदनमस्ति यत् वयं भवतां विद्यालयस्य एकादश्याः कक्षायाः विद्यार्थिनः स्मः। वयमस्माकं विद्यालये पञ्चदिवसीयायाः क्रिकेटप्रतियोगितायाः आयोजनं कर्तुम् इच्छामः। पारस्परिकसहयोगमाध्यमेन अस्माभिः वित्तस्यापि व्यवस्था कृता।

अतः सादरं प्रार्थयामहे यत् भवन्तः अस्मै आयोजनाय स्वीकृतिं प्रदाय अस्मान् कृतकृत्यं कुर्वन्तु।

दिनाङ्कः– भवदीयाः आज्ञाकारिणः

एकादशकक्षायाः छात्राः

स्थानान्तरणप्रमाणपत्रस्य कृते प्रार्थनापत्रम्

सेवायाम्

प्रधानाचार्यमहोदय!

राजकीय–उच्चमाध्यमिकविद्यालयः, मथुरा

श्रीमन्,

सादरं सूच्यमस्ति यत् अहं भवतः विद्यालयस्य दशम्याः कक्षायाः छात्रः अस्मि। मम जनकस्य स्थानान्तरणं मथुरातः प्रयागराजाय अभवत्। मम कुटुम्बः पित्रा सार्धम् प्रयागराजं गच्छति। अस्मात् कारणात् अस्मिन् विद्यालये अध्ययनं कर्तुंम् न शक्नोमि।

अस्तु, विनम्रनिवेदनमस्ति यत् मह्यं स्थानान्तरणप्रमाणपत्रं यच्छतु भवान्। भवदीया महती अनुकम्पा भविष्यति।

भावत्कः आज्ञाकारी

कक्षा 10 (अ)

अनुक्रमाङ्कः..........

पुस्तकप्रेषणाय पत्रम्

सेवायाम्

प्रबन्धक महोदय!

विश्वविद्यालयप्रकाशनम्

गोरक्षपुरम् (गोरखपुर)

विषयः – पुस्तकप्रेषण-सम्बन्धे।

श्रीमन्,

निवेद्यते इदं यत् मया भवता प्रकाशितस्य 'रचनानुवादकौमुदी' इत्याख्यस्य पुस्तकस्य अवलोकनम् कृतम । ग्रन्थस्य उपयोगिता नितरां प्रशंसनीया अस्ति। मया सह मम चत्वारि मित्राणि अपि अस्य पुस्तकस्य अध्ययनार्थम् उत्सुकाः सन्ति।

अस्तु, कृपया अधोनिर्दिष्टस्थाने, पुस्तकपञ्चकं वी0 पी0 पी0 द्वारा शीघ्रं सम्प्रेष्य, अस्मान् अनुगृहणन्तु।

दिनाङ्कः–

भावत्कः

संस्कृताध्यापकः

राजकीयमाध्यमिकविद्यालयः, आगरा

संस्कृतशिक्षकपदस्य हेतोः प्रार्थनापत्रम्

सेवायाम्,

दिनाङ्क :

श्रीमन्तः प्रधानाचार्यमहोदयाः!

उच्चतर-माध्यमिक-विद्यालयः,

प्रयागराजः

विषयः – संस्कृतशिक्षकपदार्थं आवेदन-सम्बन्धे।

महोदय,

सविनयं निवदेनमस्ति यत् समाचारपत्रमाध्यमेन अवगतमिदं यत् भवतां विद्यालये संस्कृतशिक्षकस्य आवश्यकता वर्तते। शपथपूर्वकं कथयामि यत् विज्ञापने प्रकाशिताः सर्वाः अर्हताः मया पूर्यन्ते। मम पार्श्वे उच्चतरमाध्यमिककक्षायाम् अध्यापनस्य पञ्चवर्षाणाम् अनुभवः अपि अस्ति। सर्वाणि शैक्षणिकप्रमाणानि, अनुभवप्रमाणपत्रं च संलग्नीकृतानि सन्ति।

आशासे यत् भवन्तः स्वविद्यालये अध्यापनस्य अवसरं प्रदाय माम् अनुगृहीतं करिष्यन्ति।

भावत्कः

संलग्नकाः–

1. …………….
2. …………….
3. …………….

प्रधानाचार्याय अवकाशकृते प्रार्थनापत्रम्

सेवायाम्,

प्रधानाचार्यमहोदय!

कौशाम्बी-इण्टर-कॉलेजः

मऊ, चित्रकूटः

विषयः – दिनद्वयस्य अवकाशस्य सम्बन्धे।

महोदय,

सादरं प्रार्थये यत् कार्यविशेषावरोधवशात् --------------- दिनाङ्कतः --------------- दिनाङ्कं यावत् अहं विद्यालयम् आगन्तुम् न शक्नोमि।

अतः विनम्र-निवेदनमस्ति यत् उपर्युक्तस्य दिनद्वयस्य अवकाशं दत्त्वा ममोपरि महतीम् अनुकम्पां करिष्यति।

दिनाङ्कः भवदाज्ञाकारी शिष्यः

--------------- ---------------

कक्षा–11 (अ)

अनुक्रमाङ्कः............

पुस्तकप्राप्त्यर्थं पुस्तकालयाध्यक्षाय पत्रम्

सेवायाम्,

पुस्तकालयाध्यक्षमहोदय!

मीमांसाविद्यालयः,

नवदेहली

विषयः – पुस्तकप्राप्त्यर्थं निवेदनम्।

श्रीमन्,

सादरं निवेद्यते यत् अहं एकादशकक्षायाः निर्धनः छात्रः अस्मि। मम पितुः मासिकः आयः अत्यल्पः अस्ति। अतः अहम् आपणात् पुस्तकानां व्यवस्थां न कर्तुं शक्नोमि। पुस्तकानाम् अभावे सुचारुरूपेण अध्ययनं भवितुं न शक्नोति।

अतः सविनयं निवेदनमस्ति यत् पुस्तकालयादेव पुस्तकानि दत्त्वा माम् अनुगृह्णातु भवान्। भवतः महती कृपा भविष्यति।

दिनाङ्कः भवदीयः

--------------- ---------------

कक्षा – 11 (द)

अनुक्रमाङ्कः...........

शुल्कमुक्तये प्रार्थनापत्रम्

सेवायाम्, दिनाङ्कः :

श्रीमन्तः प्रधानाचार्यमहोदयाः ---------------

पं0 राम अजोर–इण्टर–कॉलेजः

लालगंजः, प्रतापगढम्,

विषयः – शुल्कमुक्तये प्रार्थनापत्रम्

मान्यवराः,

सविनयनिवेदनमस्ति यत् प्रार्थी भवतां विद्यालये एकादशकक्षायां पठति। प्रार्थिनः पिता एकः निर्धनः कृषकः अस्ति। अतएव सः मम शिक्षणशुल्कं दातुं न शक्नोति। विगतपरीक्षा मया प्रथमश्रेण्याम् उत्तीर्णीकृता। धनाभावः मम पठनमार्गे महाबाधारूपेण उपस्थितः सञ्जातः।

अतः विनम्रनिवेदनमस्ति यत् मां शुल्कमुक्तं कृत्वा अनुगृह्णन्तु भवन्तः।

भवदीयः आज्ञाकारी शिष्यः

कक्षा–11 (स)

अनुक्रमाङ्कः ....

मित्रेभ्यः सम्बन्धिभ्यः वा पत्रम्

मित्रों, सहपाठियों, भाई-बहन, चाचा, दादा आदि सम्बन्धियों को लिखे जाने वाले पत्र 'अनौपचारिक पत्र' कहलाते हैं। इन्हें 'प्रेषक' और 'प्रेषिती' के बीच व्यक्तिगत सम्बन्ध होने के कारण **'व्यक्तिगत पत्र'** भी कहते हैं। इस प्रकार के पत्रों में व्यक्तिगत सुख-दुःख एवं अनुभव होता है, अतः तथ्यों के साथ-साथ आत्मिक भावों को भी महत्त्व दिया जाता है। इनमें भाषा एवं शैली, अनौपचारिक होते हैं।

इस प्रकार के पत्र बधाई भेजने के लिए, निमन्त्रण देने के लिए, शुभकामना भेजने के लिए, सांत्वना देने के लिए, किसी प्रकार की सूचना या सलाह देने या मांगने के लिए प्रयुक्त होते हैं। 'प्रेषक' एवं 'प्रेषिती' के बीच सम्बन्ध के आधार पर ऐसे पत्र तीन प्रकार के होते हैं–

1. अपने पूज्य वर्ग (माता-पिता, गुरु, मामा, चाचा आदि) को भेजे जाने वाले पत्र।
2. अपने छोटों (छोटा भाई, बहन, पुत्र आदि) को भेजे जाने वाले पत्र।
3. अपने बराबर वालों (मित्रों आदि) को भेजे जाने वाले पत्र।

अनौपचारिक पत्रों का प्रारूप औपचारिक पत्रों के प्रारूप से कुछ भिन्न होता है। इसमें 'सेवायाम्' का उल्लेख नहीं होता तथा 'विषय' भी नहीं लिखा जाता। मित्रों एवं सम्बन्धियों को लिखे जाने वाले (अनौपचारिक) पत्रों में सर्वप्रथम प्रेषक का पता लिखा जाता है। प्रेषक का पता लिखते समय स्थान के नाम में पञ्चम्यर्थक तसिल् प्रत्यय (तः) लगाकर लिखते हैं। उसके ठीक नीचे दिनाङ्क का उल्लेख करते हैं। इसके बाद जिस व्यक्ति को पत्र भेजा जा रहा है, उससे प्रेषक के सम्बन्ध के आधार पर सम्बोधन लिखा जाता है एवं सम्बोधन के ठीक बाद अभिवादन किया जाता है। पूज्य वर्ग के लिये प्रणामः,

सादरचरणस्पर्शः आदि, छोटों के लिये स्वस्ति, शुभाशिषः आदि तथा बराबर वालों के लिये नमस्कारः, नमस्ते आदि अभिवादनों का प्रयोग किया जाता है।

अभिवादन के बाद मुख्य विषय को लिखते हैं। मुख्य विषय को सामान्यतः तीन भागों में लिखना चाहिये। प्रथम भाग में अपनी कुशलक्षेम का उल्लेख किया जाता है। दूसरे भाग में पत्र लिखने का कारण तथा अन्तिम भाग में अपने परिवार या सम्बन्धियों की कुशलता के लिये कुछ शब्द लिखे जाते हैं।

अन्त में प्रेषक-प्रापक सम्बन्ध के आधार पर अभिनिवेदन लिखते हैं। जैसे– पिता को लिखे गये पत्र में भवदाज्ञाकारी सुतः, छोटों को लिखे गये पत्र में शुभेच्छुः या शुभाकांक्षी आदि तथा बराबर वालों को लिखे गये पत्र में भवदीयः / भवदीया आदि अभिनिवेदनों का प्रयोग किया जाता है। अभिनिवेदन के ठीक नीचे अपना नाम लिखते हुए पत्र की समाप्ति की जाती है।

उदाहरण के लिये नीचे कुछ पत्र दिये जा रहे हैं।

मित्राय पत्रम्

नैनीतालतः

दिनाङ्कः ---------------

प्रियमित्र अरविन्द!

सप्रणयं नमस्ते

अत्र कुशलं, तत्रास्तु। भवतः पत्रं प्राप्य मम मनसि अतीव मोदः सञ्जातः। तव कुटुम्बे सर्वेषां कुशलताम् अवगम्य प्रसन्नोऽस्मि। नैनीतालः प्राकृतिकसुषमया सम्पन्नः ग्रीष्मर्तौ शीतः अपि। अस्मिन् ग्रीष्मर्तौ स्वपरिवारेण सह अत्र आगत्य प्राकृतिकसुषमायाः आनन्देन आह्लादितो भव इति मम हार्दिकी इच्छा वर्तते। आशाऽस्ति यत् भवान् अवश्यम् अत्र आगमिष्यति। अन्यत् सर्वं कुशलम् अस्ति। तव पत्रोत्तरस्य प्रतीक्षायाम्–

भवद्बन्धुः

वित्तप्रेषणाय पित्रे पत्रम्

प्रयागराजतः

दिनाङ्कः–---------------

पूज्य पितः!

सादरं चरणस्पर्शः

अहम् अत्र कुशलतापूर्वकं आगतोऽस्मि। आगत्य अत्र मया राजकीयमाध्यमिकविद्यालये प्रवेशः प्राप्तः। विद्यालये मया प्रवेशशुल्कादिकं प्रदत्तम्। अधुना पुस्तकानां क्रयणार्थं धनस्य आवश्यकता वर्तते। अतः सहस्रद्वयरूप्यकाणि शीघ्रं प्रेष्य अनुगृह्णातु भवान्।

भवदाज्ञाकारी पुत्रः

अनुजाय पत्रम्

मथुरातः

दिनाङ्कः– ---------------

प्रियानुज सच्चिदानन्द!

स्वस्ति

अत्र शं तत्रास्तु। आगतोऽस्मि सकुशलम् अत्राहम्। विद्यालये मम कक्षाः अपि नियमितरूपेण सञ्चालिताः भवन्ति। त्वमपि स्वविद्यालये अवधानेन परिश्रमेण च अध्ययनं कुरु।

मातुः स्वास्थ्यं समीचीनं न वर्तते, अतः गृहकार्ये तस्याः सहायतां कुर्वन् तस्याः परिचर्यामपि करोतु, इत्यपेक्षा अस्ति। पत्रस्य प्रत्युत्तरे मातुः परिवारस्य च क्षेमकुशलवार्ता शीघ्रमेव प्रेषणीया।

तव शुभाकाङ्क्षी

स्वकुशलक्षेमनिवेदनार्थं पित्रे पत्रम्

जयपुरतः

दिनाङ्कः– ---------------

श्रद्धेयाः पितृचरणाः!

शतशः प्रणामाः,

अत्र कुशलं, तत्रास्तु। भवतः स्नेहसिक्तं पत्रम् अद्यैव मया प्राप्तम्। परिवारस्य कुशलक्षेमं ज्ञात्वा मोदते मे मनः। इदानीं मम वार्षिकी परीक्षा प्रचलति। परीक्षायाम् इदानीं यावत् सर्वाणि प्रश्नपत्राणि सम्यक् अभवन्। अवशिष्टविषयाणाम् अध्ययनमपि सुचारुरूपेण सञ्चालितम् अस्ति। आशासे यत् परीक्षायाम् उत्तमैः अङ्कैः प्रथमश्रेण्याम् उत्तीर्णः भविष्यामि।

परीक्षानन्तरं शीघ्रमेव गृहम् आगमिष्यामि। मातृचरणेषु प्रणतिः निवदेनीया, अनुजाय शुभाशीर्वादाः।

भावत्कः पुत्र

निमन्त्रणपत्रम्

वाराणसीतः

दिनाङ्कः – ---------------

श्रीमन्!

नमस्कारः,

एतद् अवगम्य भवन्तः हर्षम् अनुभविष्यन्ति यत् ईश्वरस्य महत्या अनुकम्पया मम अग्रजायाः सुशीलादेव्याः पाणिग्रहणसंस्कारः दिनाङ्के --------------- सुनिश्चितः सञ्जातः।

अस्तु, सादरं निवेदनमस्ति यत् भवन्तः सपरिवारं विवाहतिथेः पूर्वमेव अत्रागत्य अस्मदाह्लादं वर्धापयन्तु। स्वपितृचरणयोः मम प्रणामः निवेदनीयः। शेषमशेषं शुभमस्ति।

भवद्दर्शनाभिलाषी

योगदिवसकार्यक्रमे प्रतिभागार्थम् अनुजाय शुभकामनापत्रम्

लक्ष्मणपुरतः

दिनाङ्कः – --------------

प्रिय अनुज!

शुभाशीर्वादाः,

अहमत्र कुशलः तव कुशलतां कामये। इदं ज्ञात्वा मम मनः अतीव प्रसन्नताम् अनुभवति यत् त्वं योगदिवसस्य उपलक्ष्ये राजधान्याम् आयोजिते विशेषकार्यक्रमे प्रधानमन्त्रिणा साकं प्रतिभागं करिष्यसि। मम कृते, अस्मत्कुटुम्बस्य, महत्याः प्रसन्नतायाः गर्वस्य च विषयः एषः।

एवमेव प्रतिदिनम् उन्नतिं कुरु इति मे शुभाशंसा। पित्रोः चरणेषु मम शतशः प्रणामाः निवेदनीयाः।

तवाग्रजः

जन्मदिवसस्याऽवसरे प्रेषितोपहारार्थं मातुले धन्यवादपत्रम्

प्रतापगढतः

दिनाङ्कः – --------------

पूज्यमातुल!

सविनयं प्रणतिः,

अत्र कुशलं तत्राप्यस्तु। ह्यः मम जन्मदिवसः आसीत्। अस्मिन्नवसरे मया नैकाः उपहाराः प्राप्ताः, किन्तु भवता प्रेषितः उपहारः मम हृदये सर्वाधिकम् आह्लादम् अजनयत्। भवान् मम प्रत्येकं जन्मदिवसे मह्यं शुभकामनारूपेण रुचिकरम् उपहारं प्रेषयति। अनेन ज्ञायते यत् भवतः हृदये मत्कृते कीदृशः स्नेहसम्भारः वर्तते।

अतः स्नेहार्थम् उपहारार्थं च अहं हृदयतलात् कोटिशः धन्यवादान् ज्ञापयामि। मातुलान्याः चरणयोः प्रणामः। अनुजस्य कृते शुभाशीर्वादाः।

भवतः भागिनेयः

अलङ्कार

अलङ्कार का अर्थ होता है आभूषण, जिस प्रकार से अङ्गनाओं के सौन्दर्य को आभूषण बढ़ा देते हैं, उसी प्रकार से अलङ्कार शब्दार्थ रूपी काव्य के शरीर की सुन्दरता को बढ़ाकर चमत्कृत कर देते हैं। 'अलम्' उपपद 'कृ' धातु से 'घञ्' प्रत्यय करने पर अलङ्कार शब्द की निष्पत्ति होती है। अलङ्कार शब्द की व्युत्पत्ति निम्न प्रकार से की जाती है– **अलङ्क्रियतेऽनेन इति अलङ्कारः'** अर्थात् जिसके द्वारा काव्य की शोभा बढ़ायी जाती है उसे अलङ्कार कहते हैं। आचार्य दण्डी के शब्दों में–

'काव्यशोभाकरान् धर्मान् अलङ्कारान् प्रचक्षते'

काव्य की शोभा को बढ़ाने वाले धर्म अलङ्कार कहलाते हैं।

आचार्य वामन कहते हैं **'सौन्दर्यमलङ्कारः'** सौन्दर्य ही अलङ्कार है। सुन्दरता के कारण ही काव्य आदृत होता है। जो सहृदयों के अन्तःकरण को आह्लादित करे, वह अलङ्कार है।

अलङ्क्रियेते शब्दार्थौ अनेन, अथवा अलङ्करणम् अलङ्कार, अथवा अलङ्करोति शब्दार्थौ इति अलङ्कारः, इत्यादि व्युत्पत्तियाँ की जा सकती हैं।

अलङ्कार के प्रकार– अलङ्कार के तीन भेद स्वीकार किये जाते हैं–

(1) शब्दालङ्कार (2) अर्थालङ्कार (3) उभयालङ्कार

शब्दालङ्कार – काव्यों में जहाँ शब्दों के माध्यम से शोभा बढ़ाई जाती है, उसे शब्दालङ्कार कहते हैं। अनुप्रास, यमक, श्लेष, वक्रोक्ति इत्यादि शब्दालङ्कार कहलाते हैं।

विशेष– 'शब्दपरिवृत्ति असहत्व' जहाँ शब्द का परिवर्तन सहनीय न हो, वह शब्दालङ्कार कहलाता है। 'शब्दपरिवृत्ति असहत्व' ही बीज है।

अर्थालङ्कार – काव्य में जहाँ अर्थों के माध्यम से चमत्कार उत्पन्न किया जाता है, उसे अर्थालङ्कार कहते हैं। उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, विभावना, विशेषोक्ति आदि अर्थालङ्कार हैं।

विशेष– 'शब्दपरिवृत्तिसहत्व' जहाँ शब्द का परिवर्तन सह्य हो, शब्द को हटाकर पर्यायवाचक शब्द रखने पर भी काव्य में चमत्कार बना रहे वहाँ अर्थालङ्कार है।

उभयालङ्कार – जिसमें शब्दगत और अर्थगत– दोनों प्रकार का चमत्कार हो, उसे उभयाङ्काकर कहते हैं। पुनरुक्तवदाभास उभयालङ्कार का उदाहरण है।

1. अनुप्रास अलङ्कार

परिभाषा – अनुप्रासः शब्दसाम्यं वैषम्येऽपि स्वरस्य यत्। *(साहित्यदर्पण)*

अर्थात् अनुप्रास वह शब्दालङ्कार है जिसमें स्वरों में वैषम्य (अलग-अलग) होने पर भी, व्यञ्जनों में साम्य होता है। दूसरे शब्दों में जिस शब्दालङ्कार में एक या एक से अधिक व्यञ्जनों की एक से अधिक बार आवृत्ति होए वहाँ अनुप्रास अलङ्कार होता है।

उदाहरण– **अपसारय घनसारं कुरु हारं दूर एव किं कमलैः।**
अलमलमालि मृणालैरिति वदति दिवानिशं बाला।।

स्पष्टीकरण – उपर्युक्त श्लोक में स्, र्, ल्, म्, व् आदि व्यञ्जनों की आवृत्ति होने के कारण अनुप्रास अलंकार है।

अन्य उदाहरण–

1. ततोऽरुणपरिस्पन्दमन्दीकृतवपुः शशी।
दध्रे कामपरिक्षामकामिनीगण्डपाण्डुताम्।।

2. यस्य न सविधे दयिता दवदहनः तुहिनदीधितस्तस्य।
यस्य च सविधे दयिता दवदहनः तुहिनदीधितस्तस्य।।

3. नयने तस्यैव नयने च।

नोट– आचार्य विश्वनाथ ने अपने ग्रन्थ साहित्यदर्पण में अनुप्रास अलंकार के 5 प्रकार बताये हैं–

1. छेकानुप्रास
2. वृत्त्यनुप्रास
3. श्रुत्यनुप्रास
4. अन्त्यानुप्रास
5. लाटानुप्रास

2. यमक अलङ्कार

परिभाषा– सत्यर्थे पृथगर्थायाः स्वरव्यञ्जनसंहतेः।
क्रमेण तेनैवावृत्तिर्यमकं विनिगद्यते।। (साहित्यदर्पण)

सार्थक होने पर अलग–अलग अर्थ वाले स्वरव्यञ्जनसमूह की पूर्वक्रमानुसारिणी आवृत्ति को यमक कहते हैं। दोनों स्वरव्यञ्जनसमूह सार्थक और निरर्थक– इस अवस्था में भी यमक अलङ्कार होता है।

उदाहरण– **नवपलाशपलाशवनं पुरः स्फुटपरागपरागतपङ्कजम्।**
मृदुलतान्तलतान्तमलोकयत् स सुरभिंसुरभिंसुमनोभरैः।।

स्पष्टीकरण –इस श्लोक में पलाश-पलाश, पराग-पराग, लतान्त-लतान्त एवं सुरभिं-सुरभिं पदों की आवृत्ति है जहाँ, इनके अर्थ या तो भिन्न हैं, या निरर्थक हैं। अतः यहाँ यमक अलङ्कार है।

अन्य उदाहरण–

1. सन्नारीभरणोमायमाराध्य विधुशेखरम्।
सन्नारीभरणोमायस्ततस्त्वं पृथिवीं जय।।

2. सरस्वति! प्रसादं मे स्थितिं चित्तसरस्वति।
सरस्वतिकुरु क्षेत्र-कुरुक्षेत्र-सरस्वति।।

3. समरसमरसोऽयम् ....।

1 अनुवाद

भाषा मानव-व्यवहार का सबसे सुगम साधन है। एक भाषा को दूसरी भाषा में परिवर्तित करने का नाम ही अनुवाद है। संस्कृत भाषा में वाक्यों के क्रम में पौर्वापर्य का कोई नियम नहीं है, क्योंकि अर्थ में परिवर्तन नहीं होता है, जैसे– बालकः विद्यालयं गच्छति या विद्यालयं बालकः गच्छति या गच्छति बालकः विद्यालयम्। चाहे आप पहले क्रिया का प्रयोग करिए, चाहें कर्ता या कर्म का। व्याकरण की दृष्टि से ये तीनों ही वाक्य पूर्णतः शुद्ध हैं तथा अर्थ में कोई भी परिवर्तन नहीं है।

अनुवाद के प्रमुख नियम–

1. संस्कृत भाषा में तीन वचन होते हैं – एकवचन, द्विवचन और बहुवचन। जबकि हिन्दी भाषा में एकवचन और बहुवचन ये दो ही वचन होते हैं।

2. संस्कृत भाषा में तीन पुरुष होते हैं–

शेषे प्रथमः – अस्मद् एवं युष्मद् शब्द के अतिरिक्त शब्दों के साथ प्रथम पुरुष होता है।

प्रथम पुरुष या अन्य पुरुष–	सः तौ ते
	रामः रामौ रामाः

युष्मद्युपपदे समानाधिकरणे स्थानिन्यपि मध्यमः – युष्मद् (त्वं युवां यूयम्) के साथ केवल मध्यम पुरुष का प्रयोग होता है।

मध्यम पुरुष	त्वम् युवाम् यूयम्

अस्मद्युत्तमः – अस्मद् (अहम्, आवाम्, वयम्) शब्द के साथ हमेशा उत्तम पुरुष का प्रयोग होता है।

उत्तम पुरुष	अहम् आवां वयम्

3. संस्कृत में तीन वचनों के कारण ही तीनों पुरुषों में प्रत्येक क्रिया के प्रत्येक काल में 3 3 = 9 रूपों का निर्माण होता है। जैसे– पठ् (पढ़ना) धातु से लट्लकार (वर्तमान काल) में पठति, पठतः, पठन्ति, पठसि, पठथः, पठथ, पठामि, पठावः, पठामः, इस प्रकार नौ रूपों का निर्माण होता है।

4. संस्कृत भाषा में सात विभक्तियाँ एवं छह कारक होते हैं, जिनको विभिन्न चिह्नों से दर्शाया जाता है। नीचे तालिका में उन्हें इस प्रकार देखा जा सकता है–

विभक्ति	**कारक**	**चिह्न**
प्रथमा	कर्ता	ने
द्वितीया	कर्म	को
तृतीया	करण	से, द्वारा

चतुर्थी	सम्प्रदान	के लिए
पञ्चमी	अपादान	से (अलग होने में)
षष्ठी	सम्बन्ध	का, के, की, रा, रे, री, ना, ने, नी
सप्तमी	अधिकरण	में, पर
प्रथमा	सम्बोधन	हे, भो, अरे इत्यादि

विशेष– (1) संस्कृत में षष्ठी विभक्ति को कारक की संज्ञा नहीं दी गयी है। उसे सम्बन्ध मात्र ही कहा जाता है। क्योंकि सम्बन्ध में क्रिया का अन्वय नहीं होता है।

(2) सम्बोधन में कर्ता के अर्थ में प्रथमा विभक्ति का विधान किया जाता है।

5. कर्तृवाच्य के वाक्य में क्रिया का प्रयोग कर्ता के अनुसार होता है अर्थात्, कर्ता जिस पुरुष और जिस वचन का होगा, क्रिया भी उसी पुरुष और उसी वचन में होगी। क्रिया जिस काल की होती है, उसी काल का रूप भी लिखा जाता है जैसे– बालक पढ़ता है– यहाँ कर्ता 'बालक' (बालकः) प्रथम पुरुष एकवचन का है, अतः उसके अनुसार क्रिया प्रथम पुरुष एकवचन की ही होगी। 'पढ़ता है' क्रिया वर्तमान काल (लट्लकार) की है। अतः 'पठ्' धातु के 'लट्' लकार (वर्तमान काल) का रूप प्रयुक्त होगा, 'पठ्' धातु के लट्लकार (वर्तमान काल) के प्रथम पुरुष एकवचन का रूप होता है– पठति। इसलिए इसका अनुवाद इस प्रकार होगा– बालकः पठति (बालक पढ़ता है)। इसी प्रकार अन्य वाक्यों में भी कर्ता के अनुसार ही क्रिया का प्रयोग किया जाएगा।

6. संस्कृत में दस लकार हैं, जिनमें पाँच लकार ही मुख्यरूप से अध्ययन–अध्यापन में प्रयोग किये जाते हैं–लट्, लिट्, लुट्, लृट्, लेट्, लोट्, लङ्, लिङ्, लुङ्, लृङ्– ये दस लकार होते हैं, लिङ् लकार के दो भेद होते हैं– विधिलिङ् एवं आशीर्लिंङ्।

विधिलिङ् – विधि, निमन्त्रण, आमन्त्रण आदि अर्थों में होता है तथा आशीर्लिंङ्, आशीर्वाद अर्थ में होता है।

1. लट् लकार – वर्तमान काल
2. लिट् लकार – भूतकाल (परोक्ष)
3. लुट् लकार – भविष्यत् काल (अनद्यतन)
4. लृट् लकार – सामान्य भविष्यत् काल
5. लेट् लकार – (लिङर्थ में) वेद में ही इस लकार का प्रयोग होता है।
6. लोट् लकार – आज्ञार्थक (विध्यादि अर्थों में)
7. लङ् लकार – अनद्यतन भूत
8. लिङ् लकार – विधि–निमन्त्रणादि अर्थों में
9. लुङ् लकार – आसन्न भूतकाल (सामान्य भूत)
10. लृङ् लकार – हेतुहेतुमद्भूत (क्रियातिपत्ति)

धातु-परिचय

धातु – 'सर्वं नाम धातुजमाह' संसार में सभी नाम पद धातुओं से निष्पन्न होते हैं। धातुओं से ही क्रियापदों का निर्माण होता है, क्रियापदों का प्रयोग हम दैनन्दिन व्यवहार में करते हैं। ये क्रियापद व्याकरण शास्त्र के नियमानुसार दस गणों में व्यवस्थित किये गये हैं।

भ्वाद्यदादिः जुहोत्यादिः दिवादिः स्वादिरेव च।

तुदादिश्च रुधादिश्च तनादिक्रय-चुरादयः।।

भ्वादि गण, अदादि गण, जुहोत्यादि गण, दिवादि गण, स्वादि गण, तुदादि गण, रुधादि गण, तनादि गण, क्रयादि गण, चुरादि गण, ये दस प्रकार के हैं।

विशेष – 'फलव्यापारयोः धातुः' अर्थात् फल एवं व्यापार धातु के दो अर्थ होते हैं। आचार्य नागेश भट्ट के अनुसार– **'फलानुकूलो यत्नसहितो व्यापारः धात्वर्थः'** अर्थात् धातु के दो ही अर्थ हैं– फल एवं व्यापार।

इन्हीं फल एवं व्यापार के अनुसार ही सकर्मक एवं अकर्मक की व्यवस्था होती है।

सकर्मक – 'फलव्यधिकरणव्यापारवाचकत्वम्' अर्थात् जहाँ फल का अन्वय अलग एवं व्यापार का अन्वय अलग हो वह सकर्मक धातु होती है। अर्थात् फल और व्यापार की भिन्नाधिकरणता ही सकर्मक है।

अकर्मक – 'फलसमानाधिकरणव्यापारवाचकत्वम्' जहाँ फल एवं व्यापार का अन्वय एक ही अधिकरण में होता है, उसे अकर्मक धातु कहते हैं।

अकर्मक धातुओं को पहचानने के लिए–

लज्जा-सत्ता-स्थिति-जागरणं वृद्धि-क्षय-भय-जीवित-मरणम्,

शयन-क्रीडा-रुचि-दीप्त्यर्थं धातुगणं तमकर्मकमाहुः।।

इन अर्थों वाली धातुएँ अकर्मक होती हैं।

द्विकर्मक – दुह्-याच्-पच्-दण्ड्-रुध्-प्रच्छ्-चि-ब्रू-शास्-जि-मथ्-मुष्-नी-हृ-कृष्-वह्-, ये धातुएँ द्विकर्मक कही जाती हैं।

अर्थात् **'अकथितं च'** सूत्र से होने वाली कर्मसंज्ञा इन्हीं दुह् आदि 16 धातुओं के योग में होती हैं।

काल – 'जन्यानां जनकः कालः जगतामाश्रयो मतः' 'अतीतादिव्यवहारहेतुः कालः' अतीतादि भूत-वर्तमान-भविष्यत् के व्यवहार का हेतु काल होता है।

वर्तमान काल में लट्लकार का प्रयोग होता है।

भूतकाल तीन प्रकार का होता है– परोक्ष, अनद्यतन एवं सामान्य।

अत्यन्त प्राचीन काल को परोक्ष भूत कहते हैं। इसमें लिट् लकार होता है।

यथा– रामो रावणं जघान।

अनद्यतन भूत में लङ् लकार होता है, बीती रात्रि के पूर्व का समय अनद्यतन भूत होता है।

रामः पुस्तकम् अपठत्।

(अद्यतन) सामान्य भूत में लुङ् लकार का प्रयोग होता है। बीती रात्रि के 12 बजे से लेकर आने वाली 12 बजे रात्रि का समय सामान्य भूत है। यथा– सः पुस्तकम् अपाठीत्।

भविष्यत् काल भी दो प्रकार का होता है। सामान्य एवं अनद्यतन। अनद्यतन भविष्य में लुट् लकार का प्रयोग होता है। यथा–

बालकः विद्यालयं गन्ता। इत्यादि।

सामान्य भविष्य में 'लृट् लकार' का प्रयोग किया जाता है।

सः पुस्तकं पठिष्यति। वह पुस्तक पढ़ेगा।

बाकी सभी लकारों के अर्थ निर्दिष्ट हैं।

पद व्यवस्था – पद तीन प्रकार के होते हैं– आत्मनेपद, परस्मैपद, एवम् उभयपद। इन पदों के माध्यम से वर्तमान, भूत एवं भविष्य तथा अन्य अर्थों को अभिव्यक्त किया जाता है।

आत्मनेपद – 'स्वरितञितः कर्त्रभिप्रायेक्रियाफले' – जहाँ क्रियाफल कर्तृगामी हो, वहाँ आत्मनेपद होता है।

परस्मैपद – 'शेषात् कर्तरि परस्मैपदम्' जहाँ क्रियाफल परगामी हो वहाँ परस्मैपद होता है।

कर्ता एवं कर्म की व्याख्या भी धातु के अर्थानुसार होती है, फलाश्रय को कर्म कहा जाता है। व्यापाराश्रय कर्ता होता है।

उभयपद – बुध्, भज्, यज्, याच्, वह्, भक्ष् इत्यादि हैं।

वर्तमान, भूत, भविष्य इत्यादि कालों को सूचित करने के लिए लकारों का प्रयोग इस प्रकार होता है– जैसे– गम् (जाना) लट्लकार वर्तमान काल–

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	गच्छति	गच्छतः	गच्छन्ति
मध्यम पुरुष	गच्छसि	गच्छथः	गच्छथ
उत्तम पुरुष	गच्छामि	गच्छावः	गच्छामः

इसी प्रकार भू, पठ्, क्रीड्, चल्, गद्, दृश्, पच्, दह्, पत्, वस् इत्यादि धातुओं के रूप चलेंगे।

ऊपर बताए गये तीनों पुरुषों (प्रथम, मध्यम और उत्तम) के तीनों वचनों (एकवचन, द्विवचन एवं बहुवचन) के 9 कर्ता और प्रत्येक काल की क्रिया के 9 रूपों का इस प्रकार प्रयोग किया जा सकता है–

पुरुष	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	सः पठति (वह पढ़ता है)	तौ पठतः (वे दोनों पढ़ते हैं)	ते पठन्ति (वे लोग पढ़ते हैं)
मध्यम पुरुष	त्वं पठसि (तुम पढ़ते हो)	युवां पठथः (तुम दोनों पढ़ते हो)	यूयं पठथ (तुम सभी पढ़ते हो)
उत्तम पुरुष	अहं पठामि (मैं पढ़ता हूँ)	आवां पठावः (हम दोनों पढ़ते हैं)	वयं पठामः (हम सब पढ़ते हैं)

पुरुष	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्र.पु.	स्पर्धते	स्पर्धेते	स्पर्धन्ते
म.पु.	स्पर्धसे	स्पर्धेथे	स्पर्धध्वे
उ.पु.	स्पर्धे	स्पर्धावहे	स्पर्धामहे

इसी तरह से भाष्, रुच्, लभ्, वृध्, शंक्, शिक्ष् आदि धातुओं के रूप चलेंगे।

7. संस्कृत में तीन लिङ्ग होते हैं–

1. **पुंलिङ्ग**–रामः, देवदत्तः, पुरुषः, बालकः
2. **स्त्रीलिङ्ग**–सीता, बालिका, रमा, चटका, स्त्री
3. **नपुंसकलिङ्ग**–पुस्तकम्, जलम्, नेत्रम्, पत्रम्

8. कर्ता – 'क्रियां करोति इति कर्ता' अर्थात् क्रिया को करने वाले को कर्ता कहते हैं। वाक्य में कः (कौन) लगाने से क्रिया का कर्ता प्राप्त होता है। जैसे– 'बालकः गच्छति' इस वाक्य में कः गच्छति अर्थात् कौन जाता है? उत्तर प्राप्त होता है– बालकः गच्छति अर्थात् बालक जाता है। यहाँ गच्छति क्रिया का कर्ता 'बालक' है यह ज्ञात हो जाता है।

9. क्रिया – क्रिया साध्य होती है। एक सामूहिक क्रिया-कलाप की संज्ञा क्रिया होती है। भू, पठ्, इत्यादि को संस्कृत में धातु कहा गया है। इन धातुओं को ही क्रिया कहा जाता है।

परस्मैपद धातुओं में 9 तिङ् प्रत्ययों का प्रयोग–

पुरुष	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	तिप्	तस्	झि
मध्यम पुरुष	सिप्	थस्	थ
उत्तम पुरुष	मिप्	वस्	मस्

आत्मनेपद धातुओं में 9 तिङ्प्रत्ययों का प्रयोग

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	त	आताम्	झ
मध्यम पुरुष	थास्	आथाम्	ध्वम्
उत्तम पुरुष	इट्	वहि	महिङ्

लकारों के आधार पर अनुवाद के नियम

1. लट्लकार (वर्तमान काल)

नियम–1. वर्तमान काल में कर्तृवाच्य के कर्ता में प्रथमा विभक्ति का प्रयोग किया जाता है और उसी के अनुसार क्रिया भी प्रयुक्त की जाती है। यथा–

हिन्दी वाक्य	संस्कृत वाक्य
1. राम पुस्तक पढ़ता है।	रामः पुस्तकं पठति।
2. सभी विद्यार्थी विद्यालय जाते हैं।	सर्वे विद्यार्थिनः विद्यालयं गच्छन्ति।
3. तुम घर कब जाते हो ?	त्वं गृहं कदा गच्छसि ?
4. हम सभी चाय पीते हैं।	वयं चायं पिबामः।
5. मैं मन्दिर क्यों जाती हूँ ?	अहं मन्दिरं किमर्थं गच्छामि ?

नियम–2. जब वाक्य में दो कर्ता होते हैं और वे 'च' से जुड़े होते हैं तो क्रिया भी द्विवचन की प्रयोग की जाती है।

जैसे– 1. राम और श्याम बाजार जाते हैं। रामः श्यामश्च आपणं गच्छतः।

2. रमा और अर्चना खाना खाती हैं। रमा अर्चना च भोजनं खादतः।

नियम–3. जब वाक्य में दो कर्ता 'वा' (अथवा) शब्द से जुड़े होते हैं, तो क्रिया द्विवचन की न होकर एकवचन की होती है। जैसे– देवदत्त अथवा मोहन बाजार जाते हैं।

देवदत्तः मोहनः वा आपणं गच्छति।

नियम–4. यदि मध्यम पुरुष के साथ प्रथम पुरुष का कर्ता हो, तो क्रिया मध्यम पुरुष द्विवचनान्त होती है और यदि एक से अधिक कर्ता हों, तो क्रिया मध्यम पुरुष बहुवचनान्त होती है। यथा–

1. तुम और राम जाते हो। त्वं रामः च गच्छथः।

2. रितेश और तुम दोनों जाते हो। रितेशः युवां च गच्छथ।

नियम–5. इसी प्रकार यदि उत्तम पुरुष के कर्ता के साथ प्रथम पुरुष एवं मध्यम पुरुष के कर्ता हों तो क्रिया उत्तम पुरुष के वचनानुसार होगी। जैसे–

1. मैं और सोहन जाते हैं।	अहं सोहनश्च गच्छावः।
2. रमेश तुम और मैं जाते हैं।	रमेशः त्वम् अहं च गच्छामः।
3. मैं तुम और वे सब पढ़ते हैं।	अहं त्वं ते च पठामः।

नियम–6. यदि कई कर्ता 'वा' अथवा 'या' से जुड़े होते हैं, तो क्रिया अपने सबसे निकट कर्ता के पुरुष तथा वचन के अनुसार होती है। तथा–

1. गीता अथवा तुम जाते हो।	गीता त्वं वा गच्छसि।
2. तुम अथवा मोहिता जाते हो।	त्वं मोहिता वा गच्छति।
3. मैं अथवा तुम जाते हो।	अहं त्वं वा गच्छसि।

नियम–7. संस्कृत में 'आप' शब्द प्रथम पुरुष का कर्ता है– भवान् (आप) भवन्तौ (आप दोनों) भवन्तः (आप सब) प्रथम पुरुष पुंलिङ्ग के कर्ता हैं, जबकि भवती (आप) भवत्यौ (आप दोनों) भवत्यः (आप सब) प्रथम पुरुष स्त्रीलिङ्ग के कर्ता हैं। जैसे–

आप जाते हैं।	भवान् गच्छति।
आप जाती हैं।	भवती गच्छति।
आप सब जाते हैं।	भवन्तः गच्छन्ति।
आप सब जाती हैं।	भवत्यः गच्छन्ति।

नियम–8. जो सभी लिङ्गों, विभक्तियों एवं वचनों में समान होते हैं, उन्हें अव्यय कहते हैं। इनके शब्दरूप नहीं चलते हैं। अव्ययों के योग में 'इति' इत्यादि से प्रथमा विभक्ति होती है। 'कृष्णाः' इति, 'मिसाइल' इति, 'राडार' इति इत्यादि आधुनिक यदृच्छा शब्दों के साथ भी इति का प्रयोग करके व्यवहार किया जाता है।

यथा– रामः इति प्रसिद्धः।

प्रस्तुत उदाहरणों में 'इति' अव्यय के कारण प्रथमा विभक्ति का प्रयोग किया गया है।

आदर्श वाक्य–

1. अहं पठामि।	मैं पढ़ता हूँ/पढ़ती हूँ।
2. त्वं पठसि।	तुम पढ़ते हो/पढ़ती हो।
3. यूयं पठथ।	तुम सब पढ़ते हो।
4. त्वं सीता च गच्छथः।	तुम और सीता जाते हो।
5. युवां रामः कृष्णश्च गच्छथ।	तुम राम और कृष्ण जाते हो।

लङ्लकार (भूतकाल)

1. रामः अगच्छत्।	राम चला गया। (पुंलिङ्ग)
2. छात्रा अगच्छत्।	छात्रा गयी। (स्त्रीलिङ्ग)
3. पुष्पम् अपतत्।	फूल गिरा। (नपुंसकलिङ्ग)
4. सा अपश्यत्।	उसने देखा। (स्त्रीलिङ्ग)
5. त्वम् अगच्छः।	तुम गये।

विशेष– वर्तमान काल के प्रथम पुरुष की क्रिया में 'स्म' जोड़कर भूतकालिक क्रिया व्यक्त की जा सकती है। यह प्रायः 'था' शब्द को व्यक्त करता है। जैसे–

1. सः पठति स्म।	वह पढ़ रहा था।
2. सः हसति स्म।	वह हँस रहा था।

लृट्लकार (भविष्यत् काल)

1. सः पठिष्यति।	वह पढ़ेगा। (पुंलिङ्ग)
2. सा गमिष्यति।	वह जाएगी। (स्त्रीलिङ्ग)
3. फलं पतिष्यति।	फल गिरेगा। (नपुंसकलिङ्ग)

लोट्लकार (आज्ञार्थक)

1. रामः लिखतु।	राम लिखे।
2. बालिका पठतु।	बालिका पढ़े।
3. भवान् आगच्छत्।	आप आयें।
4. त्वं पठ।	तुम पढ़ो।
5. चिरंजीवी भव।	दीर्घायु हो।

विधिलिङ्लकार (चाहिए के अर्थ में)

1. बालकः पठेत्।	बालक को पढ़ना चाहिए।
2. बालिका पठेत्।	बालिका को पढ़ना चाहिए।
3. बालकाः पठेयुः।	बालकों को पढ़ना चाहिए।
4. कृष्णः तत्र पठेत्।	कृष्ण वहाँ पढ़े।
5. बालिका किं कुर्यात्?	बालिका क्या करे ?

अभ्यासकार्यम्

1. संस्कृतभाषया अनुवादं कुरुत–

1. विद्या विनय से शोभित होती है।
2. गाँव के चारों ओर वृक्ष हैं।
3. तीर्थराज प्रयाग एक प्रसिद्ध नगरी है।
4. संस्कृत कवियों में कालिदास श्रेष्ठ हैं।
5. हम सभी शाम को घर जाते हैं।
6. राम श्याम पर क्रोध करता है।
7. वह आँख से काना है।
8. देवदत्त स्वभाव से दयालु है।
9. नदी कोस भर टेढ़ी है।
10. छात्रों में राम कुशल है।
11. मुक्ति के लिए भक्त हरि को भजता है।
12. विद्यालय के चारों ओर वन है।
13. पेड़ से पत्ते गिरते हैं।
14. मोहन पैर से लंगड़ा है।
15. राम ने रावण को बाण से मारा।
16. देवदत्त को लड्डू अच्छे लगते हैं।
17. गाँव के दोनों ओर वृक्ष हैं।
18. पिता पुत्र पर क्रोध करता है।
19. राजाओं में राम श्रेष्ठ हैं।
20. ज्ञान के बिना मुक्ति नहीं मिलती।
21. घी के बिना भोजन अच्छा नहीं लगता।
22. मेरे साथ मेरा मित्र विद्यालय जाता है।
23. गुरु को नमस्कार है।
24. वह अध्ययन के लिए छात्रावास में निवास करता है।
25. गंगा नदी सभी नदियों में प्रसिद्ध और पवित्र मानी जाती है।

2. हिन्दीभाषया अनुवादं कुरुत–

1. सर्वेभ्यः देवेभ्यः नमः।
2. स्वस्ति प्रजाभ्यः।
3. सः शिरसा खल्वाटः अस्ति।
4. अध्ययनं विना ज्ञानं न लभ्यते।
5. गोपालः गां दुग्धं दोग्धि।
6. माधवः लेखन्या लिखति।
7. हिमालयात् गङ्गा निर्गच्छति।
8. मूर्खं धिक्।
9. रमा पुष्पवाटिकामवचिनोति पुष्पाणि।
10. अहं विप्राय गां ददामि।
11. सः भिक्षुकाय अन्नं ददाति।
12. अहं गुरुणा सह विद्यालयं गच्छामि।
13. न वित्तेन तर्पणीयो मनुष्यः।
14. प्रातःकाले स्नानं कुर्यात्।
15. अहं नृत्यन्तं मयूरम् अपश्यम्।
16. सावित्री एका श्रेष्ठा नारी आसीत्।
17. सः धनाय विदेशं गच्छति।
18. चषके चायं जलं वा पीयते।
19. अस्यां कक्षायां विंशतिः बालकाः सन्ति।
20. अति सर्वत्र वर्जयेत्।
21. न हि सत्यात् परो धर्मः।
22. अहिंसा परमो धर्मः।
23. तस्मिन् तडागे कमलानि विकसन्ति।
24. त्वं प्रकृत्या उदारः असि।
25. राज्ञः दशरथस्य चत्वारः पुत्राः आसन्।

■

2 कारक तथा विभक्ति

कारक की परिभाषा – क्रिया से सम्बन्ध रखने वाले को कारक कहते हैं–**''क्रियान्वयित्वं कारकत्वम्''**

दूसरे शब्दों में ''क्रिया के निर्वर्तक (जनक) को कारक कहते हैं–**''क्रियाजनकत्वं कारकत्वम्''** यथा–'वन से आकर पाण्डु के पुत्र अर्जुन ने धर्म की रक्षा के लिए कुरुक्षेत्र में कौरवों को बाण से मारा था।

इस उदाहरण में मुख्य क्रियापद 'मारना' है, शेष पदों का इसी पद से साक्षात् या परम्परया सम्बन्ध है। अतः ये सभी पद कारक कहे जायेंगे। इन सभी क्रियाओं को करने वाला अर्जुन कर्ता है। यहाँ कौरव कर्म कारक है। क्रिया की सिद्धि में सहायक बाण करण कारक है। धर्म की रक्षा के लिए कौरव मारे गये, अतः धर्मरक्षा सम्प्रदान कारक है। वन से– यह अपादान कारक है और कुरुक्षेत्र अधिकरण कारक है। यहाँ 'पाण्डु के' का सम्बन्ध मारना क्रिया से नहीं है, अपितु कर्ता अर्जुन से है, अतः सम्बन्ध को कारक नहीं माना जाता। इस प्रकार छह ही कारक हैं, जिनके नाम इस प्रकार हैं– कर्त्ता, कर्म, करण, सम्प्रदान, अपादान और अधिकरण। सम्बन्ध को कारक नहीं माना जाता है, क्योंकि इसमें क्रिया का अन्वय नहीं होता है।

कर्त्ता कर्म च करणं च सम्प्रदानं तथैव च।
अपादानमधिकरणं चेत्याहुः कारकाणि षट्।।

विभक्ति – संख्याकारकबोधयित्री विभक्तिः– संख्या और कारक का बोध कराने वाली विभक्ति कही जाती है। अर्थात् कारकों का अर्थ जिसके द्वारा अभिव्यक्त होता है, उसे विभक्ति कहते हैं। विभक्तियों की संख्या कुल सात है– प्रथमा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पञ्चमी, षष्ठी एवं सप्तमी।

विभक्तियों का प्रयोग

विभक्ति	कारक	चिह्न
प्रथमा	कर्ता	ने
द्वितीया	कर्म	को
तृतीया	करण	से, के द्वारा
चतुर्थी	सम्प्रदान	के लिए
पञ्चमी	अपादान	से (अलगाव में)
षष्ठी	सम्बन्ध	का, के, की, रा, रे, री, ना, ने, नी
सप्तमी	अधिकरण	में, पर
प्रथमा	सम्बोधन	हे, भो, अरे इत्यादि

विभिन्न सूत्रों के आधार पर कारकों एवं विभक्तियों का ज्ञान–

नियम–1. स्वतन्त्रः कर्ता – क्रिया की उत्पत्ति में जिसकी प्रधानता विवक्षित है, वह कर्ता है। अर्थात् जो कार्य को करने में स्वतन्त्र विवक्षित होता है, उसे कर्ता कहते हैं। 'धातूपात्तव्यापाराश्रयः कर्ता' कहा गया है और ''फलाश्रयः कर्म'' फलाश्रय को कर्म कहते हैं।

उदाहरण–'कृष्णः पुस्तकं पठति'– इस वाक्य में पढ़ने की क्रिया कृष्ण कर रहा है, अतः कृष्ण कर्ता हुआ, पुस्तक कर्म है, अतः कर्ता 'कृष्ण' में प्रथमा विभक्ति हुई और 'पुस्तक' कर्म में द्वितीया।

कर्ता की परिस्थिति के आधार पर तीन प्रकार के वाच्य संस्कृत में होते हैं।

(क) कर्तृवाच्य – रामः ग्रामं गच्छति, इसमें कर्ता प्रधान है, अतः कर्ता में प्रथमा हुई।

(ख)कर्मवाच्य – रामेण ग्रामः गम्यते, इसमें कर्म (ग्राम) की प्रधानता है, अतः कर्म में प्रथमा एवं कर्ता राम के अप्रधान होने से तृतीया हुई।

(ग) भाववाच्य – रामेण शय्यते– यहाँ भाव का प्राधान्य होने से कर्ता में तृतीया हुई।

नोट–सकर्मक धातुओं से कर्तृवाच्य एवं कर्मवाच्य बनाये जाते हैं, तथा अकर्मक धातुओं से कर्तृवाच्य एवं भाववाच्य बनाये जाते हैं।

''लः कर्मणि च भावे चाकर्मकेभ्यः'' – यही सूत्र कर्तृवाच्य एवं कर्मवाच्य में नियामक है।

नियम–2. 'प्रातिपदिकार्थलिङ्ग–परिमाण–वचनमात्रे प्रथमा'।

अर्थ – प्रातिपदिकार्थ मात्र में, लिङ्गमात्र की अधिकता में, परिमाण मात्र में एवं वचनमात्र (संख्यामात्र) अर्थ में प्रथमा विभक्ति होती है।

प्रातिपदिक – अर्थवान् शब्द प्रातिपदिक कहलाता है, विभक्ति लगने के पूर्व शब्द का मूल रूप प्रातिपदिक है। 'पदं पदं प्रति प्रतिपदम्, प्रतिपदे भवं प्रातिपदिकम्' प्रतिपद से 'ठक्' प्रत्यय करने पर प्रातिपदिक शब्द बनता है।

प्रातिपदिकार्थ – 'नियतोपस्थितिकः प्रातिपदिकार्थः'।

जिस प्रातिपदिक के उच्चारण करने पर जिस अर्थ की नियमतः प्रतीति हो वह प्रातिपदिकार्थ है। प्रातिपदिकार्थ के विषय में शास्त्रों में कई मत हैं।

प्रातिपदिकार्थ में प्रथमादि होने पर 'सु, औ, जस्' आदि विभक्तियाँ होकर पद बनते है, वही पद भाषा में प्रयोगयोग्य होते हैं। क्योंकि– 'अपदं न प्रयुञ्जीत' यह सिद्धान्त है।

उदाहरण– प्रातिपदिकार्थ में प्रथमा– उच्चैः, नीचैः, लिङ्ग रहित (अव्यय) और कृष्णः, श्रीः, ज्ञानम् निश्चितलिङ्ग वाले प्रातिपदिकार्थ के उदाहरण हैं।

लिङ्ग मात्र की अधिकता में प्रथमा– तटः, तटी, तटम्।

परिमाणमात्र की अधिकता में– द्रोणो व्रीहिः, (द्रोणरूपी परिमाण से मापा हुआ धान्य)।

वचनमात्र में प्रथमा– एकः, द्वौ, बहवः।

कर्तृवाच्य में कर्ता अर्थ में प्रथमा– रामः हसति।

कर्मवाच्य में कर्म में प्रथमा विभक्ति होती है, यथा– 'रामेण पुस्तकं पठ्यते'– यहाँ पुस्तक में प्रथमा विभक्ति है, क्योंकि पुस्तक कर्म है।

सम्बोधन में प्रथमा– हे राम!, हे कृष्ण!, हे राघव! इत्यादि।

द्वितीया विभक्ति

नियम 1. कर्तुरीप्सिततमं कर्म – कर्ता की क्रिया के द्वारा ईप्सिततम (अत्यधिक चाहे गये पदार्थ) की कर्मसंज्ञा होती है। अथात् कर्ता अपनी क्रिया के द्वारा जिसे सबसे अधिक चाहता है, उसकी कर्मसंज्ञा होती है।

स्पष्टीकरण – कृष्णः लेखन्या सुलेखं लिखति। इस वाक्य में (कृष्ण) कर्ता अपनी क्रिया (लिखना) के लिए 'सुलेख' को चाहता है, अतः सुलेख कर्म है। सुलेख लिखने में सहायक लेखनी है, अतः 'लेखनी' करण है।

नियम– 2. कर्मणि द्वितीया – जिसकी कर्म संज्ञा होती है, उसमें द्वितीया विभक्ति होती है। यह सूत्र अनुक्त कर्म में द्वितीया का विधान करता है।

उदाहरण– रामः पुस्तकं पठति।	राम पुस्तक पढ़ता है।
कृष्णः महाविद्यालयं गच्छति।	कृष्ण महाविद्यालय जाता है।
अहं रामायणं पठामि।	मैं रामायण पढ़ता हूँ।
त्वं पत्रं लिखसि।	तुम पत्र लिखते हो।
अहं समाचारपत्रं पठामि।	मैं समाचार पत्र पढ़ता हूँ।
ते गीतां पठन्ति।	वे गीता पढ़ते हैं।
सः लक्ष्मणपुरं गच्छति।	वह लखनऊ (लक्ष्मणपुर) जाता है।

नोट– इन सभी वाक्यों में जो जो कर्म हैं, 'कर्तुरीप्सिततमं कर्म' से उनकी कर्मसंज्ञा होती है, कर्म संज्ञा होने के बाद 'कर्मणि द्वितीया' से द्वितीया विभक्ति सभी में होती है।

नियम–3. अकथितं च – अपादानादि विशेष कारकों से अविवक्षित (अकथित) कारक की कर्मसंज्ञा होती है।

स्पष्टीकरण – जब कर्ता, करण, सम्प्रदान, अपादान, अधिकरणादि विशेष कारकों की विवक्षा (बोलने की इच्छा) न हो। अर्थात् सम्बन्ध सामान्य के रूप में कहना हो तो, इनकी कर्म संज्ञा हो जाती है।

अकथित कर्म में – दुह्-याच् आदि 16 धातुएँ होती हैं, जो द्विकर्मक कहलाती हैं–

इन धातुओं के योग में अपादानादि कारकों की भी कर्म संज्ञा हो जाती है। यथा– 'रामः गां पयः दोग्धि' इस उदाहरण में 'रामः गोः पयः दोग्धि' इस वाक्य में 'गो' में पञ्चमी अर्थात् अपादान कारक

की अविवक्षा 'दुह्' धातु के योग में होने पर 'अकथितं च' से कर्म संज्ञा करने पर 'कर्मणि द्वितीया' से द्वितीया करने पर 'रामः गां पयः दोग्धि' बन जाता है अन्य उदाहरणों का भी ऐसे ही विश्लेषण करें–

धातु	प्रयोग	हिन्दी अर्थ
दुह् (दुहना)	गां पयः दोग्धि।	गाय से दूध दुहता है।
याच् (माँगना)	वामनः बलिं वसुधां याचते।	वामन बलि से पृथ्वी माँगते हैं।
पच् (पकाना)	पाचकः तण्डुलान् ओदनं पचति।	पाचक चावलों से भात पकाता है।
दण्ड् (दण्ड देना)	न्यायाधीशः चौरं शतं दण्डयति।	न्यायाधीश चोर को सौ रुपये दण्ड देता है।
रुध् (रोकना)	गोपालः व्रजं गाम् अवरुणद्धि।	गोपाल गाय को बाड़े में रोकता है।
प्रच्छ् (पूँछना)	बालकः क्रीडकं प्रश्नं पृच्छति।	बालक खिलाड़ी से प्रश्न पूछता है।
चि (चुनना)	मोहनः वृक्षं फलम् अवचिनोति।	मोहन वृक्ष से फल चुनता है।
ब्रू (बोलना-कहना)	वाल्मीकिः भरद्वाजं धर्मं ब्रूते।	वाल्मीकि भरद्वाज को धर्म बताते हैं।
शास् (उपदेश करना)	कपिलः देवहूतिं धर्मं शास्ति।	कपिल देवहूति को धर्म का उपदेश देते हैं।
जि (जीतना)	मोहनः देवदत्तं शतं जयति।	मोहन देवदत्त से सौ रुपये जीतता है।
मथ् (मथना)	हरिः क्षीरनिधिं सुधां मथ्नाति।	हरि समुद्र से सुधा को मथते हैं।
मुष् (चोरी करना)	बालकः रामं शतं मुष्णाति।	बालक राम से सौ रुपये चुराता है।
नी (ले जाना)	मोहनः अश्वं ग्रामं नयति।	मोहन घोड़े को गाँव ले जाता है।
हृ (हरना)	मोहितः बालं ग्रामं हरति।	मोहित बालक को गाँव ले जाता है।
कृष् (खीचना, ले जाना)	आदर्शः वृषभं नगरं कर्षति।	आदर्श वृषभ को नगर ले जाता है।
वह् (ले जाना)	रामः अजां आपणं वहति।	राम बकरी को बाजार ले जाता है।

नोट–'अकथितं च' इस सूत्र के अनुसार जो कर्मसंज्ञा होती है, वह अर्थमूलक है, अतः दुहादिकों के अर्थ में पठित अन्य धातुओं के योग में भी कर्मसंज्ञा होती है।

जैसे–वामनः बलिं वसुधां भिक्षते। सः माणवकं धर्मं भाषते अभिधत्ते वा। इत्यादि उदाहरण बना सकते हैं।

नियम–4. अधिशीङ्स्थासां कर्म – 'अधि' उपसर्ग पूर्व में हो ऐसी शीङ्, स्था, एवम् आस्, धातुओं के आधार की कर्म संज्ञा होती है।

विष्णुः क्षीरसागरम् अधिशेते।	विष्णु क्षीरसागर में सोते हैं।
शिवः कैलाशम् अधितिष्ठति।	शिव कैलाश पर बैठते हैं।
हरिः वैकुण्ठम् अध्यास्ते।	हरि वैकुण्ठ में रहते हैं।
बालकः आसन्दम् अधितिष्ठति।	बालक कुर्सी पर बैठता है।
वानरः वृक्षम् अध्यास्ते।	वानर वृक्ष पर बैठता है।

नियम–5. अभितः-परितः-समया-निकषा-हा-प्रति-योगेऽपि–

अभितः, परितः, समया, निकषा, हा, एवं प्रति के योग में द्वितीया विभक्ति होती है।

नगरम् अभितः वनम् अस्ति।	नगर के दोनों ओर वन हैं।
दुर्गं परितः परिखा अस्ति।	दुर्ग (किले) के चारो ओर खाईं है।
कर्णपुरं समया गंगा प्रवहति।	कानपुर के पास गंगा बहती है।
महाविद्यालयं निकषा यमुना अस्ति।	महाविद्यालय के पास यमुना नदी है।
हा रामाभक्तम्।	जो राम का भक्त नहीं, उसे धिक्कार है।
कृष्णः रामं प्रति अपश्यत्।	कृष्ण ने राम की ओर देखा।
निर्धनं प्रति दयां कुरु।	निर्धन के प्रति दया करो।
ग्रामम् उभयतः मन्दिराणि सन्ति।	गाँव के दोनों ओर मन्दिर हैं।

नियम–6. कालाध्वनोरत्यन्तसंयोगे – काल (समयवाचक), अध्व (मार्ग) वाची, शब्दों में अत्यन्त संयोग (निरन्तरता) होने पर द्वितीया विभक्ति होती है।

क्रोशं तडागः वर्तते।	कोस भर तालाब है।
रामः वर्षम् अधीते।	राम वर्ष भर पढ़ता है।
भक्तः भागवतं सप्ताहं पठति।	भक्त भागवत को सप्ताह भर पढ़ता है।
क्रोशं कुटिलो मार्गः।	कोस तक मार्ग टेढ़ा है।
कोशत्रयं नदी अस्ति।	तीन कोस तक नदी है।

तृतीया विभक्ति

नियम 1. साधकतमं करणम् – क्रियासिद्धि में जो सबसे अधिक सहायक होता है, उसे करण कहते हैं। यथा– रामः उपनेत्रेण पश्यति। यहाँ देखने में सबसे अधिक सहायक है 'उपनेत्र' अतः उपनेत्र करण है।

तृतीया विधायक सूत्र– कर्तृकरणयोस्तृतीया – अनुक्त कर्ता एवं करण में तृतीया विभक्ति होती है।

उदाहरण–

रामः कन्दुकेन क्रीडति।	राम गेंद से खेलता है।
सीता बसयानेन गच्छति।	सीता बस से जाती है।
गोपालः दण्डेन ताडयति।	गोपाल डण्डे से मारता है।
सः लेखन्या लिखति।	वह लेखनी से लिखता है।
सा छुरिकया शाकं लुनाति।	वह चाकू से सब्जी काटती है।
देवदत्तः वायुयानेन गच्छति।	देवदत्त वायुयान से जाता है।

नियम 3. सहयुक्तेऽप्रधाने – सह के अर्थ से युक्त अप्रधान में तृतीया विभक्ति होती है। साकम्, सार्धम्, समम्, के योग में भी तृतीया होती है।

यथा–	पिता पुत्रेण सह गच्छति।	पिता पुत्र के साथ जाता है।
	कृष्णो राधया सह तिष्ठति।	कृष्ण राधा के साथ बैठते हैं।
	युधिष्ठिरेण सह वनेचरः निवसति।	वनेचर युधिष्ठिर के साथ रहता है।
	मया सह छात्रः क्रीडति।	मेरे साथ छात्र खेलता है।
	मोहनेन साकं राहुलः पठति।	मोहन के साथ राहुल पढ़ता है।
	अहं पित्रा सार्धं भ्रमामि।	मैं पिता के साथ घूमता हूँ।
	त्वया समं चलचित्रं पश्यामि।	तुम्हारे साथ चलचित्र देखता हूँ।

नियम 4. पृथग्-विना-नानाभिस्तृतीयाऽन्यतरस्याम् – पृथक्-विना-नाना शब्दों के योग में तृतीया विभक्ति का प्रयोग होता है, विकल्प से। जब इन शब्दों के योग में तृतीया न हो तो द्वितीया एवं पञ्चमी भी हो जाती है।

यथा–	वायुना विना जीवनं न संभवति।	वायु के बिना जीवन सम्भव नहीं है।
	अर्थः शब्देन पृथक् नास्ति।	अर्थ शब्द से अलग नहीं है।
	रामेण नाना सुखं नास्ति।	राम के बिना सुख नहीं है।

इन सभी उदाहरणों में द्वितीया एवं पञ्चमी विभक्तियाँ भी कर सकते हैं।

नियम 5. येनाङ्गविकारः – जिस अङ्ग के विकारयुक्त होने से अङ्गी (व्यक्ति) का विकार दिखाई पड़े, उस अङ्ग में तृतीया होती है।

यथा–	अक्ष्णा काणः।	आँख से काना है।
	सतीशस्य भ्राता शिरसा खल्वाटः।	सतीश का भाई सिर से गंजा है।
	विदूषकः कर्णाभ्यां बधिरः।	विदूषक कानों से बहरा है।
	बालकः पादेन खञ्जः।	बालक पैर से लँगड़ा है।
	सा पृष्ठेन कुब्जा।	वह पीठ से कुबड़ी है।

कारक एवं विभक्ति पर आधारित उदाहरण

वाक्य	पद	कारक/विभक्ति	सूत्र
सोमदत्तः धेनुं दुग्धं दोग्धि।	धेनुं	कर्मसंज्ञा	अकथितं च।
गुडेन सक्तून् खादति।	सक्तून्	द्वितीया	कर्तुरीप्सिततमं कर्म।
संवत्सरम् अधीते।	संवत्सरम्	कर्मसंज्ञा	कालाध्वनोरत्यन्तसंयोगे।
कैलाशमधिशेते शिवः।	कैलाशम्	कर्मसंज्ञा	अधिशीङ्स्थासां कर्म।
वृक्षं परितः पशवः सन्ति।	वृक्षम्	द्वितीया	अभितः परितः समया...।
मोहनः पादेन खञ्जः।	पादेन	तृतीया	येनाङ्गविकारः।
भगिनी तण्डुलान् ओदनं पचति।	तण्डुलान्	कर्मसंज्ञा	अकथितं च।
पित्रा सह पुत्रः आगतः।	पित्रा	तृतीया	सहयुक्तेऽप्रधाने।
भूपतिः प्रासादम् अधितिष्ठति।	प्रासादम्	कर्मसंज्ञा	अधिशीङ्स्थासां कर्म।
रामेण समं सीता प्रयाति।	रामेण	तृतीया	सहार्थे (सहयुक्तेऽप्रधाने)।
छात्रः विद्यालयं गच्छति।	विद्यालयम्	कर्मसंज्ञा	कतुरीप्सिततमं कर्म।
सेवकः कर्णाभ्यां बधिरः।	कर्णाभ्याम्	तृतीया	येनाङ्गविकारः।
गृहं परितः जलम् अस्ति।	गृहम्	द्वितीया	अभितः-परितः-समया...।
गुरुं याचते ज्ञानम्।	गुरुम्	कर्मसंज्ञा	अकथितं च।
बालः शय्यामधिशेते।	शय्याम्	कर्मसंज्ञा	अधिशीङ्स्थासां कर्म।
मन्दिरम् उभयतः वृक्षाः सन्ति।	मन्दिरम्	द्वितीया	उभसर्वतसोः...।
नगरम् अजाम् अनयत्।	अजाम्	कर्मसंज्ञा	कर्तुरीप्सिततमं कर्म।
विष्णुः वैकुण्ठम् अधितिष्ठति।	वैकुण्ठम्	कर्मसंज्ञा	अधिशीङ्स्थासां कर्म।
पद्भ्यां पङ्गुः रमेशः।	पद्भ्याम्	तृतीया	येनाङ्गविकारः।
मोहनः आसनम् अध्यास्ते।	आसनम्	कर्मसंज्ञा	अधिशीङ्स्थासां कर्म।
प्रयागं प्रति जनानां श्रद्धा अस्ति।	प्रयागम्	द्वितीया	अभितःपरितः...।
सः हरिं जयति।	हरिम्	द्वितीया	कर्मणि द्वितीया।
सः कन्दुकेन क्रीडति।	कन्दुकेन	करण संज्ञा	साधकतमं करणम्।
लुब्धकः वृक्षम् आरोहति।	वृक्षम्	द्वितीया	कर्तुरीप्सिततमं कर्म।
कृष्णं परितः गावः सन्ति।	कृष्णम्	द्वितीया	अभितः परितः.......।

बालकः गुरुं क्षमां याचते।	गुरुम्	कर्मसंज्ञा	अकथितं च।
रोहनः नेत्रेण काणः।	नेत्रेण	तृतीया	येनाङ्गविकारः।
रामः बाणेन बालिनं हन्ति।	बाणेन	तृतीया	साधकतमं करणम्।
बालः बसयानेन गच्छति।	बसयानेन	तृतीया	साधकतमं करणम्।
दण्डेन घटः क्रियते।	दण्डेन	तृतीया	हेतौ।
कृष्णम् अभितः गोपालाः सन्ति।	कृष्णम्	द्वितीया	अभितः परितः ...।
अक्ष्णा काणः।	अक्ष्णा	तृतीया	येनाङ्गविकारः।
भ्रात्रा सह भगिनी पठति।	भ्रात्रा	तृतीया	सहयुक्तेऽप्रधाने।
क्षीरनिधिं सुधां मथ्नाति।	क्षीरनिधिम्	द्वितीया	अकथितं च।
ग्रामं परितः वृक्षाः शोभन्ते।	ग्रामम्	द्वितीया	अभितः परितः ...।
नगरम् उभयतः राजमार्गोऽस्ति।	नगरम्	द्वितीया	उभसर्वतसोः ...।
भवनमध्यास्ते।	भवनम्	द्वितीया	अधिशीङ्स्थासां कर्म।
उपाध्यायं प्रश्नं पृच्छति।	उपाध्यायम्	द्वितीया	अकथितं च।
नीरजः शय्याम् अधिशेते।	शय्याम्	द्वितीया	अधिशीङ्स्थासां कर्म।
छात्रः द्विचक्रिकया गच्छति।	द्विचक्रिकया	तृतीया	साधकतमं करणम्।
सिंहं परितः पशवः सन्ति।	सिंहम्	द्वितीया	अभितः परितः ...।
मात्रा सह पुत्री तिष्ठति।	मात्रा	तृतीया	सहयुक्तेऽप्रधाने।
द्रोणो व्रीहिः।	द्रोणः	प्रथमा	प्रातिपदिकार्थलिङ्गपरिमाण–वचनमात्रे प्रथमा।
तटः, तटी, तटम्।	सभी में	प्रथमा	लिङ्गमात्राधिक्ये।
हे राम ! मां पाहि।	राम!	प्रथमा	सम्बोधने च।
सः मातरं प्रश्नं पृच्छति।	मातरम्	द्वितीया	अकथितं च।

नोट– प्रस्तुत अभ्यास में उपपद विभक्तियों में साक्षात् द्वितीया आदि विभक्तियाँ होंगी तथा कारक विभक्तियों में जो–जो संज्ञायें अर्थात् कर्म आदि होने के बाद ही द्वितीया, तृतीया आदि का विधान समझें। ऐसा अध्यापकों एवं छात्रों से आग्रह है।

बहुविकल्पीय प्रश्नाः

1. कारकत्वं किम्?
   (क) क्रियाजनकत्वम् (ख) कर्ताजनकत्वम् (ग) कर्मजनकत्वम् (घ) विशेषणजनकत्वम्
2. कति कारकाणि सन्ति?
   (क) एकः (ख) त्रयः (ग) षट् (घ) सप्त
3. द्वितीयाविभक्तेः कारकं किम्?
   (क) कर्ताकारकम् (ख) कर्मकारकम् (ग) करणकारकम् (घ) सम्प्रदानकारकम्
4. परिमाणमात्रस्य उदाहरणम् अस्ति?
   (क) द्रोणो व्रीहिः (ख) उच्चैः नीचैः (ग) कृष्णः (घ) एकः, द्वौ
5. उक्तकर्मणि का विभक्ति?
   (क) प्रथमा (ख) द्वितीया (ग) तृतीया (घ) चतुर्थी
6. ''रामः गां पयः दोग्धि'' अत्र अकथितं किमस्ति?
   (क) रामः (ख) पयः (ग) गाम् (घ) दोग्धि
7. ''बालकः रामं शतं मुष्णाति'' अत्र रामपक्षस्य कर्मसंज्ञा केन सूत्रेण भवति?
   (क) अकथितं च (ख) कर्मप्रवचनीयाः (ग) कर्तुरीप्सिततमम् (घ) सम्बोधने च
8. 'बालकः पादेन खञ्जः'' अत्र केन सूत्रेण तृतीया भवति?
   (क) लक्षणे (ख) येनाङ्गविकारः (ग) सहयुक्तेऽप्रधानम् (घ) हेतौ
9. 'पिता पुत्रेण सह गच्छति' अत्र पुत्रपदे केन सूत्रेण तृतीया भवति?
   (क) सहयुक्तेऽप्रधाने (ख) हेतौ (ग) अकथितं च (घ) येनाङ्गविकारः
10. तृतीयाविभक्तेः कारकं किम्?
    (क) कर्ताकारकम् (ख) करणकारकम् (ग) अपादानम् (घ) अधिकरणम्
11. प्रातिपदिकार्थमात्रे का विभक्तिः भवति?
    (क) प्रथमा विभक्तिः (ख) द्वितीया विभक्तिः (ग) तृतीया विभक्तिः (घ) चतुर्थी विभक्तिः

■

3 समास

'समसनं समासः' अर्थात् अनेक पदों का एकीभूत होना समास है। 'समास' शब्द का शब्दिक अर्थ है संक्षेप। जब दो या दो से अधिक पद आपस में मिलकर एक नये पद का निर्माण करते हैं, तो वह समास होता है। समास होने के बाद विभक्तियों का लोप होकर एक नया पद बनता है।

पदानां संगतार्थानां मिलितानां परस्परम्।
योऽयमेकपदीभावः समासः स प्रकीर्तितः।।

यथा– कृष्णस्य सुतः = कृष्णसुतः
पीतम् अम्बरं यस्य सः = पीताम्बरः

बड़े भागों को छोटा करना ही समास का मुख्य लक्ष्य है।

विग्रह – ''वृत्त्यर्थावबोधकं वाक्यं विग्रहः'' वृत्ति के अर्थ का ज्ञान कराने वाले वाक्य को विग्रह कहा जाता है।

विग्रह वाक्य के द्वारा समास (वृत्ति) में आये हुए पदों को अलग-अलग करके अर्थ प्रकट किया जाता है।

जैसे– कृष्णसुतः, इस समस्त पद का विग्रह है— कृष्णस्य सुतः।

पीताम्बरः– इस समस्त पद का विग्रह है 'पीतम् अम्बरं यस्य सः'।

विग्रह भी दो प्रकार का होता है– लौकिक एवम् अलौकिक।

लौकिक विग्रह – जो लोक में प्रयोग के योग्य होता है। जैसे– 'राजपुरुषः' इसका विग्रह–राज्ञः पुरुषः, 'कृष्णसुतः' इसका कृष्णस्य सुतः।

अलौकिक विग्रह – लोक में प्रयोग के अयोग्य मात्र शास्त्रीय प्रक्रिया के निर्वाहक वाक्य को अलौकिक विग्रह कहते हैं। जैसे– 'राजपुरुषः' का अलौकिक विग्रह– राजन् ङस् पुरुष सु, 'कृष्णसुतः' का अलौकिक विग्रह कृष्ण ङस् सुत सु।

समास के प्रकार–

''समासः पञ्चधा'' समास पाँच प्रकार का होता है–

1. केवलसमास
2. अव्ययीभाव समास
3. तत्पुरुष समास
4. बहुव्रीहि समास
5. द्वन्द्व समास।

सामान्य रूप से समास के छह प्रकार स्वीकृत हैं– ये प्रकार सरलता को ध्यान में रखकर बताये जाते हैं, क्योंकि तत्पुरुष का भेद 'कर्मधारय' एवं कर्मधारय का भेद 'द्विगु' होता है। अतः तत्पुरुष समास में ही पूर्वोक्त दोनों का अन्तर्भाव हो जाता है।

1. अव्ययीभाव
2. तत्पुरुष
3. कर्मधारय
4. द्विगु
5. बहुव्रीहि
6. द्वन्द्व

पूर्व पदार्थ प्रधान अव्ययीभाव होता है, यह नपुंसकलिङ्ग में ही होता है। यथा– इतिहरि, उपकृष्णम्।

1. तत्पुरुष समास

'प्रायेणोत्तरपदार्थप्रधानः तत्पुरुषः'

जिस समास में उत्तर पद के अर्थ का प्रायः प्राधान्य होता है, उसे तत्पुरुष समास कहते हैं। यथा– कृष्णं श्रितः = कृष्णश्रितः। कृष्ण की शरण प्राप्त (कृष्ण का भक्त)। यहाँ श्रितपदार्थ प्रधान होने से तत्पुरुष समास है।

तत्पुरुष समास के भेद

तत्पुरुष समास के मुख्यतः दो भेद होते हैं–

1. समानाधिकरण (कर्मधारय)।
2. व्यधिकरण।

व्यधिकरण तत्पुरुष – जहाँ समास के पदों में भिन्न-भिन्न विभक्तियाँ होती हैं, उसे व्यधिकरण तत्पुरुष कहते हैं। ये छह प्रकार के होते हैं।

जैसे– ''हरिणा त्रातः'' का समस्त पद ''हरित्रातः'' बनता है, यहाँ पर हरिणा में तृतीया विभक्ति त्रातः में प्रथमा विभक्ति, दोनों में अलग-अलग विभक्तियाँ होने के कारण व्यधिकरण तत्पुरुष हुआ।

व्यधिकरण तत्पुरुष के छह भेद निम्नलिखित हैं–

1. द्वितीया तत्पुरुष
2. तृतीया तत्पुरुष
3. चतुर्थी तत्पुरुष
4. पञ्चमी तत्पुरुष
5. षष्ठी तत्पुरुष
6. सप्तमी तत्पुरुष

तात्पर्य यह है कि तत्पुरुष समास में विग्रह वाक्य में प्रथम पद जिस विभक्ति में होगा, वह उसी विभक्ति से सम्बन्धित प्रभेद होगा जैसे–

द्वितीया तत्पुरुष

सामासिक पद	समास विग्रह	हिन्दी अर्थ
कृष्णश्रितः	कृष्णं श्रितः	कृष्ण पर आश्रित
शरणागतः	शरणम् आगतः	शरण में आया हुआ
दुःखातीतः	दुःखम् अतीतः	दुःख को पार किया हुआ
सुखापन्नः	सुखम् आपन्नः	सुख को प्राप्त
शिवाश्रितः	शिवम् आश्रितः	शिव के आश्रित
दुःखप्राप्तः	दुःखं प्राप्तः	दुःख को प्राप्त हुआ
रथारूढः	रथम् आरूढः	रथ पर सवार
स्वर्गगतः	स्वर्गं गतः	स्वर्ग गया हुआ

तृतीया तत्पुरुष

सामासिक पद	समास विग्रह	हिन्दी अर्थ
गुरुत्रातः	गुरुणा त्रातः	गुरु द्वारा रक्षित
नखभिन्नः	नखैः भिन्नः	नखों के द्वारा विदारित
धान्यार्थः	धान्येन अर्थः	धान्य से धन
नासिकाहीनः	नासिकया हीनः	नाक से रहित
पितृसदृशः	पित्रा सदृशः	पिता के समान
तैलपक्वम्	तैलेन पक्वम्	तैल में पकाया गया
वर्षपूर्वः	वर्षेण पूर्वः	साल भर पहले
चक्रहतः	चक्रेण हतः	चक्र से मारा गया

चतुर्थी तत्पुरुष

सामासिक पद	समास विग्रह	हिन्दी अर्थ
यूपदारु	यूपाय दारु	यूप के लिए लकड़ी
घटमृत्तिका	घटाय मृत्तिका	घड़े के लिए मिट्टी
पटतन्तवः	पटाय तन्तवः	वस्त्र के लिए (धागे)
भोजनार्थम्	भोजनाय इदम्	भोजन के लिए
ज्ञानार्थम्	ज्ञानाय इदम्	ज्ञान के लिए
भूतबलिः	भूतेभ्यः बलिः	प्राणियों के लिए बलि
छात्रप्रियः	छात्रेभ्यः प्रियः	छात्रों के लिए प्रिय

गुरुप्रियः	गुरवे प्रियः	गुरु के लिए प्रिय
गोहितम्	गोभ्यः हितम्	गायों के लिए हितकर
मोक्षकामना	मोक्षाय कामना	मोक्ष के लिए कामना

पञ्चमी तत्पुरुष

सामासिक पद	**समास विग्रह**	**हिन्दी अर्थ**
दुष्टभयम्	दुष्टात् भयम्	दुष्ट से डर
चोरभयम्	चोरात् भयम्	चोर से डर
विद्यालयमुक्तः	विद्यालयात् मुक्तः	विद्यालय से मुक्त
दायित्वमुक्तः	दायित्वात् मुक्तः	दायित्व से मुक्त
स्वर्गपतितः	स्वर्गात् पतितः	स्वर्ग से गिरा हुआ
सर्पभीतः	सर्पात् भीतः	सर्प से डरा हुआ
वाहनपतितः	वाहनात् पतितः	वाहन से गिरा हुआ
आचारपतितः	आचारात् पतितः	आचरण से पतित हुआ
चरित्रभ्रष्टः	चरित्रात् भ्रष्टः	चरित्र से भ्रष्ट हुआ
मार्गभ्रष्टः	मार्गात् भ्रष्टः	मार्ग से भ्रष्ट हुआ

षष्ठी तत्पुरुष

सामासिक पद	**समास विग्रह**	**हिन्दी अर्थ**
सुरपतिः	सुराणां पतिः	देवताओं का स्वामी
रमापतिः	रमायाः पतिः	लक्ष्मी के पति
विश्वमाता	विश्वस्य माता	संसार की माता
राष्ट्रपिता	राष्ट्रस्य पिता	देश के पिता
राष्ट्रपतिः	राष्ट्रस्य पतिः	देश के स्वामी (राष्ट्रपति)
राजपुत्री	राज्ञः पुत्री	राजा की पुत्री
राजकुमारः	राज्ञः कुमारः	राजा का पुत्र
गृहपतिः	गृहस्य पतिः	घर का स्वामी
सज्जनालयः	सज्जनस्य आलयः	सत्पुरुष का घर
रघुनन्दनः	रघोः नन्दनः	रघु के पुत्र
शिवसखः	शिवस्य सखा	शिव के मित्र
प्रजापतिः	प्रजायाः पतिः	प्रजा के स्वामी

वसुदेवसुतः	वसुदेवस्य सुतः	वसुदेव के पुत्र
शिवसेवकः	शिवस्य सेवकः	शिव का सेवक
राष्ट्रसेवकः	राष्ट्रस्य सेवकः	राष्ट्र का सेवक
देशरक्षकः	देशस्य रक्षकः	देश का रक्षक
समाजसुधारकः	समाजस्य सुधारकः	समाज का सुधारक

सप्तमी तत्पुरुष

समस्त पद	**समास विग्रह**	**हिन्दी अर्थ**
व्यवहारकुशलः	व्यवहारे कुशलः	व्यवहार में कुशल
सङ्ग्रामकुशलः	सङ्ग्रामे कुशलः	युद्ध में कुशल
समाजोत्पन्नः	समाजे उत्पन्नः	समाज में उत्पन्न
गुरुश्रेष्ठः	गुरुषु श्रेष्ठः	गुरुओं में श्रेष्ठ
विद्यानिपुणः	विद्यायां निपुणः	विद्या में निपुण
अक्षशौण्डः	अक्षेषु शौण्डः	पासा खेलने में चतुर
कलाप्रवीणः	कलासु प्रवीणः	कलाओं में चतुर

समानाधिकरण तत्पुरुष – जहाँ विग्रह वाक्य में दोनों विभक्तियाँ समान हों, उसे समानाधिकरण कहते हैं। समान विभक्ति वाले पदों से युक्त विग्रह वाक्य को कर्मधारय कहा जाता है। **'तत्पुरुषसमानाधिकरणः कर्मधारयः'** प्रथमा समानाधिकरण में बाहुलकात् कृष्णसर्पः, नित्य समास है, कृष्णः च असौ सर्पः यह विग्रह नहीं होगा क्योंकि सर्प विशेष्य नहीं प्रत्युत कृष्णत्व जाति से विशिष्ट सर्प है। अतः समानाधिकरण तत्पुरुष नहीं होता, जहाँ समानाधिकरण होगा, वह कर्मधारय समास कहलायेगा, तत्पुरुष का भेद ही कर्मधारय होता है।

तत्पुरुष समास के उपभेद

(क) नञ् तत्पुरुष समास – जहाँ समास में प्रथम पद नञ् (अ) होता है तथा उत्तर पद संज्ञा सर्वनाम विशेषणादि हो, वह नञ् तत्पुरुष कहलाता है।

अनश्वः	न अश्वः	जो अश्व न हो
अनेकधा	न एकधा	अनेक प्रकार का
अनिच्छा	न इच्छा	इच्छा का अभाव
अब्राह्मणः	न ब्राह्मणः	ब्राह्मणभिन्न
अगजः	न गजः	जो हाथी न हो
असत्यम्	न सत्यम्	जो सत्य न हो

अकृतम्	न कृतम्	जो न किया गया हो
अग्रामः	न ग्रामः	जो गाँव न हो
असामाजिकः	न सामाजिकः	जो सामाजिक न हो
अयोग्यः	न योग्यः	जो योग्य न हो
अप्रियम्	न प्रियम्	जो प्रिय नहीं है
अचलः	न चलः	जो स्थिर है

(ख) प्रादि तत्पुरुष समास – 'कुगतिप्रादयः'– कु (अव्यय) का गतिसंज्ञक या प्र आदियों के साथ समास होता है, तो उसे प्रादि तत्पुरुष समास कहते हैं। इसे गतिसंज्ञक पदों के साथ समास होने से गति तत्पुरुष भी कहते हैं।

जैसे–

कुपुरुषः	कुत्सितः पुरुषः
कुग्रामः	कुत्सितः ग्रामः
कुदेशः	कुत्सितः देशः
उपाचार्यः	उपगतः आचार्यः
प्राचार्यः	प्रगतः आचार्यः

(ग) उपपद तत्पुरुष समास – जब तत्पुरुष में प्रथम पद (सुबन्त) हो उत्तर पद कृदन्त प्रत्यय से निष्पन्न होता है, उसे उपपद समास कहते हैं।

जैसे–

समस्त पद	**समास विग्रह**	**अर्थ**
कुम्भकारः	कुम्भं करोति	जो घड़े को बनाता है
स्वर्णकारः	स्वर्णं करोति	जो सोने के गहने बनाता है
कृतज्ञः	कृतं जानाति	किये हुए को मानता है
राजनीतिज्ञः	राजनीतिं जानाति	जो राजनीति को जानता है
गोसन्दायः	गां सन्ददाति	जो गायों को ठीक से देता है
कम्बलदः	कम्बलं ददाति	कम्बल देने वाला
गृहस्थः	गृहे तिष्ठति	जो घर में रहता है (गृहिणी के साथ)

(घ) अलुक् तत्पुरुष – तत्पुरुष में पूर्व पद में विद्यमान विभक्ति का लोप समास करने के बाद भी न हो, तो वह अलुक् तत्पुरुष होता है।

आत्मनेपदम्	आत्मने पदम्	अपने लिए पद
परस्मैपदम्	परस्मै पदम्	दूसरे के लिए पद
कालेजः	काले जातः	समय पर उत्पन्न हुआ
युधिष्ठिरः	युधि स्थिरः	युद्ध में स्थिर

कर्णेजपः	कर्णे जपति	चुगलखोर
खेचरः	खे चरति	आकाश में विचरण करने वाला
अन्तिकादागतः	अन्तिकात् आगतः	पास से आया हुआ
सरसिजम्	सरसि जातम्	तालाब में उत्पन्न
पश्यतोहरः	पश्यतः हरति	डाकू, सोनार
अन्तेवासी	अन्ते वसति	विद्यार्थी

2. कर्मधारय समास – 'विशेषणं विशेष्येण बहुलम्'

विशेष्य–विशेषण भाव से एक अर्थ का प्रतिपादन करने वाले समास को कर्मधारय कहते हैं। **'तत्पुरुषसमानाधिकरणः कर्मधारयः'** यह तत्पुरुष समास का ही भेद होता है तथा समानविभक्तिक होता है। इसके भी चार भेद हैं–

(क) विशेषण–पूर्वपद कर्मधारय – जहाँ पर प्रथम पद विशेषण तथा उत्तर पद विशेष्य होता है, उसे विशेषण पूर्वपद कर्मधारय कहते हैं।

उदाहरण–

समस्त पद	**समास विग्रह**	**हिन्दी अर्थ**
पीतवस्त्रम्	पीतं च तत् वस्त्रम्	पीला कपड़ा
उत्तमपुरुषः	उत्तमः च असौ पुरुषः	उत्तम पुरुष
महावीरः	महान् च असौ वीरः	महान् वीर
नीलोत्पलम्	नीलं च तद् उत्पलम्	नीला कमल
महानवमी	महती च असौ नवमी	महानवमी
स्थूलबालक	स्थूलः च असौ बालकः	मोटा बालक
कृष्णपुरुषः	कृष्णः च असौ पुरुषः	काला व्यक्ति
महाराजः	महान् च असौ राजा	महान् राजा
रक्तोत्पलम्	रक्तं च तदुत्पलम्	लाल कमल
हरितवस्त्रम्	हरितं च तद् वस्त्रम्	हरा कपड़ा
महादेवः	महान् च असौ देवः	महादेव (शिव)
महातपस्वी	महान् च असौ तपस्वी	उग्र तपस्या करने वाला
कृष्णाश्वः	कृष्णः च असौ अश्वः	काला घोड़ा

(ख) उपमान–पूर्वपद कर्मधारय – उपमान और उपमेय का समास 'उपमानपूर्वपद कर्मधारय' समास कहलाता है। यथा–

पाटलसुन्दरम्	पाटलः इव सुन्दरम्	गुलाब के समान सुन्दर
चन्द्राह्लादकः	चन्द्रः इव आह्लादकः	चन्द्रमा के समान आनन्ददायक
घनश्यामः	घन इव श्यामः	बादल के समान श्याम
चन्द्रमुखम्	चन्द्रः इव मुखम्	चन्द्रमा के समान मुख
कम्बुग्रीवा	कम्बु इव ग्रीवा	शङ्ख के समान गला

(ग) उभयपद विशेषण कर्मधारय – इसमें दोनों पद विशेषण होते हैं, विशेषण का विशेषण से समास होता है।

परमसुन्दरः	परमश्चासौ सुन्दरः	अत्यन्त सुन्दर
श्वेतकृष्णः	श्वेतः चासौ कृष्णः च	सफेद और काला
शीतोष्णम्	शीतं च तद् उष्णम्	ठण्डा एवं गरम
चराचरम्	चरं च अचरं च	चराचर
कृताकृतम्	कृतं च अकृतं व	किया हुआ एवं न किया हुआ
उक्तानुक्तम्	उक्तं च अनुक्तं च	कहा हुआ एवं न कहा हुआ

(घ) निश्चयवाचक कर्मधारय – इसमें पूर्वपद उपमेय एवं उत्तर पद उपमान होता है, विग्रह में एव पद जोड़ा जाता है। इसे रूपक कर्मधारय भी कहते हैं।

मुखकमलम्	मुखम् एव कमलम् (मुखरूपी कमल)	मुख ही कमल
दुःखसमुद्रः	दुःखम् एव समुद्रः (दुःखरूपी समुद्र)	दुख ही समुद्र
विद्याधनम्	विद्या एव धनम् (विद्यारूपी धन)	विद्या ही धन
विरहाग्निः	विरह एव अग्निः (विरहरूपी अग्नि)	विरह ही अग्नि

3. बहुव्रीहि समास

अनेकमन्यपदार्थे – अन्य पदार्थ के बोधक अनेक प्रथमान्त पदों का विकल्प से समास होता है।

इस समास में किसी पद का अर्थ प्रधान नहीं होता है, प्रत्युत पदों से सम्बन्धित अन्य पदार्थ प्रधान होता है। इसलिए **'प्रायेण अन्यपदार्थप्रधानो बहुव्रीहिः'** कहा गया है। पीताम्बरः–**'पीतम् अम्बरं यस्य'** यहाँ पर पीत एवं अम्बर दोनों विशेष्य-विशेषण होकर अन्य पदार्थ भगवान् (कृष्ण/विष्णु) का बोध करा रहे हैं।

बहुव्रीहि समास के भेद

(क) समानाधिकरण बहुव्रीहि – जहाँ विग्रह वाक्य में दोनों पदों की विभक्तियाँ समान हों, वह समानाधिकरण बहुब्रीहि होता है।

समस्त पद	समास विग्रह	हिन्दी अर्थ
यशोधनः	यशः एव धनं यस्य सः	यश ही है धन जिसका
विद्याधनः	विद्या एव धनं यस्य सः	विद्या ही है घन जिसका
मानधनः	मानम् एव धनं यस्य सः	सम्मान ही है धन जिसका
जितेन्द्रियः	जितानि इन्द्रियाणि येन सः	जिसने इन्द्रियों को जीता है
लब्धप्रतिष्ठः	लब्धा प्रतिष्ठा येन सः	जिसने प्रसिद्धि प्राप्त कर ली
महाबाहुः	महान्तौ बाहू यस्य सः	जिसकी भुजायें बड़ी हैं
लम्बोदरः	लम्बम् उदरं यस्य सः	लम्बा है उदर जिसका
प्रियदर्शनः	प्रियं दर्शनं यस्य सः	जिसका दर्शन प्रिय हो

(ख) व्यधिकरण बहुव्रीहि – इसमें दोनों पदों में अलग-अलग विभक्तियों के द्वारा विग्रह होता है।

पापजन्मा	पापात् जन्म यस्य सः	जिसका जन्म पाप से हुआ
गाण्डीवधन्वा	गाण्डीवं धनुः यस्य सः	गाण्डीव है धनुष जिसका
शशिशेखरः	शशिः शेखरे यस्य सः	चन्द्रमा मस्तक पर है जिसके
वीणापाणिः	वीणा पाणौ यस्य सः	वीणा है हाथ में जिसके
कपालपाणिः	कपालः पाणौ यस्य सः	कपाल है हाथ में जिसके
शुभलीलः	शुभाः लीलाः यस्य सः	शुभ हैं लीलायें जिसकी

(ग) व्यतिहार बहुव्रीहि – तृतीयान्त एवं सप्तम्यन्त पद के साथ समास, जिससे कि युद्धादि का ज्ञान हो।

समस्त पद	समास विग्रह	हिन्दी अर्थ
दण्डादण्डि	दण्डैश्च दण्डैश्च प्रहृत्य इदं युद्धं प्रवृत्तम्	दण्ड से युद्ध करना
मुष्टामुष्टि	मुष्टिभिः मुष्टिभिः प्रहृत्य इदं युद्धं प्रवृत्तम्	मुष्टि प्रहार से युद्ध हुआ
खड्गाखड्गि	खड्गैः खड्गैः प्रहृत्य इदं युद्धं प्रवृत्तम्	तलवार प्रहार से युद्ध हुआ
पादापादि	पादाभ्यां पादाभ्यां प्रहृत्य इदं युद्धं प्रवृत्तम्	पदप्रहार से युद्ध हुआ
वाचावाचि	वाग्भिः वाग्भिः इदं युद्धं प्रवृत्तम्	बातों के प्रहार से युद्ध हुआ
केशाकेशि	केशेषु केशेषु गृहीत्वा इदं युद्धं प्रवृत्तम्	बालों को पकड़कर प्रारंभ युद्ध
वस्त्रावस्त्रि	वस्त्रेषु वस्त्रेषु गृहीत्वा इदं युद्धं प्रवृत्तम्	वस्त्रों को पकड़ कर प्रारंभ युद्ध
बाहूबाहवि	बाहुभ्यां बाहुभ्यां प्रहृत्य इदं युद्धं प्रवृत्तम्	भुजाओं के प्रहार से प्रारंभ युद्ध

(घ) तुल्ययोग बहुव्रीहि – तेन सहेति तुल्ययोगे– तुल्ययोग में वर्तमान 'सह' का तृतीयान्त के साथ समास होता है।

समस्त पद	समास विग्रह	हिन्दी अर्थ
सपाण्डवः	पाण्डवैः सह	पाण्डवों के साथ

सपुत्रः	पुत्रेण सह	पुत्र के साथ
सगुरुः	गुरुणा सह	गुरु के साथ
सपत्नीकः	पत्न्या सह	पत्नी के साथ
समित्रः	मित्रेण सह	मित्र के साथ
ससीतः	सीतया सह	सीता के साथ
सभार्यः	भार्यया सह	पत्नी के साथ
सपतिः	पत्या सह	पति के साथ
सशत्रुः	शत्रुणा सह	शत्रु के साथ
सप्रियः	प्रियया/प्रियेण सह	प्रिय के साथ

समास के अन्य उदाहरण

समस्त पद	**समास विग्रह**	**समास का नाम**
सुरपतिः	सुराणां पति	षष्ठी–तत्पुरुषः
नीलाम्बरः	नीलम् अम्बरं यस्य सः	बहुव्रीहिः
प्रभुसेवा	प्रभोः सेवा	षष्ठी–तत्पुरुषः
लब्धाभिलाषः	लब्धा अभिलाषा येन	बहुव्रीहिः
विशालवृक्षः	विशालः चासौ वृक्षश्च	कर्मधारयः
नरश्रेष्ठः	नरेषु श्रेष्ठः	सप्तमी–तत्पुरुषः
महाकविः	महान् चासौ कविः	कर्मधारयः
जगन्माता	जगतः माता	षष्ठी–तत्पुरुषः
विधुशेखरः	विधुः शेखरे यस्य सः	बहुव्रीहिः
रक्तोत्पलम्	रक्तं च तदुत्पलम्	कर्मधारयः
राजपुरुषः	राज्ञः पुरुषः	षष्ठी–तत्पुरुषः
राधापतिः	राधायाः पतिः	षष्ठी–तत्पुरुषः
कृष्णगुः	कृष्णाः गावो यस्य सः	बहुव्रीहिः
चित्रगुः	चित्राः गावो यस्य सः	बहुव्रीहिः
नीलकण्ठः	नीलः कण्ठो यस्य सः	बहुव्रीहिः
दर्शनपटुः	दर्शने पटुः	सप्तमी–तत्पुरुषः
पितृभक्तिः	पितरि भक्तिः	सप्तमी–तत्पुरुषः
लौहकारः	लौहं करोति	उपपदसमासः
घनश्यामः	घन इव श्यामः	कर्मधारयः
धनुष्पाणिः	धनुः पाणौ यस्य	बहुव्रीहिः
नीलाम्बरम्	नीलम् च तद् अम्बरम्	कर्मधारयः
नासिकोपमः	नासिका उपमा यस्य सः	बहुव्रीहिः
महाजनः	महान् चासौ जनः	कर्मधारयः
चक्रपाणिः	चक्रं पाणौ यस्य सः	बहुव्रीहिः

देवपूजकः	देवानां पूजकः	षष्ठी–तत्पुरुषः
शोभनाननः	शोभनम् आननं यस्य सः	बहुव्रीहिः
विकृताननः	विकृतम् आननं यस्य सः	बहुव्रीहिः
कष्टापन्नः	कष्टम् आपन्नः	द्वितीया–तत्पुरुषः
रत्नानना	रत्नानि आनने यस्याः सा	बहुव्रीहिः
हरितवस्त्रा	हरितानि वस्त्राणि यस्याः सा	बहुव्रीहिः
चन्द्रशेखरः	चन्द्रः शेखरे यस्य सः	बहुव्रीहिः
गङ्गाजलम्	गङ्गायाः जलम्	षष्ठी–तत्पुरुषः
गोसुखम्	गोभ्यः सुखम्	चतुर्थी–तत्पुरुषः
छात्रहितम्	छात्रेभ्यः हितम्	चतुर्थी–तत्पुरुषः
प्रभुत्रातः	प्रभुणा त्रातः	तृतीया–तत्पुरुषः
दानपात्रम्	दानाय पात्रम्	चतुर्थी–तत्पुरुषः
नृपमन्दिरम्	नृपस्य मन्दिरम्	षष्ठी–तत्पुरुषः
खलमन्दिरम्	खलस्य मन्दिरम्	षष्ठी–तत्पुरुषः
महाविद्यालयः	महान् चासौ विद्यालयः	कर्मधारयः
देवालयः	देवानाम् आलयः	षष्ठी–तत्पुरुषः
कष्टापन्नः	कष्टम् आपन्नः	द्वितीया–तत्पुरुषः
कूपपतितः	कूपं पतितः	द्वितीया–तत्पुरुषः
धनदः	धनं ददाति	उपपद–समासः
तनुलता	तनुः एव लता	कर्मधारयः
मनोरमा	मनसो रमा	षष्ठी–तत्पुरुषः
निधिपतिः	निधीनां पतिः	षष्ठी–तत्पुरुषः
यशोधनः	यशः एव धनं यस्य सः	बहुव्रीहिः
रक्तवस्त्रः	रक्तं वस्त्रं यस्य सः	बहुव्रीहिः
अपगतमलः	अपगतः मलः यस्य सः	बहुव्रीहिः
विदितवेदितव्यः	विदितं वेदितव्यं येन सः	बहुव्रीहिः
अपुत्रः	न पुत्रः	नञ् तत्पुरुषः
सपत्नीकः	पत्न्या सह	बहुव्रीहिः
भूतबलिः	भूतेभ्यः बलिः	चतुर्थी तत्पुरुषः
नीलकमलम्	नीलं च तत् कमलम्	कर्मधारयः
राजकुमारी	राज्ञः कुमारी	षष्ठी तत्पुरुषः
चोरभयम्	चोरात् भयम्	पञ्चमी तत्पुरुषः
जितदोषः	जिताः दोषाः येन सः	बहुव्रीहिः
यूपदारुः	यूपाय दारु	चतुर्थी तत्पुरुषः
राजभवनम्	राज्ञः भवनम्	षष्ठी तत्पुरुषः
मुख्यमन्त्री	मुख्यश्चासौ मन्त्री च	कर्मधारयः

बहुविकल्पीय प्रश्नाः

1. पूर्वपदार्थप्रधानः समासः कः ?

(क) अव्ययीभावः (ख) कर्मधारयः (ग) तत्पुरुषः (घ) बहुव्रीहि

2. उत्तरपदार्थप्रधानः समासः कः?

(क) तत्पुरुषः (ख) द्विगु (ग) कर्मधारय (घ) बहुव्रीहिः

3. 'कृष्णश्रितः' अत्र कः समासः?

(क) अव्ययीभावः (ख) तत्पुरुषः (ग) कर्मधारयः (घ) द्वन्द्वः

4. ''यूपदारु' इत्यत्र कः समासः?

(क) चतुर्थी तत्पुरुषः (ख) द्वितीया तत्पुरुषः (ग) तृतीया तत्पुरुषः ¼k½i ञ्चमी तत्पुरुषः

5. 'सर्पभीतः' अत्र कः समासः?

(क) कर्मधारयः (ख) तत्पुरुषः (ग) अव्ययीभावः (घ) केवलः

6. 'घनश्यामः' इत्यस्य कः विग्रहः?

(क) घन इव श्यामः (ख) श्यामः इव घन (ग) श्यामः इव (घ) घन इव

7. अन्यपदार्थप्रधानः समासः कः?

(क) अव्ययीभावः (ख) बहुव्रीहिः (ग) केवलः (घ) तत्पुरुषः

8. 'यशोधनः' इत्यत्र कः समासः?

(क) बहुव्रीहिः (ख) तत्पुरुषः (ग) अव्ययीभावः (घ) कर्मधारयः

9. समास शब्द का अर्थ है–

(क) संक्षेप (ख) विस्तार (ग) विच्छेद (घ) उपर्युक्त में से कोई नहीं

10. प्रायः उत्तरपद प्रधान समास होता है–

(क) तत्पुरुष (ख) द्विगु (ग) केवल (घ) बहुव्रीहि

11. व्यधिकरण तत्पुरुष के कितने भेद होते है?

(क) 6 (ख) 8 (ग) 4 (घ) 3

12. सर्पभीतः में समास होगा–

(क) द्वितीया तत्पुरुष (ख) प्रथमा तत्पुरुष (ग) पञ्चमी तत्पुरुष (घ) तृतीया तत्पुरुष

13. 'कृष्णसर्पः' पद में समास होगा–

(क) कर्मधारय (ख) तत्पुरुष (ग) द्विगु (घ) केवल

14. 'लम्बोदरः' पद में कौन-सा समास होगा?

(क) केवल (ख) बहुव्रीहि (ग) कर्मधारय (घ) अव्ययीभाव

15. 'गोहितम्' पद में समास होगा–

(क) चतुर्थी तत्पुरुष (ख) द्वितीया तत्पुरुष (ग) पञ्चमी तत्पुरुष (घ) तृतीया तत्पुरुष

■

4 सन्धि

सम् उपसर्ग पूर्वक 'धा' धातु से 'कि' प्रत्यय करने पर सन्धि शब्द निष्पन्न होता है। जिसका सामान्य अर्थ होता है– मेल। **'सामीप्यसम्बन्धेन वर्णौ संयोजयति इति सन्धिः'** सामीप्य सम्बन्ध से दो वर्णों के मेल को सन्धि कहते हैं। व्याकरण शास्त्र के अनुसार **'परः सन्निकर्षः संहिता'** जिसका अर्थ होता है वर्णों की अत्यन्त समीपता की संहिता संज्ञा होती है। संहिता होने पर दो वर्णों में सन्धि होती है। दो या दो से अधिक वर्ण परस्पर अत्यन्त निकटवर्ती होने पर जब मिलकर एक हो जाते हैं, उसी मिलन का नाम सन्धि है। **'वर्णविकारः सन्धिः'** सन्धि वर्ण विधि है वर्णों में ही होती है।

व्याकरण शास्त्र में पाँच सन्धियाँ शास्त्रीय दृष्टि से मानी गयी हैं– 1. अच् सन्धि, 2. प्रकृतिभाव सन्धि, 3. हल् सन्धि, 4. विसर्ग सन्धि, 5. स्वादि सन्धि। यहाँ पर संस्कृत के सामान्य छात्रों को ध्यान में रखते हुए सन्धियाँ तीन प्रकार की बतायी जा रही हैं। अच् सन्धि, हल् सन्धि, विसर्ग सन्धि, अच् सन्धि को 'स्वर सन्धि' एवं हल् सन्धि को **'व्यञ्जन सन्धि'** भी कहा जाता है।

नोट–सन्धि एक पद में, धातु तथा उपसर्ग में एवं समास में नित्य होती है, वाक्य में वक्ता की इच्छा पर निर्भर होती है।[1]

सन्धि के भेद

स्वर सन्धि – जब एक स्वर वर्ण का दूसरे स्वर वर्ण के साथ मिलन या विकार होता है, उसको स्वर सन्धि कहा जाता है। शिव + ईशः = शिवेशः, यहाँ पर प्रथम शब्द शिव का अन्तिम वर्ण अ तथा दूसरे शब्द का प्रथम वर्ण ईशः का ई, अतः अ एवं ई मिलकर ए हो गया। यह स्वर सन्धि है। विद्या + आलयः, यहाँ विद्या का अन्तिम अक्षर आ एवम् आलयः का प्रथमाक्षर आ है, आ एवं आ मिलकर आ बन जाता है, विद्या + आलयः, विद्य् + आ +लय = विद्यालयः।

व्यञ्जन सन्धि – जब व्यञ्जन का व्यञ्जन या स्वर से मिलन होने पर कोई परिवर्तन होता है तो उसे व्यञ्जन सन्धि कहते हैं। जैसे जगत् + आधारः, यहाँ जगत् शब्द का अन्त्य वर्ण है त् तथा द्वितीय शब्द का प्रथमाक्षर है आधारः का आ, अतः त् को द् जश्त्व होकर जगदाधारः यह शब्द सन्धि होने पर निष्पन्न हो जाता है।

विसर्ग सन्धि – जब किसी प्रथम शब्द का अन्तिम अक्षर विसर्ग हो एवं दूसरे शब्द का पहला अक्षर स्वर या व्यञ्जन कोई भी हो तो उसका मिलन विसर्ग सन्धि कहलाता है। जैसे– शिवः + त्राता, यहाँ पर **'विसर्जनीयस्य सः'** के द्वारा विसर्ग को स् होने पर शिवस् त्राता बनता है। यह विसर्ग सन्धि का उदाहरण है।

---

1. संहितैकपदे नित्या नित्या धातूपसर्गयोः। नित्सा समासे वाक्ये तु सा विवक्षामपेक्षते।।

अच् सन्धि

''अचां अक्षु वा सन्धिः'' अच् (स्वर) वर्ण का अच् (स्वर) वर्ण के मिलने पर जायमान विकार ही अच् (स्वर) सन्धि कहलाता है।

पाठ्यक्रम के अनुसार यण् सन्धि, अयादि सन्धि, गुण सन्धि, वृद्धि सन्धि, दीर्घ सन्धि, पररूप एवं पूर्वरूप इन सन्धियों का ही अध्ययन करना है, ये सभी सन्धियाँ स्वर सन्धियों के अन्तर्गत ही हैं जिनका वर्णन यहाँ किया जा रहा है–

यण् सन्धि

सूत्र– इको यणचि – इक् के स्थान पर यण् आदेश होता है असमान अच् परे रहने पर।

जब इक् प्रत्याहार के वर्ण इ, उ, ऋ, लृ के बाद कोई (अच् प्रत्याहार) असमान स्वर आवे तो क्रम से इ को य्, उ को व्, ऋ को र्, लृ को ल् हो जाता है। यहाँ इक् से ह्रस्व एवं दीर्घ दोनों प्रकार के वर्णों का ग्रहण होता है।

1. ह्रस्व या दीर्घ ई के पश्चात् असमान स्वर के उदाहरण–

   यदि + अस्ति = यद्यस्ति

   इति + आधारः = इत्याधारः

   देवी + उवाच = देव्युवाच

   नदी + ऊर्मिः = नद्यूर्मिः

   प्रति + उपकारः = प्रत्युपकारः

2. ह्रस्व या दीर्घ उ के बाद असमान स्वर के उदाहरण–

   मधु + अस्ति = मध्वस्ति

   मधु + आनय = मध्वानय

   सु + अस्ति = स्वस्ति

   वधू + आगमः = वध्वागमः

3. ऋ के बाद असमान स्वर के उदाहरण–

   धातृ + अंशः = धात्रंशः

   भ्रातृ + अंशः = भ्रात्रंश

   दुहितृ + आज्ञा = दुहित्राज्ञा

4. लृ के बाद असमान स्वर के उदाहरण–

   लृ + आकृतिः = लाकृतिः

नोट–लृ वर्ण का दीर्घ नहीं होता है।

अयादि सन्धि

सूत्र– एचोऽयवायावः – जब एच् प्रत्याहार के बाद अच् प्रत्याहार हो तो क्रम से ए को अय्, ओ को अव् ऐ को आय्, औ को आव् आदेश हो जाता है।

1. ए के बाद अच् (स्वर) हो तो अय् होता है, उदाहरण–

   हरे + ए = हरये

   ने + अनम् = नयनम्

   मुने + ए = मुनये

2. ओ के बाद अच् (स्वर) हो तो अव् होता है, उदाहरण–

   विष्णो + ए = विष्णवे

   पो + अनः = पवनः

   भो + अनम् = भवनम्

   भो + इष्णुः = भविष्णुः

3. ऐ के बाद अच् (स्वर) हो तो आय् होता है, उदाहरण–

   नै + अकः = नायकः

   चै + अकः = चायकः

4. औ के बाद अच् (स्वर) हो तो आव् होता है, उदाहरण–

   पौ + अकः = पावकः

   पौ + अनम् = पावनम्

   नौ + इकः = नाविकः

   शशकौ + अपि = शशकावपि

   तौ + एव = तावेव

गुण सन्धिः

सूत्र– आद्‌गुणः – अ वर्ण से परे अच् हो तो पूर्व एवं पर के स्थान पर गुण रूप एकादेश होता है। यदि अ के बाद इ, उ, ऋ, ऌ आये तो अ एवं इ के स्थान पर ए, अ एवं उ के स्थान पर ओ, अ एवं ऋ के स्थान पर अर्, अ एवं ऌ के स्थान पर अल् हो जाता है।

नोट– यहाँ पर अ ह्रस्व आ दीर्घ दोनों ग्राह्य हैं, उसी तरह से इ, उ, ऋ, भी ह्रस्व एवं दीर्घ लिये जाते हैं, ऌ का दीर्घ नहीं होने से ऌ ह्रस्व ही लिया जाता है। (ऌवर्णस्य द्वादश तस्य दीर्घाभावात्।)

1. अ या आ के बाद इ या ई के उदाहरण–

सुर + इन्द्रः = सुरेन्द्रः
नाग + ईशः = नागेशः
सीता + ईशः = सीतेशः
महा + इन्द्रः = महेन्द्रः
महा + ईश्वरः = महेश्वरः

2. अ या आ के बाद उ या ऊ के उदाहरण–

गङ्गा + उदकम् = गङ्गोदकम्
रक्त + उत्पलम् = रक्तोत्पलम्
शिप्रा + ऊर्मिः = शिप्रोर्मिः
महा + उदयः = महोदयः

3. अ या आ के बाद ऋ या ॠ के उदाहरण–

वसन्त + ऋतुः = वसन्तर्तुः
सप्त + ऋषिः = सप्तर्षिः
महा + ऋषिः = महर्षिः

4. अ या आ के बाद लृ के उदाहरण्–

तव + लृकारः = तवल्कारः
मम + लृकारः = ममल्कारः

नोट–अदेङ्गुणः से अ, ए, ओ की गुणसंज्ञा होती है।

वृद्धि सन्धि

सूत्र– वृद्धिरेचि – अ वर्ण से परे एच् हो तो पूर्व एवं पर के स्थान पर वृद्धि रूप एकादेश होता है। यदि ह्रस्व अ या आ के बाद ए या ऐ आयें तो दोनों के स्थान पर ऐ वृद्धि, ओ या औ आवें तो औ वृद्धि होती है।

1. अ या आ के बाद ए या ऐ आने पर ऐ वृद्धि के उदाहरण–

भारतीय + एकता = भारतीयैकता
तदा + एव = तदैव
मा + एवम् = मैवम्
सदा + ऐक्यम् = सदैक्यम्
पुत्र + एषणा = पुत्रैषणा

2. अ या आ के बाद ओ या औ आने पर औ वृद्धि के उदाहरण–

वन + ओषधिः = वनौषधिः

गङ्गा + ओघः = गङ्गौघः

दिव्य + औषधम् = दिव्यौषधम्

देव + औत्कण्ठ्यम् = देवौत्कण्ठ्यम्

राम + औदार्यम् = रामौदार्यम्

नोट–आ, ऐ, औ की वृद्धिसंज्ञा होती है (वृद्धिरादैच्)।

दीर्घ सन्धि

सूत्र– अकः सवर्णे दीर्घः – अक् प्रत्याहार से परे सवर्ण अच् हो तो पूर्व एवं पर के स्थान पर दीर्घ एकादेश होता है।

जब ह्रस्व या दीर्घ अ, इ, उ, ऋ के पश्चात् समान स्वर आयें तो क्रम से आ, ई, ऊ, ॠ हो जाते हैं।

1. यदि अ या आ के बाद अ या आ आवें तो दोनों के स्थान पर आ होता है–

देव + आलयः = देवालयः

धन + अर्थी = धनार्थी

संगीत + आलयः = संगीतालयः

अनाथ + आश्रयः = अनाथाश्रयः

विद्या + अर्थी = विद्यार्थी

महा + आशयः = महाशयः

2. यदि इ या ई के बाद इ या ई आवें तो दोनों के स्थान पर ई होता है–

यति + इन्द्रः = यतीन्द्रः

गिरि + ईशः = गिरीशः

नदी + ईशः = नदीशः

मही + ईश = महीशः

3. यदि उ या ऊ के बाद उ या ऊ आवें तो दोनों के स्थान पर ऊ होता है–

विष्णु + उदयः = विष्णूदयः

भानु + उदयः = भानूदयः

वधू + उत्सवः = वधूत्सवः

मधु + ऊर्मिः = मधूर्मिः

साधु + उपस्थितिः = साधूपस्थितिः

4. यदि ऋ या ॠ के बाद ऋ या ॠ आवें तो दोनों के स्थान पर ॠ होता है–

भ्रातृ	+ ऋणम्	= भ्रातॄणम्
ननान्दृ	+ ऋणम्	= ननान्दॄणम्
होतृ	+ ऋकारः	= होतॄकारः

पूर्वरूप सन्धि

सूत्र– 'एङः पदान्तादति' – पदान्त एङ् प्रत्याहार से परे ह्रस्व अ हो तो पदान्त एङ् और अ को पूर्वरूप एकादेश होता है।

जब पूर्व पद के अन्त में ए या ओ हों तथा पर पद का प्रथम अक्षर ह्रस्व अ हो, तो पूर्व और पर के स्थान पर पूर्वरूप एकादेश होने पर पूर्वरूप होने पर अ के स्थान पर (ऽ) चिह्न लगा दिया जाता है, इसे अवग्रह कहते हैं।

1. ए के बाद अ आवे तो पूर्वरूप (ऽ) हो–

ते	+ अपि	= तेऽपि
मुने	+ अव	= मुनेऽव
बालिके	+ अत्र	= बालिकेऽत्र
आगते	+ अपि	= आगतेऽपि

2. ओ के बाद अ आवे तो पूर्वरूप (ऽ) हो–

सो	+ अपि	= सोऽपि
ततो	+ अवसरः	= ततोऽवसरः
रामो	+ अपि	= रामोऽपि
ईश्वरो	+ अर्चनीयः	= ईश्वरोऽर्चनीयः
दशरथो	+ अस्ति	= दशरथोऽस्ति
को	+ अस्य	= कोऽस्य

पररूप सन्धि

सूत्र– 'एङि पररूपम्' – अवर्णान्त उपसर्ग से परे एङादि धातु हो तो अवर्ण एवं एङ् के स्थान पर पररूप एकादेश होता है।

नोट– पररूप होने पर पूर्व वर्ण का पर वर्ण के समान रूप हो जाता है।

प्र	+ एजते	= प्रेजते
उप	+ एजते	= उपेजते
उप	+ ओषति	= उपोषति
प्र	+ ओषति	= प्रोषति

।।सन्धिबोधक चक्र।।

सन्धि का नाम	सूत्र	अर्थ	उदाहरण
1. यण् सन्धि	इको यणचि	इ, उ, ऋ, लृ के बाद असमान स्वर आवें, तो क्रमशः य्, व्, र्, ल् होते हैं।	प्रति + एकम् = प्रत्येकम् गुरु + आज्ञा = गुर्वाज्ञा मातृ + आदेशः = मात्रादेशः लृ + आकृतिः = लाकृतिः
2. अयादि सन्धि	एचोऽयवायावः	यदि ए, ओ, ऐ, औ के बाद स्वर आये, तो क्रम से अय्, अव्, आय्, आव्, आदेश होते हैं।	हरे + ए = हरये गुरो + ए = गुरवे नै + अकः = नायकः पौ + अकः = पावकः
3. गुण सन्धि	आद्गुणः	यदि अ या आ के बाद इ, उ, ऋ, लृ आये, तो क्रम से ए, ओ, अर्, अल् आदेश होते हैं।	देव + ईशः = देवेशः तव + उपदेशः = तवोपदेशः कृष्ण + ऋद्धिः = कृष्णर्द्धिः तव + लृकारः = तवल्कारः
4. वृद्धि सन्धि	वृद्धिरेचि	यदि अ या आ के बाद ए, ऐ, हों तो 'ऐ' वृद्धि एवं ओ, औ हों तो, 'औ' वृद्धि होती है।	तव + एव = तवैव तदा + एषः = तदैषः तोय + ओघः = तोयौघः महा + औषधम् = महौषधम्
5. दीर्घ सन्धि	अकः सवर्णे दीर्घः	अ, इ, उ, ऋ के बाद समान स्वर आने पर दोनों के स्थान पर दीर्घ एकादेश होता है।	राम + आश्रयः = रामाश्रयः कपि + ईशः = कपीशः लघु + ऊर्मिः = लघूर्मिः मातृ + ऋणम् = मातॄणम्
6. पूर्वरूप सन्धि	एङः पदान्तादति	पदान्त ए या ओ से परे अ हो तो पूर्वरूप होता है।	हरे + अव = हरेऽव विष्णो + अव = विष्णोऽव
7. पररूप सन्धि	एङि पररूपम्	अवर्णान्त उपसर्ग से परे एङादि धातु हो तो पररूप होता है।	प्र + एजते = प्रेजते उप + ओषति = उपोषति

अभ्यासकार्यम्

समीचीनविकल्पस्य चयनं कुर्वन्तु।

1. 'दिनेशः' इत्यस्य कीदृशो विच्छेदः ?
   (क) दिना + ईशः (ख) दिने + शः (ग) दिन + एषः (घ) दिन + ईशः
2. 'गुरुष्वेव' इत्यस्य विच्छेदो भवति।
   (क) गुरुषु + एव (ख) गुरुषू + एव (ग) गुरुषु + वेव (घ) कोऽपि न
3. 'रमेशः' इत्यत्र केन सूत्रेण गुणादेशो भवति।
   (क) अकः सवर्णे दीर्घः (ख) एङि पररूपम् (ग) आद्गुणः (घ) वृद्धिरेचि
4. 'गिरीशः' इत्यस्य विच्छेदः कथं भवति ?
   (क) गिर् + ईशः (ख) गिरि + ईशः (ग) गिरी + ईशः (घ) एतेषु कोऽपि न
5. 'महोत्सवः' इत्यत्र कः सन्धिः ?
   (क) गुणसन्धिः (ख) दीर्घसन्धिः (ग) वृद्धिसन्धिः (घ) सर्वे सन्धयः
6. वृद्धिसन्धेः उदाहरणं चिनुत।
   (क) महैश्वर्यम् (ख) देवेशः (ग) गिर्युत्सवः (घ) सर्वे
7. 'गणेशः' अत्र सन्धिः केन सूत्रेण भवति ?
   (क) अइउण् (ख) आद्गुणः (ग) अदेङ् गुणः (घ) उरण् रपरः
8. 'हिमालयः' अस्य सन्धिविच्छेदो भवति।
   (क) हिम + आलयः (ख) हिमा + आलयः (ग) हिम + लयः (घ) हि + मालयः
9. 'सुर + ईश्वरः' अत्र सन्धिकरणेन किं पदं निर्मितं भवति ?
   (क) सुरेश्वरः (ख) सुरैश्वरः (ग) सुरीश्वरः (घ) कोऽपि न
10. 'यद्यपि' शब्द का विच्छेद होता है।
    (क) यद + अपि (ख) यदि + अपि (ग) यदी + पि (घ) यद्य + पि
11. 'जगदाधारः' में विच्छेद होगा।
    (क) जगद् + आधारः (ख) जगद् + धारः (ग) जगत् + आधारः (घ) जगदा + धारः
12. 'विधूदयः' में किस सूत्र से दीर्घ सन्धि है ?
    (क) आद्गुणः (ख) वृद्धिरेचि (ग) अकः सवर्णे दीर्घः (घ) कोई नहीं
13. 'भावकः' का सही विच्छेद होता है।
    (क) भो + वकः (ख) भौ + अकः (ग) भाव + कः (घ) भा + वकः
14. 'मध्वालयः' में किस सूत्र से सन्धि होती है ?
    (क) इको यणचि (ख) वृद्धिरेचि (ग) आद्गुणः (घ) किसी से नहीं
15. 'प्रेष्ठः' का विच्छेद होता है।
    (क) प्र + इष्ठः (ख) प्रे + ष्ठः (ग) प्रेष् + ठः (घ) प्रा + इष्ठः

16. 'उपोषति' में कौन-सी सन्धि होती है।
(क) गुण सन्धि (ख) दीर्घ सन्धि (ग) वृद्धि सन्धि (घ) पररूप

17. 'वध्वागमः' का विच्छेद होता है।
(क) वधु + आगमः (ख) वधू + आगमः (ग) वध्वा + गमाः (घ) कोई नहीं

18. 'भवति' का सन्धि विच्छेद होता है।
(क) भव् + अति (ख) भो + अति (ग) भवा + ति (घ) भव + ति

19. 'कृष्णायोपलम्भः' का विच्छेद होता है।
(क) कृष्णायो + पलम्भः (ख) कृष्णा + योपलम्भः (ग) कृष्णाय + उपलम्भः (घ) कोई नहीं

20. 'आ + इ' का गुण होता है।
(क) ऐ (ख) अय् (ग) ए (घ) आय्

21. पररूप सन्धि करने वाला सूत्र है।
(क) एङि पररूपम् (ख) एङः पदान्तादति (ग) आद्गुणः (घ) वृद्धिरेचि

22. 'भास्करोत्कर्षः' का विच्छेद होगा।
(क) भास्कर + उत्कर्षः (ख) भास् + करोत्कर्षः (ग) भास्करोत् + कर्षः (घ) कोई नहीं

23. 'होतृकारः' का विच्छेद होता है।
(क) होतृ + ऋकारः (ख) होतॄ + ऋकारः (ग) होत् + ऋकारः (घ) कोई नहीं

24. 'अभ्युत्थानम्' शब्द का विच्छेद होता है।
(क) अभ्यु + थानम् (ख) अभि + उत्थानम् (ग) अभि + ऊत्थानम् (घ) सभी

25. 'तवार्पणम्' का विच्छेद होता है।
(क) तवा + र्पणाम् (ख) तव + रपणम् (ग) तव + अर्पणम् (घ) सभी

26. 'देवर्षिः' में सन्धि होती है।
(क) गुण (ख) वृद्धि (ग) दीर्घ (घ) अयादि

27. 'सत्यपि' का विच्छेद होता है।
(क) सत्य + पि (ख) सत् + यपि (ग) सति + अपि (घ) कोई नहीं

28. 'गुर्वादयः' इसका विच्छेद होता है।
(क) गुरु + आदयः (ख) गुरो + आदयः (ग) गुरूर् + आदयः (घ) गुर्वा + दयः

■

5

शब्दरूप

पुलिङ्ग

1. अकारान्त पुलिङ्ग 'राम' शब्द

(दशरथ का पुत्र या भगवान्)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	रामः	रामौ	रामाः
द्वितीया	रामम्	रामौ	रामान्
तृतीया	रामेण	रामाभ्याम्	रामैः
चतुर्थी	रामाय	रामाभ्याम्	रामेभ्यः
पञ्चमी	रामात्	रामाभ्याम्	रामेभ्यः
षष्ठी	रामस्य	रामयोः	रामाणाम्
सप्तमी	रामे	रामयोः	रामेषु
सम्बोधन	हे राम!	हे रामौ!	हे रामाः!

विशेष – जिन शब्दों में रेफ 'र्' अथवा 'ष्' होता है उनकी तृतीया के एकवचन और षष्ठी के बहुवचन में न् को ण् हो जाता है– रामेण, रामाणाम्। जहाँ र् या ष् नहीं हैं, वहाँ नकार (न) ही रहेगा, जैसे– देवेन, देवानाम्। किन्तु द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में अन्त में सदा नकार ही रहेगा। जैसे– रामान्, देवान्। संस्कृत भाषा में जितने भी अकारान्त पुंलिङ्ग शब्द हैं, उनके रूप राम शब्द के समान चलेंगे। यथा– देव, पुरुष, ग्राम, घट, देश, रथ, सूर्य, चन्द्र, वृक्ष इत्यादि।

2. इकारान्त पुलिङ्ग 'हरि' शब्द (विष्णु)

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	हरिः	हरी	हरयः
द्वितीया	हरिम्	हरी	हरीन्
तृतीया	हरिणा	हरिभ्याम्	हरिभिः
चतुर्थी	हरये	हरिभ्याम्	हरिभ्यः
पञ्चमी	हरेः	हरिभ्याम्	हरिभ्यः
षष्ठी	हरेः	हर्योः	हरीणाम्
सप्तमी	हरौ	हर्योः	हरिषु
सम्बोधन	हे हरे!	हे हरी!	हे हरयः!

विशेष – इसी प्रकार भूपति, प्रजापति, अञ्जलि, राशि, रवि, ध्वनि, यति, मुनि, कवि, पाणि, सारथि इत्यादि शब्दों के रूप इकारान्त पुंलिङ्ग 'हरि' की भाँति ही चलेंगे।

3. उकारान्त पुंलिङ्ग 'गुरु' शब्द

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	गुरुः	गुरू	गुरवः
द्वितीया	गुरुम्	गुरू	गुरून्
तृतीया	गुरुणा	गुरुभ्याम्	गुरुभिः
चतुर्थी	गुरवे	गुरुभ्याम्	गुरुभ्यः
पञ्चमी	गुरोः	गुरुभ्याम्	गुरुभ्यः
षष्ठी	गुरोः	गुर्वोः	गुरूणाम्
सप्तमी	गुरौ	गुर्वोः	गुरुषु
सम्बोधन	हे गुरो!	हे गुरू!	हे गुरवः!

विशेष– गुरु के समान ही सभी उकारान्त पुंलिङ्ग शब्दों के रूप जैसे– वायु, साधु, भानु, शिशु, तरु, बन्धु इत्यादि चलेंगे।

4. ऋकारान्त पुंलिङ्ग 'पितृ' शब्द

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	पिता	पितरौ	पितरः
द्वितीया	पितरम्	पितरौ	पितॄन्
तृतीया	पित्रा	पितृभ्याम्	पितृभिः
चतुर्थी	पित्रे	पितृभ्याम्	पितृभ्यः
पञ्चमी	पितुः	पितृभ्याम्	पितृभ्यः
षष्ठी	पितुः	पित्रोः	पितॄणाम्
सप्तमी	पितरि	पित्रोः	पितृषु
सम्बोधन	हे पितः!	हे पितरौ!	हे पितरः!

भ्रातृ (भाई), जामातृ (दामाद), देवृ (देवर), इत्यादि पुंलिङ्ग ऋकारान्त शब्दों के रूप पितृ की भाँति चलते हैं।

5. तकारान्त पुंलिङ्ग 'भगवत्'

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	भगवान्	भगवन्तौ	भगवन्तः
द्वितीया	भगवन्तम्	भगवन्तौ	भगवतः
तृतीया	भगवता	भगवद्भ्याम्	भगवद्भिः

चतुर्थी	भगवते	भगवद्भ्याम्	भगवद्भ्यः
पञ्चमी	भगवतः	भगवद्भ्याम्	भगवद्भ्यः
षष्ठी	भवगतः	भगवतोः	भगवताम्
सप्तमी	भगवति	भगवतोः	भगवत्सु
सम्बोधन	हे भगवन्!	हे भगवन्तौ!	हे भगवन्तः!

6. इनन्त पुंलिङ्ग 'करिन्'

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	करी	करिणौ	करिणः
द्वितीया	करिणम्	करिणौ	करिणः
तृतीया	करिणा	करिभ्याम्	करिभिः
चतुर्थी	करिणे	करिभ्याम्	करिभ्यः
पञ्चमी	करिणः	करिभ्याम्	करिभ्यः
षष्ठी	करिणः	करिणोः	करिणाम्
सप्तमी	करिणि	करिणोः	करिषु
सम्बोधन	हे करिन्!	हे करिणौ!	हे करिणः!

7. अनन्त पुंलिङ्ग 'राजन्'

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	राजा	राजानौ	राजानः
द्वितीया	राजानम्	राजानौ	राज्ञः
तृतीया	राज्ञा	राजभ्याम्	राजभिः
चतुर्थी	राज्ञे	राजभ्याम्	राजभ्यः
पञ्चमी	राज्ञः	राजभ्याम्	राजभ्यः
षष्ठी	राज्ञः	राज्ञोः	राज्ञाम्
सप्तमी	राज्ञि/राजनि	राज्ञोः	राजसु
सम्बोधन	हे राजन्!	हे राजानौ!	हे राजानः!

8. इकारान्त पुंलिङ्ग 'पति' शब्द

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	पतिः	पती	पतयः
द्वितीया	पतिम्	पती	पतीन्
तृतीया	पत्या	पतिभ्याम्	पतिभिः
चतुर्थी	पत्ये	पतिभ्याम्	पतिभ्यः
पञ्चमी	पत्युः	पतिभ्याम्	पतिभ्यः
षष्ठी	पत्युः	पत्योः	पतीनाम्
सप्तमी	पत्यौ	पत्योः	पतिषु
सम्बोधन	हे पते!	हे पती!	हे पतयः!

9. इकारान्त पुंलिङ्ग 'सखि' शब्द

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सखा	सखायौ	सखायः
द्वितीया	सखायम्	सखायौ	सखीन्
तृतीया	सख्या	सखिभ्याम्	सखिभिः
चतुर्थी	सख्ये	सखिभ्याम्	सखिभ्यः
पञ्चमी	सख्युः	सखिभ्याम्	सखिभ्यः
षष्ठी	सख्युः	सख्योः	सखीनाम्
सप्तमी	सख्यौ	सख्योः	सखिषु
सम्बोधन	हे सखे!	हे सखायौ!	हे सखायः!

10. सकारान्त पुंलिङ्ग 'विद्वस्' शब्द

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	विद्वान्	विद्वांसौ	विद्वांसः
द्वितीया	विद्वांसम्	विद्वांसौ	विदुषः
तृतीया	विदुषा	विद्वद्भ्याम्	विद्वद्भिः
चतुर्थी	विदुषे	विद्वद्भ्याम्	विद्वद्भ्यः
पञ्चमी	विदुषः	विद्वद्भ्याम्	विद्वद्भ्यः
षष्ठी	विदुषः	विदुषोः	विदुषाम्
सप्तमी	विदुषि	विदुषोः	विद्वत्सु
सम्बोधन	हे विद्वन्!	हे विद्वांसौ!	हे विद्वासः!

11. सकरान्त पुंलिङ्ग 'चन्द्रमस्' शब्द

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	चन्द्रमाः	चन्द्रमसौ	चन्द्रमसः
द्वितीया	चन्द्रमसम्	चन्द्रमसौ	चन्द्रमसः
तृतीया	चन्द्रमसा	चन्द्रमोभ्याम्	चन्द्रमोभिः
चतुर्थी	चन्द्रमसे	चन्द्रमोभ्याम्	चन्द्रमोभ्यः
पञ्चमी	चन्द्रमसः	चन्द्रमोभ्याम्	चन्द्रमोभ्यः
षष्ठी	चन्द्रमसः	चन्द्रमसोः	चन्द्रमसाम्
सप्तमी	चन्द्रमसि	चन्द्रमसोः	चन्द्रमस्सु, चन्द्रमःसु
सम्बोधन	हे चन्द्रमः!	हे चन्द्रमसौ!	हे चन्द्रमसः!

(ख) स्त्रीलिङ्ग

1. 'रमा लक्ष्मी (आकारान्त स्त्रीलिङ्ग) शब्द

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	रमा	रमे	रमाः
द्वितीया	रमाम्	रमे	रमाः
तृतीया	रमया	रमाभ्याम्	रमाभिः
चतुर्थी	रमायै	रमाभ्याम्	रमाभ्यः
पञ्चमी	रमायाः	रमाभ्याम्	रमाभ्यः
षष्ठी	रमायाः	रमयोः	रमाणाम्
सप्तमी	रमायाम्	रमयोः	रमासु
सम्बोधन	हे रमे!	हे रमे!	हे रमाः!

2. 'मति' (इकारान्त स्त्रीलिङ्ग)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	मतिः	मती	मतयः
द्वितीया	मतिम्	मती	मतीः
तृतीया	मत्या	मतिभ्याम्	मतिभिः
चतुर्थी	मतये / मत्यै	मतिभ्याम्	मतिभ्यः
पञ्चमी	मतेः / मत्याः	मतिभ्याम्	मतिभ्यः
षष्ठी	मतेः / मत्याः	मत्योः	मतीनाम्
सप्तमी	मतौ / मत्याम्	मत्योः	मतिषु
सम्बोधन	हे मते!	हे मती!	हे मतयः!

3. 'नदी' (ईकारान्त स्त्रीलिङ्ग)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	नदी	नद्यौ	नद्यः
द्वितीया	नदीम्	नद्यौ	नदीः
तृतीया	नद्या	नदीभ्याम्	नदीभिः
चतुर्थी	नद्यै	नदीभ्याम्	नदीभ्यः
पञ्चमी	नद्याः	नदीभ्याम्	नदीभ्यः
षष्ठी	नद्याः	नद्योः	नदीनाम्
सप्तमी	नद्याम्	नद्योः	नदीषु
सम्बोधन	हे नदि!	हे नद्यौ!	हे नद्यः!

4. धेनु' (उकारान्त स्त्रीलिङ्ग)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	धेनुः	धेनू	धेनवः
द्वितीया	धेनुम्	धेनू	धेनूः
तृतीया	धेन्वा	धेनुभ्याम्	धेनुभिः
चतुर्थी	धेनवे / धेन्वै	धेनुभ्याम्	धेनुभ्यः
पञ्चमी	धेनोः / धेन्वाः	धेनुभ्याम्	धेनुभ्यः
षष्ठी	धेनोः / धेन्वाः	धेन्वोः	धेनूनाम्
सप्तमी	धेनौ / धेन्वाम्	धेन्वोः	धेनुषु
सम्बोधन	हे धेनो!	हे धेनू!	हे धेनवः!

5. 'वधू' (उकारान्त स्त्रीलिङ्ग)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	वधूः	वध्वौ	वध्वः
द्वितीया	वधूम्	वध्वौ	वधूः
तृतीया	वध्वा	वधूभ्याम्	वधूभिः
चतुर्थी	वध्वै	वधूभ्याम्	वधूभ्यः
पञ्चमी	वध्वाः	वधूभ्याम्	वधूभ्यः
षष्ठी	वध्वाः	वध्वोः	वधूनाम्
सप्तमी	वध्वाम्	वध्वोः	वधूषु
सम्बोधन	हे वधु!	हे वध्वौ!	हे वध्वः।

6. 'वाच्' (चकारान्त स्त्रीलिङ्ग)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	वाक्/वाग्	वाचौ	वाचः
द्वितीया	वाचम्	वाचौ	वाचः
तृतीया	वाचा	वाग्भ्याम्	वाग्भिः
चतुर्थी	वाचे	वाग्भ्याम्	वाग्भ्यः
पञ्चमी	वाचः	वाग्भ्याम्	वाग्भ्यः
षष्ठी	वाचः	वाचोः	वाचाम्
सप्तमी	वाचि	वाचोः	वाक्षु
सम्बोधन	हे वाच्/हे वाग् !	हे वाचौ!	हे वाचः!

7. 'सरित्' (तकारान्त स्त्रीलिङ्ग)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सरित्	सरितौ	सरितः
द्वितीया	सरितम्	सरितौ	सरितः
तृतीया	सरिता	सरिद्भ्याम्	सरिद्भिः
चतुर्थी	सरिते	सरिद्भ्याम्	सरिद्भ्यः
पञ्चमी	सरितः	सरिद्भ्याम्	सरिद्भ्यः
षष्ठी	सरितः	सरितोः	सरिताम्
सप्तमी	सरिति	सरितोः	सरित्सु
सम्बोधन	हे सरित्!	हे सरितौ!	हे सरितः!

8. 'श्री' (ईकारान्त स्त्रीलिङ्ग)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	श्रीः	श्रियौ	श्रियः
द्वितीया	श्रियम्	श्रियौ	श्रियः
तृतीया	श्रिया	श्रीभ्याम्	श्रीभिः
चतुर्थी	श्रिये/श्रियै	श्रीभ्याम्	श्रीभ्यः
पञ्चमी	श्रियः/श्रियाः	श्रीभ्याम्	श्रीभ्यः
षष्ठी	श्रियः/श्रियाः	श्रियोः	श्रीणाम्, श्रीयाम्
सप्तमी	श्रियाम्/श्रियि	श्रियोः	श्रीषु
सम्बोधन	हे श्रीः!	हे श्रियौ!	हे श्रियः!

9. 'स्त्री' (ईकारान्त स्त्रीलिङ्ग)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	स्त्रीः	स्त्रियौ	स्त्रियः
द्वितीया	स्त्रियम्/स्त्रीम्	स्त्रियौ	स्त्रीः/स्त्रियः
तृतीया	स्त्रिया	स्त्रीभ्याम्	स्त्रीभिः
चतुर्थी	स्त्रियै	स्त्रीभ्याम्	स्त्रीभ्यः
पञ्चमी	स्त्रियाः	स्त्रीभ्याम्	स्त्रीभ्यः
षष्ठी	स्त्रियाः	स्त्रियोः	स्त्रीणाम्
सप्तमी	स्त्रियाम्	स्त्रियोः	स्त्रीषु
सम्बोधन	हे स्त्री!	हे स्त्रियौ!	हे स्त्रियः!

10. 'अप्' (पकारान्त स्त्रीलिङ्ग)

(अप् शब्दो नित्यं बहुवचनान्तः। 'अप्' शब्द नित्य बहुवचनान्त है।)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	–	–	आपः
द्वितीया	–	–	अपः
तृतीया	–	–	अद्भिः
चतुर्थी	–	–	अद्भ्यः
पञ्चमी	–	–	अद्भ्यः
षष्ठी	–	–	अपाम्
सप्तमी	–	–	अप्सु
सम्बोधन	–	–	हे आपः!

अभ्यासकार्यम्

1. 'गुरुभिः' पद 'गुरु' शब्द के किस विभक्ति और वचन का रूप है ?
   (क) तृतीया विभक्ति, बहुवचन (ख) चतुर्थी विभक्ति, बहुवचन
   (ग) पंचमी विभक्ति, एकवचन (घ) षष्ठी विभक्ति, बहुवचन
2. 'नद्यौ' पद 'नदी' शब्द के किस विभक्ति और किस वचन का रूप है ?
   (क) द्वितीया विभक्ति तथा द्विवचन का (ख) षष्ठी विभक्ति तथा बहुवचन का
   (ग) सप्तमी विभक्ति तथा एकवचन (घ) किसी का नहीं

3. 'गुरून्' पद 'गुरु' शब्द के किस विभक्ति और वचन का रूप है ?
(क) प्रथमा, एकवचन (ख) पञ्चमी, बहुवचन (ग) सप्तमी, द्विवचन (घ) द्वितीया, बहुवचन

4. 'नदीभिः' पद 'नदी' शब्द के किस विभक्ति और वचन का रूप है ?
(क) द्वितीया विभक्ति तथा द्विवचन (ख) तृतीया विभक्ति तथा बहुवचन
(ग) चतुर्थी विभक्ति तथा एकवचन (घ) किसी का नहीं

5. 'पित्रा' पद 'पितृ' शब्द के किस विभक्ति और किस वचन का रूप है ?
(क) प्रथमा विभक्ति, एकवचन (ख) द्वितीया विभक्ति, बहुवचन
(ग) प्रथमा विभक्ति, बहुवचन (घ) तृतीया विभक्ति, एकवचन

6. 'हरौ' पद 'हरि' शब्द के किस विभक्ति और वचन का रूप है ?
(क) प्रथमा विभक्ति एकवचन का (ख) सप्तमी विभक्ति एकवचन का
(ग) पञ्चमी विभक्ति एकवचन का (घ) द्वितीया विभक्ति बहुवचन का

7. 'राज्ञे' पद 'राजन्' शब्द के किस विभक्ति और वचन का रूप है ?
(क) द्वितीया विभक्ति, एकवचन का (ख) सप्तमी विभक्ति, एकवचन का
(ग) चतुर्थी विभक्ति, एकवचन का (घ) किसी का नहीं

8. 'रमा' शब्द का चतुर्थी एकवचन में रूप होता है–
(क) रमायै (ख) रमाः (ग) रमायाः (घ) रमायाम्

9. 'सरित्' शब्द तृतीया विभक्ति एक वचन का रूप है–
(क) सरितः (ख) सरिता (ग) सरितम् (घ) सरिते

10. 'भगवत्' शब्द का तृतीया विभक्ति बहुवचन में रूप होता है–
(क) भगवतैः (ख) भगवद्भिः (ग) भगवद्भ्याः (घ) भगवता

11. 'हरी' पद हरि शब्द के किस विभक्ति और वचन का रूप है ?
(क) प्रथमा विभक्ति तथा एकवचन (ख) द्वितीया विभक्ति तथा द्विवचन
(ग) तृतीया विभक्ति तथा एकवचन (घ) इसमें से किसी का नहीं

12. 'धेनु' शब्द का तृतीया एकवचन में क्या रूप होता है ?
(क) धेनवः (ख) धेन्वा (ग) धेनवे (घ) धेनोः

13. 'करिणि' पद 'करिन्' के किस विभक्ति और वचन का रूप है ?
(क) प्रथमा, द्विवचन (ख) तृतीया, एकवचन (ग) चतुर्थी, एकवचन (घ) सप्तमी, एकवचन

14. 'भगवत्सु' पद किस विभक्ति और किस वचन का रूप है ?
(क) भगवान् शब्द प्रथमा बहुवचन (ख) भगवत् शब्द सप्तमी बहुवचन
(ग) भगवान् शब्द सप्तमी बहुवचन (घ) भगवत् शब्द सप्तमी एकवचन

15. 'चन्द्रमसि' पद चन्द्रमस् की किस विभक्ति और किस वचन का रूप है ?
(क) प्रथमा विभक्ति, द्विवचन (ख) तृतीया विभक्ति, एकवचन
(ग) पञ्चमी विभक्ति, बहुवचन (घ) सप्तमी विभक्ति, एकवचन।

16. 'वाचे' पद वाच् शब्द की किस विभक्ति-वचन का रूप है ?
(क) चतुर्थी विभक्ति, एकवचन (ख) पञ्चमी विभक्ति, एकवचन
(ग) तृतीया विभक्ति, एकवचन (घ) इनमें से कोई नहीं

17. 'मतेः' में कौन-सी विभक्ति है ?
(क) पञ्चमी (ख) द्वितीया (ग) तृतीया (घ) प्रथमा

18. 'रामेण' पद 'राम' शब्द के किस विभक्ति-वचन का रूप है ?
(क) तृतीया विभक्ति, एकवचन (ख) पञ्चमी विभक्ति, द्विवचन
(ग) षष्ठी विभक्ति, एकवचन (घ) सप्तमी विभक्ति, द्विवचन

19. 'रमा' शब्द का चतुर्थी एकवचन में रूप होता है–
(क) रमया (ख) रमायै (ग) रमायाः (घ) रमायाम्

20. 'रमा' शब्द का द्वितीया एकवचन में क्या रूप होता है ?
(क) रमाम् (ख) रमया (ग) रमायै (घ) रमायाः

21. 'हरयः' पद 'हरि' शब्द के किस विभक्ति व वचन का रूप है ?
(क) प्रथमा विभक्ति, बहुवचन (ख) द्वितीया विभक्ति, द्विवचन
(ग) तृतीया विभक्ति, एकवचन (घ) चतुर्थी विभक्ति, एकवचन

22. 'रमा' शब्द का सप्तमी विभक्ति बहुवचन का रूप है–
(क) रमया (ख) रमायै (ग) रमाणाम् (घ) रमासु

23. गुरवे पद गुरु प्रातिपदिक के किस विभक्ति एवं वचन का रूप है?
(क) प्रथमा विभक्ति, बहुवचन (ख) द्वितीया, विभक्ति, द्विवचन
(ग) चतुर्थी विभक्ति, एकवचन (घ) चतुर्थी विभक्ति, द्विवचन

24. 'विदुषः' पद 'विद्वस्' प्रातिपदिक के किस विभक्ति एवं वचन का रूप है–
(क) प्रथमा विभक्ति, बहुवचन (ख) द्वितीया विभक्ति, बहुवचन
(ग) चतुर्थी विभक्ति, एकवचन। (घ) तृतीया विभक्ति, बहुवचन

■

6 धातुरूप

लकारों का सामान्य परिचय–

संस्कृत में क्रिया के काल को लकारों के माध्यम से व्यक्त किया जाता है। संस्कृत में लकारों की संख्या-10 है।

1. लट्लकार – वर्तमानकाल
2. लिट्लकार – परोक्ष भूतकाल
3 लुट् लकार – अनद्यतन भविष्यकाल
4. लृट् लकार – सामान्य भविष्यकाल
5. लेट् लकार – लिङ् अर्थ में प्रयुक्त
6. लोट् लकार – आज्ञार्थक
7. लङ् लकार – अनद्यतन भूतकाल
8. लिङ् लकार – (i) विधिलिङ् (ii) आशीर्लिङ् (विधि निमन्त्रणादि अर्थों में)
9. लुङ् लकार – सामान्य भूतकाल
10. लृङ् लकार – हेतुहेतुमद् भाव (क्रियातिपत्ति)

लट्, लृट्, लोट्, लङ्, तथा विधिलिङ् लकारों में प्रमुख क्रियाओं के रूप अधोलिखित हैं।

(क) परस्मैपद

1. भू (होना)

लट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	भवति	भवतः	भवन्ति
मध्यम पुरुष	भवसि	भवथः	भवथ
उत्तम पुरुष	भवामि	भवावः	भवामः

लृट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	भविष्यति	भविष्यतः	भविष्यन्ति
मध्यम पुरुष	भविष्यसि	भविष्यथः	भविष्यथ
उत्तम पुरुष	भविष्यामि	भविष्यावः	भविष्यामः

लङ् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अभवत्	अभवताम्	अभवन्
मध्यम पुरुष	अभवः	अभवतम्	अभवत
उत्तम पुरुष	अभवम्	अभवाव	अभवाम

लोट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	भवतु/भवतात्	भवताम्	भवन्तु
मध्यम पुरुष	भव/भवतात्	भवतम्	भवत
उत्तम पुरुष	भवानि	भवाव	भवाम

विधिलिङ् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	भवेत्	भवेताम्	भवेयुः
मध्यम पुरुष	भवेः	भवेतम्	भवेत
उत्तम पुरुष	भवेयम्	भवेव	भवेम

2. पठ् (पढ़ना)

लट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पठति	पठतः	पठन्ति
मध्यम पुरुष	पठसि	पठथः	पठथ
उत्तम पुरुष	पठामि	पठावः	पठामः

लृट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पठिष्यति	पठिष्यतः	पठिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	पठिष्यसि	पठिष्यथः	पठिष्यथ
उत्तम पुरुष	पठिष्यामि	पठिष्यावः	पठिष्यामः

लङ् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अपठत्	अपठताम्	अपठन्
मध्यम पुरुष	अपठः	अपठतम्	अपठत
उत्तम पुरुष	अपठम्	अपठाव	अपठाम

लोट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पठतु/पठतात्	पठताम्	पठन्तु
मध्यम पुरुष	पठ/पठतात्	पठतम्	पठत
उत्तम पुरुष	पठानि	पठाव	पठाम

विधिलिङ् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पठेत्	पठेताम्	पठेयुः
मध्यम पुरुष	पठेः	पठेतम्	पठेत
उत्तम पुरुष	पठेयम्	पठेव	पठेम

3. पा (पिब्) पीना

लट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पिबति	पिबतः	पिबन्ति
मध्यम पुरुष	पिबसि	पिबथः	पिबथ
उत्तम पुरुष	पिबामि	पिबावः	पिबामः

लृट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पास्यति	पास्यतः	पास्यन्ति
मध्यम पुरुष	पास्यसि	पास्यथः	पास्यथ
उत्तम पुरुष	पास्यामि	पास्यावः	पास्यामः

लङ् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अपिबत्	अपिबताम्	अपिबन्
मध्यम पुरुष	अपिबः	अपिबतम्	अपिबत
उत्तम पुरुष	अपिबम्	अपिबाव	अपिबाम

लोट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पिबतु/पिबतात्	पिबताम्	पिबन्तु
मध्यम पुरुष	पिब/पिबतात्	पिबतम्	पिबत
उत्तम पुरुष	पिबानि	पिबाव	पिबाम

विधिलिङ् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पिबेत्	पिबेताम्	पिबेयुः
मध्यम पुरुष	पिबेः	पिबेतम्	पिबेत
उत्तम पुरुष	पिबेयम्	पिबेव	पिबेम

4. गम् (गच्छ) जाना

लट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	गच्छति	गच्छतः	गच्छन्ति
मध्यम पुरुष	गच्छसि	गच्छथः	गच्छथ
उत्तम पुरुष	गच्छामि	गच्छावः	गच्छामः

लृट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	गमिष्यति	गमिष्यतः	गमिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	गमिष्यसि	गमिष्यथः	गमिष्यथ
उत्तम पुरुष	गमिष्यामि	गमिष्यावः	गमिष्यामः

लङ् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अगच्छत्	अगच्छताम्	अगच्छन्
मध्यम पुरुष	अगच्छः	अगच्छतम्	अगच्छत
उत्तम पुरुष	अगच्छम्	अगच्छाव	अगच्छाम

लोट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	गच्छतु / गच्छतात्	गच्छताम्	गच्छन्तु
मध्यम पुरुष	गच्छ / गच्छतात्	गच्छतम्	गच्छत
उत्तम पुरुष	गच्छानि	गच्छाव	गच्छाम

विधिलिङ् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	गच्छेत्	गच्छेताम्	गच्छेयुः
मध्यम पुरुष	गच्छेः	गच्छेतम्	गच्छेत
उत्तम पुरुष	गच्छेयम्	गच्छेव	गच्छेम

5. दृश् (देखना)

लट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पश्यति	पश्यतः	पश्यन्ति
मध्यम पुरुष	पश्यसि	पश्यथः	पश्यथ
उत्तम पुरुष	पश्यामि	पश्यावः	पश्यामः

लृट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	द्रक्ष्यति	द्रक्ष्यतः	द्रक्ष्यन्ति
मध्यम पुरुष	द्रक्ष्यसि	द्रक्ष्यथः	द्रक्ष्यथ
उत्तम पुरुष	द्रक्ष्यामि	द्रक्ष्यावः	द्रक्ष्यामः

लङ् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अपश्यत्	अपश्यताम्	अपश्यन्
मध्यम पुरुष	अपश्यः	अपश्यतम्	अपश्यत
उत्तम पुरुष	अपश्यम्	अपश्याव	अपश्याम

लोट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पश्यतु / पश्यतात्	पश्यताम्	पश्यन्तु
मध्यम पुरुष	पश्य / पश्यतात्	पश्यतम्	पश्यत
उत्तम पुरुष	पश्यानि	पश्याव	पश्याम

विधिलिङ् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पश्येत्	पश्येताम्	पश्येयुः
मध्यम पुरुष	पश्येः	पश्येतम्	पश्येत
उत्तम पुरुष	पश्येयम्	पश्येव	पश्येम

6. स्था (तिष्ठ) ठहरना

लट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तिष्ठति	तिष्ठतः	तिष्ठन्ति
मध्यम पुरुष	तिष्ठसि	तिष्ठथः	तिष्ठथ
उत्तम पुरुष	तिष्ठामि	तिष्ठावः	तिष्ठामः

लृट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	स्थास्यति	स्थास्यतः	स्थास्यन्ति
मध्यम पुरुष	स्थास्यसि	स्थास्यथः	स्थास्यथ
उत्तम पुरुष	स्थास्यामि	स्थास्यावः	स्थास्यामः

लङ् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अतिष्ठत्	अतिष्ठताम्	अतिष्ठन्
मध्यम पुरुष	अतिष्ठः	अतिष्ठतम्	अतिष्ठत
उत्तम पुरुष	अतिष्ठम्	अतिष्ठाव	अतिष्ठाम

लोट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तिष्ठतु/तिष्ठतात्	तिष्ठताम्	तिष्ठन्तु
मध्यम पुरुष	तिष्ठ/तिष्ठतात्	तिष्ठतम्	तिष्ठत
उत्तम पुरुष	तिष्ठानि	तिष्ठाव	तिष्ठाम

विधिलिङ् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तिष्ठेत्	तिष्ठेताम्	तिष्ठेयुः
मध्यम पुरुष	तिष्ठेः	तिष्ठेतम्	तिष्ठेत
उत्तम पुरुष	तिष्ठेयम्	तिष्ठेव	तिष्ठेम

7. नी (नय्) ले जाना

लट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	नयति	नयतः	नयन्ति
मध्यम पुरुष	नयसि	नयथः	नयथ
उत्तम पुरुष	नयामि	नयावः	नयामः

लृट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	नेष्यति	नेष्यतः	नेष्यन्ति
मध्यम पुरुष	नेष्यसि	नेष्यथः	नेष्यथ
उत्तम पुरुष	नेष्यामि	नेष्यावः	नेष्यामः

लङ् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अनयत्	अनयताम्	अनयन्
मध्यम पुरुष	अनयः	अनयतम्	अनयत
उत्तम पुरुष	अनयम्	अनयाव	अनयाम

लोट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	नयतु/नयतात्	नयताम्	नयन्तु
मध्यम पुरुष	नय/नयतात्	नयतम्	नयत
उत्तम पुरुष	नयानि	नयाव	नयाम

विधिलिङ् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	नयेत्	नयेताम्	नयेयुः
मध्यम पुरुष	नयेः	नयेतम्	नयेत
उत्तम पुरुष	नयेयम्	नयेव	नयेम

8. अस् (होना)

लट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अस्ति	स्तः	सन्ति
मध्यम पुरुष	असि	स्थः	स्थ
उत्तम पुरुष	अस्मि	स्वः	स्मः

लृट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	भविष्यति	भविष्यतः	भविष्यन्ति
मध्यम पुरुष	भविष्यसि	भविष्यथः	भविष्यथ
उत्तम पुरुष	भविष्यामि	भविष्यावः	भविष्यामः

लङ् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	आसीत्	आस्ताम्	आसन्
मध्यम पुरुष	आसीः	आस्तम्	आस्त
उत्तम पुरुष	आसम्	आस्व	आस्म

लोट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अस्तु/स्तात्	स्ताम्	सन्तु
मध्यम पुरुष	एधि/स्तात्	स्तम्	स्त
उत्तम पुरुष	असानि	असाव	असाम

विधिलिङ् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	स्यात्	स्याताम्	स्युः
मध्यम पुरुष	स्याः	स्यातम्	स्यात
उत्तम पुरुष	स्याम्	स्याव	स्याम

9. नश् (नष्ट होना)

लट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	नश्यति	नश्यतः	नश्यन्ति
मध्यम पुरुष	नश्यसि	नश्यथः	नश्यथ
उत्तम पुरुष	नश्यामि	नश्यावः	नश्यामः

लृट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	नशिष्यति	नशिष्यतः	नशिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	नशिष्यसि	नशिष्यथः	नशिष्यथ
उत्तम पुरुष	नशिष्यामि	नशिष्यावः	नशिष्यामः

लङ् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अनश्यत्	अनश्यताम्	अनश्यन्
मध्यम पुरुष	अनश्यः	अनश्यतम्	अनश्यत
उत्तम पुरुष	अनश्यम्	अनश्याव	अनश्याम

लोट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	नश्यतु/नश्यतात्	नश्यताम्	नश्यन्तु
मध्यम पुरुष	नश्य/नश्यतात्	नश्यतम्	नश्यत
उत्तम पुरुष	नश्यानि	नश्याव	नश्याम

विधिलिङ् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	नश्येत्	नश्येताम्	नश्येयुः
मध्यम पुरुष	नश्येः	नश्येतम्	नश्येत
उत्तम पुरुष	नश्येयम्	नश्येव	नश्येम

10. आप् (व्याप्त करना)

लट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	आप्नोति	आप्नुतः	आप्नुवन्ति
मध्यम पुरुष	आप्नोषि	आप्नुथः	आप्नुथ
उत्तम पुरुष	आप्नोमि	आप्नुवः	आप्नुमः

लृट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	आप्स्यति	आप्स्यतः	आप्स्यन्ति
मध्यम पुरुष	आप्स्यसि	आप्स्यथः	आप्स्यथ
उत्तम पुरुष	आप्स्यामि	आप्स्यावः	आप्स्यामः

लङ् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	आप्नोत्	आप्नुताम्	आप्नुवन्
मध्यम पुरुष	आप्नोः	आप्नुतम्	आप्नुत
उत्तम पुरुष	आप्नवम्	आप्नुव	आप्नुम

लोट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	आप्नोतु/आप्नुतात्	आप्नुताम्	आप्नुवन्तु
मध्यम पुरुष	आप्नुहि/आप्नुतात्	आप्नुतम्	आप्नुत
उत्तम पुरुष	आप्नवानि	आप्नवाव	आप्नवाम

विधिलिङ् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	आप्नुयात्	आप्नुयाताम्	आप्नुयुः
मध्यम पुरुष	आप्नुयाः	आप्नुयातम्	आप्नुयात
उत्तम पुरुष	आप्नुयाम्	आप्नुयाव	आप्नुयाम

11. शक् (सकना)

लट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	शक्नोति	शक्नुतः	शक्नुवन्ति

मध्यम पुरुष	शक्नोषि	शक्नुथः	शक्नुथ
उत्तम पुरुष	शक्नोमि	शक्नुवः	शक्नुमः

लृट् लकार

पुरुष	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	शक्ष्यति	शक्ष्यतः	शक्ष्यन्ति
मध्यम पुरुष	शक्ष्यसि	शक्ष्यथः	शक्ष्यथ
उत्तम पुरुष	शक्ष्यामि	शक्ष्यावः	शक्ष्यामः

लङ् लकार

पुरुष	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	अशक्नोत्	अशक्नुताम्	अशक्नुवन्
मध्यम पुरुष	अशक्नोः	अशक्नुतम्	अशक्नुत
उत्तम पुरुष	अशक्नवम्	अशक्नुव	अशक्नुम

लोट् लकार

पुरुष	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	शक्नोतु/शक्नुतात्	शक्नुताम्	शक्नुवन्तु
मध्यम पुरुष	शक्नुहि/शक्नुतात्	शक्नुतम्	शक्नुत
उत्तम पुरुष	शक्नवानि	शक्नवाव	शक्नवाम

विधिलिङ् लकार

पुरुष	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	शक्नुयात्	शक्नुयाताम्	शक्नुयुः
मध्यम पुरुष	शक्नुयाः	शक्नुयातम्	शक्नुयात
उत्तम पुरुष	शक्नुयाम्	शक्नुयाव	शक्नुयाम

12. इष् (इच्छा करना)

लट् लकार

पुरुष	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	इच्छति	इच्छतः	इच्छन्ति
मध्यम पुरुष	इच्छसि	इच्छथः	इच्छथ
उत्तम पुरुष	इच्छामि	इच्छावः	इच्छामः

लृट् लकार

पुरुष	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	एषिष्यति	एषिष्यतः	एषिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	एषिष्यसि	एषिष्यथः	एषिष्यथ
उत्तम पुरुष	एषिष्यामि	एषिष्यावः	एषिष्यामः

लङ् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	ऐच्छत्	ऐच्छताम्	ऐच्छन्
मध्यम पुरुष	ऐच्छः	ऐच्छतम्	ऐच्छत
उत्तम पुरुष	ऐच्छम्	ऐच्छाव	ऐच्छाम

लोट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	इच्छतु/इच्छतात्	इच्छताम्	इच्छन्तु
मध्यम पुरुष	इच्छ/इच्छतात्	इच्छतम्	इच्छत
उत्तम पुरुष	इच्छानि	इच्छाव	इच्छाम

विधिलिङ् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	इच्छेत्	इच्छेताम्	इच्छेयुः
मध्यम पुरुष	इच्छेः	इच्छेतम्	इच्छेत
उत्तम पुरुष	इच्छेयम्	इच्छेव	इच्छेम

13. प्रच्छ् (पूछना)

लट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पृच्छति	पृच्छतः	पृच्छन्ति
मध्यम पुरुष	पृच्छसि	पृच्छथः	पृच्छथ
उत्तम पुरुष	पृच्छामि	पृच्छावः	पृच्छामः

लृट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	प्रक्ष्यति	प्रक्ष्यतः	प्रक्ष्यन्ति
मध्यम पुरुष	प्रक्ष्यसि	प्रक्ष्यथः	प्रक्ष्यथ
उत्तम पुरुष	प्रक्ष्यामि	प्रक्ष्यावः	प्रक्ष्यामः

लङ् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अपृच्छत्	अपृच्छताम्	अपृच्छन्
मध्यम पुरुष	अपृच्छः	अपृच्छतम्	अपृच्छत
उत्तम पुरुष	अपृच्छम्	अपृच्छाव	अपृच्छाम

लोट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पृच्छतु/पृच्छतात्	पृच्छताम्	पृच्छन्तु

मध्यम पुरुष	पृच्छ/पृच्छतात्	पृच्छतम्	पृच्छत
उत्तम पुरुष	पृच्छानि	पृच्छाव	पृच्छाम

विधिलिङ् लकार

पुरुष	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	पृच्छेत्	पृच्छेताम्	पृच्छेयुः
मध्यम पुरुष	पृच्छेः	पृच्छेतम्	पृच्छेत
उत्तम पुरुष	पृच्छेयम्	पृच्छेव	पृच्छेम

14. कृष् (जोतना)

लट् लकार

पुरुष	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	कर्षति	कर्षतः	कर्षन्ति
मध्यम पुरुष	कर्षसि	कर्षथः	कर्षथ
उत्तम पुरुष	कर्षामि	कर्षावः	कर्षामः

लृट् लकार

पुरुष	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	कर्क्ष्यति	कर्क्ष्यतः	कर्क्ष्यन्ति
मध्यम पुरुष	कर्क्ष्यसि	कर्क्ष्यथः	कर्क्ष्यथ
उत्तम पुरुष	कर्क्ष्यामि	कर्क्ष्यावः	कर्क्ष्यामः

लङ् लकार

पुरुष	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	अकर्षत्	अकर्षताम्	अकर्षन्
मध्यम पुरुष	अकर्षः	अकर्षतम्	अकर्षत
उत्तम पुरुष	अकर्षम्	अकर्षाव	अकर्षाम

लोट् लकार

पुरुष	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	कर्षतु/कर्षतात्	कर्षताम्	कर्षन्तु
मध्यम पुरुष	कर्ष/कर्षतात्	कर्षतम्	कर्षत
उत्तम पुरुष	कर्षाणि	कर्षाव	कर्षाम

विधिलिङ् लकार

पुरुष	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	कर्षेत्	कर्षेताम्	कर्षेयुः
मध्यम पुरुष	कर्षेः	कर्षेतम्	कर्षेत
उत्तम पुरुष	कर्षेयम्	कर्षेव	कर्षेम

अभ्यासकार्यम्

1. 'अपठन्' पद 'पठ्' धातु के किस लकार, पुरुष और वचन का रूप होता है ?
   (क) लट्लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन (ख) लङ्लकार, प्रथम पुरुष, बहुवचन
   (ग) लट् लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन (घ) विधिलिङ् लकार, उत्तम पुरुष, एकवचन
2. 'भू' धातु के लट्लकार, मध्यम पुरुष, एकवचन का रूप होता है–
   (क) अभवत् (ख) अभवः (ग) भवसि (घ) अभवम्
3. 'गम्' धातु लोट् लकार, प्रथम पुरुष, बहुवचन का रूप होता है–
   (क) गच्छन्तु (ख) गच्छन्ति (ग) आगच्छत् (घ) गच्छेत्
4. 'गच्छाम' गम् धातु के किस लकार, पुरुष और वचन का रूप है ?
   (क) लट् लकार, उत्तम पुरुष, बहुवचन (ख) लोट् लकार, उत्तम पुरुष, बहुवचन
   (ग) विधिलिङ् लकार, उत्तम पुरुष, बहुवचन (घ) लृट् लकार, उत्तम पुरुष, बहुवचन
5. 'पा' धातु का विधिलिङ् लकार प्रथम पुरुष बहुवचन में रूप होता है–
   (क) पिबेयुः (ख) पिबेव (ग) पिबेम (घ) कुछ नहीं
6. 'पठ्' धातु के लोट् लकार, उत्तम पुरुष, द्विवचन रूप होता है–
   (क) पठतु (ख) पठन्तु (ग) पठाव (घ) पठानि
7. 'भू' धातु का 'भवति' रूप किस लकार, पुरुष और वचन में होता है ?
   (क) लट्लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन में (ख) लोट् लकार, मध्यम पुरुष, बहुवचन में
   (ग) लट् लकार, प्रथम पुरुष, बहुवचन में (घ) लङ् लकार, प्रथम पुरुष, बहुवचन में
8. 'पा' धातु के लट् लकार प्रथम पुरुष बहुवचन में कौन सा रूप होगा ?
   (क) पिबति (ख) पिबन्ति (ग) पिबेत (घ) पिबसि
9. 'पिबानि' में 'पा' धातु के किस लकार, पुरुष और वचन का रूप होता है ?
   (क) लट् लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन में (ख) लट्लकार, उत्तम पुरुष, एकवचन में
   (ग) लृट् लकार, उत्तम पुरुष, एकवचन में (घ) लोट् लकार, उत्तम पुरुष, एकवचन में
10. 'नी' धातु का लृट् लकार मध्यम पुरुष बहुवचन में रूप होता है ?
    (क) नेयथ (ख) नयथः (ग) नेष्यथः (घ) नेष्यथ
11. 'द्रक्ष्यति' क्रिया रूप का मूल धातु है–
    (क) द्रुह् (ख) दृश् (ग) दृष् (घ) दुह्
12. 'अगच्छत्' गम् धातु का रूप होता है–
    (क) लोट् लकार, प्रथम पुरुष, एक वचन में (ख) लङ् लकार, मध्यम पुरुष, बहुवचन में
    (ग) विधिलिङ् लकार, मध्यम पुरुष, बहुवचन में। (घ) लङ् लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन में

13. 'अतिष्ठत्' स्था धातु का रूप होता है–
(क) लट् लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन (ख) लङ् लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन
(ग) लङ् लकार, प्रथम पुरुष, बहुवचन (घ) लोट् लकार, प्रथम पुरुष, बहुवचन

14. 'भव' भू धातु का रूप होता है–
(क) लट् लकार, प्रथम पुरुष, एक वचन में (ख) लङ् लकार, उत्तम पुरुष, एकवचन में
(ग) लोट् लकार, उत्तम पुरुष, एक वचन में (घ) लोट् लकार, मध्यम पुरुष, एकवचन में

15. 'शक्' धातु का लट् लकार प्रथम पुरुष बहुवचन में रूप होता है–
(क) शक्नोमः (ख) शक्नुवन्ति (ग) शक्नुमः (घ) शक्नुवः

16. 'नी' धातु का लोट् लकार, मध्यम पुरुष, द्विवचन में रूप होता है–
(क) नमिष्यथः (ख) नेष्यथः (ग) नेष्येथे (घ) नयतम्

17. 'तिष्ठेयुः' स्था धातु का रूप होता है–
(क) लट् लकार, मध्यम पुरुष, बहुवचन (ख) लृट लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन
(ग) लोट् लकार, मध्यम पुरुष, द्विवचन (घ) विधिलिङ् लकार, प्रथम पुरुष बहुवचन

18. 'प्रच्छ्' धातु का लृट् लकार, मध्यम पुरुष, द्विवचन में रूप होता है–
(क) पृच्छतः (ख) प्रक्ष्यथः (ग) पृच्छतम् (घ) पृच्छेतम्

19. 'भू' धातु का लङ्लकार, मध्यम पुरुष, एकवचन में रूप होता है–
(क) भवति (ख) भवतु (ग) भविष्यते (घ) अभवः

20. 'पा' धातु का लट् लकार, मध्यम पुरुष, एकवचन में रूप होता है'–
(क) पिबति (ख) पाहि (ग) पिबसि (घ) पास्यसि

21. 'गच्छेयम्' गम् धातु का रूप होता है–
(क) लट् लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन (ख) लोट् लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन
(ग) विधिलिङ् लकार, उत्तम पुरुष, एकवचन (घ) लङ् लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन

22. 'प्रच्छ्' धातु के लोट् लकार, मध्यम पुरुष, एकवचन में रूप होता है–
(क) पृच्छताम् (ख) प्रक्ष्यथः (ग) पृच्छ (घ) पृच्छेतम्

23. 'पास्यसि' में पा धातु किस लकार, वचन का रूप होता है–
(क) लट् लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन का
(ख) लट् लकार, मध्यम पुरुष, एकवचन का
(ग) लृट् लकार, मध्यम पुरुष, एकवचन का
(घ) लोट् लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन का

24. 'दृश्' धातु के लृट् लकार, मध्यम पुरुष, एकवचन का रूप होगा–
(क) पश्यति (ख) अपश्याम् (ग) पश्यन्तु (घ) द्रक्ष्यसि

■

प्रत्ययः

प्रति उपसर्ग पूर्वक इण् गतौ धातु से ''एरच्'' सूत्र से अच् प्रत्यय करने पर प्रत्यय शब्द निष्पन्न होता है।

व्याकरण शास्त्र के अनुसार प्रत्यय की परिभाषाएँ–

1. प्रकृति से परे बनाकर जिसका विधान किया जाय वह सार्थक शब्द विशेष प्रत्यय है।

2. महाभाष्य के अनुसार–**''स्वीयम् अर्थं प्रत्याययति''** जो अपने अर्थ का बोध कराता है वह प्रत्यय है।

3. **''प्रतीयते विधीयते इति प्रत्ययः''** अर्थात् अर्थविशेष का बोध कराने के लिए प्रकृति से परे जिसका विधान किया जाता है उसे प्रत्यय कहते हैं।

मुख्य रूप से प्रत्यय दो प्रकार के होते हैं– कृत् एवं तद्धित।

कृत् प्रत्यय– धातु से जिन प्रत्ययों का विधान किया जाता है, उन्हें कृत् प्रत्यय कहते हैं।

तद्धित प्रत्यय– **''तस्मै ताभ्यां तेभ्यो वा हिताः तद्धिताः'',** जो प्रकृत्यर्थ के हित में हों उन्हें तद्धित प्रत्यय कहते हैं।

अर्थात् जिनका विधान संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, अव्यय, आदि से किया जाय, उन्हें तद्धित प्रत्यय कहते हैं।

कृत् प्रत्यय

1. क्तिन् प्रत्यय–''स्त्रियां क्तिन्''–

स्त्रीलिङ्ग में भावादि अर्थ द्योतित करने के लिए क्तिन् प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। क्तिन् में क् एवं न् की इत्संज्ञा एवं लोप हो जाने पर 'ति' शेष बचता है, क्तिन् प्रत्ययान्त शब्द स्त्रीलिङ्ग ही होते हैं।

उदाहरण–भू + क्तिन् = भूतिः

गम् + क्तिन् = गतिः

चि + क्तिन् = चितिः

तृप् + क्तिन् = तृप्तिः

दीप् + क्तिन् = दीप्तिः

7

श्रु + क्तिन् = श्रुतिः

प्री + क्तिन् = प्रीतिः

उत् + तृ + क्तिन् = उत्तीर्णिः

भिद् + क्तिन् = भित्तिः

सम् + पद् + क्तिन् = सम्पत्तिः

नोट– इन सभी के शब्दरूप चला सकते हैं।

2. क्त्वा प्रत्यय– ''समानकर्तृकयोः पूर्वकाले''

जब एक क्रिया का समाप्त होना सूचित हो तथा दूसरी क्रिया का प्रारम्भ होना सूचित होता है, तब पूर्वकाल की क्रिया से समन्वय बनाने के लिए 'क्त्वा' प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। इस प्रत्यय के प्रयोग में दोनों क्रियाओं का कर्ता एक ही होता है। पूर्व में की गयी क्रिया का बोधक प्रत्यय 'क्त्वा' होता है–

जैसे– खाकर, हँसकर, लिखकर, जाकर इत्यादि क्रियाओं का अर्थ बोध कराने के लिए धातुओं से जोड़ा जाता है। 'क्त्वा' में क् का अनुबन्ध लोप होकर 'त्वा' मात्र शेष रहता है, 'क्त्वा' लगाकर बनाये गये शब्दों के रूप नहीं चलते तथा 'क्त्वातोसुन्कसुनः' से अव्यय हो जाते हैं।

उदाहरण–हस् + क्त्वा = हसित्वा

चल् + क्त्वा = चलित्वा

ग्रह् + क्त्वा = गृहीत्वा

लिख् + क्त्वा = लिखित्वा, लेखित्वा

गम् + क्त्वा = गत्वा

पा + क्त्वा = पीत्वा

दा + क्त्वा = दत्त्वा

दृश् + क्त्वा = दृष्ट्वा

वद् + क्त्वा = उदित्वा

वच् + क्त्वा = उक्त्वा

कृ + क्त्वा = कृत्वा

लभ् + क्त्वा = लब्ध्वा

3. ल्यप् प्रत्यय– ''समासेऽनञ्पूर्वे क्त्वो ल्यप्''

'ल्यप्' प्रत्यय भी 'क्त्वा' प्रत्यय के अर्थ में होता है, किन्तु पूर्वकालिक क्रिया की धातु के पूर्व यदि उपसर्ग होता है, तो क्त्वा को 'ल्यप्' होता है। ल्यप् प्रत्यय में ल् एवं प् की इत्संज्ञा लोप करने पर 'य' मात्र शेष रहता है।

उदाहरण–	प्र	+	नम्	+	ल्यप्	=	प्रणम्य
	प्र	+	दा	+	ल्यप्	=	प्रदाय
	वि	+	शिष्	+	ल्यप्	=	विशिष्य
	आ	+	गम्	+	ल्यप्	=	आगम्य, आगत्य
	उत्	+	तृ	+	ल्यप्	=	उत्तीर्य
	प्र	+	बुध्	+	ल्यप्	=	प्रबुध्य
	वि	+	ज्ञा	+	ल्यप्	=	विज्ञाय
	सम्	+	पच्	+	ल्यप्	=	संपच्य
	वि	+	लिख्	+	ल्यप्	=	विलिख्य
	सम्	+	श्रु	+	ल्यप्	=	संश्रुत्य

4. शतृ-शानच् प्रत्यय–

लटः शतृशानचावप्रथमासमानाधिकरणे–

अप्रथमा समानाधिकरण होने पर लट् लकार के स्थान पर शतृ एवं शानच् प्रत्ययों का प्रयोग किया जाता है। इनका प्रयोग वर्तमान एवं भविष्य काल में किया जाता है। परस्मैपद धातुओं से शतृ-प्रत्यय तथा आत्मनेपद धातुओं से शानच् प्रत्यय होते हैं। शतृप्रत्यय में अनुबन्ध लोप करने पर अत् एवं शानच् में 'आन' अवशेष रहता है।

शतृप्रत्ययान्त रूपों को सरलता से बहुवचन के ति को हटाकर लट्लकार एवं लृट् के अर्थों में बनाया जा सकता है– जैसे– हसन्ति (ति) हटाने पर 'हसन्' चलन्ति में (ति) हटाने पर 'चलन्' जिनका क्रमशः 'हँसता हुआ' एवं 'चलता हुआ' अर्थ होता है।

इसी तरह भविष्यन्ति से (ति) हटाकर भविष्यन् गमिष्यन्ति से (ति) हटाकर गमिष्यन्, पठिष्यन्ति से (ति) हटाकर 'पठिष्यन्' बनाते हैं। शतृप्रत्यय से निष्पन्न शब्द पुंलिङ्ग में 'गच्छन् गच्छन्तौ गच्छन्तः' रूप चलते हैं, स्त्रीलिङ्ग में 'गच्छन्ती, गच्छन्त्यौ, गच्छन्त्यः' रूप चलते हैं। नपुसंक में 'हसत् हसती हसन्ति', 'चलत्, चलती, चलन्ति', रूप चलते हैं। इसी तरह प्रायः सभी धातुओं से बनाने का प्रयास करना चाहिए। आत्मनेपदी धातुओं से 'शानच्' करने पर 'आन' शेष रहता है तथा **'आने मुक्'** सूत्र से 'मुक्' का आगम करने पर 'मान' हो जाता है अतः किसी धातु से 'मान' जोड़ने पर शानच् प्रत्ययान्त रूप प्राप्त किये जा सकते हैं। जैसे– 'एध्' धातु से पुल्लिङ्ग में–राम की तरह 'एधमानः, एधमानौ, एधमानाः', रूप बनते है, स्त्रीलिङ्ग में 'एधमाना, एधमाने, एधमानाः' रमा के समान रूप चलते हैं। नपुंसक लिङ्ग में 'एधमानम्, एधमाने, एधमानानि', रूप जल आदि की तरह चलते हैं। अन्य धातुओं से प्रायः इसी प्रकार प्रत्ययों को जोड़कर शानच् प्रत्ययान्त शब्दों को सरलता से बना सकते हैं–

शतृप्रत्ययान्त रूप

पुलिङ्ग	स्त्रीलिङ्ग	नपुंसकलिङ्ग
कुप् + शतृ = कुप्यन्	कुप्यन्ती	कुप्यत्
खाद् + शतृ = खादन्	खादन्ती	खादत्
चल् + शतृ = चलन्	चलन्ती	चलत्
गुञ्ज् + शतृ = गुञ्जन्	गुञ्जन्ती	गुञ्जत्
गै + शतृ = गायन्	गायन्ती	गायत्
दृश् + शतृ = पश्यन्	पश्यन्ती	पश्यत्
दा + शतृ = ददत्	ददती	ददत्
कथ् + शतृ = कथयन्	कथयन्ती	कथयत्
चिन्त् + शतृ = चिन्तयन्	चिन्तयन्ती	चिन्तयत्

शानच् प्रत्ययान्त रूप

पुलिङ्ग	स्त्रीलिङ्ग	नपुंसकलिङ्ग
एध् + शानच् = एधमानः	एधमाना	एधमानम्
ईक्ष् + शानच् = ईक्षमाणः	ईक्षमाणा	ईक्षमाणम्
दा + शानच् = ददानः	ददाना	ददानम्
दीप् + शानच् = दीप्यमानः	दीप्यमाना	दीप्यमानम्
लभ् + शानच् = लभमानः	लभमाना	लभमानम्
शी + शानच् = शयानः	शयाना	शयानम्
सेव् + शानच् = सेवमानः	सेवमाना	सेवमानम्
वृध् + शानच् = वर्धमानः	वर्धमाना	वर्धमानम्
जन् + शानच् = जायमानः	जायमाना	जायमानम्

5. तुमुन् प्रत्यय– ''तुमुन्ण्वुलौ क्रियायां क्रियार्थायाम्''– क्रियार्था क्रिया यदि उपपद में हो तो भविष्यत् काल के अर्थ में तुमुन् प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है।

'तुमुन्' प्रत्यय का प्रयोग चतुर्थी विभक्ति के अर्थ में किया जाता है। अनुबन्ध लोप करने पर 'तुम्' शेष रहता है जिसे धातुओं से जोड़कर शब्द बनाये जाते हैं, इसके रूप अव्यय होते हैं।

उदाहरण—पठ्	+ तुमुन्	= पठितुम्
हस्	+ तुमुन्	= हसितुम्
गम्	+ तुमुन्	= गन्तुम्
भ्रम्	+ तुमुन्	= भ्रमितुम्
ज्ञा	+ तुमुन्	= ज्ञातुम्
प्रच्छ्	+ तुमुन्	= प्रष्टुम्
ग्रह्	+ तुमुन्	= ग्रहीतुम्
वच्	+ तुमुन्	= वक्तुम्
कृ	+ तुमुन्	= कर्तुम्
गै	+ तुमुन्	= गातुम्
दा	+ तुमुन्	= दातुम्

6. 'यत्' प्रत्यय—''अचो यत्'' अजन्त धातुओं से भाव एवं कर्म में 'यत्' प्रत्यय होता है, सामान्य व्यवहार में 'चाहिए' इस अर्थ में प्रयुक्त होता है।

उदाहरण—

	पुंलिङ्ग	**स्त्रीलिङ्ग**	**नपुंसकलिङ्ग**
चि + यत्	चेयः	चेया	चेयम्
जि + यत्	जेयः	जेया	जेयम्
पा + यत्	पेयः	पेया	पेयम्
स्था + यत्	स्थेयः	स्थेया	स्थेयम्
ध्यै + यत्	ध्येयः	ध्येया	ध्येयम्
रम् + यत्	रम्यः	रम्या	रम्यम्
गद् + यत्	गद्यः	गद्या	गद्यम्
श्रु + यत्	श्रव्यः	श्रव्या	श्रव्यम्

अभ्यासकार्यम्

उचितं विकल्पं चिनुत—

1. 'भूतिः' इत्यस्मिन् पदे कः प्रत्ययः?

   (क) क्तिन् (ख) क्त्वा (ग) ल्यप् (घ) क्त

2. 'आगत्य' पदे कः प्रत्ययः?

   (क) क्त्वा (ख) ल्यप् (ग) क्तिन् (घ) क्त

3. 'चिन्तयन्' पदे कः प्रत्ययः?

(क) शतृ प्रत्ययः (ख) शानच् प्रत्ययः (ग) यत् प्रत्ययः (घ) क्त प्रत्ययः

4. 'दातुम्' इत्यत्र कः प्रत्ययः?

(क) यत् प्रत्ययः (ख) तुमुन् प्रत्ययः (ग) ल्यप् प्रत्ययः (घ) शानच् प्रत्ययः

5. 'चेयम्' इत्यत्र कः प्रत्ययः?

(क) यत् प्रत्ययः (ख) क्त प्रत्ययः (ग) क्तिन् प्रत्ययः (घ) शानच् प्रत्ययः

6. 'जेयः' पदे प्रकृति–प्रत्ययौ लिख्यताम् ?

(क) चि + यत् (ख) जे + यत् (ग) जि + यत् (घ) जै + यत्

7. 'चलन्' इत्यत्र कः प्रत्ययः?

(क) शानच् (ख) शतृ (ग) अन् (घ) क्तिन्

8. 'जायमानः' इत्यत्र कः प्रत्ययः?

(क) आन् (ख) शानच् (ग) शतृ (घ) ल्युट्

9. 'विलिख्य' इत्यत्र कः प्रत्ययः?

(क) क्त्वा (ख) यत् (ग) ल्यप् (घ) क्त

10. 'गत्वा' में प्रयुक्त प्रकृति (धातु) एवं प्रत्यय लिखिए–

(क) गम् + क्त्वा (ख) गम् + त्वा (ग) गा + त्वा (घ) गम + क्त

11. 'दीप्तिः' शब्द में कौन-सा प्रत्यय है?

(क) क्तिन् (ख) तिन् (ग) तुमुन् (घ) तव्यत्

12. 'लभ्' धातु में क्त्वा प्रत्यय जोड़ने से शब्द बनेगा–

(क) लब्ध्वा (ख) लब्धा (ग) लभध्वा (घ) लभ्ध्वा

13. 'जन्' धातु में शानच् प्रत्यय लगाकर शब्द लिखिए–

(क) जायमानः (ख) जायमाना (ग) जायमानम् (घ) उपर्युक्त सभी

14. 'गद्' धातु में यत् प्रत्यय लगाने पर शब्द बनेगा–

(क) गद्यः (ख) गद्या (ग) गद्यम् (घ) सभी

15. 'कथ्' धातु में शतृ प्रत्यय लगाने पर स्त्रीलिङ्ग में रूप बनेगा–

(क) कथयन् (ख) कथयन्ती (ग) कथयत् (घ) कथयम्

16. 'कृ' धातु में तुमुन् प्रत्यय लगाने पर शब्द बनेगा–

(क) कर्तुम् (ख) कार्यतुम् (ग) कार्यन् (घ) कार्यतु

■